माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं

ग्रन्थ १

माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं १



毛澤东

माओ त्सेतुङ
की
संकलित रचनाएं

ग्रन्थ १

विदेशी भाषा प्रकाशन-गृह
पेकिङ १९७१

पहला संस्करण १९६८
दूसरा मुद्रण १९७१

यह ग्रंथ जन प्रकाशन-गृह, पेकिङ द्वारा जुलाई १९५२ में प्रकाशित "माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रंथ १ के दूसरे चीनी संस्करण का हिन्दी अनुवाद है।

चीन लोक गणराज्य में मुद्रित

प्रकाशक की बात

"माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं" नामक प्रकाशन के वर्तमान संस्करण में वे महत्वपूर्ण लेख शामिल हैं जिन्हें उन्होंने चीनी क्रान्ति के विभिन्न कालों में लिखा था। इधर कुछ वर्षों में अनेक स्थानों पर "माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं" के कई चीनी संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं, लेकिन इनमें से किसी भी संस्करण को प्रकाशन से पहले लेखक स्वयं नहीं देख पाए थे। प्रकाशित सामग्री अव्यवस्थित थी, छपाई में कुछ शाब्दिक गलतियां रह गई थीं, और कुछ महत्वपूर्ण लेख छूट दिए गए थे। वर्तमान संस्करण की विषय-वस्तु को समय-क्रम के अनुसार, और १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के बाद से इसके इतिहास के भिन्न कालों के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। इस संस्करण में वे अनेक महत्वपूर्ण लेख भी यथासम्भव शामिल कर लिए गए हैं जो पिछले किसी संस्करण में नहीं थे। लेखक ने इस संस्करण के सभी लेख पढ़ लिए हैं, कुछ स्थानों पर शाब्दिक परिवर्तन किए हैं और इने गिने लेखों के मजमून में कुछ परिवर्तन और संशोधन भी किए हैं।

इस प्रकाशन के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें स्पष्ट कर देना आवश्यक है:

(१) मौजूदा संकलन अपूर्ण रह गया है। चूंकि क्रान्तिकारी दस्तावेज क्वोमिनताङ प्रतिक्रियावादियों द्वारा नष्ट कर दिए गए अथवा युद्ध के लम्बे दौर में बिखर गए और खो गए, इसलिए हम

कामरेड माओ त्सेतुङ की तमाम रचनाओं को संकलित नहीं कर सकते, खास तौर से उनके उन अनगिनत पत्रों व तारों को जो उनके लेखन का एक काफी बड़ा भाग था।

(२) व्यापक रूप से प्रचलित कुछ लेखों को (जैसे "देहातों की जांच-पड़ताल") लेखक की अपनी ही राय के मुताबिक इस संकलन में नहीं रखा गया है, और इसी कारण "आर्थिक तथा वित्तीय समस्याएं" नामक रचना के केवल पहले अध्याय ("हमारे पिछले काम का बुनियादी निचोड़") को ही इसमें शामिल किया गया है।

(३) वर्तमान संकलन में कुछ व्याख्यात्मक नोट जोड़ दिए गए हैं। शीर्षकों का स्पष्टीकरण करने वाले कुछ नोट लेख के पहले पृष्ठ के नीचे ही दे दिए गए हैं, और शेष राजनीतिक या अन्य नोट प्रत्येक लेख के अन्त में दिए गए हैं।

(४) वर्तमान चीनी संस्करण एक ही ग्रन्थ के रूप में अथवा चार ग्रन्थों के एक सेट के रूप में उपलब्ध है। सेट के पहले ग्रन्थ में प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल तथा द्वितीय क्रान्तिकारी गृह-युद्ध का काल शामिल हैं; दूसरे और तीसरे ग्रन्थ में जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का काल शामिल है; और चौथे ग्रन्थ में तृतीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल शामिल है।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की
माओ त्सेतुङ संकलित-रचना प्रकाशन समिति

२५ अगस्त १९५१

विषय-सूची

प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल

द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल

प्रथम
क्रान्तिकारी गृहयुद्ध
का काल

चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण*

मार्च १९२६

हमारे दुश्मन कौन हैं ? हमारे दोस्त कौन हैं ? यह सवाल क्रान्ति में प्राथमिक महत्व का सवाल है। चीन में पिछले तमाम क्रान्तिकारी संघर्षों को बहुत कम सफलता मिली। इसका बुनियादी कारण यह है कि वे अपने वास्तविक दुश्मनों पर हमला करने के लिए अपने वास्तविक दोस्तों के साथ एकता कायम नहीं कर सके। क्रान्तिकारी पार्टी आम जनता की रहनुमा होती है, और ऐसी कोई भी क्रान्ति कभी सफल नहीं हो सकती जिसमें क्रान्तिकारी पार्टी आम जनता को गलत राह पर ले गई हो। इस बात की गारन्टी करने के लिए कि हम अपनी क्रान्ति में आम जनता को गलत राह पर न ले जाएं और निश्चित रूप से सफलता प्राप्त करें, हमें अपने वास्तविक दुश्मनों पर हमला करने के लिए अपने वास्तविक दोस्तों के साथ एकता कायम करने की ओर ध्यान देना चाहिए। वास्तविक दोस्तों

* यह लेख कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा पार्टी में उस समय मौजूद दो भटकावों का विरोध करने के लिए लिखा गया था। पहला भटकाव, जिसका प्रतिनिधित्व छन तू-श्यू करता था, सिर्फ क्वोमिन्ताङ के साथ सहयोग पर ही ध्यान देता था और किसानों को भूल जाता था। यह दक्षिणपंथी अवसरवाद था। दूसरा भटकाव, जिसका प्रतिनिधित्व चाङ क्वो-थाओ करता था, सिर्फ मजदूर आन्दोलन पर ही ध्यान देता था और वह भी किसानों को भूल जाता था। यह "वामपंथी"

और वास्तविक दुश्मनों के बीच फर्क करने के लिए, हमें चीनी समाज के विभिन्न वर्गों की आर्थिक स्थिति और क्रान्ति की तरफ उनके अपने-अपने रुख का आम विश्लेषण करना चाहिए।

चीनी समाज में विभिन्न वर्गों की स्थिति क्या है?

जमींदार वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग। आर्थिक रूप से पिछड़े हुए और अर्ध-औपनिवेशिक चीन में जमींदार वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग पूरी तरह अन्तरराष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के दुमछल्ले हैं। वे अपने अस्तित्व और विकास के लिए साम्राज्यवाद पर निर्भर रहते हैं। ये वर्ग चीन के सबसे पिछड़े हुए और सबसे प्रतिक्रियावादी उत्पादन-सम्बन्धों का प्रतिनिधित्व करते हैं और उसकी उत्पादक शक्तियों के विकास को रोकते हैं। इनका अस्तित्व चीनी क्रान्ति के उद्देश्यों से बिलकुल मेल नहीं खाता। विशेषकर बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े दलाल-पूंजीपतियों का वर्ग, ये दोनों हमेशा साम्राज्यवाद का पक्ष लेते हैं और एक अत्यन्त प्रतिक्रान्तिकारी गुट के रूप

अवसरवाद था। हालांकि दोनों तरह के अवसरवादी यह जानते थे कि क्रान्तिकारी पक्ष की शक्ति काफी नहीं है, फिर भी उनमें से एक को भी यह पता न था कि नई शक्ति और विशाल संश्रयकारी जन-समुदाय को कहां से प्राप्त किया जा सकता है। कामरेड माओ त्सेतुङ ने बताया कि किसान चीनी सर्वहारा वर्ग के सबसे ज्यादा संख्या वाले और सबसे वफादार संश्रयकारी हैं, और इस तरह उन्होंने चीनी क्रान्ति में सबसे मुख्य संश्रयकारी की समस्या हल कर दी। साथ ही उन्होंने यह भी देख लिया कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग एक ढुलमुल वर्ग होता है, और यह भविष्यवाणी भी की कि क्रान्तिकारी उभार के समय वह दो भागों में विभक्त हो जाएगा और उसका दक्षिण पक्ष साम्राज्यवाद से जा मिलेगा। १९२७ की घटनाओं ने उनकी समझ को सही साबित कर दिखाया।

में संगठित हो जाते हैं। इनके राजनीतिक प्रतिनिधि हैं राजसत्तावादी[१] और क्वोमिन्ताङ का दक्षिण पक्ष।

मध्यम-पूंजीपति वर्ग। यह वर्ग शहरों और देहातों में चीन के पूंजीवादी उत्पादन-सम्बन्धों का प्रतिनिधित्व करता है। मध्यम-पूंजीपति वर्ग का अर्थ मुख्यतः राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग से है। वह चीनी क्रान्ति के प्रति असंगत रुख अपनाता है: जब वह विदेशी पूंजी की मार और युद्ध-सरदारों के उत्पीड़न से त्रस्त होता है, तो उसे क्रान्ति की जरूरत महसूस होती है और वह साम्राज्यवाद व युद्ध-सरदारों के खिलाफ क्रान्तिकारी आन्दोलन का पक्षपोषण करता है। लेकिन जब देश में सर्वहारा वर्ग क्रान्ति में जुझारूपन के साथ हिस्सा लेता है और देश के बाहर अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग इस क्रान्ति को सक्रिय सहायता देता है, जिससे उसे यह महसूस होने लगता है कि एक वर्ग के रूप में आगे बढ़कर बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के स्तर पर पहुंचने की उसकी इच्छा के विफल होने का खतरा पैदा हो गया है, तो क्रान्ति के प्रति वह सन्देह का रुख अपना लेता है। राजनीतिक दृष्टि से वह एक ही वर्ग, अर्थात राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के शासन में राजसत्ता कायम करने का पक्षपोषण करता है। ताए ची-थाओ[२] के एक खुदसाख्ता "सच्चे शिष्य" ने पेकिङ से प्रकाशित "छन पाओ"[३] में लिखा था: "अपना बायां घूंसा साम्राज्यवाद को मार गिराने के लिए उठाओ और दायां घूंसा कम्युनिस्ट पार्टी को मार गिराने के लिए उठाओ।" यह कथन इस वर्ग की दुविधा और परेशानी पर प्रकाश डालता है। इस वर्ग को क्वोमिन्ताङ के जन-जीविका के सिद्धान्त की व्याख्या वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त के अनुसार किए जाने पर आपत्ति है तथा वह रूस से क्वोमिन्ताङ का

संश्रय कायम होने और क्वोमिन्ताङ में कम्युनिस्टों[४] व वामपक्षियों के शामिल किए जाने का विरोध करता है। लेकिन राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के शासन में राजसत्ता कायम करने का उसका लक्ष्य बिलकुल अव्यावहारिक है, क्योंकि दुनिया की मौजूदा परिस्थिति ऐसी है कि क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति, इन दो बड़ी ताकतों के बीच अन्तिम संघर्ष छिड़ा हुआ है। इन दोनों ताकतों ने दो बड़े झण्डे उठाए हुए हैं। एक क्रान्ति का लाल झण्डा है जिसे तीसरी इन्टरनेशनल ऊंचा उठाए हुए है और जो दुनिया के तमाम पीड़ित वर्गों को गोलबन्द कर रहा है, तथा दूसरा प्रतिक्रान्ति का सफेद झण्डा है जिसे लीग आफ नेशन्स ऊंचा उठाए हुए है और जो दुनिया के तमाम प्रतिक्रान्तिकारियों को गोलबन्द कर रहा है। मध्यवर्ती वर्ग निस्सन्देह जल्दी ही टूट जाएंगे, कुछ हिस्से बाएं मुड़ेंगे और क्रान्ति की पांतों में शामिल हो जाएंगे तथा दूसरे हिस्से दाएं मुड़ेंगे और प्रतिक्रान्ति की पांतों में शामिल हो जाएंगे। उनके लिए "स्वतंत्र" रहने की गुंजाइश नहीं है। इसलिए चीन के मध्यम-पूंजीपति वर्ग की यह मनोकामना कि एक "स्वतंत्र" क्रान्ति चलाई जाए जिसमें वह प्रमुख भूमिका अदा कर सके, महज एक भ्रम है।

निम्न-पूंजीपति वर्ग। भूमिधर-किसान,[५] मालिक-दस्तकार और छोटे बुद्धिजीवियों के तबके – विद्यार्थी, प्राइमरी व मिडिल स्कूलों के अध्यापक, छोटे सरकारी कर्मचारी, दफ्तरों के क्लर्क, छोटे वकील – और छोटे व्यापारी, ये सभी इस श्रेणी में आते हैं। यह वर्ग अपनी संख्या और अपने वर्ग-चरित्र के कारण बहुत ध्यान देने के योग्य है। भूमिधर-किसान और मालिक-दस्तकार दोनों ही छोटे पैमाने के उत्पादन में लगे हुए हैं। हालांकि इस निम्न-पूंजीपति वर्ग

के विभिन्न तबकों की एक जैसी निम्न-पूंजीवादी आर्थिक स्थिति है, फिर भी उन्हें तीन विभिन्न श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी में वे लोग हैं जिनके पास बचत का कुछ धन या गल्ला होता है, यानी वे लोग जो अपने शारीरिक या मानसिक श्रम से अपने खाने-खर्चने की जरूरत के अलावा सालाना बचत कर लेते हैं। ऐसे लोग अमीर बनने के लिए बहुत उत्सुक रहते हैं, और बड़ी भक्ति से मार्शल चाओ[६] की पूजा करते हैं। हालांकि बहुत बड़ी सम्पत्ति इकट्ठी करने का भ्रम उन्हें नहीं है, फिर भी मध्यम-पूंजीपति वर्ग की स्थिति तक पहुंचने के लिए वे बराबर लालायित रहते हैं। छोटे सेटों को लोगों का श्रद्धा-भाजन बनते देख उनके मुंह में खूब पानी भर आता है। ऐसे लोग दिल के कमजोर होते हैं, सरकारी अफसरों से डरते हैं और क्रान्ति से भी कुछ-कुछ डरते हैं। चूंकि इनकी आर्थिक स्थिति मध्यम-पूंजीपति वर्ग के बहुत निकट है, इसलिए वे उसके प्रचार में बहुत ज्यादा विश्वास करते हैं और क्रान्ति के प्रति सन्देह का रुख अपनाते हैं। यह श्रेणी निम्न-पूंजीपति वर्ग में अल्पसंख्या में है और उसका दक्षिण पक्ष है। दूसरी श्रेणी में वे लोग हैं जो मोटे तौर पर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं। इस श्रेणी के लोग पहली श्रेणी के लोगों से बहुत भिन्न हैं, वे धनी तो बनना चाहते हैं, लेकिन मार्शल चाओ उन्हें कभी धनी बनने नहीं देता। इसके अलावा पिछले कुछ वर्षों में साम्राज्यवादियों, युद्ध-सरदारों, सामन्ती जमींदार वर्ग और बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग के उत्पीड़न और शोषण से परेशान होकर उन्हें लगता है कि दुनिया अब वह नहीं रही जो पहले थी। वे महसूस करते हैं कि आज यदि वे उतनी ही मेहनत करें जितनी कि पहले किया करते थे, तो वे अपनी जीविका के लिए पर्याप्त कमाई

नहीं कर सकेंगे। काम के घण्टे बढ़ाकर, जल्दी उठकर और देर तक काम करके तथा अपने धन्धे में दुगुना ध्यान देकर ही वे गुजर-बसर कर सकते हैं। वे कुछ-कुछ गाली-गलौज करना शुरू करते हैं और विदेशियों को "विदेशी शैतान", युद्ध-सरदारों को "लुटेरे सेनापति" और स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों[७] को "जालिम अमीर" कहते हैं। जहां तक साम्राज्यवादियों और युद्ध-सरदारों के विरुद्ध चलाए गए आन्दोलन का सवाल है, वे सिर्फ उसकी सफलता में सन्देह करते हैं (कारण यह कि विदेशी और युद्ध-सरदार इतने अधिक शक्तिशाली नजर आते हैं), वे उसमें तुरत शामिल होने से इनकार करते हैं और तटस्थ रहते हैं, लेकिन क्रान्ति का विरोध वे कभी नहीं करते। यह श्रेणी काफी बड़ी तादाद में है और निम्न-पूंजीपति वर्ग के करीब आधे लोग इसमें आ जाते हैं। तीसरी श्रेणी में वे लोग हैं जिनका जीवन-स्तर गिरता जा रहा है। इस भाग में बहुतों की, जो पहले कुछ समृद्ध खानदानों में से थे, हालत धीरे-धीरे यहां तक पहुंच गई है कि वे महज गुजारा भर कर सकते हैं और उनका जीवन-स्तर दिन-पर-दिन गिरता जा रहा है। हर साल के अन्त में हिसाब-किताब करने पर उन्हें बड़ा सदमा पहुंचता है और वे आह भरकर कहते हैं, "हाय, फिर घाटा!" चूंकि इन लोगों ने अच्छे दिन देखे हैं और अब हर साल उनकी हालत गिरती जा रही है, कर्ज का बोझ बढ़ता जाता है और जिन्दगी दिन-पर-दिन दूभर होती जाती है, इसलिए उन्हें "भविष्य का ध्यान आते ही कंपकंपी छूटने लगती है"। मानसिक रूप से वे बहुत परेशान रहते हैं, क्योंकि उनके अतीत और वर्तमान में इतना अन्तर हो गया है। क्रान्तिकारी आन्दोलन में ऐसे लोग काफी महत्वपूर्ण होते हैं। इस जन-समूह की संख्या कम

नहीं है और ये निम्न-पूंजीपति वर्ग का वाम पक्ष हैं। साधारण समय में, निम्न-पूंजीपति वर्ग की उपर्युक्त तीनों श्रेणियां क्रान्ति की तरफ अलग-अलग रुख अपनाती हैं। लेकिन युद्धकाल में यानी क्रान्तिकारी उभार के समय, जब विजय की लालिमा दिखाई देने लगती है, तब क्रान्ति में न सिर्फ निम्न-पूंजीपति वर्ग का वाम पक्ष शामिल हो जाता है, बल्कि इस वर्ग का मध्यवर्ती भाग भी शामिल हो सकता है, यहां तक कि उसके दक्षिणपक्षियों को भी, सर्वहारा वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के वाम पक्ष की महान क्रान्तिकारी ज्वार की लपेट में आकर, क्रान्ति का साथ देना पड़ता है। १९२५ के ३० मई आन्दोलन[८] और जगह-जगह के किसान आन्दोलनों के अनुभव से हम देख सकते हैं कि यह निष्कर्ष सही है।

अर्ध-सर्वहारा वर्ग। जिसे यहां अर्ध-सर्वहारा वर्ग कहा गया है, उसमें पांच श्रेणियां हैं: (१) अर्धभूमिधर-किसानों की भारी बहुसंख्या,[९] (२) गरीब किसान, (३) छोटे दस्तकार, (४) दुकान-कर्मचारी[१०] और (५) फेरीवाले। अर्धभूमिधर-किसानों की भारी बहुसंख्या और गरीब किसान ये दोनों मिलकर देहात की आम जनता का बहुत बड़ा हिस्सा बन जाते हैं। किसान समस्या मूलतः उन्हीं की समस्या है। अर्धभूमिधर-किसान, गरीब किसान और छोटे दस्तकार ये सब भूमिधर-किसानों और मालिक-दस्तकारों से और भी छोटे पैमाने के उत्पादन में लगे हुए हैं। यद्यपि अर्धभूमिधर-किसानों की भारी बहुसंख्या और गरीब किसान दोनों ही अर्ध-सर्वहारा वर्ग में आते हैं, फिर भी अपनी आर्थिक स्थिति के हिसाब से उन्हें उच्च, मध्यम और निम्न इन तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है। अर्धभूमिधर-किसानों की जिन्दगी भूमिधर-किसानों की

ज़िन्दगी से ज्यादा कठिन है, क्योंकि हर साल उन्हें अपनी जरूरत के लगभग आधे अनाज की कमी का सामना करना पड़ता है। उन्हें दूसरों से लगान पर जमीन लेकर, अपनी श्रमशक्ति का एक हिस्सा बेचकर, या छोटे-मोटे व्यापार में लगकर यह कमी पूरी करनी पड़ती है। वसन्त के अन्त और ग्रीष्म के शुरू में, पौधों में हरा नाज निकलने के पहले और पुराने अनाज के चुक जाने के बाद, वे भारी ब्याज पर कर्ज लेते हैं और ऊंचे दाम देकर गल्ला खरीदते हैं। भूमिधर-किसानों की तुलना में, जिन्हें दूसरों की सहायता की जरूरत नहीं होती, इनका जीवन अवश्य ज्यादा कठिन है, लेकिन गरीब किसानों के मुकाबले फिर भी अच्छा है। कारण यह कि गरीब किसानों के पास अपनी जमीन नहीं होती और सालभर की जुताई-बुवाई के बाद फसल का आधा हिस्सा या उससे भी कम उनके हाथ आता है। अर्धभूमिधर-किसानों को यद्यपि लगान पर ली हुई जमीन की फसल का केवल आधा या उससे भी कम हिस्सा ही मिल पाता है, फिर भी उनकी अपनी जमीन की सारी फसल तो खुद उन्हीं को मिलती है। इसीलिए अर्धभूमिधर-किसानों में क्रान्तिकारीपन भूमिधर-किसानों से बढ़कर होता है, लेकिन गरीब किसानों से कम होता है। गरीब किसान देहात के असामी किसान हैं, जिनका शोषण जमींदार करते हैं। अपनी आर्थिक स्थिति के हिसाब से उन्हें अन्य दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। गरीब किसानों की एक श्रेणी के पास अपेक्षाकृत रूप से काफी खेती-औजार होते हैं और कुछ पूंजी भी होती है। ऐसे किसानों को अपनी सालभर की मेहनत का आधा फल मिल सकता है। कमी पूरी करने के लिए वे सहायक फसलें और उगा सकते हैं, मछलियां या झींगा-मच्छियां पकड़ सकते

हैं, मुर्गियां या सुअर पाल सकते हैं अथवा अपनी श्रमशक्ति का एक हिस्सा बेच सकते हैं। इस तरह वे जैसे तैसे अपना गुजर-बसर कर सकते हैं और तंगी व कठिनाई में भी साल काटने की उम्मीद कर सकते हैं। इसलिए उनकी जिन्दगी अर्धभूमिधर-किसानों से कठिन होती है, लेकिन गरीब किसानों की दूसरी श्रेणी से बेहतर होती है। इनमें क्रान्तिकारीपन अर्धभूमिधर-किसानों से बढ़कर होता है, लेकिन गरीब किसानों की दूसरी श्रेणी से कम होता है। जहां तक गरीब किसानों की दूसरी श्रेणी का सम्बन्ध है, उनके पास न तो खेती के पर्याप्त औजार होते हैं और न पूंजी होती है। उनके पास काफी खाद भी नहीं होती, जमीन से भी बहुत मामूली फसल प्राप्त होती है और लगान अदा करने के बाद उनके पास थोड़ी सी ही आमदनी बच रहती है, जिससे उनके लिए अपनी श्रमशक्ति का एक हिस्सा बेचना और भी जरूरी हो जाता है। अकाल के समय और तंगी के मौसम में, वे नाते-रिश्तेदारों और दोस्तों की चिरौरी करते हैं, चार-पांच दिन काटने के लिए कुछ तओ या शङ गल्ला उधार ले लेते हैं और लद्दू बैल के बोझ की तरह उन पर कर्जा चढ़ता जाता है। किसानों में सबसे ज्यादा तंगी इन्हीं को है और इन पर क्रान्तिकारी प्रचार का असर बहुत जल्दी होता है। छोटे दस्तकारों की गिनती अर्ध-सर्वहारा वर्ग में इसलिए की गई है क्योंकि यद्यपि उनके पास उत्पादन के कुछ मामूली से साधन होते हैं और वे अपना धन्धा खुद ही चलाते हैं, फिर भी उन्हें अक्सर अपनी श्रमशक्ति का एक हिस्सा बेचना पड़ता है और उनकी आर्थिक स्थिति गरीब किसानों से कुछ-कुछ मिलती-जुलती है। परिवार का भारी बोझ होने की वजह से, रहन-सहन के खर्च और आमदनी में अन्तर होने की वजह

से और गरीबी का भार व बेरोजगारी का भय बराबर बना रहने की वजह से उन लोगों की स्थिति आम तौर पर गरीब किसानों से मिलती है। दुकान-कर्मचारी दुकानों और स्टोरों में काम करने वाले वे लोग हैं जिन्हें अपनी बहुत ही मामूली तनखाह से अपने परिवार का खर्च चलाना पड़ता है। चीजों के भाव तो हर साल चढ़ते जाते हैं, लेकिन आम तौर से उनका वेतन कई साल में सिर्फ एक बार ही बढ़ता है। अगर कभी आपको उनके साथ हार्दिक वार्तालाप करने का मौका मिले, तो वे अपने अपार दुखों की कहानी सुनाने लगते हैं। उनकी स्थिति गरीब किसानों और छोटे दस्तकारों से ज्यादा भिन्न नहीं है और उन पर क्रान्तिकारी प्रचार का असर बहुत जल्दी होता है। फेरीवाले, चाहे वे बहंगी से सामान उठाकर फेरी लगाएं या सड़क के किनारे स्टाल लगाएं, थोड़ी पूंजी वाले लोग होते हैं, उन्हें बहुत कम मुनाफा होता है और वे इतना नहीं कमा पाते कि खाने-पहनने का खर्च निकाल सकें। उनकी स्थिति गरीब किसानों से ज्यादा भिन्न नहीं है और उन्हें भी गरीब किसानों की ही तरह क्रान्ति की जरूरत है, जो मौजूदा हालत को बदल दे।

सर्वहारा वर्ग। आधुनिक औद्योगिक सर्वहारा वर्ग संख्या में लगभग बीस लाख है। चूंकि चीन आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ है, इसलिए उसके आधुनिक औद्योगिक सर्वहारा वर्ग की संख्या भी बड़ी नहीं है। ये बीस लाख औद्योगिक मजदूर मुख्यतः पांच उद्योगों – रेलवे, खान, समुद्री परिवहन, सूती-कपड़ा और जहाज-निर्माण उद्योग – में काम करते हैं ; और उनकी एक बड़ी तादाद उन कारोबारों में गुलामी करती है जिनके मालिक विदेशी पूंजीपति हैं। यद्यपि औद्योगिक सर्वहारा वर्ग संख्या में कम है, फिर भी वह चीन

की नई उत्पादक शक्तियों का प्रतिनिधि है, आधुनिक चीन का सबसे प्रगतिशील वर्ग है और क्रान्तिकारी आन्दोलन की नेतृत्वकारी शक्ति बन गया है। पिछले चार वर्षों की हड़तालों में, जैसे नाविक-हड़ताल,[११] रेलवे-हड़ताल,[१२] खाएल्वान और च्याओच्वो की कोयला-खानों की हड़तालों[१३] में, शाम्येन हड़ताल[१४] और ३० मई आन्दोलन के बाद शांघाई और हाङकाङ की आम हड़तालों[१५] में, उसने जो ताकत दिखलाई है, उस पर हम यदि ध्यान दें, तो चीनी क्रान्ति में औद्योगिक सर्वहारा वर्ग की स्थिति का महत्व हमें तुरन्त मालूम हो जाएगा। औद्योगिक मजदूरों के इस स्थिति में हो सकने का पहला कारण उनका केन्द्रीकरण है। जनता का कोई दूसरा हिस्सा इतना केन्द्रित नहीं है। दूसरा कारण उनकी गिरी हुई आर्थिक स्थिति है। उनके उत्पादन के सभी साधन छिन चुके हैं, उनके पास अपने भुजबल के सिवाय और कुछ बाकी नहीं रह गया है, वे आगे कभी धनी बनने की आशा नहीं रखते तथा उन्हें साम्राज्यवादियों, युद्ध-सरदारों और पूंजीपतियों का अत्यन्त निष्ठुर व्यवहार सहना पड़ता है। यही वजह है कि वे खास तौर पर अच्छे योद्धा हैं। शहर के कुलियों की ताकत भी ध्यान देने योग्य है। ये ज्यादातर गोदी-मजदूर और रिक्शा खींचने वाले हैं, और इन्हीं की श्रेणी में मैला ढोने वाले गाड़ीवान और सड़कों की सफाई करने वाले मजदूर इत्यादि भी शामिल हैं। अपने भुजबल के सिवाय और कुछ न होने की वजह से उनकी आर्थिक स्थिति भी औद्योगिक मजदूरों जैसी ही है, लेकिन वे कम केन्द्रित हैं और उत्पादन में कम महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। चीन में अभी तक आधुनिक पूंजीवादी खेती बहुत कम होती है। जिसे हम देहाती सर्वहारा वर्ग कहते हैं, उसका

अर्थ है साल, महीने या दिन के हिसाब से काम पर लगाए जाने वाले खेत-मजदूर। इनके पास न जमीन है, न खेती-औजार हैं और न थोड़ी सी भी पूंजी है। वे जिन्दगी बसर करने के लिए केवल अपनी श्रमशक्ति को ही बेच सकते हैं। दूसरे मजदूरों की तुलना में वे सबसे ज्यादा घण्टे काम करते हैं, सबसे कम तनखाह पाते हैं, सबसे खराब हालत में जीवन बिताते हैं और उन्हें काम मिलने की बात सबसे कम भरोसे की है। इस तरह के लोग गांवों में अपने को सबसे ज्यादा तंगी में पाते हैं और किसान आन्दोलन में उनकी जगह वैसी ही महत्वपूर्ण है जैसी गरीब किसानों की।

इन सबके अलावा एक काफी बड़ी तादाद खानाबदोश सर्वहारा की है, यानी उन किसानों की है जिनकी जमीन छिन चुकी है और उन दस्तकारों की है जिन्हें काम नहीं मिल पाता। वे सबसे अस्थिर जिन्दगी बिताते हैं। इन्होंने जगह-जगह गुप्त संस्थाएं बना रखी हैं – जैसे फ़ूच्येन और क्वाङतुङ में "त्रयो-समाज"; हुनान, हुपे, क्वेइचओ और सछ्वान में "भाइयों का समाज"; आनह्वेइ, हनान और शानतुङ में "बड़ी-तलवार समाज"; चली और तीनों उत्तर-पूर्वी प्रान्तों में "बुद्धिसंगत-जीवन समाज"; शांघाई में और अन्य स्थानों में "नीला दल";[११] ये सब शुरू में राजनीतिक और आर्थिक संघर्ष में परस्पर सहायता देने के लिए कायम किए गए संगठन थे। इन लोगों से कैसे बरताव किया जाए, यह चीन की एक कठिन समस्या है। ये बहुत बहादुरी से लड़ सकते हैं, लेकिन विनाशकारी भी साबित हो सकते हैं। किन्तु सही निर्देशन मिलने पर ये एक क्रान्तिकारी शक्ति बन सकते हैं।

उपरोक्त बातों के सारांश के रूप में यह मालूम हो जाएगा कि

वे सभी लोग जो साम्राज्यवाद से मिले हुए हैं – युद्ध-सरदार, नौकरशाह, दलाल-पूंजीपति वर्ग, बड़े जमींदारों का वर्ग और उन पर निर्भर बुद्धिजीवियों का प्रतिक्रियावादी तबका – हमारे दुश्मन हैं। औद्योगिक सर्वहारा वर्ग हमारी क्रान्ति की नेतृत्वकारी शक्ति है। अर्ध-सर्वहारा वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग की सभी श्रेणियां हमारे सबसे नजदीकी दोस्त हैं। जहां तक ढुलमुल मध्यम-पूंजीपति वर्ग का सम्बन्ध है, उसका दक्षिण पक्ष हमारा शत्रु बन सकता है और वाम पक्ष हमारा दोस्त बन सकता है। लेकिन उनसे हमेशा सावधान रहना चाहिए और हमारी पांतों में उन्हें उलझन पैदा नहीं करने देना चाहिए।

नोट

१ यहां उन मुट्ठीभर निर्लज्ज फासिस्ट राजनीतिज्ञों का हवाला दिया गया है जिन्होंने "चीनी राजसत्तावादी नौजवान संघ" की स्थापना की थी, जिसका नाम बाद में "चीनी नौजवान पार्टी" रख दिया गया था। इन लोगों ने कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत संघ के विरोध को अपना प्रतिक्रान्तिकारी पेशा बना लिया था तथा वे सत्तारूढ़ प्रतिक्रियावादी गुटों और साम्राज्यवादियों से इमदादी रकम लेते थे।

२ ताए ची-थाओ अपनी युवावस्था में ही क्वोमिन्ताङ में शामिल हो गया था और च्याङ काई-शेक के साझीदार की हैसियत से सट्टा-बाजार में मुनाफाखोरी करता था। १९२५ में सुन यात-सेन के देहान्त के बाद, उसने कम्युनिस्ट-विरोधी तहरीक छेड़कर १९२७ में हुए च्याङ काई-शेक के प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव के लिए विचारधारात्मक आधार तैयार किया। लम्बे अरसे तक वह प्रतिक्रान्तिकारी कामों में च्याङ काई-शेक का वफादार कुत्ता बना रहा। च्याङ काई-शेक

के शासन का विनाश निकट देखकर, उसने हताश होकर फरवरी १९४९ में आत्महत्या कर ली।

[3] संविधान अध्ययन संघ का मुखपत्र। यह संघ उन राजनीतिक ग्रुपों में से एक था जो उस समय उत्तरी युद्ध-सरदारों के शासन का समर्थन करते थे।

[4] १९२३ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की मदद से सुन यात-सेन ने क्वोमिन्ताङ का पुनर्गठन करने, क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच सहयोग कायम करने तथा अपनी पार्टी में कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को भी शामिल होने देने का फैसला किया। इसके अलावा जनवरी १९२४ में उन्होंने क्वाङचाओ में क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस का आयोजन किया तथा रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता की तीन महान नीतियां निर्धारित कीं। माओ त्सेतुङ, ली ता-चाओ, लिन पो-छ्वी, छ्वी छ्यू-पाए और अन्य कामरेड इस कांग्रेस में शामिल हुए और उन्होंने क्वोमिन्ताङ को क्रान्ति के पथ पर लाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उनमें से कुछ कामरेडों को क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के नियमित या वैकल्पिक सदस्य भी चुना गया।

[5] यहां भूमिधर-किसानों से कामरेड माओ त्सेतुङ का मतलब मध्यम किसानों से है।

[6] मार्शल चाओ का पूरा नाम चाओ कुङ-मिङ है, जो चीनी लोक-कथा में धन के देवता के नाम से मशहूर है।

[7] स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे जमींदार वर्ग के राजनीतिक प्रतिनिधि थे और वे इस वर्ग के अत्यन्त खूंखार सदस्य थे। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के छुटभैये अक्सर धनी किसानों के बीच भी पाए जाते थे। — अनु०

[8] ३० मई आन्दोलन, ३० मई १९२५ को शांघाई में बरतानवी पुलिस द्वारा किए गए चीनी जनता के संहार के विरुद्ध छेड़ा गया देशव्यापी साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन था। मई १९२५ में छिङताओ और शांघाई की उन सूती-कपड़ा मिलों में बड़े पैमाने की हड़तालें हुईं जिनके मालिक जापानी थे। जापानी साम्राज्यवादी और उनके पालतू कुत्ते — उत्तरी युद्ध-सरदार — उन्हें दबाने में जुट गए। १५ मई को शांघाई की एक जापानी सूती-कपड़ा मिल के पूंजीपति ने कू चङ-हुङ नाम के एक मजदूर को गोली से मार डाला और दस से ज्यादा मजदूरों को घायल कर डाला। २८ मई को छिङताओ में प्रतिक्रियावादी सरकार ने आठ मजदूरों की हत्या कर डाली। ३० मई को शांघाई के दो हजार से अधिक विद्यार्थियों ने विदेशियों को पट्टे पर दी गई बस्तियों में मजदूरों का समर्थन करने के लिए प्रचार किया और पट्टे पर दी गई बस्तियों को वापस लेने का आवाहन किया। बरतानिया को पट्टे पर दी गई बस्ती के पुलिस-केन्द्र के सामने दस हजार से अधिक जनता इकट्ठी हो गई। उसने "साम्राज्यवाद का नाश हो!" और "चीनी जनता एक हो!" आदि नारे लगाए। बरतानवी साम्राज्यवाद की पुलिस ने जनता पर गोली चलाई तथा बहुत से विद्यार्थियों को मार डाला और घायल कर दिया। यही वारदात ३० मई का हत्याकाण्ड कहलाती है। इस वारदात से सारे देश की जनता में रोष भड़क उठा। जगह-जगह प्रदर्शन हुए और मजदूरों, विद्यार्थियों व दुकानदारों की हड़तालें हुईं, जिन्होंने अन्त में एक बहुत बड़े पैमाने के साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन का रूप धारण कर लिया।

[9] अर्धभूमिधर-किसानों की भारी बहुसंख्या से कामरेड माओ त्सेतुङ का तात्पर्य यहां उन दरिद्र किसानों से है, जो अंशतः अपनी जमीन पर काम करते हैं और अंशतः दूसरों से लगान पर ली हुई जमीन पर।

[10] पुराने चीन में दुकान-कर्मचारी विभिन्न तबकों के थे। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने इनके बहुसंख्यक तबके का हवाला दिया है। दुकान-कर्मचारियों का एक निम्न तबका भी था, जो सर्वहारा के समान जीवन बिताता था।

[11] १९२२ के आरम्भ में हाङकाङ के नाविकों और याङत्सी नदी के जहाजों के मल्लाहों ने हड़तालें कीं। हाङकाङ के नाविक दृढ़ता से आठ हफ्ते तक लड़ते रहे। तीव्र और रक्तपातपूर्ण संघर्ष के बाद, हाङकाङ के बरतानवी साम्राज्यवादी अधिकारियों को मजबूर होकर मजूरी बढ़ाने, नाविकों की यूनियन पर से पाबन्दी हटाने, गिरफ्तार मजदूरों को छोड़ने और शहीदों के परिवारों को हर्जाना देने की मांगें स्वीकार करनी पड़ीं। कुछ ही समय बाद, याङत्सी नदी के जहाजों के मल्लाहों ने भी हड़ताल शुरू कर दी, जो दो हफ्ते तक चली और अन्त में विजयी हुई।

१२ १९२१ में अपने जन्म के तुरन्त बाद ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी रेल-मजदूरों में संगठन का काम करने लगी। १९२२-२३ में पार्टी के नेतृत्व में सभी मुख्य रेल-लाइनों पर हड़तालें हुईं। इनमें सबसे प्रसिद्ध पेकिङ-हानखओ रेलवे की आम हड़ताल थी, जो ४ फरवरी १९२३ को शुरू हुई थी और मजदूर महासंघ संगठित करने की आजादी के लिए की गई थी। ७ फरवरी को बरतानवी साम्राज्यवाद द्वारा समर्थित उत्तरी युद्ध-सरदार ऊ फेइ-फू और श्याओ याओ-नान ने निर्दयता से हड़तालियों का संहार किया। यही ७ फरवरी का कुख्यात हत्याकाण्ड कहलाता है।

१३ खाएल्वान कोयला-खान का नामकरण खाएफिङ और ल्वानचओ कोयला-खानों को मिलाकर किया गया था। हपे प्रान्त की ये कोयला-खानें एक विशाल और परस्पर जुड़े हुए कोयला-खान क्षेत्र में हैं। उस समय यहां ५० हजार से ज्यादा मजदूर काम करते थे। १९०० के ई हो थ्वान आन्दोलन के समय बरतानवी साम्राज्यवादियों ने चीन से खाएफिङ कोयला-खान छीन ली थी। बाद में चीनियों ने ल्वानचओ कोयला-खान कम्पनी संगठित की। कुछ समय बाद इस कम्पनी को खाएल्वान कोयला-खान प्रशासन से मिला दिया गया। इस प्रकार बरतानवी साम्राज्यवादियों ने इन दोनों पर अधिकार जमा लिया। खाएल्वान कोयला-खान की हड़ताल १९२२ के अक्तूबर में हुई थी। च्याओत्सो कोयला-खान चीन की एक मशहूर कोयला-खान है, जो पहले हनान प्रान्त में थी और बाद में फिङय्वान प्रान्त के पश्चिमी इलाके में शामिल कर ली गई। च्याओत्सो कोयला-खान की हड़ताल १ जुलाई से ९ अगस्त १९२५ तक हुई थी।

१४ शाम्येन क्वाङचओ शहर का एक भाग है, जिसे बरतानवी साम्राज्य-वादियों ने पट्टे पर लिया था। जुलाई १९२४ में वहां के बरतानवी साम्राज्यवादी अधिकारियों ने यह नया पुलिस आदेश निकाला कि उस इलाके में आते-जाते समय सभी चीनियों को पास दिखाने होंगे, जिनमें उनके फोटो भी लगे होंगे। किन्तु विदेशी वहां स्वच्छंदता से आ-जा सकते थे। इस अयुक्तिसंगत नियम के विरुद्ध शाम्येन के मजदूरों ने १५ जुलाई से हड़ताल कर दी। अन्त में बरतानवी साम्राज्यवादियों को विवश होकर इस आदेश को रद्द करना पड़ा।

१५ ३० मई १९२५ की शांघाई की वारदात के बाद, १ जून को शांघाई में

और १९ जून को हाङकाङ में आम हड़तालें शुरू हो गईं। दो लाख से ज्यादा मजदूरों ने शांघाई की और ढाई लाख मजदूरों ने हाङकाङ की हड़तालों में भाग लिया। समूचे देश की जनता का समर्थन पाकर हाङकाङ की यह भारी हड़ताल लगातार सोलह महीने तक चलती रही। विश्व मजदूर आन्दोलन के इतिहास में यह सबसे लम्बी हड़ताल थी।

१६ "त्रयी-समाज", "भाइयों का समाज", "बड़ी-तलवार समाज", "बुद्धिसंगत-जीवन समाज" और "नीला दल" जनता के अन्दर मौजूद आदिम किस्म के गुप्त संगठन थे। उनके सदस्य मुख्यतः दिवालिया किसान, बेकार दस्तकार और अन्य आवारा सर्वहारा होते थे। सामन्ती चीन में ये लोग किसी धर्म या अंधविश्वास के सामान्य सूत्र में संगठित होकर दादापंथी ढांचे के अनेक संगठन अनेक नामों से बना लेते थे। इनमें कुछ संगठनों के पास हथियार भी थे। वे इन संगठनों के जरिए सामाजिक जीवन में एक दूसरे की मदद करना चाहते थे। कभी-कभी वे इन संगठनों के जरिए अपने उत्पीड़कों से – नौकरशाहों और जमींदारों से – संघर्ष भी छेड़ते थे। स्पष्ट है कि इस तरह के पिछड़े हुए संगठन किसानों और दस्तकारों को उनकी मुसीबत से निकलने की राह नहीं दिखा सकते थे। यही नहीं, उनका जमींदारों और स्थानीय निरंकुश शासकों द्वारा आसानी से नियंत्रण और इस्तेमाल भी किया जा सकता था। इस कारण और अपनी अन्धी ध्वंस-वृत्ति के कारण उनमें से कुछ संगठन प्रतिक्रियावादी शक्ति भी बन गए। १९२७ में अपने प्रति-क्रान्तिकारी राजविप्लव में च्याङ काई-शेक ने मेहनतकश जनता में फूट डालने और क्रान्ति का नाश करने के लिए उनका इस्तेमाल किया था। शक्तिशाली आधुनिक सर्वहारा वर्ग के अभ्युदय के बाद जब किसानों ने मजदूर वर्ग के नेतृत्व में कदम-ब-कदम बिलकुल नए किस्म के संगठन बना लिए, तो इन आदिम, पिछड़े हुए संगठनों के अस्तित्व का कोई कारण नहीं रह गया।

हुनान के किसान आन्दोलन की जांच-पड़ताल की रिपोर्ट*

मार्च १९२७

किसान समस्या का महत्व

पिछले दिनों हुनान[१] जाने पर मैंने श्याङथान, श्याङश्याङ, हङशान, लीलिङ और छाङशा, इन पांचों काउन्टियों की हालत की प्रत्यक्ष जांच-पड़ताल की। ४ जनवरी से ५ फरवरी तक ३२ दिनों में मैंने गांवों और काउन्टी-केन्द्रों में तथ्य-संग्रह मीटिंगें बुलाईं, जिनमें अनुभवी किसानों और किसान आन्दोलन में जुटे हुए साथियों ने भाग लिया और मैंने उनकी रिपोर्टें ध्यान से सुनीं तथा बहुत सी सामग्री इकट्ठी की। किसान आन्दोलन कैसे हुआ और क्यों हुआ इत्यादि के बारे में जो बातें मुझे मालूम हुईं, वे उससे बिलकुल उल्टी थीं जो हानखओ और छाङशा में शरीफजादे कहते फिर रहे हैं।

---

* यह लेख पार्टी के भीतर और बाहर हो रही उन तीव्र आलोचनाओं के उत्तर में लिखा गया था जो किसानों के क्रान्तिकारी संघर्षों के बारे में उस समय की जा रही थीं। इन आलोचनाओं का जवाब देने के लिए कामरेड माओ त्सेतुङ ने हुनान जाकर बत्तीस दिन तक जांच-पड़ताल की और यह रिपोर्ट लिखी। पार्टी के अन्दर दक्षिणपंथी अवसरवादी, जिनका अगुवा छन तू-श्यू था, कामरेड माओ त्सेतुङ के विचार मानने से इनकार करते थे और अपनी गलत धारणाओं

बहुत सी अनोखी बातें मैंने देखी और सुनीं जिनके बारे में मुझे पहले कुछ भी पता न था। मेरा खयाल है कि इसी तरह की परिस्थिति और बहुत सी जगहों में भी मौजूद है। किसान आन्दोलन के खिलाफ सभी तरह की दलीलों को तुरत ठीक कर लेना चाहिए। किसान आन्दोलन के बारे में क्रान्तिकारी अधिकारियों द्वारा उठाए गए तमाम गलत कदमों को तुरत बदल देना चाहिए। केवल इसी तरह क्रान्ति के भविष्य के लिए कुछ उपयोगी काम किया जा सकता है। कारण यह कि किसान आन्दोलन का मौजूदा उभार एक बहुत बड़ी घटना है। कुछ ही दिनों के अन्दर चीन के मध्यवर्ती, दक्षिणी और उत्तरी प्रान्तों में दसियों करोड़ किसान एक प्रबल झंझावात या भीषण तूफान की तरह उठ खड़े होंगे। यह एक ऐसी अद्‌भुत वेगवान और प्रचण्ड शक्ति होगी कि बड़ी से बड़ी ताकत भी उसे दबा न सकेगी। किसान अपने उन समस्त बन्धनों को, जो अभी उन्हें बांधे हुए हैं, तोड़ डालेंगे और मुक्ति के मार्ग पर तेजी से बढ़ चलेंगे। वे सभी साम्राज्यवादियों, युद्ध-सरदारों, भ्रष्टाचारी अफसरों, स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को यमलोक भेज देंगे। सभी क्रान्तिकारी पार्टियों को और सभी क्रान्तिकारी साथियों को उनके द्वारा जांचा-परखा जाएगा और उनके फैसले के अनुसार अपनाया अथवा ठुकराया जाएगा। इस बारे में तीन विकल्प हो सकते हैं। उनके आगे-आगे चलें और उनका नेतृत्व करें? या उनके पीछे-पीछे चलें और उंगली उठा-उठा कर उनकी आलोचना करते रहें? या उनके सामने खड़े होकर उनका विरोध करें? हर चीनी इन तीनों रास्तों में से कोई भी एक चुनने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन परिस्थितियां आपको इस बात के लिए मजबूर कर देंगी कि आप यह चुनाव तुरत करें।

पर अड़े रहते थे। उनकी मुख्य गलती यह थी कि क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादी रुझान से सहमकर वे इस बात की हिम्मत ही न कर पाते थे कि किसानों के महान क्रान्तिकारी संघर्षों का, जो फूट चुके थे या फूट रहे थे, समर्थन करें। क्वोमिन्ताङ को खुश रखने के लिए उन्होंने किसानों, क्रान्ति के सबसे मुख्य संश्रयकारियों, का साथ छोड़ देना उचित समझा और इस तरह मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी को अलगाव में व निस्सहाय अवस्था में डाल दिया। मुख्य रूप से कम्युनिस्ट पार्टी की इस कमजोरी से फायदा उठाकर ही क्वोमिन्ताङ ने १९२७ की गरमियों में क्रान्ति के साथ गद्दारी करने, अपना "पार्टी-शुद्धि आन्दोलन" छेड़ने और जनता के खिलाफ युद्ध करने की जुर्रत की।

संगठित हो जाना

हुनान के किसान आन्दोलन के विकास को, जहां तक प्रान्त के मध्यवर्ती और दक्षिणी भाग की उन काउन्टियों का सम्बन्ध है जिनमें आन्दोलन काफी हद तक फैल चुका है, मोटे तौर से दो कालों में बांटा जा सकता है। पहला काल संगठन का काल है जो पिछले साल जनवरी से सितम्बर तक चला। इस काल में जनवरी से जून तक की मंजिल गुप्त कार्यवाही की मंजिल थी और जुलाई से सितम्बर तक की मंजिल, जिसमें क्रान्तिकारी सेना ने चाओ हङ-थी[१] को निकाल बाहर किया, खुली कार्यवाही की मंजिल थी। इस काल में किसान सभा के सदस्यों की संख्या तीन-चार लाख से ज्यादा नहीं थी और जिस जन-समुदाय का वह सीधे नेतृत्व कर सकती थी,

उसकी संख्या दस लाख से कुछ ही ऊपर थी। गांवों में संघर्षों का प्रायः अभाव था, इसलिए विभिन्न तबकों में इस सभा की बहुत कम आलोचना सुनाई पड़ती थी। चूंकि उसके सदस्य मार्गदर्शकों, स्काउटों और बोझा ढोने वालों का काम कर देते थे, इसलिए उत्तरी अभियान सेना के कुछ अफसर तक किसान सभा के लिए दो-चार अच्छे शब्द इस्तेमाल कर दिया करते थे। दूसरा काल क्रान्तिकारी कार्यवाही का है जो पिछले अक्तूबर से इस जनवरी तक रहा। किसान सभा के सदस्यों की संख्या एकदम बढ़कर बीस लाख तक पहुंच गई और जिस जन-समुदाय का वह सीधे नेतृत्व कर सकती थी, उसकी संख्या एक करोड़ तक पहुंच गई। किसान सभा में शामिल होते समय किसान अक्सर हर परिवार के लिए केवल एक ही नाम लिखाते थे, इसलिए बीस लाख सदस्यों का मतलब यह हुआ कि किसान सभा के अनुयाइयों की तादाद लगभग एक करोड़ हो गई। इस समय हुनान के कुल किसानों में से लगभग आधे संगठित हैं। श्याङथान, श्याङश्याङ, ल्यूयाङ, छाङशा, लीलिङ, निङश्याङ, फिङच्याङ, श्याङइन, हङशान, हङयाङ, लेइयाङ, छनश्येन और आनह्वा जैसी काउन्टियों में लगभग सभी किसान संगठनात्मक रूप से किसान सभा में जत्थेबन्द हो गए हैं या उसके नेतृत्व में चलते हैं। अपने विशाल संगठन की शक्ति के आधार पर ही किसान सीधे मैदान में उतर आए और चार महीने के अन्दर-अन्दर उन्होंने देहाती क्षेत्र में एक महान क्रान्ति, एक अभूतपूर्व क्रान्ति कर डाली।

स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों का नाश होना और सारी सत्ता किसान सभा के हाथ में होना

किसान अपने हमले का मुख्य निशाना स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों और स्वेच्छाचारी जमींदारों को बनाते हैं, लेकिन लगे हाथों वे पितृसत्तात्मक विचारधारा और व्यवस्थाओं, शहरों के भ्रष्टाचारी अफसरों और देहात के बुरे रीति-रिवाजों पर भी हल्ला बोल देते हैं। शक्ति और वेग में यह हमला आंधी या तूफान की तरह होता है। जो लोग उसके सामने सिर झुका देते हैं, वे बच जाते हैं और जो उसका विरोध करते हैं, वे खाक में मिल जाते हैं। परिणामस्वरूप हजारों साल से सामन्ती जमींदार जिन विशेषाधिकारों का उपभोग कर रहे थे, उन्हें चूर-चूर किया जा रहा है। जमींदारों ने अपनी जो मान-मर्यादा और इज्जत बना रखी थी वह रत्ती-रत्ती धूल में मिलाई जा रही है। जमींदारों की सत्ता के चकनाचूर किए जाने पर किसान सभा ही सत्ता लागू करने वाली एकमात्र संस्था रह गई है और "सारी सत्ता किसान सभा के हाथ में हो" का लोकप्रिय नारा एक वास्तविकता बन चुका है। मियां-बीवी के झगड़े जैसी मामूली बातें भी फैसले के लिए किसान सभा के सामने पेश की जाती हैं। किसान सभा के कार्यकर्ताओं के न रहने पर किसी भी बात का फैसला नहीं हो सकता। यह हकीकत है कि गांवों के सभी मामलों में किसान सभा का फरमान चलता है और यह बात अक्षरशः ठीक है कि "जो कुछ किसान सभा कहती है, वही होता है"। किसान सभा के बाहर के लोग सभा की तारीफ ही कर सकते हैं और सभा के खिलाफ कुछ भी नहीं कह सकते।

स्थानीय निरंकुश तत्व व बुरे शरीफजादे और स्वेच्छाचारी जमींदार बोलने के अधिकार से कतई वंचित कर दिए गए हैं और उनमें से किसी की जुर्रत नहीं होती कि किसान सभा से "ना" कहे। किसान सभा की शक्ति और दबाव से बचने के लिए अव्वल नम्बर के स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे शांघाई भाग गए हैं, दूसरे नम्बर के हानखओ को, तीसरे नम्बर के छाङशा को और चौथे नम्बर के काउन्टी-केन्द्रों को भाग गए हैं। पांचवें नम्बर के और उनसे भी निचले दर्जे के स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे देहातों में ही रह गए हैं और उन्होंने किसान सभा के सामने आत्मसमर्पण कर दिया है।

छुटभैये बुरे शरीफजादों में से कोई कहेगा : "यह दस य्वान चन्दा हाजिर है, मेहरबानी करके मुझे किसान सभा में भरती कर लो।"

किसान जवाब देंगे : "छि:, तुम्हारे गन्दे पैसों की किसे जरूरत है?"

बहुत से मध्यम व छोटे जमींदार तथा धनी किसान यहां तक कि मध्यम किसान भी, जो पहले किसान सभा के विरोधी थे, अब उसमें शामिल होने का विफल प्रयत्न कर रहे हैं। कई जगह जाने पर मुझे अक्सर ऐसे लोग मिले, जो मुझसे निवेदन करते थे : "प्रान्तीय राजधानी के कमेटी-मेम्बर साहब, आप कृपा करके मेरे प्रस्तावक बन जाइए।"

छिङ वंश के राज्य में स्थानीय अधिकारी लोग मर्दुमशुमारी की जो किताब बनाते थे, उसमें एक तो नियमित खाता होता था और दूसरा "अन्य" खाता। पहले में ईमानदार आदमियों के नाम लिखे जाते थे और दूसरे में चोरों, डाकुओं और अन्य बदकारों के। कुछ जगहों में अब किसान यही तरीका उन लोगों को धमकाने के लिए काम में लाते हैं जो पहले किसान सभा के विरोधी थे। वे कहते हैं, "इनका नाम अन्य खाते में लिख लो!"

ऐसे लोग अन्य खाते में नाम लिखे जाने से डरते हैं, इसलिए वे तरह-तरह से किसान सभा में शामिल होने की कोशिशें करते हैं और उन्हें तब तक तसल्ली नहीं होती जब तक कि सभा के रजिस्टर में नाम दर्ज कराने की उनकी लालसा पूरी नहीं हो जाती। लेकिन आम तौर से उनकी प्रार्थना कठोरता से ठुकरा दी जाती है और वे बराबर बेचैनी में दिन काटते हैं। किसान सभा का द्वार बन्द हो जाने से उनकी हालत बेघरबार लोगों जैसी हो जाती है या गांव की भाषा में वे "बेठौर-ठिकाने वाले" बन जाते हैं। संक्षेप में, चार महीने पहले जिसे लोग "किसानों का गिरोह" कहकर नाक-भौं सिकोड़ते थे, वह अब बहुत ही सम्मान की चीज हो गई है। जो पहले शरीफ-जादों की सत्ता के सामने माथा टेकते थे, वे अब किसानों की सत्ता के सामने माथा टेकते हैं। हर कोई मानता है कि पिछले अक्तूबर के बाद दुनिया बदल गई है।

"सत्यानाश हो गया!" और "बहुत ठीक हुआ!"

देहात में किसानों के विद्रोह से शरीफजादों के मीठे सपने टूट गए। गांवों की खबर जब शहरों में पहुंची, तब वहां के शरीफजादों में जोरों की खलबली मच गई। छाङशा पहुंचने के बाद मुझे फौरन ही हर तरह के लोगों से मिलने का मौका मिला और मेरे पास काफी

मात्रा में बाजारू गप्पें इकट्ठी हो गईं। मध्यम सामाजिक श्रेणी वाले लोगों से लेकर क्वोमिन्ताङ के दक्षिणपक्षियों तक एक भी आदमी ऐसा न था जो सारे घटनाचक्र को संक्षेप में यों न बयान करता हो : "सत्यानाश हो गया !" ऐसे लोग भी, जो काफी क्रान्तिकारी थे, सारे शहर पर आंधी की तरह छाए हुए "सत्यानाश"-वाद के असर में आ गए। देहात की हालत का खयाल करते-करते वे पस्त हो जाते थे और "सत्यानाश" शब्द से इनकार न कर पाते थे। यहां तक कि काफी प्रगतिशील लोग भी यही कह पाते थे : "दरअसल हुआ तो सत्यानाश ही, लेकिन क्रान्ति के दौर में यह सब अनिवार्य है।" संक्षेप में यह कि ऐसा कोई नहीं जो "सत्यानाश" शब्द से पूर्ण रूप से इनकार कर सकता हो। लेकिन जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, वास्तविकता यह है कि व्यापक किसान जन-समुदाय अपने ऐतिहासिक मिशन को पूरा करने के लिए उठ खड़ा हुआ है, देहातों की जनवादी शक्तियां गांवों की सामन्ती शक्तियों का तख्ता उलटने के लिए उठ खड़ी हुई हैं। स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों और स्वेच्छाचारी जमींदारों का पितृसत्तात्मक-सामन्ती वर्ग हजारों साल की निरंकुश हुकूमत का आधार बना हुआ है और साम्राज्यवादियों, युद्ध-सरदारों और भ्रष्टाचारी अफसरों का आश्रय-स्तम्भ है। राष्ट्रीय क्रान्ति का असली उद्देश्य इन सामन्ती शक्तियों का तख्ता उलटना है। राष्ट्रीय क्रान्ति की सेवा में खपाए हुए अपने चालीस वर्षों में जो कुछ डा० सुन यात-सेन करना चाहते थे लेकिन कर न सके, उसे किसानों ने कुछ ही महीनों में पूरा कर लिया है। यह एक ऐसा अनोखा करिश्मा है जो पहले कभी नहीं किया गया, पिछले चालीस वर्षों में ही नहीं बल्कि कई हजार वर्षों में भी। दरअसल

यह सब बहुत ठीक हुआ। यह "सत्यानाश" कतई नहीं है। यह चाहे और कुछ भी क्यों न हो, "सत्यानाश" तो हरगिज नहीं है। जाहिर है कि "सत्यानाश हो गया" का सिद्धान्त जमींदारों के हित में किसानों के उभार पर प्रहार करने का सिद्धान्त है ; जाहिर है कि यह जमींदार वर्ग द्वारा पुरानी सामन्ती व्यवस्था कायम रखने का और नई जनवादी व्यवस्था कायम करने में रुकावट डालने का सिद्धान्त है ; जाहिर है कि यह एक क्रान्ति-विरोधी सिद्धान्त है। किसी भी क्रान्तिकारी साथी को तोते की तरह ऐसी बकवास नहीं करनी चाहिए। अगर आपका क्रान्तिकारी दृष्टिकोण पक्का हो गया है और इसके अलावा, यदि आपने परिस्थिति का अन्दाज लगाने के लिए गांवों का चक्कर लगाया है, तो आपको सचमुच इतनी खुशी होगी जितनी पहले कभी नहीं हुई। वहां लाखों-लाख गुलामों – किसानों – के विशाल दल-के-दल अपने आदमखोर दुश्मनों का तख्ता उलट रहे हैं। उनकी कार्यवाही बिलकुल सही है ; उनके काम दरअसल बहुत ठीक हैं ! "बहुत ठीक हुआ", यह किसानों और दूसरे सभी क्रान्तिकारियों का सिद्धान्त है। हर क्रान्तिकारी साथी को जानना चाहिए कि राष्ट्रीय क्रान्ति का तकाजा है कि देहात में एक महान परिवर्तन हो। १९११ की क्रान्ति[३] यह परिवर्तन नहीं ला सकी थी, इसलिए वह असफल हुई। अब जो परिवर्तन हो रहा है, वह क्रान्ति को पूरा करने के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है। हर क्रान्तिकारी साथी को इस परिवर्तन का समर्थन करना चाहिए, नहीं तो उसका दृष्टिबिन्दु प्रतिक्रान्ति का हो जाएगा।

तथाकथित "बहुत आगे बढ़ जाने" का सवाल

लोगों का एक हिस्सा और भी है जिसका कहना है कि "ठीक है, किसान सभा बननी तो अवश्य चाहिए, लेकिन अपनी मौजूदा कार्य-वाही में वह बहुत आगे बढ़ गई है।" यह राय मध्य-मार्गियों की है। लेकिन असलियत क्या है? यह ठीक है कि देहातों में किसान किसी अर्थ में "बेकाबू" हो गए हैं। किसान सभा, जिसे सर्वोच्च अधिकार प्राप्त है, जमींदारों की एक नहीं चलने देती और उनकी तमाम इज्जत धूल में मिला देती है। यह काम जमींदारों को ठोकर मारकर धूल चटा देने और फिर उन्हें पैरों तले दबोच कर रखने जैसा है। किसान धमकाते हैं: "हम तुम्हारा नाम अन्य खाते में लिखा देंगे!" वे स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों पर जुर्माना ठोक देते हैं, उनसे चन्दा वसूल करते हैं और उनकी पालकियां चकनाचूर कर डालते हैं। झुण्ड-के-झुण्ड लोग किसान सभा का विरोध करने वाले स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के घरों में घुस जाते हैं, उनके सुअर मार डालते हैं और उनका अनाज खाते हैं और बांटते हैं। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के परिवारों की कुमारियों और तरुण स्त्रियों के हाथीदांत वाले पलंगों पर वे एक-दो मिनट के लिए लेट भी लेते हैं। जरा सा भी विरोध होने पर वे गिरफ्तारियां शुरू कर देते हैं, गिरफ्तार लोगों के सिर पर कागज के लम्बे टोप लगा देते हैं और गांवों में उनका जलूस निकालते हैं: "बुरे शरीफजादो, अब तुम्हें पता चलेगा कि हम कौन हैं!" मनमानी करके और सभी चीजें उलट-पलट कर उन्होंने देहात में एक तरह का आतंक भी फैला दिया है। इसी को

कुछ लोग कहते हैं: "बहुत आगे बढ़ गए हैं", या "अन्याय दूर करने के लिए उचित सीमा पार कर गए हैं", या "दरअसल उन्होंने बड़ा भद्दा काम किया है"। इस तरह के लोगों की राय ऊपर से देखने में तर्कसंगत मालूम होती है, लेकिन वास्तव में गलत है। पहले तो, ऊपर कही हुई बातें खुद स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों और स्वेच्छाचारी जमींदारों के काले कारनामों का लाजमी नतीजा हैं। ये लोग अपनी सत्ता पर निर्भर रहकर युग-युग से किसानों पर अत्याचार करते रहे हैं और उन्हें पैरों तले रौंदते रहे हैं; यही कारण है कि किसानों ने इतना भीषण विद्रोह किया है। सबसे गम्भीर उथल-पुथल और सबसे प्रबल विद्रोह हमेशा उसी जगह हुए हैं जहां पर स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों और स्वेच्छाचारी जमींदारों के काले कारनामे सबसे अधिक जालिमाना थे। किसानों की आंखें बड़ी सूक्ष्मदर्शी होती हैं। कौन बुरा है और कौन नहीं, कौन सबसे ज्यादा दुष्ट है और कौन कम, और किसे सख्त सजा देनी चाहिए और किसके साथ जरा मुलायमियत से पेश आना चाहिए, इन सबके बारे में किसान अपना हिसाब एकदम साफ रखते हैं। ऐसा बहुत कम देखने में आया है कि अपराध की तुलना में सजा ज्यादा दे दी गई हो। दूसरे, क्रान्ति कोई दावत देने, अथवा कोई लेख लिखने, या तस्वीर बनाने, या उम्दा कढ़ाई करने जैसी चीज नहीं है; क्रान्ति ऐसी कोई नफीस, शान्त और शिष्ट, नम्र, दयालु, सुशील, संयत और उदार चीज नहीं हो सकती। क्रान्ति एक विद्रोह है, एक हिंसात्मक कार्यवाही है, जिसके द्वारा एक वर्ग दूसरे वर्ग का तख्ता उलट देता है। ग्रामीण क्रान्ति एक ऐसी क्रान्ति है जिसके जरिए किसान वर्ग सामन्ती जमींदार वर्ग की सत्ता उलट

देता है। यदि किसान अपनी पूरी ताकत न लगाएं, तो वे हजारों साल से जमकर बैठी हुई जमींदारों की सत्ता को उलट नहीं सकते। देहाती इलाकों में एक जबरदस्त क्रान्तिकारी उभार जरूरी है, क्योंकि केवल इसके द्वारा ही लाखों-लाख जन-समुदाय को जगाकर एक महान शक्ति का निर्माण किया जा सकता है। देहातों में एक जबर-दस्त क्रान्तिकारी उभार ने किसानों की जिस शक्ति को जागृत किया है, उसी के परिणामस्वरूप ऊपर कही हुई वे तमाम घटनाएं हुई हैं जिन्हें लोग "बहुत आगे बढ़ जाना" कहते हैं। इस तरह के कार्य किसान आन्दोलन के दूसरे काल (क्रान्तिकारी कार्यवाही के काल) में बेहद आवश्यक थे। इस काल में यह जरूरी था कि किसानों की एकछत्र सत्ता कायम की जाए। यह जरूरी था कि किसान सभा के खिलाफ द्वेषपूर्ण आलोचना की इजाजत न दी जाए। यह जरूरी था कि शरीफजादों की समूची सत्ता उलट दी जाए, उन्हें ठोकर मारकर जमीन की धूल चटा दी जाए और फिर उन्हें पैरों तले दबोच कर रखा जाए। इस काल में हुए उन तमाम कामों का क्रान्तिकारी महत्व है जिन्हें "बहुत आगे बढ़ जाना" कहा गया है। दो-टूक बात यह है कि हर देहाती इलाके में थोड़े समय के लिए आतंक-राज्य कायम करना जरूरी है, नहीं तो गांवों में प्रति-क्रान्तिकारियों की कार्यवाही कभी नहीं दबाई जा सकती और न शरीफजादों की सत्ता ही उलटी जा सकती है। अन्याय मिटाने के लिए उचित सीमा से बाहर जाना जरूरी होता है और उचित सीमा से बाहर गए बिना अन्याय मिटाया नहीं जा सकता।* ऊपर से देखने पर मालूम होता है कि जिन लोगों की राय में किसान "बहुत आगे बढ़ गए हैं", उन लोगों की राय उनकी राय से

भिन्न है जिनका जिक्र पहले आ चुका है और जिनका कहना है कि किसान आन्दोलन से "सत्यानाश हो गया" है। लेकिन सार रूप में दोनों का दृष्टिकोण एक ही है और दोनों ही जमींदारों के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं, जो विशेषाधिकार-प्राप्त वर्गों के हितों की हिमायत करता है। चूंकि यह सिद्धान्त किसान आन्दोलन के उभार में रुकावट डालता है, और परिणामस्वरूप क्रान्ति को तहस-नहस करता है, इसलिए हमें इसका दृढ़ता से विरोध करना चाहिए।

तथाकथित "आवारागर्दों का आन्दोलन"

क्वोमिन्ताङ के दक्षिण पक्ष का कहना है : "किसान आन्दोलन आवारागर्दों, आलसी किसानों का आन्दोलन है।" छाङशा में यह धारणा काफी फैली हुई है। जब मैं देहात में था तो मैंने शरीफजादों को यह कहते सुना, "किसान सभा बनाना तो ठीक है, लेकिन जो लोग उसे इस समय चला रहे हैं, वे निकम्मे हैं। बेहतर हो कि यह काम दूसरों को सौंपा जाए!" इस धारणा का और दक्षिणपक्षियों की उक्ति का मतलब एक ही है। दोनों यह मानते हैं कि किसान आन्दोलन चलाया जा सकता है (किसान आन्दोलन चालू हो चुका है, इसलिए किसी की यह कहने की हिम्मत नहीं होती कि इसे चालू न किया जाए), लेकिन दोनों यह समझते हैं कि आन्दोलन का नेतृत्व करने वाले लोग निकम्मे हैं, खास तौर से नीचे की किसान सभाओं के नेताओं से उन्हें नफरत है और वे उन्हें "आवारागर्द" कहते हैं। संक्षेप में यह कि शरीफजादे पहले जिनको तुच्छ समझते थे और जिन्हें उन्होंने ठोकर मारकर घूरे पर फेंक दिया था, जिनका समाज

में कोई स्थान नहीं था और जिन्हें बोलने के अधिकार से वंचित कर दिया गया था, अब वे सिर उठाकर चलने लगे हैं। वे न सिर्फ सिर उठाकर चलने लगे हैं, बल्कि उन्होंने अपने हाथों में सत्ता भी ले ली है। अब वे श्याङ[५] की किसान सभाओं (सबसे नीचे की किसान सभाओं) का संचालन करते हैं और ये किसान सभाएं उनके हाथों में एक अदम्य और भयंकर शक्ति बन गई हैं। अपने खुरदरे, मटमैले हाथ उठाकर उन्होंने शरीफजादों को धर दबोचा है। बुरे शरीफजादों को वे रस्सों से बांधते हैं, उनके सिर पर कागज के लम्बे-लम्बे टोप लगा देते हैं और गांवों में उनका जलूस निकालते हैं। (श्याङथान और श्याङश्याङ में इसे "ध्वान में जलूस निकालना" और लीलिङ में "लुङ में जलूस निकालना" कहते हैं।) हररोज शरीफजादों के कानों के पर्दों से उनकी निन्दा की मोटी और तीखी आवाज टकराती है। वे आदेश जारी करते हैं और सभी चीजों का संचालन करते हैं। जो पहले सबसे नीचे थे, वे अब सबसे ऊपर हैं ; इसलिए लोग इसे "उलट-फेर" कहते हैं।

क्रान्ति का हिरावल

किसी चीज या किसी किस्म के लोगों के बारे में यदि दो विरोधी रुख होंगे, तो फिर दो विरोधी मत भी बन जाएंगे। "सत्यानाश हो गया" और "बहुत ठीक हुआ", "आवारागर्द" और "क्रान्ति का हिरावल", ये विरोधी मत इस बात की माकूल मिसालें हैं।

हम ऊपर बता चुके हैं कि बरसों से जो क्रान्तिकारी कार्य अधूरा पड़ा था, उसे किसानों ने पूरा किया है और राष्ट्रीय क्रान्ति के लिए

उन्होंने महत्वपूर्ण काम किया है। लेकिन ऐसा महान क्रान्तिकारी कार्य और महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी काम पूरा करने में क्या सभी किसानों ने हिस्सा लिया है ? नहीं। किसानों की तीन श्रेणियां हैं— धनी किसान, मध्यम किसान और गरीब किसान। तीनों श्रेणियों की परिस्थितियां अलग-अलग हैं और इसलिए क्रान्ति के प्रति उनका दृष्टिकोण भी अलग-अलग है। पहले काल में धनी किसानों को जिन बातों में बड़ी दिलचस्पी होती थी वे यह थीं कि च्याङशी में उत्तरी अभियान सेना ने करारी हार खाई है, च्याङ काई-शेक का पैर जख्मी हो गया है[६] और वह वायुयान से क्वाङतुङ[७] वापस चला गया है, और ऊ फेइ-फू[८] ने य्वेचओ पर फिर से कब्जा कर लिया है। इसलिए वे सोचते थे कि किसान सभा अवश्य ज्यादा दिन तक न टिक सकेगी और तीन जन-सिद्धान्त[९] कभी कारगर नहीं हो सकते, क्योंकि ऐसी बातें पहले कभी सुनी नहीं गई थीं। श्याङ की किसान सभा के कर्मचारी (आम तौर से तथाकथित "आवारागर्द" किस्म के लोग) जब किसी धनी किसान के घर सदस्य बनाने का रजिस्टर लेकर जाते और कहते : "कृपा करके किसान सभा में शामिल हो जाइए", तो धनी किसान क्या जवाब देता था ? एक नर्म-मिजाज धनी किसान का जवाब होता था : "किसान सभा ? मुझे यहां रहते और खेती करते बीसियों साल हो गए, किसान सभा जैसी चीज यहां कभी नहीं देखी, लेकिन अपना काम तो चलता ही रहा। अच्छा हो, तुम यह सब छोड़ दो !" एक अधिक दुष्ट धनी किसान का जवाब होता : "किसान सभा ! कितनी बेहूदा बात है ! सभा, अपना सिर कटवाने के लिए ? लोगों को जोखिम में मत डालो !" फिर भी ताज्जुब तो यह है कि किसान सभा को बने कई महीने बीत गए हैं

और उसने शरीफजादों का मुकाबला करने का साहस भी किया है। सभा ने आसपास के शरीफजादों को, जिन्होंने अपनी अफीम की गुड़गुड़ियां देने से इनकार किया था, पकड़ लिया है और गांवों में उनका जलूस निकाला है। इसके अलावा, काउन्टी-केन्द्रों में प्रमुख शरीफजादों का वध कर दिया गया है – जैसे श्याङथान में येन रुङ-छ्यू का और निङश्याङ में याङ च-त्से का। अक्तूबर क्रान्ति की जयन्ती के अवसर पर, बरतानिया-विरोधी आम सभा में और उत्तरी अभियान की जीत के महान समारोह में छोटे-बड़े झण्डे लिए हुए, बहंगियां और फावड़े उठाए दसियों हजार किसान हर श्याङ में लम्बी पांतों में लहरों की तरह आगे बढ़ते हुए जलूस बनाकर निकले। जब यह सब हुआ, तो धनी किसान चिन्ता और आशंका में पड़ गए। उत्तरी अभियान की जीत के महान समारोह में उन्हें पता चला कि च्योच्याङ ले लिया गया है, च्याङ काई-शेक का पैर घायल नहीं हुआ है और ऊ फेइ-फू को अन्त में हरा दिया गया है। इसके अलावा "लाल और हरे कागजों के आज्ञापत्रों" (पोस्टरों) पर साफ-साफ लिखा हुआ था, "तीन जन-सिद्धान्त जिन्दाबाद", "किसान सभा जिन्दाबाद" और "किसान जिन्दाबाद" इत्यादि। धनी किसान चिन्ता और आशंका के साथ कहते, "क्या कहा? 'किसान जिन्दाबाद'? क्या ऐसे लोग भी 'जिन्दाबाद' होने लायक हैं?" इसलिए अब किसान सभा ने रोब झाड़ना शुरू किया है। किसान सभा के लोगों ने धनी किसानों से कहा, "हम तुम्हारा नाम अन्य खाते में लिखेंगे" या "अगले महीने भरती होने की फीस दस य्वान हो जाएगी!" इन परिस्थितियों में ही धनी किसान घिसलते-फिसलते किसान सभा में शामिल हो रहे हैं।[१०]

किसी को भरती होने के लिए पांच च्याओ या एक य्वान देना पड़ रहा है (भरती की नियमित फीस सिर्फ एक सौ छ्येन है)।[११] कुछ लोग दूसरों की खुशामद करते फिर रहे हैं और जब वे उनके पक्ष में दो बातें कह देते हैं, सिर्फ तभी उन्हें भरती किया जाता है। लेकिन ऐसे कट्टरतावादी भी काफी संख्या में हैं जो अभी तक सभा में शामिल नहीं हुए। जब धनी किसान सभा के सदस्य बनते हैं, तब वे आम तौर पर अपने परिवार के किसी साठ-सत्तर साल के बूढ़े का नाम लिखा देते हैं, क्योंकि "अनिवार्य फौजी भरती" से उन्हें सदा डर लगता रहता है। सभा में शामिल होने के बाद वे कभी उसके लिए उत्साह से काम नहीं करते। वे सदा निष्क्रिय बने रहते हैं।

मध्यम किसानों का रुख कैसा होता है? उनका रुख ढुलमुल होता है। वे सोचते हैं कि क्रान्ति से उन्हें ज्यादा फायदा नहीं होने वाला है। उनकी हांडी में चावल है और उन्हें यह डर नहीं है कि आधी रात को साहूकार उनका दरवाजा खटखटाएगा। वे भी किसी चीज को इस कसौटी पर परखते हैं कि वह पहले थी या नहीं। वे एकान्त में भौंहें सिकोड़कर सोचते हैं: "क्या सचमुच किसान सभा अपने पैरों पर खड़ी हो सकती है?" "क्या तीन जन-सिद्धान्त सफल हो सकते हैं?" वे यह नतीजा निकालते हैं: "लगता है, नहीं!" वे समझते हैं कि ये सब बातें दैवेच्छा पर निर्भर हैं और सोचते हैं: "क्या किसान सभा चलेगी? क्या पता, दैव की इच्छा है या नहीं?" पहले काल में किसान सभा के लोग रजिस्टर लिए हुए मध्यम किसान के घर जाते थे और उससे कहते थे: "कृपा करके किसान सभा के सदस्य बनिए।" मध्यम किसान जवाब देता था, "कोई जल्दी नहीं!"

केवल दूसरे काल में, जब किसान सभा खूब शक्तिशाली बन गई, तो मध्यम किसान उसमें शामिल होने लगे। किसान सभा में वे लोग धनी किसानों की तुलना में अच्छा व्यवहार करते हैं, लेकिन अभी तक बहुत सक्रिय नहीं हुए हैं और अब भी इन्तजार करना चाहते हैं कि देखें आगे क्या होता है। किसान सभा के लिए यह बिलकुल जरूरी है कि वह मध्यम किसानों को सभा में शामिल करने की कोशिश करे और उनके बीच समझाने-बुझाने का काम ज्यादा करे।

गांवों की मुख्य शक्ति, जिसने हमेशा सबसे कठिन लड़ाइयां लड़ी हैं, गरीब किसान हैं। गुप्त कार्यवाही के काल और खुली कार्यवाही के काल, इन दोनों ही कालों में गरीब किसान बराबर बड़े जोश के साथ लड़े हैं। वे बहुत ही मन से कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व स्वीकार करते हैं। वे स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के जानी दुश्मन हैं और जरा भी हिचकिचाए बिना उनके खेमे पर हमला कर देते हैं। वे धनी किसानों से कहते हैं : "हम तो कभी के किसान सभा में शामिल हो गए हैं, तुम अब भी आगा-पीछा क्यों सोच रहे हो?" धनी किसान व्यंग्य करते हुए जवाब देते हैं, "तुम लोगों के सिर के ऊपर न तो खपरैल का एक भी टुकड़ा है, न पैरों तले सुई की नोक बराबर जमीन ; तुम्हें किसान सभा में शामिल होने से भला क्या चीज रोकती है?" दरअसल गरीब किसानों के पास ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके खो बैठने का उन्हें डर हो। सचमुच उनमें से बहुतों के "सिर के ऊपर न तो खपरैल का एक भी टुकड़ा है, न पैरों तले सुई की नोक बराबर जमीन" – उन्हें सचमुच सभा में शामिल होने से क्या चीज रोकती है? छाङशा काउन्टी के सर्वेक्षण

के अनुसार गरीब किसान देहातों की आबादी के ७० फीसदी हैं, मध्यम किसान २० फीसदी और जमींदार तथा धनी किसान १० फीसदी हैं। गरीब किसान, जो ७० फीसदी हैं, दो श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं – एकदम गरीब और कम गरीब। पूर्णतया निर्धन वे हैं जिनके पास न तो जमीन है, न पैसा, जिनके पास जीविका का कोई भी साधन नहीं है और जिन्हें अपना घर छोड़कर भाड़े का सिपाही बनना पड़ता है, या दूसरों की मजूरी करनी पड़ती है, या दर-दर भीख मांगनी पड़ती है। ये सब "एकदम गरीबों"[11] की श्रेणी में आते हैं और लगभग २० फीसदी हैं। जो किसान आंशिक रूप से निर्धन हैं, वे ऐसे हैं जिनके पास थोड़ी जमीन या थोड़ा सा पैसा है, लेकिन जितनी आमदनी है उससे ज्यादा उनका खर्च है और वे पूरे साल कड़ी मेहनत करते हैं और परेशानी में दिन काटते हैं। इस तरह के लोगों में दस्तकार मजदूर, असामी किसान (धनी असामी-किसानों को छोड़कर) और अर्धभूमिधर-किसान हैं। ये सब "कम गरीबों"[11] की श्रेणी में आते हैं और ५० फीसदी हैं। गरीब किसानों का यह विशाल समुदाय, जो देहातों की आबादी का कुल मिलाकर ७० फीसदी है, किसान सभा की रीढ़ है, सामन्ती ताकतों का तख्ता उलटने वाला हिरावल है और उन प्रमुख वीरों का समुदाय है जिन्होंने बरसों से अधूरे पड़े महान क्रान्तिकारी कार्य को पूरा किया है। गरीब-किसान वर्ग के बिना (जिसको शरीफजादे "आवारागर्द" कहते हैं) यह कभी सम्भव न होता कि देहातों में क्रान्ति की मौजूदा हालत पैदा हो जाती, स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों का तख्ता उलट दिया जाता, और जनवादी क्रान्ति पूरी की जाती। सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी होने की वजह से गरीब

किसानों ने किसान सभा का नेतृत्व हासिल कर लिया है। पहले और दूसरे दोनों कालों में सबसे निचले स्तर की किसान सभाओं के प्रायः सभी प्रधानों और कमेटी-सदस्यों के पदों पर गरीब किसान आसीन थे (हङशान काउन्टी की श्याङ सभाओं के पदाधिकारियों में एकदम गरीब किसान ५० फीसदी हैं, कम गरीब किसान ४० फीसदी और गरीब बुद्धिजीवी १० फीसदी हैं)। गरीब किसानों का नेतृत्व अत्यन्त जरूरी है। गरीब किसानों के बिना क्रान्ति हो नहीं सकती। उनकी भूमिका से इनकार करने का मतलब है क्रान्ति से इनकार कर देना। उन पर हमला करना क्रान्ति पर हमला करना है। उनकी क्रान्ति की आम दिशा कभी गलत नहीं हुई। उन्होंने स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की इज्जत खाक में मिला दी है। उन्होंने छोटे-बड़े स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को ठोकर मारकर गिरा दिया है और उन्हें पैरों तले दबोच कर रखा है। क्रान्तिकारी कार्यवाही के काल में उनके बहुत से काम, जिन्हें "बहुत आगे बढ़ जाना" कहा गया है, दरअसल क्रान्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक थे। हुनान में कुछ काउन्टियों की सरकारों ने, क्वोमिन्ताङ के काउन्टी हेडक्वार्टरों और काउन्टी किसान सभाओं ने कई गलतियां की हैं। कुछ ने तो जमींदारों के कहने पर निचले स्तर की किसान सभाओं के पदाधिकारियों को गिरफ्तार करने के लिए सिपाही भी भेजे। हङशान और श्याङश्याङ इन दो काउन्टियों में श्याङ की किसान सभाओं के बहुत से प्रधान और कमेटी-सदस्य जेल में डाल दिए गए हैं। यह बड़ी गम्भीर गलती है जिससे प्रतिक्रियावादियों की हेकड़ी को शह मिलती है। यह गलती है या नहीं, इसे परखने के लिए यही देखना काफी है कि जब किसान सभाओं के प्रधान और कमेटी-सदस्य पकड़े

जाते हैं, तब स्थानीय स्वेच्छाचारी जमींदार कितने खुश होते हैं और प्रतिक्रियावादी भावना किस कदर बढ़ जाती है। "आवारागर्दों का आन्दोलन" और "आलसी किसानों का आन्दोलन" जैसी क्रान्ति-विरोधी निन्दा का हमें विरोध करना चाहिए और खास तौर से इस बारे में सावधान रहना चाहिए कि गरीब-किसान वर्ग पर हमला बोलने में स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को मदद देने की गलती हम न कर बैठें। हकीकत यह है कि यद्यपि गरीब किसानों के कुछ नेताओं में पहले कमियां जरूर थीं, लेकिन उनमें से अधिकांश ने अब अपने को सुधार लिया है। वे खुद जुआ खेलने पर जोरों से पाबन्दी लगा रहे हैं और डकैती खत्म कर रहे हैं। जहां किसान सभा मजबूत है, वहां जुआ कतई बन्द हो गया है और डकैती का नामोनिशान मिट गया है। यह अक्षरशः सही है कि कुछ स्थानों में लोग सड़कों पर गिरी हुई चीजें अपनी जेब में नहीं डाल लेते और रात को दरवाजे बन्द नहीं किए जाते। हङशान के सर्वेक्षण के अनुसार गरीब किसानों के नेताओं में से ८५ फीसदी अब बिलकुल सुधर गए हैं तथा योग्य व परिश्रमी बन गए हैं। सिर्फ १५ फीसदी में कुछ बुरी आदतें बनी हुई हैं। इन्हें हम "थोड़े से अनचाहे लोग" ही कह सकते हैं और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के सुर में सुर मिलाकर और भेद किए बगैर हमें गरीब किसानों को "आवारागर्द" नहीं कहना चाहिए। "थोड़े से अनचाहे लोगों" की यह समस्या "अनुशासन को मजबूत करने" के किसान सभा के अपने नारे के आधार पर ही, जन-समुदाय में प्रचार करके, "थोड़े से अनचाहे लोगों" को शिक्षित करके और सभा के अनुशासन को मजबूत करके हल की जा सकती है। लेकिन किसी भी सूरत में,

सिपाहियों को मनमाने तरीके से भेजकर ऐसी गिरफ्तारियां नहीं कराई जानी चाहिए जिससे गरीब-किसान वर्ग की धाक कम हो जाए और स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की हेकड़ी को शह मिले। यह एक ऐसी बात है जिस पर हमें खास तौर से ध्यान देना चाहिए।

चौदह बड़ी उपलब्धियां

किसान सभा की आलोचना करने वाले अधिकांश लोग यह कहते हैं कि उसने बहुत से खराब काम किए हैं। मैं पहले ही बता चुका हूं कि स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों पर किसानों के हमले पूर्णतया क्रान्तिकारी कार्यवाहियां हैं और उनकी किसी भी हालत में आलोचना नहीं होनी चाहिए। किसानों ने बहुत से काम किए हैं और लोगों की आलोचना का जवाब देने के लिए हमें एक-एक करके उनकी हर कार्यवाही को बारीकी से जांचना चाहिए, जिससे यह पता चले कि दरअसल उन्होंने किया क्या है। पिछले कुछ महीनों की उनकी कार्यवाहियों का मैंने वर्गीकरण किया है और उनका निचोड़ निकाला है; कुल मिलाकर, किसानों ने किसान सभाओं के नेतृत्व में निम्नलिखित चौदह बड़ी उपलब्धियां प्राप्त की हैं।

१. किसानों को किसान सभा में संगठित करना

यह किसानों द्वारा प्राप्त की गई पहली बड़ी उपलब्धि है। श्याङथान, श्याङश्याङ व हङशान जैसी काउन्टियों में लगभग सभी किसान संगठित हैं और वहां का शायद ही कोई कोना बचा होगा

जहां किसान उठ खड़े न हुए हों; ये पहली श्रेणी की जगहें हैं। इयाङ और ह्वारुङ जैसी कुछ काउन्टियों में अधिकांश किसान संगठित हैं, और उनका केवल छोटा सा भाग अभी असंगठित है; ये दूसरी श्रेणी की जगहें हैं। छङपू और लिङलिङ जैसी कुछ काउन्टियों में किसानों का एक छोटा सा भाग ही संगठित है और अधिकांश किसान अब भी असंगठित हैं; ये तीसरी श्रेणी की जगहें हैं। पश्चिमी हुनान में, जहां य्वान चू-मिङ[१४] का प्रभुत्व है, किसान सभा का प्रचार नहीं हुआ और उसकी बहुत सी काउन्टियों में किसान अभी पूरी तरह असंगठित हैं; ये चौथी श्रेणी की जगहें हैं। मोटे तौर से मध्य हुनान की काउन्टियां, जिनका केन्द्र छाङशा है, सबसे आगे बढ़ी हुई हैं। दूसरे नम्बर पर दक्षिणी हुनान की काउन्टियां आती हैं, और पश्चिमी हुनान में संगठन का काम अभी शुरू हो रहा है। पिछले नवम्बर में प्रान्तीय किसान सभा की गणना के अनुसार सारे प्रान्त की ७५ काउन्टियों में से ३७ में संगठन कायम किए गए हैं, जिनके सदस्यों की कुल संख्या १३,६७,७२७ है। इनमें से लगभग १० लाख पिछले अक्तूबर-नवम्बर में संगठित किए गए थे जब किसान सभा की तूती बोलती थी, जबकि पिछले सितम्बर तक कुल सदस्यों की संख्या सिर्फ तीन-चार लाख थी। इसके बाद दिसम्बर और जनवरी के दो महीने आए और किसान आन्दोलन की तीव्र प्रगति जारी रही। जनवरी के अन्त तक सदस्यों की संख्या कम से कम बीस लाख तक पहुंच गई होगी। किसान सभा में शामिल होते समय एक परिवार से आम तौर पर एक ही नाम लिखाया जाता है और औसतन एक परिवार में पांच व्यक्ति होते हैं, इस तरह किसान सभा के अनुयाइयों की तादाद लगभग एक करोड़ होगी। इस अद्भुत व

तीव्र प्रगति के कारण ही स्थानीय निरंकुश तत्व, बुरे शरीफजादे और भ्रष्टाचारी अफसर अकेले पड़ गए हैं ; इसी कारण समाज के लोग यह देखकर दंग रह गए हैं कि किसान आन्दोलन के उठने से दुनिया पूरी तरह बदल गई है ; यही कारण है कि गांवों में एक महान क्रान्ति हो गई है। यह पहली बड़ी उपलब्धि है जिसे किसानों ने किसान सभा के नेतृत्व में प्राप्त किया है।

२. जमींदारों पर राजनीतिक प्रहार

संगठित हो जाने के बाद किसान पहला काम यह करते हैं कि वे जमींदार वर्ग की, खासकर स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की राजनीतिक धाक खत्म कर देते हैं, यानी वे ग्रामीण समाज में जमींदारों की सत्ता उलट देते हैं और किसानों की सत्ता कायम कर देते हैं। यह बहुत ही गम्भीर और महत्वपूर्ण संघर्ष है। दूसरे काल में, क्रान्तिकारी कार्यवाही के काल में, यह केन्द्रीय संघर्ष है। इस संघर्ष में जीत हासिल किए बिना किसी भी आर्थिक संघर्ष में, जैसे लगान और सूद कम करने के संघर्ष में, जमीन और उत्पादन के अन्य साधन प्राप्त करने के संघर्ष में तथा इसी तरह के अन्य संघर्षों में जीत हासिल करना हरगिज मुमकिन नहीं होगा। इसमें सन्देह नहीं कि हुनान में बहुत सी जगहों में, जैसे श्याङश्याङ, हङशान और श्याङथान इत्यादि काउन्टियों में, अब यह समस्या नहीं है, क्योंकि जमींदारों की सत्ता पूरी तरह उलट दी गई है और एकमात्र सत्ता किसानों की है। लेकिन लीलिङ जैसी काउन्टियों में अब भी कुछ जगहें हैं (जैसे लीलिङ के पश्चिमी और दक्षिणी इलाके) जहां ऊपर

से जमींदारों की सत्ता किसानों की सत्ता से कम शक्तिशाली मालूम होती है, लेकिन वास्तव में चूंकि वहां पर राजनीतिक संघर्ष तीव्र रूप से नहीं चला है, इसलिए वह लुक-छिप कर किसानों की सत्ता का विरोध कर रही है। ऐसी जगहों के लिए अभी यह नहीं कहा जा सकता कि वहां किसानों ने अपनी राजनीतिक जीत हासिल कर ली है। जब तक जमींदारों की सत्ता पूरी तरह उलट नहीं दी जाती, तब तक किसानों को और अधिक जोरों के साथ राजनीतिक संघर्ष चलाते रहना चाहिए। कुल मिलाकर, किसान निम्नलिखित रूपों में जमींदारों पर राजनीतिक प्रहार करते हैं।

हिसाब की जांच। अधिकांश स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे इस बात के अपराधी हैं कि उनकी देखरेख में जो सार्वजनिक धन रहा है, उसे वे खा-पी गए हैं और उनका हिसाब-किताब साफ नहीं है। अब किसानों ने हिसाब की जांच को एक हथियार बनाकर बहुत से स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों का तख्ता उलट दिया है। बहुत सी जगहों में महज स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों से निपटने के लिए ही जांच-कमेटियां बनाई गई हैं, जिनके कर्मचारियों की शक्ल देखते ही वे लोग कांप उठते हैं। उन तमाम काउन्टियों में, जहां किसान आन्दोलन का बहुत जोर है, बड़े पैमाने पर इसी तरह के जांच-आन्दोलन चलाए गए हैं। उनका महत्व इस बात में इतना नहीं है कि वे हड़पी हुई रकम प्राप्त कर लेते हैं, जितना इस बात में है कि वे स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के अपराधों का भण्डाफोड़ कर देते हैं और उनके राजनीतिक और सामाजिक आसन से उन्हें नीचे गिरा देते हैं।

जुर्माना। निम्नलिखित अपराधों के लिए किसी स्थानीय निरंकुश तत्व या बुरे शरीफजादे को कितना जुर्माना लगेगा, इसे किसान तय करते हैं – जांच से प्रकट होने वाला गबन, किसानों को सताने के पिछले कारनामे, किसान सभा की जड़ खोदने के मौजूदा कारनामे, जुआ खेलने पर लगाई गई पाबन्दी तोड़ना और अफीम की गुड़गुड़ी देने से इनकार करना। जुर्माने की रकम दसियों से हजारों य्वान तक हो सकती है। यह स्वाभाविक है कि जिन पर किसान जुर्माना लगाते हैं, उनका मुंह काला हो जाता है।

चन्दा। गरीबों की मदद के लिए, सहकारी समितियों और किसानों को कर्ज देने वाली संस्थाओं के संगठन के लिए या दूसरे कामों के लिए धूर्त अमीर जमींदारों से चन्दा वसूल किया जाता है। इस तरह का चन्दा भी एक तरह का दण्ड है, यद्यपि वह जुर्माने के मुकाबले कम सख्त है। अनेक जमींदार ऐसे भी हैं जो परेशानी से बचने के लिए स्वेच्छा से किसान सभाओं को चन्दा दे देते हैं।

साधारण विरोध। अगर कोई आदमी वचन या कर्म से किसान सभा को नुकसान पहुंचाता है और उसका अपराध साधारण है, तो बहुत से लोग इकट्ठे हो जाते हैं और साधारण विरोध प्रकट करने के लिए उसके घर में घुस पड़ते हैं। नतीजा यह होता है कि अक्सर उसे "अब नहीं करूंगा" का प्रतिज्ञापत्र लिखना पड़ता है। उसमें उसे साफ-साफ कहना होता है कि वह भविष्य में अपने वचन या कर्म से किसान सभा को बदनाम करने की कोशिश नहीं करेगा।

बड़े प्रदर्शन। किसान सभा से दुश्मनी रखने वाले किसी स्थानीय निरंकुश तत्व या किसी बुरे शरीफजादे के खिलाफ प्रदर्शन करने के लिए एक बड़ी भीड़ इकट्ठी की जाती है। वे उसके घर जाकर खाना खाते हैं, उसके सुअर मार डालते हैं तथा उसका अनाज खर्च कर डालते हैं और बांट लेते हैं, मानो यही दस्तूर हो। इस तरह की अनेक घटनाएं हुई हैं। अभी कुछ दिन हुए श्याङथान काउन्टी के माच्याहो में पन्द्रह हजार की भीड़ छः बुरे शरीफजादों को दण्ड देने के लिए इसी तरह उनके घर में घुस गई। वे लोग वहां चार दिन रहे और १३० से अधिक सुअर मारकर खा गए। ऐसे प्रदर्शनों के बाद किसान आम तौर से जुर्माना लगा देते हैं।

कागज के लम्बे टोप लगाकर गांवों में जलूस। इस तरह के जलूस विभिन्न स्थानों में बहुत बार निकाले गए हैं। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के सिर पर कागज के लम्बे टोप लगा दिए जाते हैं जिन पर इस तरह की चीजें लिखी होती हैं: "अमुक स्थानीय निरंकुश तत्व" या "अमुक बुरा शरीफजादा"। वे रस्से में बन्धे हुए आगे बढ़ते हैं और उनके आगे-पीछे बड़ी-बड़ी भीड़ें चलती हैं। कभी-कभी लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए घण्टे-घड़ियाल बजाए जाते हैं और झण्डे फहराए जाते हैं। किसी और सजा के मुकाबले इस तरह के दण्ड से स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे थरथर कांपते हैं। जिसके सिर पर एक बार कागज का लम्बा टोप लग गया, उसका मुंह सदा के लिए काला हो जाता है और वह फिर कभी सिर उठाने की हिम्मत नहीं करता। इसीलिए बहुत से अमीर लोग कागज का लम्बा टोप लगाने के बदले जुर्माना देना ज्यादा पसन्द करते हैं। लेकिन अगर किसान जिद करें, तो उन्हें लगाना जरूर पड़ता है। एक श्याङ की किसान सभा बहुत चतुर थी। उसने एक बुरे शरीफजादे को गिरफ्तार कर लिया और उसी दिन ऐलान किया कि उसे कागज का लम्बा टोप पहनाया

जाएगा। भय से वह पीला पड़ गया। तब किसान सभा ने फैसला किया कि यह काम मुल्तवी कर दिया जाए। दलील यह थी कि अगर उसी दिन उसको लम्बा टोप पहना दिया गया, तो फिर वह पक्का बेशरम बन जाएगा और उसे किसी भी बात का डर नहीं रह जाएगा। ज्यादा अच्छा होगा कि उसे घर जाने दिया जाए और किसी दूसरे दिन उसे यह लम्बा टोप पहनाया जाए। उस बुरे शरीफ-जादे को यह पता न था कि कब उसको लम्बा टोप पहनाया जाएगा, इसलिए हररोज बेचैनी में वह घर पर ही रहता और जरा भी आवाज होती, तो चौंक उठता और परेशान हो जाता।

काउन्टी की जेल में कैद। कागज का लम्बा टोप लगाने के मुकाबले यह सजा ज्यादा सख्त है। स्थानीय निरंकुश तत्व या बुरे शरीफ-जादे गिरफ्तार कर लिए जाते हैं और काउन्टी की जेल में कैद कर दिए जाते हैं तथा काउन्टी के मजिस्ट्रेट से कहा जाता है कि उन्हें सजा दे। जो लोग पहले कैद किए जाते थे, उनसे अब के कैदी भिन्न होते हैं। पहले किसानों को शरीफजादे जेल भेजा करते थे, लेकिन अब शरीफजादों को किसान जेल भेजते हैं।

निर्वासन। किसान उन स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफ-जादों को निर्वासित नहीं करना चाहते जो अपने अपराधों और काले कारनामों के लिए कुख्यात हैं; बल्कि वे यह चाहते हैं कि उन्हें गिरफ्तार कर लें या उनका वध कर डालें। गिरफ्तार होने या वध किए जाने के भय से वे भाग जाते हैं। जिन काउन्टियों में किसान आन्दोलन अच्छी तरह विकसित हो चुका है, वहां से लगभग सभी प्रमुख स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे भाग गए हैं। यह निर्वासित होने के बराबर हो जाता है। इनमें से अव्वल नम्बर

के तो शांघाई भाग गए हैं, दूसरे नम्बर के हानखओ को, तीसरे नम्बर के छाङशा को और चौथे नम्बर के काउन्टी-केन्द्र को। इस तरह के भगोड़े स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों में से जो लोग शांघाई भाग गए हैं, वे सबसे ज्यादा सुरक्षित हैं। कुछ हान-खओ को भागने वाले, जैसे ह्वारुङ से जाने वाले तीन बुरे शरीफ-जादे, अन्त में फिर पकड़ लिए गए और उन्हें वापस लाया गया। जो छाङशा भाग गए हैं, उन्हें भी यह डर लगा रहता है कि काउन्टियों से प्रान्तीय राजधानी में आए विद्यार्थी न जाने कब उन्हें पकड़ लें। जब मैं छाङशा में था, तब मैंने खुद उनमें से दो को पकड़े जाते देखा था। जो काउन्टी-केन्द्रों में भाग गए हैं, वे आखिर चौथे नम्बर के ही हैं। किसानों के पास सूचना के बहुत से सूत्र हैं, इसलिए उनका पता आसानी से चल जाता है। हुनान की प्रान्तीय सरकार तंगी की स्थिति में थी, और उसके वित्तीय अधिकारियों ने इसका दोष किसानों पर लगाया कि उन्होंने धनी लोगों को बाहर निकाल दिया और इस तरह पैसा इकट्ठा करना मुश्किल कर दिया। इससे फिर हमें अन्दाज हो जाता है कि किस तरह स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को अपने गांवों में टिकने नहीं दिया जाता।

गोली मारना। किसान लोग अन्य तबकों की जनता के साथ मिलकर सिर्फ बहुत बड़े स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफ-जादों को ही यह सजा देते हैं। मिसाल के लिए किसानों और अन्य तबकों की जनता के जोर देने पर सरकार ने निङश्याङ के याङ च-हसे को, य्वेयाङ के चओ च्या-कान को और ह्वारुङ के फू ताओ-नान और सुन पो-चू को गोली से उड़ा दिया था। श्याङथान के येन रुङ-छ्यू के मामले में किसानों और अन्य तबकों की जनता ने मजिस्ट्रेट को

मजबूर कर दिया कि वह उसे जेल से बाहर निकाले और फिर किसानों ने खुद अपनी जिम्मेदारी पर उसे गोली मार दी। निङश्याङ के ल्यू चाओ का वध खुद किसानों ने किया। "स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के लिए खास अदालत" का फैसला हो जाने के बाद लीलिङ के फङ च-फ़ान को और इयाङ के चओ थ्येन-च्वे और छाओ युन को प्राणदण्ड दे दिया जाएगा। इन बड़े स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों में से एक का वध हो जाने पर सारी काउन्टी में तहलका मच जाता है और सामन्तवाद की बची-खुची बुराइयों को दूर करने में यह बहुत कारगर साबित होता है। हर काउन्टी में इस तरह के बीसियों या कम से कम कुछ बड़े-बड़े स्थानीय निरंकुश तत्व व बुरे शरीफजादे मिल जाते हैं; और हर काउन्टी में कम से कम उन्हें तो प्राणदण्ड दिया ही जाना चाहिए जिनके अपराध और काले कारनामे बहुत ही संगीन हैं, यही प्रतिक्रियावादियों को दबाने का एकमात्र कारगर तरीका है। जब स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की तूती बोलती थी, तब उन्होंने खुद पलक भांजे बिना किसानों की हत्या की थी। छाङशा काउन्टी के शिनखाङ कस्बे के रक्षा-दल का प्रधान हो माए-छ्वेन दस साल तक दल का प्रधान रह चुका था। उसके हाथों मारे गए दरिद्र किसानों की संख्या करीब एक हजार तक पहुंच गई थी और इसे वह आलंकारिक शब्दों में "डाकुओं का वध" कहता था। मेरे जन्मस्थान की काउन्टी श्याङथान के इनथ्येन कस्बे के रक्षा-दल के प्रधान थाङ च्युन-येन और लो शू-लिन ने १९१३ से लेकर अब तक के चौदह साल के अन्दर पचास से ऊपर लोगों को मार डाला था और चार को जिन्दा गाड़ दिया था। पचास से ऊपर जिन लोगों को उन्होंने

मारा था, उनमें पहले दो तो बिलकुल निर्दोष भिखारी थे। थाङ च्युन-येन ने कहा था : "शुरुआत करने के लिए लाओ दो भिखारियों को ही मारें।" अफसोस! बेचारे दो भिखमंगों को जान से हाथ धोना पड़ा। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों ने पहले इस तरह निर्दयता से काम लिया था, गांवों में उन्होंने इस तरह श्वेत आतंक फैला रखा था, और अब जबकि किसान उठ खड़े हुए हैं, कुछेक को किसानों ने गोली से उड़ा दिया है तथा प्रतिक्रान्तिकारियों को दबाने के लिए थोड़ा सा आतंक पैदा किया है, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि उन्हें यह सब नहीं करना चाहिए?

३. जमींदारों पर आर्थिक प्रहार

इलाके से बाहर अनाज भेजने पर, गल्ले का भाव जबरदस्ती चढ़ाने पर, अनाज की जखीरेबाजी और सट्टेबाजी पर पाबन्दियां। पिछले कुछ महीनों में हुनान के किसानों के आर्थिक संघर्ष में यह एक बड़ी घटना है। पिछले अक्तूबर से गरीब किसानों ने जमींदारों व धनी किसानों का गल्ला बाहर जाने से रोक दिया है और गल्ले का भाव जबरदस्ती चढ़ाने तथा अनाज की जखीरेबाजी व सट्टेबाजी पर रोक लगा दी है। नतीजा यह है कि गरीब किसान अपने उद्देश्य में पूर्ण रूप से सफल हुए हैं। गल्ला बाहर भेजने पर पाबन्दी एकदम सख्त है, गल्ले का भाव काफी गिर गया है और अनाज की जखीरेबाजी व सट्टेबाजी खत्म हो गई है।

लगान और जमानत बढ़ाने पर पाबन्दी, लगान और जमानत कम करने के लिए आन्दोलन। पिछले साल जुलाई और अगस्त में

जब किसान सभा कम शक्तिशाली थी, तब जमींदारों ने अपनी उसी पुरानी धुन में कि जितना भी शोषण किया जाए कम है, एक के बाद एक अपने असामी किसानों को सूचना दी कि लगान और जमानत बढ़ा दिए जाएंगे। लेकिन अक्तूबर तक जब किसान सभा की शक्ति में भारी बढ़ोतरी हो गई और किसानों ने लगान व जमानत बढ़ाने का एकराय से विरोध करना शुरू कर दिया, तो जमींदारों को मारे डर के इस सिलसिले में एक भी शब्द कहने की हिम्मत नहीं हुई। पिछले साल नवम्बर के बाद से चूंकि किसान जमींदारों से ज्यादा शक्तिशाली हो गए हैं, इसलिए वे एक कदम आगे बढ़कर लगान और जमानत कम करने के लिए आन्दोलन करने लग गए हैं। वे कहते हैं : अफसोस कि पिछले साल शरद में लगान देते समय किसान सभा काफी मजबूत न थी, नहीं तो लगान तभी कम हो जाता। किसान इसके लिए जोरदार प्रचार कर रहे हैं कि इस साल शरद में लगान कम हो जाए, और जमींदार यह पूछताछ कर रहे हैं कि कमी किस तरह की जाएगी। जहां तक जमानत कम करने का प्रश्न है, हङशान और दूसरी काउन्टियों में यह काम शुरू हो चुका है।

पट्टा रद्द करने पर पाबन्दी। पिछले साल जुलाई-अगस्त में ऐसी बहुत सी घटनाएं हुई थीं जबकि जमींदारों ने पट्टे रद्द कर दिए थे और खेत फिर से उठा दिए थे। लेकिन अक्तूबर के बाद किसी की यह जुर्रत न हुई कि और पट्टे रद्द करे। अब तो पट्टे रद्द करने और खेत फिर से उठाने का सवाल ही नहीं पैदा होता। एकमात्र समस्या, जो एक हद तक अभी हल नहीं हुई, यह है कि जमींदार अगर खुद जमीन जोतना चाहे तो पट्टा रद्द हो सकता है या नहीं। कई जगह किसानों ने इसकी भी इजाजत नहीं दी। कुछ और जगहों में, अगर जमींदार खुद जमीन जोतना चाहे तो पट्टा रद्द किया जा सकता है। लेकिन फिर असामी किसान के बेरोजगार हो जाने की समस्या उठ खड़ी होती है। इस समस्या का सामान्य हल अभी नहीं निकल सका है।

सूद में कमी। आनह्वा में आम तौर से सूद कम कर दिया गया है। दूसरी काउन्टियों में भी इस तरह की घटनाएं हुई हैं। लेकिन जहां भी किसान सभा शक्तिशाली है, गांवों में सूद पर रुपया उधार देने की प्रथा करीब-करीब उठ गई है। कारण यह कि "सम्पत्ति के कम्यूनीकरण" के डर से जमींदारों ने उधार देना बिलकुल बन्द कर दिया है। सूद कम करने की जो चर्चा इस समय चल रही है वह पुराने कर्ज के बारे में है। न केवल पुराने कर्ज पर सूद कम कर दिया गया है बल्कि महाजनों को यह हुक्म भी दे दिया गया है कि वे मूल को वापस लेने पर जोर न दें। गरीब किसान कहता है, "इसका दोष मुझे न दो। इस साल फसल अच्छी नहीं हुई, अगले साल मैं भुगतान कर दूंगा।"

४. स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के सामन्ती शासन का तख्ता उलटना – तू और ध्वान[११] को नष्ट करना

राजनीतिक सत्ता की तू और ध्वान (यानी जिले और क्याङ) के स्तर की पुरानी संस्थाएं, खासकर तू के स्तर की संस्थाएं जिनका नम्बर काउन्टी स्तर की संस्थाओं के बाद आता है, प्राय: सबकी सब स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के हाथ में हुआ करती थीं। तू के मातहत दस से पचास या साठ हजार तक की आबादी होती

थी। उसकी अपनी सैन्य-शक्तियां होती थीं, जैसे ध्वान का रक्षा-दल। मालगुजारी वसूल करने के उसके स्वतंत्र वित्तीय अधिकार थे जिनमें फी मू की विशेष लेवी[16] भी शामिल थी। उसकी न्याय सम्बन्धी सत्ता अलग थी, जिसके अन्तर्गत वह मनमाने तौर पर किसानों को गिरफ्तार कर सकती थी, जेल भेज सकती थी, मुकदमा चला सकती थी और दण्ड दे सकती थी। बुरे शरीफजादे ,जो इस तरह की संस्थाओं को चलाते थे, देहात के बिलकुल बादशाह ही होते थे। गणराज्य के राष्ट्रपति, प्रान्तीय फौजी गवर्नर[17] या काउन्टी के मजिस्ट्रेट के प्रति किसान अपेक्षाकृत कम ध्यान देते थे, क्योंकि उनके असली "सरदार" तो गांवों के ये बादशाह ही होते थे। जब ये लोग नथने फुला-फुला कर बोलने लगते थे, तब किसान समझ जाते थे कि उन्हें खबरदार रहना चाहिए। गांवों में वर्तमान विद्रोह के फलस्वरूप जमींदार वर्ग की शक्ति और रोब-दाब आम तौर पर खाक में मिल गया है और ग्रामीण शासन की ऐसी संस्थाएं, जिन पर स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे हावी थे, स्वभावतः उखड़ गई हैं। तू और ध्वान के सभी सरदार अब जनता से बचकर चलते हैं और उसका सामना करने का साहस नहीं करते। वे सारे स्थानीय मामलों को किसान सभा के पास भेज देते हैं और लोगों को यह कहकर टाल देते हैं कि "यह हमारा काम नहीं है!"

जब तू और ध्वान के सरदारों की बात चलती है, तो किसान बिगड़कर कहते हैं, "वह गिरोह! उनका बेड़ा अब गर्क हो चुका है।"

जहां से क्रान्ति का तूफान गुजर चुका है, वहां ग्रामीण शासन की पुरानी संस्थाओं की हालत सचमुच इन्हीं शब्दों से व्यक्त होती है, "उनका बेड़ा अब गर्क हो चुका है।"

५. जमींदारों की सैन्य-शक्ति का तख्ता उलटना और किसानों की सैन्य-शक्ति का निर्माण

हुनान प्रान्त के पश्चिमी व दक्षिणी हिस्सों के मुकाबले उसके मध्य भाग में जमींदार वर्ग की सैन्य-शक्ति कम थी। हर काउन्टी में औसतन ६०० राइफलों के हिसाब से सारे प्रान्त की ७५ काउन्टियों में कुल मिलाकर ४५,००० राइफलें हैं, और हो सकता है कि वास्तव में और भी हों। दक्षिणी और मध्य हिस्सों में जहां किसान आन्दोलन सबसे ज्यादा बढ़ा हुआ है, किसानों के प्रबल वेग से उठ खड़े होने के कारण जमींदार अपने मन की नहीं कर पाते और उनकी सैन्य-शक्ति ने अधिकांशतः किसान सभा के सामने हथियार डाल दिए हैं, और अब वह किसान-हितों के पक्ष में हो गई है, इस तरह की मिसालें निङश्याङ, फिङच्याङ, ल्यूयाङ, छाङशा, लीलिङ, श्याङथान, श्याङश्याङ, आनह्वा, हङशान और हङयाङ आदि काउन्टियों में मिलती हैं। जमींदारों की थोड़ी सी सैन्य-शक्ति, मिसाल के लिए पाओछिङ जैसी काउन्टियों में तटस्थ है, लेकिन उसका झुकाव भी आत्मसमर्पण की ओर है। उसका एक और छोटा भाग, मिसाल के लिए ईचाङ, लिनऊ और च्याहो आदि काउन्टियों में, किसान सभा का विरोध कर रहा है। लेकिन किसान अब उस पर प्रहार कर रहे हैं और कुछ दिनों में शायद उसका सफाया कर देंगे। प्रतिक्रियावादी जमींदारों से इस प्रकार हासिल की गई सभी सैन्य-शक्तियां "घर-घर की स्थाई मिलिशिया"[18] के रूप में संगठित की जा रही हैं और ग्रामीण स्वायत्त-शासन की नई संस्थाओं – किसानों की राजनीतिक सत्ता की ग्रामीण स्वायत्त-शासन की संस्थाओं –

के मातहत रखी जाएंगी। इस पुरानी सैन्य-शक्ति को हासिल करना एक तरीका है जिससे किसानों की सैन्य-शक्ति का निर्माण हो रहा है। एक और नया तरीका है जिससे किसानों की सैन्य-शक्ति का निर्माण हो रहा है ; यह है किसान सभा का "बल्लम दल"। बल्लम एक ऐसा हथियार होता है जिसमें लम्बी लाठी में नुकीला, दुतरफी धारवाला फाल चढ़ा रहता है। इस तरह के बल्लम अकेले श्याङश्याङ काउन्टी में एक लाख हैं। श्याङथान, हङशान, लीलिङ और छाङशा जैसी दूसरी काउन्टियों में प्रत्येक के पास ७०,०००-८०,००० या ५०,०००-६०,००० या ३०,०००-४०,००० बल्लम हैं। सभी काउन्टियों में, जहां किसान आन्दोलन शुरू हो गया है, बल्लम दल का तेजी से विकास हो रहा है। बल्लमों से लैस ये किसान "घर-घर की अनियमित मिलिशिया" के रूप में संगठित हो जाते हैं। ऊपर बताई हुई पुरानी सैन्य-शक्ति से यह विशाल बल्लम दल बड़ा है। यह एक नव-निर्मित सैन्य-शक्ति है जिसे देखते ही स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के छक्के छूट जाते हैं। हुनान के क्रान्तिकारी अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे प्रान्त की ७५ काउन्टियों के दो करोड़ से ऊपर किसानों में ऐसी सैन्य-शक्ति सचमुच व्यापक रूप से खड़ी करें और हर किसान को, चाहे वह नौजवान हो या प्रौढ़, एक बल्लम से लैस करें ; बल्लम रखने पर कोई ऐसी पाबन्दी नहीं होनी चाहिए, मानो बल्लम रखना कोई खतरनाक काम हो। जो भी इस तरह के बल्लम दल से डरता है, वह सचमुच कायर है ! उससे सिर्फ स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे ही डरते हैं, क्रान्तिकारियों को इससे हरगिज नहीं डरना चाहिए।

६. काउन्टी मजिस्ट्रेट और उसके कारिन्दों की राजनीतिक सत्ता का तख्ता उलटना

जब तक किसान न उठ खड़े होंगे, तब तक काउन्टी की हुकूमत साफ-सुथरी न होगी, यह बात पहले क्वाङतुङ के हाएफ़ङ में साबित हो चुकी है। और अब खासकर हुनान में इसका काफी सबूत मिल गया है। जिस काउन्टी में स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की सत्ता की तूती बोलती है, उसमें चाहे कोई भी मजिस्ट्रेट क्यों न हो, वह लगभग बिना किसी अपवाद के भ्रष्टाचारी अफसर होता है। जिस काउन्टी में किसान उठ खड़े हुए हैं, उसमें साफ-सुथरी हुकूमत होती है, उसका मजिस्ट्रेट चाहे कोई भी क्यों न हो। जिन काउन्टियों में मैं गया था, उनमें मजिस्ट्रेटों को हर बात में सबसे पहले किसान सभा से सलाह करनी होती थी। जिस काउन्टी में किसानों की शक्ति अपनी बुलन्दी पर होती है, वहां किसान सभा की बात तुरत चमत्कार कर दिखाती है। अगर किसान सभा यह मांग करे कि कोई स्थानीय निरंकुश तत्व या बुरा शरीफजादा सबेरे ही गिरफ्तार किया जाए, तो मजिस्ट्रेट यह काम दोपहर तक टालने की हिम्मत नहीं कर सकता। अगर वह मांग करे कि दोपहर को गिरफ्तारी होनी चाहिए, तो मजिस्ट्रेट यह काम तीसरे पहर तक के लिए टालने की हिम्मत नहीं कर सकता। जब गांवों में किसानों की सत्ता के अंकुर अभी फूट ही रहे थे, तब मजिस्ट्रेट और स्थानीय निरंकुश तत्व व बुरे शरीफजादे मिलकर किसानों के खिलाफ सांठगांठ करते थे। जब किसानों की सत्ता बढ़ी और जमींदारों की सत्ता के बराबर हो गई, तब मजिस्ट्रेटों ने किसान और जमींदार दोनों की नजरों में भले बने रहने की कोशिश

औसतन साठ मुकदमे काउन्टी सरकार में रोज दायर किए जाते थे। जब से किसान सभा बन गई है, तब से उसके पास औसतन चार-पांच मुकदमे ही रोज आते हैं।" इसलिए मजिस्ट्रेट और उसके मातहत कर्मचारियों की जेबें लाजमी तौर पर खाली रहती हैं।

(३) हथियारबन्द रक्षक, पुलिसवाले और मजिस्ट्रेट के कारिन्दे सभी चौकन्ने रहते हैं और गांवों में आकर मनमानी रकम वसूल करने की जुर्रत नहीं करते। पहले देहात के लोग शहरवालों से डरते थे, लेकिन अब शहरवाले देहात के लोगों से डरते हैं। खास तौर से काउन्टी सरकार द्वारा पाले गए खूंखार कुत्ते – पुलिस, हथियारबन्द रक्षक और मजिस्ट्रेट के कारिन्दे – गांव जाने में कांपते हैं और यदि जाते भी हैं तो मनमानी रकम वसूल करने की जुर्रत नहीं करते। किसानों के बल्लम देखकर वे सब थर्राते हैं।

७. पुरखों के मंदिरों और बिरादरी के बड़े-बूढ़ों की बिरादरी-सत्ता, नगर-देवताओं और स्थानीय देवताओं की धार्मिक सत्ता तथा पतियों की पुरुषसत्ता का तख्ता उलटना

चीन के पुरुषों पर प्रायः तीन तरह की सत्ता का भार रहता है : (१) राज्य-व्यवस्था (राजनीतिक सत्ता) जो राष्ट्रीय, प्रान्तीय और काउन्टी सरकार से लेकर श्याङ की सरकार तक है ; (२) बिरादरी की व्यवस्था (बिरादरी की सत्ता) जो पुरखों के केन्द्रीय मंदिरों और उनकी शाखाओं से लेकर घर के मुखिया तक है ; और (३) देवी-देवताओं व दैत्य-दानवों की व्यवस्था (धार्मिक सत्ता) जिसमें यमराज से लेकर नगर-देवताओं और स्थानीय देवताओं

तक की पाताल लोक की व्यवस्था और स्वर्गाधिपति से लेकर तरह-तरह के देवी-देवताओं व दैत्य-दानवों तक की व्यवस्था शामिल है। जहां तक स्त्रियों का सवाल है, वे ऊपर कही हुई तीन तरह की व्यवस्थाओं का प्रभुत्व सहने के अलावा पुरुषों का प्रभुत्व (पति की सत्ता) भी सहती हैं। ये चार प्रकार की सत्ताएं – राजनीतिक सत्ता, बिरादरी की सत्ता, धार्मिक सत्ता और पति की सत्ता – तमाम सामन्ती-पितृसत्तात्मक विचारधाराओं और व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं और ये ही ऐसे चार फन्दे हैं जिनमें चीनी जनता, खासकर किसान जनता, फंसी हुई है। हम ऊपर बता चुके हैं कि किस तरह गांवों में किसानों ने जमींदारों की राजनीतिक सत्ता का तख्ता उलट दिया है। जमींदारों की राजनीतिक सत्ता वास्तव में अन्य सभी सत्ताओं की आधार-शिला है। चूंकि जमींदारों की राजनीतिक सत्ता का तख्ता उलट दिया गया है, इसलिए बिरादरी की सत्ता, धार्मिक सत्ता और पति की सत्ता ये सभी लड़खड़ाने लगी हैं। जहां किसान सभा शक्तिशाली है, वहां बिरादरी के बड़े-बूढ़ों और मंदिर-कोष के प्रबन्धकों का यह साहस नहीं होता कि वे बिरादरी के लोगों को सताएं या धन का गबन करें। बिरादरी के बड़े-बूढ़ों और मंदिर-कोष के प्रबन्धकों में से निहायत खराब किस्म के लोगों का, जो स्थानीय निरंकुश तत्व या बुरे शरीफजादे ही हैं, तख्ता उलट दिया गया है। अब किसी की जुर्रत नहीं होती कि वह किसी को "कोड़े मारने", "डुबो देने" और "जिन्दा गाड़ देने" जैसी निर्दयतापूर्ण शारीरिक यातना और प्राणदण्ड दे, जैसा कि पुरखों के मंदिरों में पहले हुआ करता था। पुरखों के मंदिरों में स्त्रियों और गरीबों के लिए उत्सव-भोज में शामिल होने की मनाही की जो पुरानी प्रथा

चली आ रही थी, वह भी तोड़ दी गई है। एक बार हङशान काउन्टी के पाएक्वो की स्त्रियों ने दल-बल सहित अपने पुरखों के मंदिर पर धावा बोल दिया, वहां बाकायदा आसनों पर बैठकर खाया-पिया और बड़े-बूढ़े दादा लोग यह सब टुकुर-टुकुर देखते रहे। एक दूसरी जगह गरीब किसान, जिन्हें मंदिर के उत्सव-भोज में शामिल नहीं किया जाता था, मंदिर पर टूट पड़े, भरपेट खाया-पिया और वहां मौजूद स्थानीय निरंकुश तत्व, बुरे शरीफजादे और लम्बे चोंगे पहने हुए सम्भ्रान्त लोग डर के मारे भाग खड़े हुए। किसान आन्दोलन की बढ़ती के साथ हर जगह धार्मिक सत्ता लड़खड़ाने लगती है। बहुत सी जगहों में किसान सभाओं ने देव-मंदिरों को अपना दफ्तर बना लिया है। हर जगह किसान पाठशाला चलाने और किसान सभा का खर्च निकालने के लिए वे मंदिरों की सम्पत्ति जब्त कर लेने की बात करती हैं। इस तरह के धन को वे "अंधविश्वासों से प्राप्त मालगुजारी" कहती हैं। लीलिङ काउन्टी में अंधविश्वासपूर्ण रीति-रिवाजों को रोकना और मूर्तियां तोड़ना एक आम बात हो गई है। लीलिङ के उत्तरी जिलों में किसानों ने महामारी के देवता को मनाने के लिए धूप-दीप जलाकर निकाले जाने वाले जलूस बन्द कर दिए। लूखओ के फ़ूपोलिङ पर्वत पर ताओपंथी मंदिर में बहुत सी मूर्तियां थीं। लेकिन जब क्वोमिन्ताङ के जिला हेडक्वार्टर के लिए जगह की जरूरत पड़ी तो मंदिर की छोटी-बड़ी सभी मूर्तियां एक कोने में ले जाकर रख दी गई और इस पर किसी किसान ने आपत्ति नहीं की। उसके बाद से, किसी परिवार में गमी होने पर देवताओं के लिए बलि देना, धार्मिक रस्में पूरी करना और पवित्र दीप-दान जैसी प्रथाएं बहुत कम देखने में आती हैं। चूंकि किसान

सभा के प्रधान सुन श्याओ-शान ने ही इस बारे में पहलकदमी की थी, इसलिए स्थानीय ताओपंथी पुजारी उससे नफरत करने लगे हैं। उत्तर के तीसरे जिले के लुङफ़ङ मठ में किसानों और प्राइमरी स्कूल के अध्यापकों ने लकड़ी की मूर्तियां काट डालीं और फिर उस लकड़ी को गोश्त पकाने के लिए इस्तेमाल किया। दक्षिणी जिले में विद्यार्थियों और किसानों ने मिलकर तुङफ़ू मंदिर की तीस से ऊपर मूर्तियां जला डालीं। सिर्फ "श्रीमंत पाओ" नाम की दो छोटी मूर्तियों को एक बूढ़े किसान ने यह कहते हुए बचा लिया : "पाप मत करो!" जहां किसानों की सत्ता का बोलबाला है, वहां केवल बूढ़े किसान और स्त्रियां ही देवताओं में विश्वास करते हैं; नौजवान और प्रौढ़ किसानों को उनमें विश्वास नहीं रहा। चूंकि किसान सभाएं नौजवान और प्रौढ़ किसानों के ही हाथों में हैं, इसलिए धार्मिक सत्ता उलटने और अंधविश्वास खत्म करने का आन्दोलन हर जगह चल रहा है। जहां तक पति की सत्ता का सवाल है, वह गरीब किसानों में हमेशा अपेक्षाकृत कम रही है, क्योंकि आर्थिक कारणों से धनी वर्गों की स्त्रियों की अपेक्षा गरीब किसान औरतों को मेहनत-मजदूरी ज्यादा करनी पड़ती है; और इस वजह से पारिवारिक मामलों में बोलने और फैसला देने का उन्हें ज्यादा हक मिल गया है। पिछले कुछ वर्षों में गांवों की आर्थिक व्यवस्था और भी दिवालिया हो गई है और स्त्रियों पर पुरुषों के प्रभुत्व का आधार और भी कमजोर हो गया है। अब किसान आन्दोलन की बढ़ती के साथ बहुत जगह स्त्रियों ने ग्रामीण महिला संघ संगठित करना शुरू कर दिया है। उन्हें अब सिर उठाने का अवसर मिल गया है और पति की सत्ता दिन-पर-दिन लड़खड़ाती जा रही है। संक्षेप में यह कि किसानों की

सत्ता के उभरने के साथ-साथ तमाम सामन्ती-पितृसत्तात्मक विचार-धाराएं और व्यवस्थाएं लड़खड़ा रही हैं। फिर भी मौजूदा दौर में किसान मुख्यतः जमींदारों की राजनीतिक सत्ता उलटने में लगे हुए हैं। जहां जमींदारों की राजनीतिक सत्ता पूरी तरह निर्मूल कर दी गई है, वहां किसान दूसरे तीन क्षेत्रों में, यानी बिरादरी के क्षेत्र, देवताओं के क्षेत्र और स्त्रियों पर पुरुषों के प्रभुत्व के क्षेत्र में, अपना हमला शुरू कर रहे हैं। लेकिन इस तरह के हमले अभी शुरू ही हुए हैं और किसानों के आर्थिक संघर्ष की पूर्ण विजय हुए बिना इन तीनों की पूर्ण पराजय नहीं हो सकती। इसलिए, इस समय हमारा कर्तव्य यह है कि हम इस बात में किसानों का नेतृत्व करें कि वे पूरी ताकत से राज-नीतिक संघर्ष चलाएं ताकि जमींदारों की सत्ता पूरी तरह निर्मूल की जा सके। आर्थिक संघर्ष भी तुरत छेड़ना चाहिए ताकि गरीब किसानों की भूमि-समस्या और दूसरी आर्थिक समस्याएं बुनियादी तौर पर हल की जा सकें। जहां तक बिरादरी-व्यवस्था, अंधविश्वासों और स्त्री-पुरुष के असमान सम्बन्धों का प्रश्न है, राजनीतिक और आर्थिक संघर्षों में विजय के फलस्वरूप इनका स्वभावतः खात्मा हो जाएगा। अगर हम भोंड़ेपन से और मनमाने ढंग से ऐसी चीजों को मिटाने में बहुत अधिक शक्ति लगा देंगे तो स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को यह कहने का मौका मिल जाएगा कि "किसान सभा को पुरखों पर श्रद्धा नहीं है", "किसान सभा देवताओं को अपमानित करती है और धर्म का नाश करती है" और "किसान सभा कहती है कि पत्नियों का कम्यूनीकरण हो"। इस तरह के क्रान्ति-विरोधी प्रचार से उन्हें किसान आन्दोलन में तोड़फोड़ की कार्यवाही करने का अवसर मिलेगा। इसका साफ सबूत पिछले दिनों हुनान के श्याङ-

श्याङ में और हुपे के याङशिन में मिला है, जहां जमींदारों ने मूर्तियां तोड़ने के प्रति कुछ किसानों के विरोध का बेजा फायदा उठाया। मूर्तियां किसानों ने ही स्थापित की हैं और समय आने पर वे अपने ही हाथों उन्हें उठा लेंगे, और किसी के लिए जरूरी नहीं है कि वह उनके बदले समय से पहले मूर्तियां उठाए। ऐसे मामलों में कम्युनिस्ट पार्टी की प्रचार-नीति यह होनी चाहिए : "कान तक धनुष खींचो, लेकिन तीर न छूटने पाए। आगे की कार्यवाही के लिए संकेतमात्र काफी है।"[१०] मूर्तियां किसानों द्वारा ही उठाई जानी चाहिए। उसी तरह शहीद कुमारियों के मंदिर और पतिव्रता व सती-साध्वी विधवाओं की स्मृति में बनाई गई महराबें किसानों द्वारा ही गिराई जानी चाहिए। उनके बदले और किसी का यह करना गलत है।

जब मैं देहात में था तो मैंने भी अंधविश्वास मिटाने के लिए किसानों में प्रचार किया था। मैंने जो कुछ कहा था, वह यह है :

"जो आठ रेखाक्षरों में विश्वास करता है, वह उम्मीद करता है कि उसका भाग्य खुल जाएगा। जो भूशकुन विद्या में विश्वास करता है, वह उम्मीद करता है कि उस पर उसके पुरखों के मजार की मेहरबानी होगी। इस साल कुछ ही महीनों में स्थानीय निरंकुश तत्वों, बुरे शरीफजादों और भ्रष्टाचारी अफसरों का टाट उलट गया। क्या यह सम्भव है कि कुछ महीने पहले तक उन सभी का भाग्य खुला हुआ था और उन पर उनके अपने-अपने पुरखों के मजार की मेहर-बानी थी, लेकिन पिछले कुछ महीनों में ही उन सबका भाग्य पलट गया और उनके पुरखों के मजारों ने उन पर मेहरबानी करना बन्द कर दिया? स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे तुम्हारी किसान सभा का मजाक उड़ाते हैं और कहते हैं : 'कैसी अजीब बात

है ! अब जमाना कमेटी-मेम्बरों का है। देखो तो, आदमी पेशाब करने भी जाता है तो एकाध कमेटी-मेम्बर से मुठभेड़ हुए बिना नहीं रहती !' बिलकुल ठीक, शहर और गांव, मजदूर संघ और किसान सभा, क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी, सभी जगह निरपवाद रूप से उनकी अपनी कार्यकारिणी कमेटियों के सदस्य मौजूद हैं—सचमुच अब जमाना कमेटी-मेम्बरों का है। लेकिन यह सब क्या आठ रेखाक्षरों और पुरखों के मजारों के कारण है ? कैसी अजीब बात है ! देहात में सभी गरीबों के आठ रेखाक्षर अचानक अच्छे बन गए ! और उनके पुरखों के मजारों ने अचानक मेहरबानी करनी शुरू कर दी ! देवता ? तुम उनकी पूजा बेशक करो। लेकिन अगर किसान सभा न होती और अकेले श्रीमंत क्वान और दया की देवी ही होती, तो क्या तुम स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों को मार गिरा सकते ? देवी-देवता सचमुच दया के पात्र हैं। सैकड़ों साल से तुम उनकी पूजा करते आ रहे हो, फिर भी उन्होंने तुम्हारे हित के लिए न तो एक भी स्थानीय निरंकुश तत्व को मार गिराया और न एक भी बुरे शरीफजादे को। अब तुम अपना लगान कम कराना चाहते हो। मैं पूछना चाहूंगा : यह काम कैसे करोगे ? देवी-देवताओं का भरोसा करके या किसान सभा का भरोसा करके ?"

मेरे ये शब्द सुनकर किसानों ने खूब कहकहे लगाए।

८. राजनीतिक प्रचार को सर्वव्यापी बनाना

यदि कानून और राजनीति के दस हजार स्कूल खोल दिए जाते, तो भी क्या वे देहात के कोने-कोने में मर्द-औरत, नौजवान-बूढ़े, सभी में इतने कम समय में राजनीतिक शिक्षा का उतना काम कर पाते

जितना किसान सभा ने किया है ? मेरा विचार है नहीं। "साम्राज्यवाद का नाश हो !" "युद्ध-सरदारों का नाश हो !" "भ्रष्टाचारी अफसर मुर्दाबाद !" और "स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे मुर्दाबाद !"—ये राजनीतिक नारे हर तरफ सुनाई देते हैं। ये अनगिनत गांवों में प्रौढ़ों, तरुणों, बूढ़ों-बच्चों और स्त्रियों के दिमागों में पैठ चुके हैं और हर एक की जबान पर हैं। मिसाल के लिए, कहीं खेलते हुए बच्चों को जरा गौर से देखिए। अगर उनमें से कोई दूसरे पर बिगड़ रहा हो, आंखें फाड़-फाड़ कर पैर पटक रहा हो और घूंसा तान रहा हो, तो तुरन्त तेज आवाज में दूसरी ओर से सुनाई देगा, "साम्राज्यवाद का नाश हो !"

श्याङथान में जब दो बच्चे ढोर चराते हुए लड़ाई का खेल खेलते हैं, तो एक थाङ शङ-च बनता है और दूसरा ये खाए-शिन[११] बनता है। कुछ देर बाद एक हार जाता है और दूसरा उसका पीछा करने लगता है। पीछा करने वाला थाङ शङ-च होगा और भागने वाला ये खाए-शिन। इसमें शक नहीं कि शहर का लगभग हर बच्चा "साम्राज्यवादी ताकतों का नाश हो !" वाला गीत गा सकता है, लेकिन अब गांवों के बहुत से बच्चे भी उसे गा सकते हैं।

देहात में कुछ किसान डा० सुन यात-सेन का वसीयतनामा भी पढ़ सकते हैं। वे उसमें से "आजादी", "समानता", "तीन जन-सिद्धान्त" और "असमान सन्धियां" जैसे टुकड़े ले लेते हैं और जरा भोंड़ेपन के साथ अपने दैनिक जीवन में उन्हें लागू करते हैं। जब रास्ते में किसान को कोई शरीफजादे जैसा आदमी मिल जाता है और यह आदमी अपने रोब की वजह से रास्ता नहीं देता, तो किसान बिगड़कर कहने लगता है, "ओ स्थानीय निरंकुश तत्व, ओ बुरे

शरीफजादे, क्या तू तीन जन-सिद्धान्त नहीं जानता ?" छाङशा के आसपास के किसान जब पहले साग-सब्जी बेचने शहर जाते थे, तो पुलिसवाले उन्हें परेशान करते थे। लेकिन अब किसानों के हाथ में एक हथियार है : तीन जन-सिद्धान्त। जब साग-सब्जी बेचने वाले किसी किसान को पुलिसवाला गाली देता है या उस पर हाथ उठाता है, तो वह किसान तीन जन-सिद्धान्तों की याद दिलाकर उसे चुप करा देता है। एक बार श्याङथान में जिला किसान सभा और श्याङ किसान सभा के बीच झगड़ा हो गया। श्याङ किसान सभा के प्रधान ने ऐलान किया : "जिला किसान सभा द्वारा लादी हुई असमान सन्धियों का विरोध करो !"

तमाम देहात में राजनीतिक प्रचार को फैलाना पूरी तरह कम्युनिस्ट पार्टी और किसान सभा की उपलब्धि है। सीधे-सादे नारों, कार्टूनों और भाषणों ने बहुत जल्दी और व्यापक रूप से असर डाला है। किसानों पर उनका इतना असर पड़ा है कि मालूम होता है, उनमें से प्रत्येक व्यक्ति कुछ दिन राजनीतिक स्कूल में पढ़ आया है। देहात में जो साथी काम कर रहे हैं, उनका कहना है कि बड़े पैमाने पर राजनीतिक प्रचार इन तीन जन-समारोहों में हुआ है – बरतानिया-विरोधी प्रदर्शन, अक्तूबर क्रान्ति की जयन्ती का समारोह और उत्तरी अभियान की जीत का महान समारोह। ऐसे मौकों पर जहां भी किसान सभाएं थीं, वहां विस्तार से राजनीतिक प्रचार किया गया और सारे देहात को जगा दिया गया। इसका बहुत भारी असर पड़ा। अब से हमें हर मौके से फायदा उठाकर लगातार इन सीधे-सादे नारों की विषय-वस्तु समृद्ध बनाना और उनका अर्थ स्पष्ट करना चाहिए।

९. किसानों द्वारा लगाई गई पाबन्दियां

कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में किसान सभाएं जब देहात में अपनी सत्ता और धाक कायम कर लेती हैं, तब किसानों को जो चीजें नापसन्द हैं, उन पर वे पाबन्दियां या नियंत्रण लगाना शुरू कर देते हैं। तीन चीजों पर सबसे सख्त पाबन्दी है : ताश-डोमिनो के खेल, जुआ और अफीम की पिलाई।

ताश-डोमिनो के खेल। जहां किसान सभा शक्तिशाली है, वहां माच्याङ, डोमिनो और ताश के खेलों पर पूरी पाबन्दी लगा दी गई है।

श्याङश्याङ के चौदहवें जिले में किसान सभा ने दो टोकरे माच्याङ के सेट जला डाले।

देहातों में जाने पर आप को कहीं भी ये खेल होते दिखाई न देंगे। जो भी पाबन्दी तोड़ता है, उसे तुरन्त ही बिना किसी रू-रियायत के सजा दी जाती है।

जुआ। जो लोग पहले खुद "जुआरी" थे, वे ही अब जुए को दबा रहे हैं। जहां किसान सभा शक्तिशाली है, वहां ताश-डोमिनो के साथ यह भी गायब हो गया है।

अफीम की पिलाई। इस पर बहुत सख्त पाबन्दी है। जब किसान सभा ने अफीम की गुड़गुड़ी दे देने को कहा, तो किसी की यह हिम्मत न हुई कि जरा भी चूं-चपड़ करे। लीलिङ में एक बुरे शरीफजादे ने अपनी गुड़गुड़ी न दी। उसे गिरफ्तार कर गांवों में उसका जलूस निकाला गया।

उत्तरी अभियान सेना ने जिस तरह ऊ फेइ-फू और सुन छ्वान-

फ़ाङ[२२] की सेनाओं से हथियार डलवा लिए थे, कुछ-कुछ उसी आन-बान के साथ किसानों ने "अफीमचियों से 'हथियार' डलवाने का आन्दोलन" चलाया है। क्रान्तिकारी सेना के अफसरों के परिवारों में काफी ऐसे बुजुर्ग निकल आए जो अफीम के ऐसे लती थे कि उनके लिए "हथियार" डालना जान दे देने के बराबर था। इन सभी से "जिन्दाबाद" वालों ने (जैसा कि व्यंग्य में बुरे शरीफजादे किसानों को पुकारते हैं) "हथियार" डलवा लिए। "जिन्दाबाद" वालों ने अफीम की खेती और उसके पीने पर ही रोक नहीं लगाई, उन्होंने उसके इधर-उधर भेजने पर भी पाबन्दी लगा दी है। पाओछिङ, श्याङश्याङ, यओश्येन और लीलिङ आदि काउन्टियों से होकर जाने वाली ढेरों अफीम, जो क्वेइचओ से च्याङशी भेजी जाती थी, रास्ते में ही पकड़ ली गई और जला दी गई। इसका असर सरकारी वित्त-व्यवस्था पर पड़ा। अन्त में उत्तरी अभियान सेना के खर्च का खयाल करते हुए प्रान्तीय किसान सभा ने नीचे की किसान सभाओं को आज्ञा दी कि "अफीम भेजने पर अस्थाई रूप से पाबन्दी हटा ली जाए।" लेकिन इससे किसान परेशान और नाराज हुए।

इन तीन के अलावा और बहुत सी चीजों पर किसानों ने पाबन्दी लगाई है या उन्हें नियंत्रित कर दिया है। उनमें से कुछ ये हैं :

फूलों का ढोल। यह एक अश्लील किस्म का अभिनय है, जिसे बहुत सी जगहों में रोक दिया गया है।

पालकी। बहुत सी काउन्टियों में, खासकर श्याङश्याङ में, पालकियां तोड़ने की घटनाएं हुई हैं। किसान पालकी पर चढ़ने वालों से अत्यधिक घृणा करते हैं और हमेशा पालकियां तोड़ने के इच्छुक रहते हैं। लेकिन किसान सभा ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया है।

किसान सभा के कार्यकर्ता किसानों से कहते हैं, "पालकियां तोड़ोगे तो अमीरों का ही पैसा बचेगा और पालकी ढोने वाले अपनी रोजी गंवाएंगे। इससे क्या अपने ही लोगों को नुकसान नहीं पहुंचेगा?" किसानों ने इस पर विचार किया और जब बात समझ में आ गई, तब उन्होंने एक नया दांव निकाला। अमीरों को दण्ड देने के लिए उन्होंने पालकी ढोने वालों की मजूरी बहुत ज्यादा बढ़ा दी।

शराब और शक्कर बनाना। शराब और शक्कर बनाने के लिए अनाज के इस्तेमाल पर हर जगह पाबन्दी लगा दी गई है। नतीजा यह हुआ है कि शराब और शक्कर बनाने वाले लगातार शिकायतें दर्ज करा रहे हैं। हङशान काउन्टी के फ़ूथ्येनफ़ू में शराब बनाने पर रोक नहीं है, लेकिन शराब की कीमत बहुत कम रखी गई है। शराब बनाने वालों का मुनाफा मारा गया, इसलिए उन्हें शराब बनाना बन्द करना पड़ा।

सुअर। हर परिवार जितने सुअर रख सकता है, उनकी संख्या नियत कर दी गई है, क्योंकि सुअर अनाज खाते हैं।

मुर्गियां और बत्तखें। श्याङश्याङ में मुर्गियां और बत्तखें पालने की मनाही है, लेकिन स्त्रियां इस पर आपत्ति करती हैं। हङशान काउन्टी के याङथाङ में हर परिवार तीन मुर्गी-बत्तख रख सकता है और फ़ूथ्येनफ़ू में पांच। बहुत जगह बत्तखें पालने की कतई मनाही है। बत्तखें अनाज ही नहीं खातीं, धान के पौधे भी बरबाद कर देती हैं। इसलिए वे मुर्गियों से भी निकम्मी होती हैं।

दावतें। भारी दावतों पर आम तौर से पाबन्दी है। श्याङथान काउन्टी के शाओशान में यह फैसला किया गया है कि मेहमानों को मुर्गी, मछली और सुअर इन तीन का गोश्त ही परोसा जाएगा।

बांस की कोपलें, समुद्री घास और दाल की सेवैंयां परोसना मना है। हङशान काउन्टी में फैसला किया गया है कि किसी भोज में सिर्फ आठ प्रकार के भोजन ही परोसे जा सकते हैं, इससे एक भी ज्यादा नहीं। लीलिङ के पूर्वी तीसरे जिले में सिर्फ पांच प्रकार के भोजन परोसने की आज्ञा है और उत्तरी दूसरे जिले में तीन प्रकार के गोश्त और तीन प्रकार की साग-सब्जियां ही परोसी जा सकती हैं। पश्चिमी तीसरे जिले में नए साल की दावतों पर रोक लगा दी गई है। श्याङश्याङ काउन्टी में "अंडे-गोश्त से भरे कुलचों की दावत" पर, जो कोई बड़ी दावत नहीं होती, रोक लगा दी गई है। श्याङश्याङ के दूसरे जिले में एक परिवार ने बेटे के ब्याह पर जब यह दावत दी, तो किसानों को लगा कि उसने पाबन्दी तोड़ी है। इसलिए वे उसके घर में घुस गए और दावत तहस-नहस कर दी। श्याङश्याङ काउन्टी के च्यामो कस्बे में लोगों ने खर्चीले भोजन करना बन्द कर दिया है और पुरखों के लिए बलि देते समय वे लोग सिर्फ फलों से काम लेते हैं।

गाय-बैल। ये किसानों की निधि हैं। यह लगभग एक धार्मिक सिद्धान्त बन गया है कि "जो इस जनम में गाय-बैल मारेंगे, वे अगले जनम में खुद गाय-बैल बनेंगे।" इसलिए गाय-बैल हरगिज नहीं मारे जाने चाहिए। सत्ता हथियाने के पहले धार्मिक निषेध के अलावा गाय-बैल मारना रोकने के लिए किसानों के पास कोई उपाय न था। किसान सभा का उदय होने के बाद से उन्होंने गाय-बैलों को भी अपने अधिकार-क्षेत्र में समेट लिया है और नगरों में उन्हें मारने की मनाही कर दी है। श्याङथान काउन्टी-केन्द्र में कसाइयों की छः दुकानें थीं जिनमें पांच बन्द हो गई हैं और बाकी एक बीमार

या पंगु हो जाने वाले गाय-बैलों का गोश्त ही बेचती है। समूची हङशान काउन्टी में गाय-बैल मारने की एकदम मनाही है। एक किसान के बैल ने ठोकर खाकर अपना पैर तोड़ लिया। उसको मारने से पहले किसान सभा से पूछना पड़ा। चूचओ के व्यापारी संघ ने बिना सोचे-विचारे जब एक गाय मार डाली तब किसान विरोध करने के लिए नगर में पहुंचे और व्यापारी संघ से सफाई तलब की। व्यापारी संघ को जुर्माना देने के अलावा क्षमा-प्रार्थना के तौर पर पटाखे भी छोड़ने पड़े।

शोहदे और आवारागर्द। लीलिङ काउन्टी में एक प्रस्ताव पास करके इस तरह की चीजों की मनाही कर दी गई है – नगाड़े बजा कर नए वर्ष की शुभकामनाएं देना, स्थानीय देवताओं के बारे में कीर्तन करना और कमल सम्बन्धी लोकगीत गाना। दूसरी विभिन्न काउन्टियों में भी इन पर या तो पाबन्दी लगा दी गई है या वे अपने आप बन्द हो गई हैं, क्योंकि यह सब करने का किसी का मन नहीं होता। कुछ "भिखारी शोहदे" या "आवारागर्द" ऐसे हैं जो बड़ी सीनाजोरी किया करते थे। लेकिन अब किसान सभा के सामने सिर झुकाने के सिवा उनके लिए और कोई चारा नहीं रह गया है। श्याङथान काउन्टी के शाओशान में वर्षा के देवता के मंदिर में जान पर खेल जाने वाले आवारागर्द जुटे रहते थे। किसान सभा का उदय होने के बाद से वे वहां से चुपके से खिसक गए हैं। उसी काउन्टी में हूती श्याङ की किसान सभा ने ऐसे तीन शोहदों को पकड़ लिया और भट्टों के लिए उनसे मिट्टी ढुलवाई। नए वर्ष पर घर-घर जाकर मिलने और उपहार देने के फिजूलखर्ची वाले रिवाज को रोकने के लिए एक प्रस्ताव पास कर दिया गया है।

ऊपर कही हुई बातों के अलावा विभिन्न जगहों में बहुत सी छोटी-मोटी पाबन्दियां लगा दी गई हैं, जैसे कि लीलिङ में महामारी के देवता को मनाने के लिए धूप-दीप जलाकर जलूस निकालने पर, भेंट-उपहार के लिए मेवा-मिष्ठान व फलादि खरीदने पर, प्रेतोत्सव के समय धार्मिक रस्में पूरी करने के हेतु कागज की पोशाकें जलाने पर और नए वर्ष में द्वार पर मंगल-कामना पत्र चिपकाने पर पाबन्दी लगाना। श्याङश्याङ काउन्टी के कूश्वेइ में हुक्का तक पीने पर पाबन्दी है। दूसरे जिले में पटाखे छोड़ने और रस्मी तौर पर तिनाली बन्दूकें चलाने पर पाबन्दी है। जो लोग पटाखे छोड़ते हैं, उन पर १ य्वान २ च्याओ जुर्माना किया जाता है और जो बन्दूकें चलाते हैं, उन पर २ य्वान ४ च्याओ। सातवें और बीसवें जिलों में मृत व्यक्ति से सम्बन्धित धार्मिक कुरीतियों पर पाबन्दी लगा दी गई है। अठारहवें जिले में अंत्येष्टि क्रिया के समय दान-दक्षिणा देने की मनाही है। इस तरह की बहुत सी बातें हैं, जो सब लिखी नहीं जा सकतीं। मोटे तौर पर उन्हें हम किसानों की पाबन्दियां कह सकते हैं।

ये पाबन्दियां दो तरह से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। पहले तो ये ताश-डोमिनो, जुआ और अफीम पीने जैसे बुरे सामाजिक रिवाजों के प्रति विद्रोह प्रकट करती हैं। ये रिवाज जमींदार वर्ग के सड़े-गले राजनीतिक वातावरण के साथ पैदा हुए थे। एक बार जमींदारों की सत्ता उलट दी जाती है, तो साथ-साथ इनका भी सफाया हो जाता है। दूसरे, ये शहर के व्यापारियों द्वारा किसानों के शोषण के खिलाफ आत्मरक्षा का एक रूप हैं—जैसे बड़ी-बड़ी दावतों पर और भेंट-उपहार के लिए मेवा-मिष्ठान व फलादि खरीदने पर पाबन्दी। औद्योगिक वस्तुओं की कीमत बहुत ज्यादा है और खेतीबारी से

पैदा होने वाली चीजों की बहुत कम। इसलिए व्यापारियों के निर्दय शोषण से किसान बिलकुल निर्धन हो जाते हैं। अतः आत्मरक्षा के लिए उन्हें किफायत की राह चलना पड़ता है। जहां तक इलाके से बाहर अनाज भेजने पर किसानों द्वारा लगाई गई पाबन्दी का सवाल है, यह इसलिए लागू की गई थी कि गरीब किसानों के पास पेट भरने को अन्न न जुट पाता था, उन्हें उसे बाजार में खरीदना पड़ता था और इसलिए उन्हें उसका भाव चढ़ने से रोकना होता था। ये सब बातें किसानों की निर्धनता तथा शहर और देहात के बीच के अन्तर-विरोध के कारण हुई हैं। यह बात नहीं है कि औद्योगिक माल या शहर और देहात के बीच के व्यापार को ठुकराकर किसान तथा-कथित पूर्वी संस्कृति के सिद्धान्त[२१] का पालन कर रहे हैं। आर्थिक रूप से अपनी रक्षा करने के लिए किसानों को सहकारी समितियों में संगठित हो जाना चाहिए ताकि वे उपभोग की वस्तुएं सामूहिक रूप से खरीद सकें। इसके अलावा सरकार को किसान सभा की मदद करनी चाहिए ताकि वह ऋणदाता (कर्ज देने वाली) सहकारी-समितियां खोल सके। उसके बाद किसान स्वभावतः देख लेंगे कि भाव नीचा रखने के लिए बाहर अनाज भेजने पर पाबन्दी लगाना अनावश्यक हो जाएगा और आर्थिक रूप से आत्मरक्षा के लिए देहात में कुछ औद्योगिक वस्तुओं के आने पर उन्हें पाबन्दी नहीं लगानी होगी।

१०. डकैती निर्मूलन

य्वी, थाङ, वन और ऊ से लेकर छिङ वंश के बादशाहों और गणराज्य के राष्ट्रपतियों तक किसी भी शासक ने मेरे विचार से डकैती निर्मूलन में ऐसी शक्ति नहीं दिखाई, जैसी कि आज किसान

सभा ने दिखाई है। जहां-जहां किसान सभा शक्तिशाली है, वहां किसी भी किस्म के डाकुओं का नामोनिशान तक नहीं मिलता। यह मार्के की बात है कि बहुत जगह तो साग-भाजी चुराने वाले मामूली चोर भी गायब हो गए हैं। दूसरी कुछ जगहों में मामूली चोर अब भी मौजूद हैं। लेकिन जिन-जिन काउन्टियों में मैं गया था, वहां डकैती का नाम तक न था, उन जगहों में भी नहीं जहां पहले डाकू भरे रहते थे। इसके कारण ये हैं: पहले तो यह कि किसान सभा के सदस्य जंगल-पहाड़ सब कहीं फैले हुए हैं। एक ने होशियार कहा नहीं कि सैंकड़ों लोग लाठी और बल्लम लेकर टूट पड़ते हैं और डाकुओं को छिपने का ठौर तक नहीं मिलता। दूसरे, किसान आन्दोलन का उदय होने के बाद से अनाज का भाव गिर गया है। पिछले वसन्त में फी तान[२४] छः य्वान का भाव था, लेकिन सर्दियों में फी तान दो य्वान का ही रह गया। अब लोगों के लिए अन्न की समस्या पहले से कम गम्भीर है। तीसरे, गुप्त संस्थाओं[२५] के सदस्य किसान सभा में शामिल हो गए हैं। यहां वे खुलकर और कानूनी तौर से अपनी वीरता दिखा सकते हैं और शिकायतें कर सकते हैं। अब उन्हें "पर्वत", "महल", "मंदिर" और "नदी"[२६] जैसी गुप्त संस्थाओं की जरूरत नहीं है। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के सुअर और बकरे मारकर और उनसे भारी जुर्माना और कर वसूल करके अपने पहले के सताने वालों के खिलाफ अपना गुस्सा जाहिर करने का उन्हें काफी मौका मिल जाता है। चौथे, विभिन्न फौजें बहुत से सिपाही भरती कर रही हैं। बहुत से "बेलगाम तत्व" उनमें भरती हो गए हैं। इस तरह किसान आन्दोलन का उदय होने के साथ डकैती का रोग खत्म हो गया है। इस मामले में शरीफजादे और अमीर भी किसान सभा की दाद देते हैं। वे कहते हैं: "किसान सभा? भई, कहना पड़ेगा कि उसमें कुछ न कुछ अच्छाइयां भी हैं।"

ताश-डोमिनो, जुआ और अफीम पीना रोककर तथा डकैती निर्मूलन करके किसान सभा ने आम लोगों की वाहवाही हासिल कर ली है।

११. भारी लेवियों की वसूली का खात्मा

चूंकि सारा देश अभी तक एकीकृत नहीं हुआ और साम्राज्य-वादियों और युद्ध-सरदारों की सत्ता अभी उलटी नहीं गई, इसलिए अभी भी यह मुमकिन नहीं है कि किसानों पर से सरकारी टैक्सों और लेवियों का भारी बोझ हटाया जा सके, या और साफ शब्दों में कहा जाए तो क्रान्तिकारी सेना के सैनिक खर्च का बोझ हटाया जा सके। फिर भी, जब देहातों के शासन में स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों की तूती बोलती थी, तब वे फी मू की विशेष लेवी जैसी भारी लेवियां किसानों से वसूल किया करते थे; अब किसान आन्दोलन का उदय होने और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के पतन के बाद से इस तरह की लेवियां वसूल करना बन्द कर दिया गया है, या कम से कम ये लेवियां घटा दी गई हैं। इसे भी किसान सभा की सफलताओं में गिनना चाहिए।

१२. सांस्कृतिक आन्दोलन

चीन में संस्कृति हमेशा एकमात्र जमींदारों की निधि रही है, उस तक किसानों की पहुंच नहीं हुई। लेकिन जमींदारों की संस्कृति

के निर्माता तो किसान ही हैं, क्योंकि उस संस्कृति का एकमात्र स्रोत किसानों के खून-पसीने के अलावा और कुछ नहीं है। चीन में ९० फीसदी जनता शिक्षित नहीं है, और उसमें अधिकांश लोग किसान हैं। देहात में जमींदारों की सत्ता के पतन के बाद किसानों ने सांस्कृतिक आन्दोलन शुरू कर दिया है। देखिए तो, जो किसान अब तक स्कूलों से घोर नफरत करते थे, अब वे कितने जोश के साथ रात्रि-कक्षाओं का संगठन कर रहे हैं! किसानों ने "विदेशी ढंग के स्कूलों" को कभी पसन्द नहीं किया। जब मैं विद्यार्थी था, तो अपने गांव लौटने पर मैंने देखा था कि किसान "विदेशी ढंग के स्कूलों" के विरुद्ध हैं। उस समय मैं खुद अपने को भी "विदेशी ढंग के विद्यार्थियों और अध्यापकों" में से एक समझता था और उनका समर्थन करता था। मुझे हमेशा लगता था कि हो न हो किसान गलती पर हैं। १९२५ में, जब मैं कम्युनिस्ट बन चुका था और मार्क्सवादी दृष्टिकोण अपना चुका था, उस समय देहात में छः महीने रहने के बाद ही मैं समझ सका कि मैं गलती पर था और किसानों की राय सही थी। गांवों के प्राइमरी स्कूलों में जो अध्यापन-सामग्री काम में लाई जाती थी, उसमें शहर की बातों की चर्चा होती थी। देहात की जरूरतों के अनुकूल वह बिलकुल न थी। इसके अलावा प्राइमरी स्कूलों के अध्यापक किसानों के साथ बुरा सलूक करते थे। किसानों को उनसे मदद मिलना तो दरकिनार, उल्टे किसान उनसे घृणा करने लगे। परिणामस्वरूप किसान चाहते थे कि आधुनिक स्कूलों (इन्हें वे लोग "विदेशी कक्षाएं" कहते थे) के बदले पुराने ढंग के स्कूल (इन्हें वे लोग "चीनी कक्षाएं" कहते थे) चालू हों। प्राइमरी स्कूल

के मास्टरों के मुकाबले वे पुराने ढंग के अध्यापकों को ज्यादा पसन्द करते थे। अब किसान जोरों के साथ रात्रि-कक्षाओं का संगठन कर रहे हैं। इन्हें वे किसान पाठशाला कहते हैं। इस तरह की अनेक पाठशालाएं खुल गई हैं और दूसरी खोली जा रही हैं। औसतन हर श्याङ में एक पाठशाला है। इस तरह की पाठशालाएं खोलने के लिए किसानों में बड़ा उत्साह है। वे ऐसी पाठशालाओं को ही, एकमात्र उन्हें ही, अपना समझते हैं। रात्रि-कक्षाओं के लिए पैसा "अंधविश्वासों से प्राप्त मालगुजारी" से लिया जाता है, या पुरखों के मंदिरों की निधि से और दूसरी तरह की बेकार पड़ी हुई सार्वजनिक निधि या सम्पत्ति से लिया जाता है। काउन्टियों के शिक्षा-बोर्ड चाहते थे कि इन सार्वजनिक निधियों का उपयोग प्राइमरी स्कूल कायम करने के लिए हो, यानी "विदेशी ढंग के स्कूल" कायम करने के लिए हो, जो किसानों की जरूरतों को पूरा नहीं करते। लेकिन किसान चाहते थे कि उन निधियों का उपयोग किसान पाठशालाओं के लिए हो। विवाद का नतीजा यह हुआ कि दोनों को निधियों से हिस्सा मिला, कुछ जगहों में तो किसानों को समूची निधि मिल गई। किसान आन्दोलन के बढ़ने के फलस्वरूप किसानों का सांस्कृतिक स्तर तेजी से ऊंचा हुआ है। थोड़े ही दिनों में समूचे प्रान्त के देहातों में दसियों हजार पाठशालाएं खुल जाएंगी। बुद्धिजीवी और तथाकथित "शिक्षा विशेषज्ञ" जिस "सर्वव्यापी शिक्षा" के लिए बेकार का शोर मचाया करते हैं, और जो उनके तमाम शोरगुल के बावजूद महज जबानी जमाखर्च रहा है, उसके मुकाबले पाठशालाओं का यह सिलसिला बिलकुल भिन्न है।

१३. सहकारी-समिति आन्दोलन

सहकारी समितियों की, खासकर उपभोक्ता, क्रय-विक्रय और ऋणदाता, इन तीन तरह की सहकारी समितियों की किसानों को अवश्य जरूरत है। जब किसान माल खरीदते हैं, तो व्यापारी उन्हें लूटते हैं। जब उन्हें अपने खेत की उपज बेचनी होती है, तो वे ठग लिए जाते हैं। जब वे गल्ला या पैसा उधार लेते हैं, तो सूदखोर महाजन उनका खून चूसते हैं। किसान इन तीनों समस्याओं को तुरत हल करने की मांग कर रहे हैं। पिछले साल सर्दियों में याङत्सी की घाटी में लड़ाई के समय व्यापार का रास्ता बन्द हो गया था और हुनान में नमक का भाव चढ़ा दिया गया था। तब नमक खरीदने के लिए बहुत से किसानों ने सहकारी समितियां बनाई थीं। जब जमींदारों ने जानबूझकर उधार देना बन्द कर दिया, तो किसानों ने जगह-जगह ऋणदाता संस्थाएं बनाने की कोशिश की क्योंकि वे उधार लेना चाहते थे। बड़ी समस्या है संगठन की उचित और विस्तृत नियमावली का अभाव। जगह-जगह किसानों द्वारा संगठित सहकारी समितियां अक्सर सहकारिता के सिद्धान्तों पर नहीं चल पातीं। इसलिए किसानों में काम करने वाले साथी हमेशा उत्सुकता से "संगठन की नियमावली" के बारे में पूछा करते हैं। अगर उचित मार्गदर्शन हो, तो सहकारी-समिति आन्दोलन किसान सभा के प्रसार के साथ हर जगह फैल जाएगा।

१४. सड़कें और तालाब व बांध बनाना

किसान सभा की यह भी एक उपलब्धि है। किसान सभा से पहले देहात की सड़कें बेहद खराब थीं। सड़कें बिना पैसे दुरुस्त नहीं

की जा सकतीं। चूंकि धनी लोग पैसा देने से कतराते थे, इसलिए सड़कें दिन-पर-दिन और खराब होती जा रही थीं। अगर कभी सड़क सुधारने का छोटा-मोटा काम किया भी जाता था तो वह दया-धरम का काम समझकर किया जाता था। थोड़ा बहुत पैसा उन परिवारों से बटोरा जाता था जो "परलोक में नाम कमाना चाहते थे" और इस तरह कुछ तंग, पतली सतह वाली सड़कें बनाई जाती थीं। जब किसान सभा का उदय हुआ, तो उसने निर्देश दिए कि जरूरत के अनुसार सड़कों की चौड़ाई तीन, पांच, सात छी या एक चाङ[२५] होगी। उसने सड़कों के किनारे रहने वाले जमींदारों को हुक्म दिया कि हर कोई सड़क का एक हिस्सा बनाए। एक बार हुक्म हो गया, तब किसकी हिम्मत है जो न माने? थोड़े ही दिनों में बहुत सी अच्छी-अच्छी सड़कें दिखाई देने लगी हैं। यह दया-धरम का काम नहीं है, बल्कि दबाव का फल है। लेकिन आखिर इस तरह का थोड़ा बहुत दबाव डालना कोई बुरी बात नहीं है। यही बात तालाबों व बांधों के लिए भी सही है। निर्दयी जमींदार असामी किसानों से कौड़ी-कौड़ी झपट लेने की कोशिश करते थे, लेकिन तालाब व बांध की मरम्मत करने के लिए उन्हें चार पैसा भी लगाते बुरा लगता था। ताल भले ही सूख जाएं और असामी किसान भले ही भूखों मरने लगें, लेकिन उन्हें लगान वसूल करने के सिवा और किसी चीज से वास्ता न था। अब किसान सभा है, इसलिए जमींदारों को सीधे हुक्म दिया जा सकता है कि चलो, तालाब व बांध की मरम्मत करो। जब जमींदार इनकार करते हैं, तो किसान सभा के लोग उनसे मीठे शब्दों में कहते हैं, "अच्छी बात है, मरम्मत न करोगे, तो गल्ला तो दे सकते हो। हर मजूर के

लिए रोजाना एक तओ [२८] गल्ला देना होगा।" जमींदारों की समझ में यह बुरा सौदा है, इसलिए वे खुद मरम्मत करने चल पड़ते हैं। नतीजा यह हुआ है कि बहुत से तालाब व बांध, जिनकी बुरी हालत थी, अब मजबूत बन गए हैं।

ऊपर जो चौदह काम गिनाए गए हैं, उन सभी को किसान सभा के नेतृत्व में किसानों ने पूरा किया है। इन कामों में जो बुनियादी भावना मौजूद है और इनका जो क्रान्तिकारी महत्व है, उसे देखते हुए मैं पाठकों से कहूंगा कि इन पर विचार करें और बताएं कि इनमें कौन सा काम बुरा है? मेरी समझ से केवल स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे ही इन कामों को बुरा कहेंगे। लेकिन हैरानी की बात यह है कि नानछाङ [२९] से मिली खबर के मुताबिक च्याङ काई-शेक, चाङ चिङ-च्याङ [३०] आदि महानुभावों की राय में हुनान में किसानों की कार्यवाही कुछ निन्दनीय है। च्याङ और चाङ की इस राय से हुनान में दक्षिणपक्षी नेता ल्यू य्वे-च [३१] आदि सहमत हैं। उन लोगों का कहना है, "वे सबके सब लाल रंग में रंग गए हैं।" लेकिन इस थोड़े से लाल रंग के बिना राष्ट्रीय क्रान्ति का क्या होगा? अगर कोई हररोज चिल्लाए कि "आम जनता को जगाओ," लेकिन जब जनता जाग उठे तो उसकी जान निकलने लगे, ऐसे आदमी के काम और श्रीमंत ये के ड्रैगन-प्रेम [३२] में क्या अन्तर है?

नोट

[१] उस समय हुनान प्रान्त चीन के किसान आन्दोलन का केन्द्र था।

[२] चाओ हङ-थी उस समय हुनान का शासक था, जो उत्तरी युद्ध-सरदारों

का एजेन्ट था। १९२६ में उत्तरी अभियान सेना ने उसका तख्ता पलट दिया।

[३] १९११ की क्रान्ति छिङ वंश की तानाशाही सरकार का तख्ता उलटने के लिए छेड़ी गई क्रान्ति थी। १० अक्तूबर १९११ को, "नई सेना" के एक हिस्से ने पूंजीपति वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के क्रान्तिकारी संगठनों से प्रेरित होकर ऊछाङ में विद्रोह कर दिया। इसके बाद दूसरे प्रान्तों में भी एक के बाद एक विद्रोह छिड़ गया। परिणामस्वरूप छिङ वंश के शासन का जल्दी ही पतन हो गया। १ जनवरी १९१२ को नानकिङ में चीन गणराज्य की अस्थाई सरकार की स्थापना हुई और सुन यात-सेन अस्थाई राष्ट्रपति चुने गए। यह क्रान्ति किसानों, मजदूरों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के साथ पूंजीपति वर्ग द्वारा कायम किए गए संश्रय के जरिए सफल हुई थी। लेकिन इस क्रान्ति के नेता-दल में सुलह-समझौता करने की प्रवृत्ति मौजूद थी; उसने किसानों के असली हितों की रक्षा नहीं की और साम्राज्यवाद व सामन्ती शक्तियों के दबाव के सामने सिर झुका दिया। इसके फलस्वरूप राजसत्ता उत्तरी युद्ध-सरदार य्वान श-खाए के हाथ में चली गई और यह क्रान्ति असफल हो गई।

[४] "अन्याय मिटाने के लिए उचित सीमा से बाहर जाना" – यह एक पुरानी चीनी कहावत है। लोगों की गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाने के मकसद से चीन की इस पुरानी कहावत को अक्सर उद्धृत किया जाता था; ऐसे सुधार करने की अनुमति दे दी जाती थी जो प्रचलित व्यवस्था की परिधि के अन्दर हों, लेकिन पुरानी व्यवस्था का पूर्ण रूप से नाश कर देने के उद्देश्य से की जाने वाली कार्यवाहियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता था। इस परिधि के अन्दर रहने वाली कार्यवाहियों को "उचित" समझा जाता था, लेकिन पुरानी व्यवस्था का पूर्ण रूप से नाश कर देने के उद्देश्य से की गई कार्यवाहियों को "उचित सीमा से बाहर जाना" कहा जाता था। सुधारवादियों और क्रान्तिकारी पांतों में मौजूद अवसरवादियों के लिए यह एक सुविधाजनक सिद्धान्त है। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस प्रकार के सुधारवादी सिद्धान्तों का खण्डन किया है। उनके इस कथन का कि "अन्याय मिटाने के लिए उचित सीमा से बाहर जाना जरूरी होता है और उचित सीमा से बाहर गए बिना अन्याय मिटाया नहीं जा सकता" अर्थ है पुरानी सामन्ती व्यवस्था का अन्त करने के लिए संशोधनवादी – सुधारवादी तरीके के बदले

जन-क्रान्ति का तरीका अपनाना।

[५] श्याङ उस काल में चीन की बुनियादी प्रशासनिक इकाई थी, जिसमें कई गांव शामिल होते थे। —अनु०

[६] १९२६ की सर्दियों और १९२७ के वसन्त में जब उत्तरी अभियान सेना याङत्सी की घाटी में अभियान कर रही थी, तब तक च्याङ काई-शेक का प्रतिक्रान्तिकारी स्वरूप पूरी तरह प्रकट नहीं हुआ था। किसान समुदाय उसे अब भी क्रान्तिकारी समझता था। जमींदार और धनी किसान उसे नापसन्द करते थे। उन्होंने यह अफवाह फैला दी थी कि उत्तरी अभियान सेना हार गई है और च्याङ काई-शेक का पैर जख्मी हो गया है। १२ अप्रैल १९२७ को जब च्याङ काई-शेक ने शांघाई और अन्य जगहों में प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव किया और मजदूरों का कत्लेआम करना, किसानों का दमन करना और कम्युनिस्ट पार्टी पर हमला करना शुरू किया, तभी वह पूर्ण रूप से एक प्रतिक्रान्तिकारी के रूप में प्रकट हुआ। इसके बाद जमींदारों और धनी किसानों ने अपना रुख बदल दिया और उसका समर्थन करने लगे।

[७] प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के काल में क्वाङतुङ पहला क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र था।

[८] उत्तरी युद्ध-सरदारों में ऊ फेइ-फू सबसे प्रसिद्ध युद्ध-सरदारों में से था। वह चली गुट (चली प्रान्त के गुट) में था। उसके साथ छाओ खुन भी था जो १९२३ में संसद के सदस्यों को घूस देकर जैसे तैसे राष्ट्रपति बन बैठा था। ऊ फेइ-फू के समर्थन में छाओ खुन चली गुट का मुखिया बन गया था; इस प्रकार दोनों को साधारणतः "छाओ-ऊ" कहा जाता था। १९२० में आनह्वेइ गुट के युद्ध-सरदार त्वान छी-रुइ को हराकर ऊ फेइ-फू ने, आंग्ल-अमरीकी साम्राज्यवाद के एजेन्ट की हैसियत से उत्तरी युद्ध-सरदारों की सरकार पर अपना नियंत्रण जमा लिया। ७ फरवरी १९२३ को उसने ही पेकिङ-हानखओ रेलवे के हड़ताली मजदूरों का कत्लेआम करने की आज्ञा दी थी। १९२४ में चाङ च्वो-लिन के साथ युद्ध करते हुए, जो आम तौर पर "चली और फ़ङथ्येन गुटों के बीच का युद्ध" के नाम से प्रसिद्ध है, उसे हार खानी पड़ी और उसे पेकिङ के शासन से हटा दिया गया। लेकिन १९२६ में जापानी और अंग्रेज साम्राज्यवादियों के उकसावे पर वह चाङ च्वो-लिन के साथ हो लिया और फिर सत्तारूढ़ हो गया। जब उत्तरी अभियान सेना १९२६ में क्वाङतुङ से उत्तर की ओर बढ़ी, तो वह पहला दुश्मन था जिसका तख्ता उलट दिया गया।

[९] चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के काल में राष्ट्रवाद, जनवाद और जन-जीविका इन तीन समस्याओं के बारे में सुन यात-सेन द्वारा पेश किए गए उसूल और प्रोग्राम तीन जन-सिद्धान्त कहलाते हैं। १९२४ में "क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र" में सुन यात-सेन ने इन तीन जन-सिद्धान्तों की नए सिरे से व्याख्या की थी। इसमें उन्होंने राष्ट्रवाद की व्याख्या करते हुए उसे साम्राज्यवाद के विरुद्ध बताया और मजदूर-किसानों के आन्दोलनों का सक्रिय रूप से समर्थन किया। इस प्रकार पुराने "तीन जन-सिद्धान्तों" की जगह नए "तीन जन-सिद्धान्त" सामने आए जिन्हें तीन महान नीतियां कहा जाता है, अर्थात रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता। ये नए "तीन जन-सिद्धान्त" प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्ताङ के आपसी सहयोग का राजनीतिक आधार बने। देखिए : "नई लोकशाही के बारे में", अध्याय १०, ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ २)।

[१०] धनी किसानों को किसान सभा में शामिल होने की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी। लेकिन १९२७ तक व्यापक किसान समुदाय यह बात समझ नहीं पाता था।

[११] "य्वान", "च्याओ", "फ़न" और "वन" चीनी मुद्रा-प्रणाली की इकाइयां हैं। उस जमाने में चांदी की मुद्रा-प्रणाली अपनाई गई थी, जिसके अन्तर्गत "य्वान", "च्याओ", "फ़न" का इस्तेमाल किया जाता था। एक "य्वान" दस "च्याओ" के बराबर होता था और एक "च्याओ" दस "फ़न" के बराबर। एक "य्वान" के चांदी के सिक्के में नियम के मुताबिक २४ ग्राम शुद्ध चांदी ढली रहती थी। "वन" (छ्येन) तांबे के सिक्के के रूप में चलता था। एक "फ़न" में कई "वन" होते थे। —अनु०

[१२] यहां "एकदम गरीबों" का अर्थ खेत-मजदूरों (देहाती सर्वहारा वर्ग) और देहाती खानाबदोश सर्वहारा लोगों से है।

[१३] यहां "कम गरीबों" का अर्थ देहात के अर्ध-सर्वहारा वर्ग से है।

१४ ब्वान चू-मिङ क्वेइचओ प्रान्त का युद्ध-सरदार था जिसने हुनान के पश्चिमी भाग पर नियंत्रण कर रखा था।

१५ हुनान में "तू" "जिले" के बराबर होता था और "ध्वान" "श्याङ" के बराबर। "तू" और "ध्वान" जैसे पुराने प्रशासन जमींदारों द्वारा किसानों पर शासन करने के साधन थे।

१६ यह नियमित भूमि-कर के अलावा स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफ-जादों की सत्ता द्वारा किसानों पर निर्दयता से थोपा गया अतिरिक्त कर था।

१७ उत्तरी युद्ध-सरदारों के शासन में प्रान्त के फौजी प्रधान को "फौजी गवर्नर" कहा जाता था। लेकिन वास्तव में वह प्रान्त का तानाशाह होता था और प्रशासनिक सत्ता और सैन्य-शक्ति पर नियंत्रण रखता था। वह साम्राज्यवादियों से मिला होता था और अपने क्षेत्र में एक पृथक सामन्ती-फौजी शासन-व्यवस्था कायम रखता था।

१८ "घर-घर की स्थाई मिलिशिया" देहात में मौजूद विभिन्न प्रकार की सशस्त्र शक्तियों में से थी। यहां "घर-घर" शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है क्योंकि प्रायः हर परिवार को उसमें आदमी भेजने होते थे। १९२७ में क्रान्ति की पराजय के बाद बहुत सी जगहों में जमींदारों ने "घर-घर की मिलिशिया" पर नियंत्रण कर लिया और उसे सशस्त्र प्रतिक्रान्तिकारी गिरोहों में परिवर्तित कर दिया।

१९ उस समय ऊहान में स्थित क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के नेतृत्व में बहुत से काउन्टी हेडक्वार्टर सुन यात-सेन की तीन महान नीतियों – रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता – का अनुसरण करते थे। वे कम्युनिस्टों, क्वोमिन्ताङ के वामपक्षियों और अन्य क्रान्तिकारियों के क्रान्तिकारी संश्रय वाले संगठन थे।

२० धनुर्विद्या की यह उपमा "मेनशियस" से ली गई है। इसमें बताया गया है कि एक धनुर्विद्या का विशेषज्ञ अध्यापक किस प्रकार नाटकीय ढंग से धनुष को कान तक खींचता है, लेकिन तीर नहीं छोड़ता। यहां इसका अर्थ यह है कि कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे किसानों की राजनीतिक चेतना का भरपूर विकास करने के लिए उनका मार्गदर्शन करें, लेकिन अंधविश्वासों और अन्य बुरे रीति-

रिवाजों को समाप्त करने का कार्य उन्हें किसानों की ही पहलकदमी पर छोड़ देना चाहिए और उन्हें इस बारे में न तो आदेश जारी करने चाहिए और न किसानों के बदले खुद ही इन्हें खत्म करने की कोशिश करनी चाहिए।

२१ थाङ शङ-च एक जनरल था, जिसने उत्तरी अभियान युद्ध में क्रान्ति का साथ दिया था। ये खाए-शिन भी एक जनरल था जिसने उत्तरी युद्ध-सरदारों का साथ देकर क्रान्ति का विरोध किया था।

२२ सुन छ्वान-फाङ एक युद्ध-सरदार था जिसका शासन पांच प्रान्तों – च्याङसू, चच्याङ, फ़ूच्येन, च्याङशी और आनह्वेइ – में फैला हुआ था। वह शांघाई के मजदूरों के विद्रोहों के खूनी दमन के लिए जिम्मेदार था। १९२६ की सर्दियों में उसकी मुख्य सैन्य-शक्ति को उत्तरी अभियान सेना ने च्याङशी प्रान्त के नानछाङ और च्योच्याङ में तहस-नहस कर दिया।

२३ पूर्वी संस्कृति का सिद्धान्त एक प्रतिक्रियावादी सिद्धान्त था जो आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता को नहीं मानता था और पूर्व के कृषि-उत्पादन के पिछड़े तरीके और सामन्ती संस्कृति को बनाए रखने का पक्ष लेता था।

२४ "तान" चीनी तौल-प्रणाली की एक इकाई है। पुरानी प्रणाली के अनुसार एक "तान" लगभग ६० किलोग्राम के बराबर होता था। लेकिन सभी जगह एक ही तरह की प्रणाली नहीं चलती थी। कहीं-कहीं एक "तान" ६० किलोग्राम से ज्यादा का भी होता था। नई प्रणाली के अनुसार एक "तान" ५० किलोग्राम के बराबर होता है। – अनु०

२५ देखिए : "चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण", नोट १६।

२६ "पर्वत", "भवन", "मंदिर" और "नदी" आदिम गुप्त संस्थाओं द्वारा अपने संप्रदायों के लिए रखे गए नाम हैं।

२७ "छी" और "चाङ" चीनी माप-प्रणाली की इकाइयां हैं। एक "चाङ" में दस "छी" और एक "छी" में दस "छुन" होते हैं। तीन "छी" का एक मीटर होता है। – अनु०

२८ "तओ" चीनी माप-प्रणाली की एक इकाई है। एक "तओ" दस लिटर के बराबर होता है। – अनु०

२९ नवम्बर १९२६ में जब उत्तरी अभियान सेना ने नानछाङ पर अधिकार

किया, तो च्याङ काई-शेक ने मौका देखकर वहां अपना सदर-मुकाम कायम कर लिया। उसने अपने इर्द-गिर्द क्वोमिन्ताङ के दक्षिणपक्षियों और उत्तरी युद्ध-सरदारों के कुछ निर्लज्ज राजनीतिज्ञों को जमा कर लिया और साम्राज्यवादियों से सांठगांठ करके उस समय के क्रान्तिकारी केन्द्र ऊहान के विरुद्ध प्रतिक्रान्तिकारी षड़यंत्र रचा। अन्त में १२ अप्रैल १९२७ को उसने शांघाई में प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव कर डाला जिसके दौरान उसने वहां जघन्य नर-संहार किया।

[१०] चाङ चिङ-च्याङ, क्वोमिन्ताङ के दक्षिण पक्ष का एक सरगना, च्याङ काई-शेक का सलाहकार था।

[११] ल्यू य्वे-च "वामपंथी सोसायटी" का सरगना था। यह सोसायटी हुनान की एक महत्वपूर्ण कम्युनिस्ट-विरोधी संस्था थी।

[१२] हान वंश के जमाने में ल्यू श्याङ (७७-६ ई० पू०) ने अपनी किताब "शिनश्वी" में लिखा था कि श्रीमंत ये को ड्रैगन बहुत पसन्द थे और उसने अपने सारे महल और फर्निचर को उनके चित्रों और मूर्तियों से अलंकृत कर रखा था। लेकिन जब एक वास्तविक ड्रैगन ने उसके इस ड्रैगन-प्रेम की बात सुनी और उसके पास आया तो उसके प्राण सूख गए। इससे जाहिर होता है कि वास्तव में श्रीमंत ये को ड्रैगन पसन्द नहीं थे। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने इसका एक उपमा के तौर पर इस्तेमाल किया है, यह बताने के लिए कि यद्यपि च्याङ काई-शेक और उसके जैसे लोग क्रान्ति के बारे में बातें बनाते रहते हैं लेकिन वास्तव में वे क्रान्ति से डरते हैं और इसके विरुद्ध हैं।

द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल

चीन में लाल राजनीतिक सत्ता क्यों कायम रह सकती है ?*

५ अक्तूबर १९२८

१. घरेलू राजनीतिक परिस्थिति

क्वोमिन्ताङ के नए युद्ध-सरदारों का वर्तमान शासन अब भी शहरों में दलाल-पूंजीपति वर्ग का और देहाती इलाकों में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग का शासन है। इस शासन ने वैदेशिक मामलों में साम्राज्यवाद के सामने घुटने टेक दिए हैं और घरेलू मामलों में पुराने युद्ध-सरदारों की जगह नए युद्ध-सरदारों को ला खड़ा किया है जिससे मजदूर वर्ग और किसान वर्ग को पहले से और ज्यादा निर्मम आर्थिक शोषण और राजनीतिक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा है। क्वाङतुङ प्रान्त में जो पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति शुरू हुई थी, वह अभी चल ही रही थी कि दलाल-पूंजीपति वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग ने उसका

* यह लेख उस प्रस्ताव का एक हिस्सा है, जिसे कामरेड माओ त्सेतुङ ने हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की दूसरी पार्टी-कांग्रेस के लिए तैयार किया था। इसका शीर्षक पहले "राजनीतिक समस्याएं और सीमान्त क्षेत्रीय पार्टी-संगठन के कार्य" था।

नेतृत्व हथिया लिया और तुरन्त उसे प्रतिक्रान्ति के रास्ते में मोड़ दिया ; पूरे देश के मजदूर, किसान, आम जनता के दूसरे तबके और यहां तक कि पूंजीपति वर्ग[१] अब भी प्रतिक्रान्तिकारी शासन की अधीनता में रहते हैं और उन्हें लेशमात्र भी राजनीतिक या आर्थिक मुक्ति नहीं मिली हुई है।

पेकिङ और थ्येनचिन पर कब्जा करने के पहले, क्वोमिन्ताङ के नए युद्ध-सरदारों के चार गुटों[१]—च्याङ गुट, क्वाङशी गुट, फ़ङ गुट और येन गुट—ने चाङ च्वो-लिन[१] के खिलाफ अस्थाई गठजोड़ कायम कर लिया था। पेकिङ और थ्येनचिन पर कब्जा होते ही यह अस्थाई गठजोड़ तुरन्त टूट गया और इन चारों गुटों के बीच कटु संघर्ष की स्थिति पैदा हो गई, तथा अब च्याङ गुट और क्वाङशी गुट इन दोनों में युद्ध की तैयारी हो रही है। चीन में युद्ध-सरदारों के विभिन्न गुटों के अन्तरविरोधों और संघर्षों से विभिन्न साम्राज्यवादी ताकतों के अन्तरविरोध और संघर्ष प्रतिबिम्बित होते हैं। इसलिए जब तक चीन विभिन्न साम्राज्यवादी ताकतों में बंटा रहेगा, तब तक युद्ध-सरदारों के विभिन्न गुटों में किसी भी हालत में समझौता नहीं हो सकेगा, तथा जो भी समझौते वे करेंगे, वे अस्थाई ही होंगे। आज के अस्थाई समझौते में कल के लिए और भी बड़े युद्ध की तैयारी छिपी होती है।

चीन को पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की तुरन्त आवश्यकता है, और यह क्रान्ति सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में ही पूरी की जा सकती है। चूंकि १९२६-२७ की क्रान्ति में, जो क्वाङतुङ से शुरू होकर याङत्सी नदी की तरफ फैली थी, सर्वहारा वर्ग ने अपना नेतृत्व दृढ़ता के साथ लागू नहीं किया, इसलिए नेतृत्व को दलाल-पूंजीपति वर्ग

और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग ने हथिया लिया और क्रान्ति को प्रतिक्रान्ति में बदल दिया। इस तरह पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति अस्थाई रूप से पराजित हो गई। इस पराजय से चीन के सर्वहारा वर्ग और किसानों को एक जबरदस्त धक्का पहुंचा और चीनी पूंजीपति वर्ग को भी धक्का पहुंचा (दलाल-पूंजीपति वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग को नहीं)। फिर भी पिछले कुछ महीनों में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में उत्तर और दक्षिण के शहरों में मजदूर वर्ग की संगठित हड़तालों और देहातों में किसान वर्ग के संगठित विद्रोहों में बढ़ोतरी हुई है। युद्ध-सरदारों की फौजों के सिपाहियों में सरदी और भूख की वजह से अत्यधिक बेचैनी छा रही है। इधर वाङ चिङ-वेइ और छन कुङ-पो गुट के उकसावे में पूंजीपति वर्ग समुद्रतटवर्ती क्षेत्रों में और याङत्सी नदी के किनारे काफी बड़े पैमाने पर सुधारवादी आन्दोलन[४] को बढ़ावा दे रहा है। यह एक नया परिस्थिति-विकास है।

कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल और हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के निर्देशनों के अनुसार चीन की जनवादी क्रान्ति की अन्तर्वस्तु है—चीन में साम्राज्यवाद के और उसके मोहरे के रूप में काम करने वाले युद्ध-सरदारों के शासन का तख्ता उलट देना ताकि राष्ट्रीय क्रान्ति को पूरा किया जा सके, तथा भूमि-क्रान्ति को कार्यान्वित करना ताकि जमींदार वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफ-जादों द्वारा किए जाने वाले किसानों के सामन्ती शोषण को खत्म किया जा सके। मई १९२८ में चीनान हत्याकाण्ड[५] होने के बाद इस प्रकार की क्रान्ति का व्यावहारिक आन्दोलन दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है।

२. चीन में लाल राजनीतिक सत्ता[१] के उदय होने और बने रहने के कारण

किसी देश में श्वेत राजनीतिक सत्ता के पूर्ण घेरे के बीच लाल राजनीतिक सत्ता के अधीन एक या कई छोटे-छोटे इलाके बहुत दिनों तक कायम रहना, एक ऐसी घटना है जो दुनिया के अन्य देशों में कभी नहीं घटी। इस असाधारण घटना के विशेष कारण हैं। केवल कुछ खास परिस्थितियों में ही इस तरह की सत्ता कायम रह सकती है और उसका विकास हो सकता है।

पहले तो किसी साम्राज्यवादी देश में या प्रत्यक्ष साम्राज्यवादी शासन के अधीन किसी उपनिवेश[२] में यह घटना नहीं घट सकती। बल्कि यह केवल चीन में ही, जो आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है तथा अर्ध-औपनिवेशिक है और अप्रत्यक्ष साम्राज्यवादी शासन के अधीन है, घट सकती है। कारण, यह असाधारण घटना एक दूसरी असाधारण घटना का संयोग होने पर ही घट सकती है। वह दूसरी असाधारण घटना है श्वेत शासन-व्यवस्था के अन्दर होने वाला युद्ध। अर्ध-औपनिवेशिक चीन की एक विशेषता यह है कि गणराज्य के प्रथम वर्ष से ही नए और पुराने युद्ध-सरदारों के विभिन्न गुट, जिनका समर्थन विदेशी साम्राज्यवाद तथा घरेलू दलाल-पूंजीपति वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों का वर्ग करते हैं, एक दूसरे के खिलाफ लगातार युद्ध करते रहे हैं। ऐसी घटना न तो दुनिया के किसी साम्राज्यवादी देश में दिखाई देती है, और न प्रत्यक्ष

साम्राज्यवादी शासन के अधीन किसी उपनिवेश में। इस प्रकार की घटना केवल चीन जैसे देश में ही दिखाई देती है, जो अप्रत्यक्ष साम्राज्यवादी शासन के अधीन है। इसके दो कारण हैं। एक तो स्थानगत कृषि-अर्थव्यवस्था (न कि एकसूत्र में बंधी हुई पूंजीवादी अर्थव्यवस्था), और दूसरे, विभाजित करने व शोषण करने के लिए प्रभाव-क्षेत्र बनाने की साम्राज्यवादी नीति। श्वेत शासन-व्यवस्था के अन्दर बहुत दिनों तक चलने वाली फूट और लड़ाइयां यह परिस्थिति पैदा कर देती हैं कि श्वेत राजनीतिक सत्ता के घेरे के भीतर कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में एक या कई छोटे लाल इलाके पैदा हो सकते हैं और कायम रह सकते हैं। हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र, जिसमें स्वाधीन शासन-व्यवस्था स्थापित की गई है, ऐसे ही बहुत से छोटे इलाकों में एक है। मुश्किल या नाजुक वक्त आने पर कुछ कामरेडों को अक्सर सन्देह होने लगता है कि ऐसी लाल राजनीतिक सत्ता कायम रहेगी या नहीं, और वे निराश हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि ऐसी लाल राजनीतिक सत्ता के पैदा होने और बने रहने की सही वजहों का उन्हें अभी पता नहीं लगा है। चीन की श्वेत शासन-व्यवस्था के अन्दर फूट और लड़ाइयों का सिलसिला बराबर बना रहता है, केवल यही ध्यान में रखने से ही हमें लाल राजनीतिक सत्ता के पैदा होने, बने रहने और दिन-प्रति-दिन बढ़ने में कोई सन्देह नहीं रह जाएगा।

दूसरे, वे क्षेत्र जहां चीन की लाल राजनीतिक सत्ता का उदय सबसे पहले हुआ और जहां वह बहुत दिनों तक बनी रह सकती है, ऐसे क्षेत्र नहीं हैं जिन पर जनवादी क्रान्ति का प्रभाव

न पड़ा हो, जैसे कि सछ्वान, क्वेइचओ, युन्नान और उत्तर के प्रान्त, बल्कि हुनान, क्वाङ्तुङ, हुपे और च्याङशी प्रान्त जैसे क्षेत्र हैं जहां १९२६ और १९२७ की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के दौरान मजदूरों, किसानों और सैनिकों का जन-समुदाय बहुत बड़ी तादाद में उठ खड़ा हुआ था। इन प्रान्तों के बहुत से हिस्सों में मजदूर संघों और किसान सभाओं के संगठन व्यापक पैमाने पर कायम हो गए थे तथा मजदूर वर्ग और किसान वर्ग ने जमींदार वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग के खिलाफ बहुत से आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष किए थे। यही कारण था कि क्वाङ्चओ शहर में जनता का शासन तीन दिन तक कायम रहा और हाएफ़ङ और लूफ़ङ में, पूर्वी और दक्षिणी हुनान में, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में और हुपे प्रान्त के ह्वाङआन में किसानों की स्वाधीन शासन-व्यवस्थाएं [८] कायम हुईं। जहां तक मौजूदा लाल सेना का सवाल है, वह भी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना से ही अलग हुई है जिसने जनवादी राजनीतिक ट्रेनिंग प्राप्त की है और आम मजदूरों और किसानों का प्रभाव ग्रहण किया है। जिन तत्वों से लाल सेना बनी है, वे अवश्य ही येन शी-शान और चाङ च्वो-लिन की जैसी फौजों से नहीं आ सकते, जिन्होंने न तो जनवादी राजनीतिक ट्रेनिंग ही प्राप्त की है, और न मजदूरों व किसानों का प्रभाव ही ग्रहण किया है।

तीसरे, छोटे इलाकों में जनता की राजनीतिक सत्ता ज्यादा दिन टिकेगी या नहीं, यह इस बात पर निर्भर है कि राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी परिस्थिति बराबर विकसित होती रहती है या

नहीं। अगर वह विकसित होती रहती है, तो निस्सन्देह छोटे लाल इलाके ज्यादा दिनों तक टिके रहेंगे, और इससे भी आगे बढ़कर लाजमी तौर पर राष्ट्रव्यापी राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए बहुत सी शक्तियों में वे एक शक्ति बन जाएंगे। अगर राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी परिस्थिति बराबर विकसित नहीं होती रहती, बल्कि काफी दिनों तक ठहराव की हालत में बनी रहती है, तो छोटे लाल इलाकों के लिए ज्यादा दिनों तक टिके रहना असम्भव हो जाएगा। इस समय घरेलू दलाल-पूंजीपति वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग की पांतों और अन्तरराष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की पांतों में लगातार पड़ने वाली फूट और युद्ध के साथ-साथ चीन की क्रान्तिकारी परिस्थिति भी विकसित होती जा रही है। इसलिए निस्सन्देह छोटे लाल इलाके ज्यादा दिनों तक न सिर्फ टिके ही रहेंगे, बल्कि वे दिन-ब-दिन बढ़ते भी जाएंगे और राष्ट्रव्यापी राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लक्ष्य की ओर बढ़ते जाएंगे।

चौथे, पर्याप्त शक्तिशाली नियमित लाल सेना का होना लाल राजनीतिक सत्ता के बने रहने के लिए एक आवश्यक शर्त है। अगर हमारे पास केवल स्थानीय लाल रक्षक दल [९] ही हो, लेकिन नियमित लाल सेना न हो, तो हम केवल घर-घर की मिलिशिया से ही निपट सकते हैं, नियमित श्वेत सेना से नहीं। इसलिए जब तक हमारे पास पर्याप्त शक्तिशाली नियमित सेना नहीं हो जाती, तब तक चाहे व्यापक मजदूर और किसान सक्रिय क्यों न हो चुके हों, एक स्वाधीन शासन-व्यवस्था कायम करना भी असम्भव होगा, एक दीर्घकालीन

और लगातार बढ़ने वाली स्वाधीन शासन-व्यवस्था की बात तो दूर रही। "सशस्त्र शक्ति के जरिए मजदूर-किसानों की स्वाधीन शासन-व्यवस्था की स्थापना करने" का विचार एक महत्वपूर्ण विचार है, जिसे कम्युनिस्ट पार्टी को और स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अधीन इलाकों की आम मजदूर-किसान जनता को अच्छी तरह हृदयंगम कर लेना चाहिए।

पांचवें, लाल राजनीतिक सत्ता के ज्यादा दिनों तक टिके रहने और विकसित होने के लिए ऊपर कही हुई शर्तों के अलावा एक अन्य महत्वपूर्ण शर्त यह है कि कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन शक्तिशाली हों और उसकी नीति गलत न हो।

३. हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की स्वाधीन शासन-व्यवस्था की स्थापना और अगस्त की विफलता

युद्ध-सरदारों के बीच फूट और लड़ाइयों से श्वेत शासन-व्यवस्था की शक्ति क्षीण होती है। इस तरह लाल राजनीतिक सत्ता को छोटे इलाकों में उदय होने का मौका मिलता है। लेकिन युद्ध-सरदारों के बीच रोज युद्ध नहीं होते रहते। जब कभी एक या कई प्रान्तों में अस्थाई रूप से श्वेत राजनीतिक सत्ता स्थिर हो जाती है, तो वहां के शासक वर्ग अनिवार्य रूप से एक होकर लाल राजनीतिक सत्ता का नाश करने के लिए हरचन्द कोशिश करते हैं। जिन क्षेत्रों में लाल राजनीतिक सत्ता के कायम होने और उसके बने रहने

की आवश्यक शर्तें मुकम्मिल तौर पर पूरी नहीं हो जातीं, वहां दुश्मन द्वारा लाल राजनीतिक सत्ता के उखाड़ फेंके जाने का खतरा बना रहता है। यही कारण है कि बहुत सी लाल शासन-व्यवस्थाएं जिनका उदय अप्रैल से पहले अनुकूल स्थिति पाकर क्वाङचओ, हाएफ़ङ और लूफ़ङ, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र, दक्षिणी हुनान, लीलिङ और ह्वाङआन जैसी जगहों में हुआ था, श्वेत राजनीतिक सत्ता द्वारा एक के बाद एक कुचल दी गई। अप्रैल से, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की स्वाधीन शासन-व्यवस्था की स्थापना ऐसी परिस्थितियों में की गई जबकि चीन के दक्षिणी भाग में शासक शक्तियों ने अस्थाई रूप से स्थिरता प्राप्त कर ली थी और हमारा "दमन करने" के लिए हुनान और च्याङशी दोनों प्रान्तों से अक्सर आठ या नौ से ज्यादा, और कभी-कभी अठारह तक रेजीमेन्टें भेजी जाने लगीं। फिर भी चार रेजीमेन्टों से भी कम सैन्य-शक्ति से हम दुश्मन के खिलाफ चार महीने की लम्बी अवधि तक लड़ते रहे, जिससे स्वाधीन शासन-व्यवस्था का इलाका दिनोंदिन बढ़ता रहा, भूमि-क्रान्ति दिनोंदिन और अधिक गहराई से चलती रही, जनता की राजनीतिक सत्ता के संगठन दिनोंदिन फैलते रहे तथा लाल सेना और लाल रक्षक दलों का दिनोंदिन विस्तार होता रहा। यह इसलिए सम्भव हो सका क्योंकि हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र के कम्युनिस्ट पार्टी संगठनों (स्थानीय और फौज के पार्टी-संगठनों) की नीतियां सही थीं। उस समय पार्टी की विशेष कमेटी और सेना-कमेटी[१०] की नीतियां इस प्रकार थीं : दुश्मन से दृढ़ता के साथ संघर्ष करो, लोश्याओ पर्वतश्रृंखला[११] के मध्य भाग में राजनीतिक सत्ता कायम करो और पलायनवाद का विरोध करो; स्वाधीन शासन-व्यवस्था के

इलाकों में भूमि-क्रान्ति को और गहराई से चलाओ ; फौजी पार्टी-संगठन की सहायता से स्थानीय पार्टी-संगठन का विकास करो और नियमित सेना की सहायता से स्थानीय सशस्त्र सैन्य-शक्ति का विकास करो ; लाल सेना को केन्द्रित करो ताकि वह दुश्मन का सामना होने पर उससे उचित समय पर लड़ सके, और फौजों के विकेन्द्रीकरण का विरोध करो ताकि दुश्मन द्वारा एक-एक करके नष्ट किए जाने से बचा जा सके ; स्वाधीन शासन-व्यवस्था के मातहत इलाके का विस्तार करने के लिए सिलसिलेवार अनेक लहरों के समान आगे बढ़ने की नीति अपनाओ तथा दुस्साहसपूर्ण विस्तार करने की नीति का विरोध करो। इन कार्यनीतियों के सही होने के कारण और साथ ही धरातल के संघर्ष के अनुकूल होने तथा हुनान और च्याङशी से हमला करने वाली फौजों के बीच अपर्याप्त तालमेल होने के कारण, अप्रैल से जुलाई तक के चार महीनों में हम अनेक जीतें हासिल कर सके। हालांकि दुश्मन हमसे कई गुना ज्यादा शक्तिशाली था, फिर भी वह न केवल हमारी स्वाधीन शासन-व्यवस्था को मिटा देने में असफल रहा, बल्कि उसके लगातार प्रसार को भी न रोक सका। हुनान और च्याङशी प्रान्तों पर इस स्वाधीन शासन-व्यवस्था का प्रभाव भी दिन-प्रति-दिन बढ़ता गया। अगस्त की विफलता का एकमात्र कारण यह था कि कुछ कामरेडों ने यह नहीं समझा कि यह काल शासक वर्गों के लिए अस्थाई स्थिरता का काल है, उल्टे उन्होंने ऐसी रणनीति अपनाई जो शासक वर्गों की राजनीतिक फूट के काल में लागू होती है, और दुस्साहस के साथ आगे बढ़ने के लिए हमारी सेना को विभक्त कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप सीमान्त क्षेत्र और दक्षिणी हुनान, दोनों जगहों में पराजय का सामना करना पड़ा। हुनान प्रान्तीय कमेटी के प्रतिनिधि कामरेड तू श्यू-चिङ ने उस समय की वास्तविक परिस्थिति को न समझकर पार्टी की विशेष कमेटी, सेना-कमेटी और युङशिन काउन्टी कमेटी के संयुक्त सम्मेलन के प्रस्तावों की अवहेलना कर दी ; उन्होंने केवल हुनान प्रान्तीय कमेटी के आदेश का यांत्रिक ढंग से पालन किया और लाल सेना की २९वीं रेजीमेन्ट के उस मत की पुष्टि की जिसका उद्देश्य संघर्ष से बचना और घर वापस लौटना था। उनकी यह गलती बेहद गम्भीर थी। इस हार से जो परिस्थिति उत्पन्न हुई उससे सिर्फ तभी बचा जा सका जब सितम्बर के बाद विशेष कमेटी और सेना-कमेटी ने गलती दुरुस्त करने के उपाय अपनाए।

४. हुनान, हुपे और च्याङशी में हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की स्वाधीन शासन-व्यवस्था की भूमिका

हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में मजदूर-किसानों की सशस्त्र स्वाधीन शासन-व्यवस्था का, जिसका केन्द्र निङकाङ है, महत्व निश्चय ही सीमान्त क्षेत्र की कुछ काउन्टियों तक ही सीमित नहीं है। हुनान, हुपे और च्याङशी इन तीन प्रान्तों में, मजदूरों और किसानों के विद्रोह द्वारा राजनीतिक सत्ता छीनने की प्रक्रिया में इस स्वाधीन शासन-व्यवस्था का बड़ा महत्व होगा। इन तीन प्रान्तों में उभर रहे विद्रोहों के बारे में सीमान्त क्षेत्र के पार्टी-संगठन के निम्नलिखित अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य हैं : हुनान और च्याङशी

की मुख्य नदियों की निचली घाटियों तक और हुपे तक भी, सीमान्त क्षेत्र की भूमि-क्रान्ति का और जनता की राजनीतिक सत्ता का असर फैलाना ; संघर्ष के दौरान लाल सेना की संख्या और गुण में लगातार बढ़ोतरी करना जिससे कि तीनों प्रान्तों के आगामी आम विद्रोह में वह अपनी यथोचित भूमिका अदा कर सके ; काउन्टियों में स्थानीय सशस्त्र सैन्य-शक्तियों — लाल रक्षक दलों और मजदूर-किसानों के विद्रोही दस्तों — का विस्तार करना और उनके गुण में बढ़ोतरी करना जिससे कि वे इस समय घर-घर की मिलिशिया और श्वेत सेना के छोटे-मोटे दलों से लड़ सकें और भविष्य में सीमान्त क्षेत्र की राजनीतिक सत्ता की रक्षा कर सकें ; स्थानीय काम के लिए लाल सेना के कार्यकर्ताओं की मदद पर कदम-ब-कदम कम निर्भर होना जिससे कि एक दिन सीमान्त क्षेत्र के अपने ही कार्यकर्ता सारे काम का भार सम्भाल सकें और वह क्षेत्र लाल सेना के लिए तथा स्वाधीन शासन-व्यवस्था के नए विस्तृत प्रदेश के लिए भी अपने कार्यकर्ता दे सके ।

५. आर्थिक समस्याएं

श्वेत शक्ति के घेरे के अन्दर दैनिक आवश्यकता की चीजों और नकदी की कमी फौज और जनता के लिए एक बहुत बड़ी समस्या बन गई है। स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अधीन सीमान्त क्षेत्र में पिछले पूरे साल दुश्मन की सख्त नाकेबन्दी के कारण नमक, कपड़ा और दवा जैसी दैनिक आवश्यकता की चीजें बहुत कम मिली हैं और बहुत महंगी रही हैं। इससे आम मजदूर-किसान जनता को

और निम्न-पूंजीपति वर्ग[१२] के जन-समुदाय को तथा लाल सेना के सैनिकों को भी अपने रहन-सहन में परेशानी और कभी-कभी हद दर्जे की परेशानी हुई है। लाल सेना को दुश्मन से लड़ने और अपने खाने-खर्चने का सामान जुटाने का काम साथ-साथ करना पड़ता है। गल्ले के अलावा फी आदमी जो पांच फ़न रोजाना भोजन-भत्ता दिया जाता है उसे देने के लिए भी लाल सेना के कोष में कमी पड़ जाती है। सैनिकों को जो भोजन मिलता है वह काफी पौष्टिक नहीं होता। उनमें से बहुत से लोग बीमार पड़ गए हैं और अस्पतालों में घायलों की हालत तो और भी खराब है। यह ठीक है कि राष्ट्रव्यापी राजनीतिक सत्ता प्राप्त होने के पहले ऐसी कठिनाइयां पैदा होना अनिवार्य है, फिर भी यह नितान्त आवश्यक है कि उन्हें कुछ हद तक हल किया जाए, अपने जीवन को कुछ आसान बनाया जाए, और खासकर लाल सेना के लिए अपेक्षाकृत पर्याप्त सप्लाई की गारन्टी की जाए। जब तक सीमान्त क्षेत्र का पार्टी-संगठन आर्थिक समस्याओं से निपटने के लिए उचित उपाय नहीं निकालता, तब तक दुश्मन की हुकूमत अपेक्षाकृत लम्बे समय तक स्थिर रहने पर स्वाधीन शासन-व्यवस्था के सामने बहुत बड़ी कठिनाइयां आती रहेंगी। इन आर्थिक समस्याओं को काफी हद तक हल करना निश्चय ही हर पार्टी-सदस्य के लिए ध्यान देने योग्य है।

६. फौजी आधार-क्षेत्रों की समस्या

सीमान्त क्षेत्र के पार्टी-संगठन के सामने एक काम और है, "पांच कुओं"[१३] तथा च्योलूङ इन दो फौजी आधार-क्षेत्रों को मजबूत

बनाना। युङशिन, लिङश्येन, निङकाङ और स्वेइछ्वान काउन्टियों की सीमाओं के मिलन-स्थल पर स्थित "पांच कुओं" का पहाड़ी क्षेत्र, और युङशिन, निङकाङ, छालिङ और ल्येनह्वा काउन्टियों की सीमाओं के मिलन-स्थल पर स्थित च्योलूङ पहाड़ी क्षेत्र – ये दोनों ही धरातल की दृष्टि से फायदेमन्द जगहें, खासकर "पांच कुओं" का क्षेत्र, जहां जनता हमारा समर्थन करती है और जहां का धरातल अत्यन्त दुर्गम है और रणनीति की दृष्टि से बहुत ही उपयुक्त है, न केवल वर्तमान काल में सीमान्त क्षेत्र के महत्वपूर्ण फौजी आधार-क्षेत्र हैं, बल्कि हुनान, हुपे और क्वाङशी के भावी विद्रोहों के लिए भी महत्वपूर्ण फौजी आधार-क्षेत्र हैं। इन आधार-क्षेत्रों को मजबूत बनाने का तरीका है : पहले, पर्याप्त मोर्चेबन्दियों का निर्माण करना, दूसरे, काफी रसद जुटा लेना, और तीसरे, लाल सेना के लिए अपेक्षाकृत अच्छे अस्पताल कायम करना। सीमान्त क्षेत्र के पार्टी-संगठन को चाहिए कि वह ये तीनों काम अवश्य कारगर रूप से पूरे करने की कोशिश करे।

नोट

[1] यहां "पूंजीपति वर्ग" से कामरेड माओ त्सेतुङ का तात्पर्य राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग से है। कामरेड माओ त्सेतुङ ने अपनी रचनाओं, "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में" (दिसम्बर १९३५) तथा "चीनी क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी" (दिसम्बर १९३९) में इस वर्ग और बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग के बीच के अन्तर का विस्तार से वर्णन किया है।

[2] च्याङ गुट से तात्पर्य च्याङ काई-शेक के गुट से है। क्वाङशी गुट से तात्पर्य क्वाङशी के युद्ध-सरदार ली चुङ-रन और पाए छुङ-शी के गुट से है। फ़ङ गुट से तात्पर्य फ़ङ य्वी-श्याङ के गुट से है। येन गुट से तात्पर्य शानशी के युद्ध-सरदार येन शी-शान के गुट से है। इन चार गुटों ने संयुक्त रूप से चाङ च्वो-लिन के खिलाफ लड़ाई लड़ी और जून १९२८ में पेकिङ व थ्येनचिन पर कब्जा कर लिया।

[3] चाङ च्वो-लिन युद्ध-सरदारों के फ़ङथ्येन गुट का मुखिया था। १९२४ में दूसरे चली-फ़ङथ्येन युद्ध में ऊ फेइ-फ़ू को पराजित करने के बाद वह उत्तरी प्रान्तों का सबसे शक्तिशाली युद्ध-सरदार बन गया। १९२६ में उसने ऊ फेइ-फ़ू के साथ गठजोड़ कायम करके पेकिङ पर कब्जा जमा लिया। जून १९२८ में जब चाङ च्वो-लिन पेकिङ से उत्तर-पूर्वी चीन की ओर पीछे हट रहा था, तो रास्ते में जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा, जिनके हाथ की कठपुतली वह सदैव बना रहा, रखे गए बम से उसकी हत्या कर दी गई।

[4] इस सुधारवादी आन्दोलन का ३ मई १९२८ को जापानी आक्रमणकारियों द्वारा चीनान पर कब्जा किए जाने और च्याङ काई-शेक द्वारा खुलेआम और बेशरमी के साथ जापान से समझौता कर लिए जाने के बाद सूत्रपात हुआ। राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के, जिसने १९२७ के प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव में भाग लिया था, एक हिस्से ने अपने ही स्वार्थ के लिए धीरे-धीरे च्याङ काई-शेक के विरुद्ध गुट बनाना शुरू कर दिया। वाङ चिङ-वेइ, छन कुङ-पो और अन्य लोगों के कैरियरवादी प्रतिक्रान्तिकारी गुट से ही, जो इस आन्दोलन में सक्रिय था, क्वोमिन्ताङ के अन्दर "पुनर्गठन गुट" बना था।

[5] १९२८ में, आंग्ल-अमरीकी साम्राज्यवाद के सहारे च्याङ काई-शेक ने चाङ च्वो-लिन पर हमला करने के लिए उत्तर की ओर कूच कर दिया। आंग्ल-अमरीकी प्रभाव को उत्तर की ओर फैलने से रोकने के लिए जापानी साम्राज्यवादियों ने शानतुङ प्रान्त की राजधानी चीनान पर कब्जा कर लिया और इस तरह थ्येनचिन-फूखओ रेलवे लाइन को काट दिया। ३ मई को जापानी आक्रमणकारी सेना ने चीनान में बहुत बड़ी संख्या में चीनियों का कत्लेआम किया। यही "चीनान हत्याकाण्ड" कहलाता है।

[6] चीन की लाल राजनीतिक सत्ता का संगठनात्मक रूप सोवियत राजनीतिक

सत्ता से मिलता-जुलता था। सोवियत, यानी प्रतिनिधि-परिषद, एक प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था है जिसका सृजन रूसी मजदूर वर्ग ने १९०५ की क्रान्ति में किया था। मार्क्सवादी सिद्धान्त के आधार पर लेनिन और स्तालिन ने यह निष्कर्ष निकाला था कि पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण के काल में सोवियत लोकतंत्र सामाजिक और राजनीतिक संगठन का सबसे उपयुक्त रूप है। १९१७ की रूसी समाजवादी अक्तूबर क्रान्ति ने लेनिन और स्तालिन की बोलशेविक पार्टी के नेतृत्व में विश्व के इतिहास में पहली बार सर्वहारा अधिनायकत्व वाला समाजवादी सोवियत लोकतंत्र कायम कर दिया। १९२७ में चीन की क्रान्ति की पराजय के बाद, कामरेड माओ त्सेतुङ की रहनुमाई में चीनी कम्युनिस्टों के नेतृत्व में होने वाले क्रान्तिकारी जन-विद्रोहों में जनता की राजनीतिक सत्ता के रूप के तौर पर प्रतिनिधि-परिषद को स्वीकार कर लिया गया। लेकिन चीनी क्रान्ति की उस मंजिल में इस तरह की राजनीतिक सत्ता साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी नव-जनवादी क्रान्ति के जनता के जनवादी अधिनायकत्व का स्वरूप लिए हुए थी, जिसका नेतृत्व सर्वहारा वर्ग के हाथ में था, और उसका स्वरूप सोवियत संघ की सर्वहारा अधिनायकत्व वाली राजनीतिक सत्ता से भिन्न था।

७ दूसरे विश्वयुद्ध के समय पूर्व के अनेक उपनिवेश जो पहले बरतानिया, अमरीका, फ्रांस और नीदरलैण्ड के साम्राज्यवादी शासन में थे, जापानी साम्राज्यवादियों के कब्जे में आ गए। उन देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के नेतृत्व में वहां के मजदूरों, किसानों, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के जन-समुदाय और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के तत्वों ने बरतानवी, अमरीकी, फ्रांसीसी और डच साम्राज्यवाद तथा जापानी साम्राज्यवाद के बीच के अन्तरविरोधों से लाभ उठाकर फासिस्ट आक्रमण के खिलाफ एक व्यापक संयुक्त मोर्चा कायम किया, जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र कायम किए और कठोर रूप से जापानी-आक्रमण-विरोधी छापामार युद्ध चलाया। इस तरह दूसरे विश्वयुद्ध के पहले की राजनीतिक स्थिति बदलने लगी। दूसरे विश्वयुद्ध के अन्त में, जब जापानी साम्राज्यवाद को इन देशों से निकाल बाहर किया गया, तो अमरीकी, बरतानवी, फ्रांसीसी और डच साम्राज्यवादियों ने वहां फिर से अपना उपनिवेशवादी शासन कायम करने की कोशिश की। लेकिन जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में उपनिवेशों की जनता ने काफी बड़ी

सैन्य-शक्ति का निर्माण कर लिया था, वह फिर से पुराना जीवन नहीं बिताना चाहती थी। इसके अलावा चूंकि सोवियत संघ की शक्ति काफी बढ़ गई, युद्धकाल में अमरीका को छोड़कर कुछ साम्राज्यवादी ताकतों का तख्ता उलट दिया गया, और बाकी सबको कमजोर बना दिया गया और खास तौर से चीनी क्रान्ति की विजय के फलस्वरूप साम्राज्यवादी मोर्चा चीन में टूट गया, इसलिए विश्व साम्राज्यवाद की सारी व्यवस्था बुरी तरह लड़खड़ाने लगी। इस तरह, जैसा कि चीनी जनता ने किया है, पूर्व के सभी या कम से कम कुछ उपनिवेशों की जनता लम्बी अवधि के लिए, बड़े या छोटे क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों और क्रान्तिकारी राजनीतिक सत्ता को बनाए रख सकती है और देहातों से शहरों को घेरने वाला क्रान्तिकारी युद्ध चला सकती है और कदम-ब-कदम शहरों पर अधिकार करके अपने-अपने देश में राष्ट्रव्यापी विजय प्राप्त कर सकती है। प्रत्यक्ष साम्राज्यवादी शासन के अधीन उपनिवेशों में स्वाधीन शासन-व्यवस्थाएं कायम करने के बारे में कामरेड माओ त्सेतुङ का जो मत १९२८ में था, वह नई विश्व-परिस्थिति के कारण बदल गया है।

८ यहां उन प्रारम्भिक जवाबी प्रहारों का उल्लेख किया गया है जिन्हें १९२७ में च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ द्वारा क्रमशः क्रान्ति के प्रति गद्दारी किए जाने के बाद, कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जनता ने विभिन्न स्थानों में प्रतिक्रान्तिकारी ताकतों के खिलाफ किया था। ११ दिसम्बर १९२७ को क्वाङचओ में मजदूरों और क्रान्तिकारी सैनिकों ने मिलकर विद्रोह किया और जनता की राजनीतिक सत्ता कायम कर डाली। उन्होंने उन प्रतिक्रान्तिकारी ताकतों के खिलाफ घोर युद्ध किया जिनका सीधा समर्थन साम्राज्यवाद कर रहा था। लेकिन दोनों की शक्ति में बहुत बड़ी असमानता होने के कारण यह जन-विद्रोह असफल रहा। १९२३-२५ में कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य कामरेड फङ फाए के नेतृत्व में क्वाङतुङ प्रान्त के पूर्वी समुद्रतट पर हाएफङ और लूफङ के किसानों ने शक्तिशाली क्रान्तिकारी आन्दोलन शुरू कर दिया। जब क्वाङचओ स्थित राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना ने छन च्युङ-मिङ के प्रतिक्रान्तिकारी गुट के खिलाफ पूर्व की ओर अपने दो विजयी अभियान किए, तो उक्त किसान आन्दोलन से उसे बड़ी मदद मिली। १२ अप्रैल १९२७ को च्याङ काई-शेक द्वारा क्रान्ति के प्रति

विश्वासघात किए जाने के बाद, इन किसानों ने अप्रैल, सितम्बर और अक्तूबर में तीन विद्रोह किए और हाएफ़ङ और लूफ़ङ क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी राजनीतिक सत्ता कायम की जो अप्रैल १९२८ तक कायम रही। सितम्बर १९२७ में पूर्वी हुनान प्रान्त में विद्रोही किसानों ने ल्यूयाङ, फिङच्याङ, लीलिङ और चूचओ क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। लगभग उन्हीं दिनों उत्तर-पूर्वी हुपे प्रान्त के श्याओ-कान, माछङ और ह्वाङआन क्षेत्र में दसियों हज़ार किसानों ने सशस्त्र विद्रोह किया और वे ह्वाङआन काउन्टी-केन्द्र पर तीस दिन से ज़्यादा समय तक कब्जा किए रहे। जनवरी १९२८ में दक्षिणी हुनान प्रान्त की ईचाङ, छनचओ, लेइयाङ, युङशिङ और चिशिङ काउन्टियों के विद्रोही किसान भी तीन महीने तक क्रान्तिकारी हुकूमत चलाते रहे।

९ क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में जन-समुदाय के सशस्त्र सैनिक दस्ते, जिनके सदस्य नियमित रूप से उत्पादन-कार्य भी करते थे।

१० यहां "विशेष कमेटी" का तात्पर्य "चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की विशेष-क्षेत्रीय कमेटी" से है, जो उस समय पार्टी की प्रान्तीय कमेटी और काउन्टी कमेटी के बीच का पार्टी-संगठन थी। और यहां "सेना-कमेटी" का तात्पर्य "हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में स्थित मजदूर-किसानों की लाल सेना की चौथी फौजी कोर की पार्टी-कमेटी" से है। —अनु०

११ लोश्याओ पर्वतशृंखला हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में फैली हुई एक बड़ी पर्वतमाला है। चिङकाङशान पहाड़ उसके मध्य भाग में है।

१२ यहां "निम्न-पूंजीपति वर्ग" से कामरेड माओ त्सेतुङ का तात्पर्य किसानों को छोड़कर दस्तकारों, छोटे व्यापारियों, नाना प्रकार के आज़ाद पेशे के लोगों और निम्न-पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों से है। यद्यपि ऐसे लोग मुख्यत: शहरों व कस्बों में ही मिलते हैं, फिर भी उनकी काफी बड़ी संख्या देहातों में भी मौजूद है। देखिए: "चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण"।

१३ "पांच कुओं" से तात्पर्य चिङकाङशान पहाड़ों के उन पांच गांवों से है जिनका नाम "बड़ा कुआं", "छोटा कुआं", "ऊपरी कुआं", "मध्यम कुआं" और "निचला कुआं" है और जो पश्चिमी च्याङशी के युङशिन, निङकाङ और स्वेइछ्वान तथा पूर्वी हुनान की लिङश्येन काउन्टी के बीच स्थित हैं।

चिङकाङशान पहाड़ों में संघर्ष*

२५ नवम्बर १९२८

हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में स्वाधीन शासन-व्यवस्था की स्थापना और अगस्त की विफलता

किसी देश में श्वेत राजनीतिक सत्ता के घेरे के अन्दर लाल राजनीतिक सत्ता के मातहत एक या कई छोटे इलाके पैदा हो जाना एक ऐसा घटना-क्रम है जो आज के संसार में केवल चीन में ही सम्भव हो सका है। विश्लेषण करने पर हमें पता चलता है कि ऐसा होने का एक कारण चीन के दलाल-पूंजीपति वर्ग और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग के अन्दर लगातार फूट पड़ते रहना और लड़ाइयां होते रहना है। जब तक इन वर्गों के भीतर फूट पड़ती रहेगी और लड़ाइयां होती रहेंगी, तब तक मजदूर-किसानों की सशस्त्र स्वाधीन शासन-व्यवस्था का बना रहना और बढ़ता जाना भी सम्भव रहेगा। इसके अलावा, इस सशस्त्र स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अस्तित्व व विकास के लिए निम्नलिखित शर्तें भी जरूरी हैं: (१) एक बहुत अच्छा जन-आधार; (२) एक

* यह कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को दी गई एक रिपोर्ट है।

बहुत अच्छा पार्टी-संगठन ; (३) एक काफी शक्तिशाली लाल सेना ; (४) फौजी कार्यवाहियों के लिए उपयुक्त धरातल ; (५) रसद के लिए पर्याप्त आर्थिक शक्ति।

एक स्वाधीन शासन-व्यवस्था को, घेरा डालने वाले शासक वर्गों के प्रति अलग-अलग किस्म की रणनीतियां अपनानी चाहिए, जब शासक वर्गों की राजनीतिक सत्ता कुछ समय के लिए स्थिर हो तो एक किस्म की और जब उसमें फूट पड़ गई हो तो दूसरी किस्म की। शासक वर्गों के अन्दर फूट पड़ जाने के काल में, जैसे हुनान और हुपे में ली चुङ-रन और थाङ शङ-च के बीच युद्ध के दौरान[1] और क्वाङतुङ में चाङ फ़ा-ख्वेइ और ली ची-शन के बीच युद्ध के दौरान,[2] हम अपेक्षाकृत साहसपूर्ण रणनीति अपना सकते हैं, और सैन्य-बल के जरिए अपेक्षाकृत बड़े इलाके में स्वाधीन शासन-व्यवस्था का विकास कर सकते हैं। लेकिन फिर भी हमें ध्यान रखना चाहिए कि केन्द्रीय क्षेत्रों में मजबूत नींव डालें, जिससे कि श्वेत आतंक का प्रहार होने पर हमारे पास सहारे की जगह बनी रहे और घबराने का कोई कारण न हो। जब शासक वर्गों की राजनीतिक सत्ता अपेक्षाकृत स्थिर हो, जैसे कि इस साल अप्रैल के बाद दक्षिणी प्रान्तों में थी, तब हमें कदम-ब-कदम आगे बढ़ने की रणनीति अपनानी चाहिए। ऐसे समय फौजी मामलों में सबसे बुरी बात होगी अपनी फौजों को विभक्त करके दुस्साहसपूर्वक आगे बढ़ना, और स्थानीय काम (जमीन बांटना, राजनीतिक सत्ता की स्थापना करना, पार्टी का प्रसार करना, स्थानीय सैन्य-शक्तियों को संगठित करना) में सबसे बुरी बात होगी अपनी जन-शक्ति को बिखेर देना और केन्द्रीय क्षेत्रों में मजबूत नींव डालने पर ध्यान न देना।

अनेक छोटे लाल इलाकों में असफलता प्राप्त होने का कारण या तो अनुकूल वस्तुगत परिस्थितियों का न होना है, या कार्यनीति सम्बन्धी मनोगत गलतियों का होना है। कार्यनीति में गलतियां ठीक इसी कारण हुई हैं कि दोनों कालों में स्पष्ट भेद नहीं किया जा सका—एक काल वह जब शासक वर्गों की राजनीतिक सत्ता कुछ समय के लिए स्थिर हो गई और दूसरा काल वह जब उसमें फूट पड़ गई। उस काल में भी, जबकि शासक वर्गों की राजनीतिक सत्ता कुछ समय के लिए स्थिर हो गई थी, कुछ कामरेडों ने फौजों को विभक्त करके दुस्साहसपूर्वक आगे बढ़ने की वकालत की। यहां तक कि उन्होंने यह प्रस्ताव भी रखा कि विस्तृत इलाकों की रक्षा का भार अकेले लाल रक्षक दलों पर ही छोड़ दिया जाए, मानो वे इस बात से बिलकुल बेखबर हों कि दुश्मन के पास न सिर्फ घर-घर की मिलिशिया है बल्कि केन्द्रित रूप से प्रहार करने के लिए वह नियमित सेना भी ला सकता है। स्थानीय काम में उन्होंने इस बात पर बिलकुल ध्यान नहीं दिया कि केन्द्रीय क्षेत्रों में मजबूत नींव रखी जाए, बल्कि उनका लक्ष्य केवल यह था कि अपने कार्य का असीमित प्रसार करने में लग जाएं, चाहे यह सब करने की ताकत हममें हो या न हो। अगर कोई फौजी कार्यवाहियों में कदम-ब-कदम विस्तार करने की नीति अपनाने की पैरवी करता था, स्थानीय काम में केन्द्रीय क्षेत्रों में मजबूत नींव डालने के लिए शक्तियों को केन्द्रित करने की पैरवी करता था, जिससे कि हम अपराजेय हो जाएं, तो उस पर "रूढ़िवादी" का लेबिल थोप दिया जाता था। उन लोगों की ये गलत धारणाएं ही इस साल हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में अगस्त की विफलता और उसी के साथ

दक्षिणी हुनान में लाल सेना की चौथी फौजी कोर की हार का बुनियादी कारण बनीं।

हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में हमारा काम पिछले अक्तूबर में शुरू हुआ था। शुरू में सभी काउन्टियों में हमारा पार्टी-संगठन बिलकुल भंग हो गया था, स्थानीय सैन्य-शक्तियों के सिर्फ दो दस्ते थे, जो क्रमशः य्वान वन-छाए और वाङ च्वो के नेतृत्व में चिङ-काङशान पहाड़ों के आसपास स्थित थे और जिनमें हरेक के पास साठ बेमरम्मत राइफलें थीं। युङशिन, ल्येनह्वा, छालिङ और लिङश्येन इन चार काउन्टियों के किसान आत्मरक्षा दल स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग द्वारा पूरी तरह निःशस्त्र कर दिए गए थे और जन-समुदाय के क्रान्तिकारी जोश को ठंडा कर दिया गया था। इस साल फरवरी तक निङकाङ, युङशिन, छालिङ और स्वेइछ्वान में पार्टी की काउन्टी कमेटियां कायम हो चुकी थीं, लिङश्येन में विशेष-जिला कमेटी कायम की गई थी, ल्येनह्वा में पार्टी-संगठन कायम किया जाने लगा था, और मोर्चा-कमेटी वानआन काउन्टी कमेटी से सम्बन्ध कायम कर चुकी थी। लिङश्येन को छोड़कर स्थानीय सैन्य-शक्तियों के थोड़े दस्ते अब सभी काउन्टियों में मौजूद थे। निङकाङ, छालिङ, स्वेइछ्वान और युङशिन में, खास तौर से पिछली दो काउन्टियों में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों का तख्ता उलटने के लिए और जनता को जागृत करने के लिए अनेक बार छापामार विद्रोह किए गए और सभी में काफी सफलता मिली। इस काल में भूमि-क्रान्ति गहराई से नहीं चलाई गई थी। राजनीतिक सत्ता के संगठन मजदूरों, किसानों व सैनिकों की सरकार कहलाते थे। सेना में सिपाही-

कमेटियां* स्थापित की गईं। जब फौजी टुकड़ियां अलग-अलग कार्यवाही करती थीं, तो उनका निर्देशन करने के लिए कार्यवाही-कमेटियां संगठित की जाती थीं। उस समय पार्टी की उच्च निर्देशक संस्था मोर्चा-कमेटी (सचिव, माओ त्सेतुङ) थी जो शरद-फसल विद्रोह के समय हुनान प्रान्तीय कमेटी द्वारा नियुक्त की गई थी। मार्च के शुरू में दक्षिणी हुनान की विशेष कमेटी की मांग पर मोर्चा-कमेटी भंग कर दी गई और उसे डिवीजन-कमेटी (सचिव, हो थिङ-इङ) के रूप में संगठित किया गया। इस तरह वह एक ऐसी संस्था बन गई जो केवल सेना में पार्टी-संगठनों की इंचार्ज थी, लेकिन स्थानीय पार्टी-संगठनों पर कोई अधिकार नहीं चला सकती थी। इसी बीच माओ त्सेतुङ की फौजी टुकड़ी दक्षिणी हुनान की विशेष कमेटी की मांग पर वहां भेज दी गई, परिणामस्वरूप सीमान्त क्षेत्र एक महीने से ज्यादा समय तक दुश्मन के कब्जे में रहा। मार्च के अन्त में दक्षिणी हुनान में पराजय हुई। अप्रैल में चू तेह की फौजी टुकड़ी, माओ त्सेतुङ की फौजी टुकड़ी तथा दक्षिणी हुनान की किसान-सेना हटकर निङकाङ में पहुंच गईं, और उन्होंने सीमान्त क्षेत्र में फिर से स्वाधीन शासन-व्यवस्था कायम करना शुरू कर दिया।

अप्रैल से, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की स्वाधीन शासन-व्यवस्था की स्थापना ऐसी परिस्थितियों में की गई जबकि चीन के दक्षिणी भाग में शासक शक्तियों ने अस्थाई रूप से स्थिरता प्राप्त कर ली थी और हुनान और च्याङशी दो प्रान्तों ने हमारा "दमन करने" के लिए प्रतिक्रियावादी सेना की कम से कम आठ या नौ रेजीमेन्टें भेजीं और कभी-कभी अठारह रेजीमेन्टें भी भेजीं। फिर भी चार रेजीमेन्टों से भी कम सैन्य-शक्ति से हम दुश्मन के खिलाफ चार

महीने की लम्बी अवधि तक लड़ते रहे, जिससे स्वाधीन शासन-व्यवस्था का इलाका दिनोंदिन बढ़ता रहा, भूमि-क्रान्ति दिनोंदिन और अधिक गहराई से चलती रही, जनता की राजनीतिक सत्ता दिनोंदिन फैलती रही तथा लाल सेना और लाल रक्षक दलों का दिनोंदिन विस्तार होता रहा। यह इसलिए सम्भव हो सका क्योंकि सीमान्त क्षेत्र के पार्टी-संगठनों (स्थानीय और फौज के पार्टी-संगठनों) की नीतियां सही थीं। सीमान्त क्षेत्र की विशेष कमेटी (सचिव, माओ त्सेतुङ) और सेना-कमेटी (सचिव, छन ई) की नीतियां इस प्रकार थीं : दुश्मन से दृढ़ता के साथ संघर्ष करो, लोश्याओ पर्वतश्रृंखला के मध्य भाग में राजनीतिक सत्ता कायम करो और पलायनवाद का विरोध करो ; स्वाधीन शासन-व्यवस्था के इलाके में भूमि-क्रान्ति को और गहराई से चलाओ ; फौज के पार्टी-संगठन की सहायता से स्थानीय पार्टी-संगठन का विकास करो और नियमित सेना की सहायता से स्थानीय सैन्य-शक्तियों का विकास करो ; हुनान के प्रति, जहां शासक शक्तियां अपेक्षाकृत ताकतवर हैं, रक्षात्मक रुख अपनाओ और च्याङशी के प्रति, जहां शासक शक्तियां अपेक्षाकृत कमजोर हैं, आक्रमणात्मक रुख अपनाओ ; युङशिन का विकास करने में खूब शक्ति लगाओ, जनता की स्वाधीन शासन-व्यवस्था को कायम करो और दीर्घकालीन संघर्ष की तैयारी करो ; लाल सेना को केन्द्रित करो ताकि वह दुश्मन का सामना होने पर उससे उचित समय पर लड़ सके, और फौजों के विकेन्द्रीकरण का विरोध करो ताकि दुश्मन द्वारा एक-एक करके नष्ट किए जाने से बचा जा सके ; स्वाधीन शासन-व्यवस्था के मातहत इलाके का विस्तार करने के लिए सिलसिलेवार अनेक लहरों के समान आगे बढ़ने

की नीति अपनाओ तथा दुस्साहसपूर्ण विस्तार करने की नीति का विरोध करो। इन कार्यनीतियों के सही होने के कारण और साथ ही सीमान्त क्षेत्र के धरातल के संघर्ष के अनुकूल होने तथा हुनान और च्याङशी से हमला करने वाली फौजों के बीच अपर्याप्त तालमेल होने के कारण, अप्रैल से जुलाई तक चार महीनों में हम अनेक सैनिक विजयें प्राप्त कर सके और जनता की स्वाधीन शासन-व्यवस्था का विकास कर सके। हालांकि दुश्मन हमसे कई गुना ज्यादा शक्तिशाली था, फिर भी वह न केवल हमारी स्वाधीन शासन-व्यवस्था को मिटा देने में असफल रहा, बल्कि उसके लगातार प्रसार को भी न रोक सका। हुनान और च्याङशी प्रान्तों पर इस स्वाधीन शासन-व्यवस्था का प्रभाव भी दिन-प्रति-दिन बढ़ता गया। अगस्त की विफलता का एकमात्र कारण यह था कि कुछ कामरेडों ने यह नहीं समझा कि यह काल शासक वर्गों के लिए अस्थाई स्थिरता का काल है, उल्टे उन्होंने एक ऐसी नीति अपनाई जो शासक वर्गों की फूट के काल में लागू होती है, और उन्होंने अपनी सेनाओं को विभक्त करके दक्षिणी हुनान की ओर दुस्साहसपूर्ण अभियान कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप सीमान्त क्षेत्र और दक्षिणी हुनान, दोनों जगहों में पराजय का सामना करना पड़ा। हुनान प्रान्तीय कमेटी के प्रतिनिधि तू श्यू-चिङ ने और प्रान्तीय कमेटी द्वारा नियुक्त सीमान्त क्षेत्र की विशेष कमेटी के सचिव याङ खाए-मिङ ने इस मौके का, जब उनसे जबरदस्त मतभेद रखने वाले माओ त्सेतुङ और वान शी-श्येन आदि कामरेड दूर युङशिन में थे, फायदा उठाया। उन्होंने उस समय की वास्तविक परिस्थिति को न समझकर सेना-कमेटी, विशेष कमेटी और युङशिन काउन्टी कमेटी के संयुक्त

सम्मेलन के उन प्रस्तावों की अवहेलना कर दी जिनमें हुनान प्रान्तीय कमेटी के मत पर असहमति प्रकट की गई थी। उन्होंने केवल हुनान प्रान्तीय कमेटी के दक्षिणी हुनान जाने के आदेश का यांत्रिक ढंग से पालन किया, और लाल सेना की २९वीं रेजीमेन्ट (जो ईचाङ के किसानों से बनी थी) के सैनिकों की संघर्ष से बचने और घर वापस जाने की इच्छा का समर्थन किया। नतीजा यह हुआ कि सीमान्त क्षेत्र और दक्षिणी हुनान दोनों जगह हार हुई।

इससे पहले जुलाई के मध्य में हुनान से दुश्मन की आठवीं फौजी कोर ने ऊ शाङ की कमान में निङकाङ पर हमला कर दिया था। इसके बाद वह सेना युङशिन में घुस आई; उसने हमसे लड़ने की व्यर्थ कोशिश की (हमारे सैनिकों ने बगल के रास्ते से होकर उस पर धावा बोलने की कोशिश तो की, मगर चूक गए), लेकिन हमारा समर्थन करने वाली जनता से डरने के कारण वह हड़बड़ाकर ल्येनह्वा से होती हुई छालिङ वापस लौट गई। इसी बीच लाल सेना का मुख्य दस्ता लिङश्येन और छालिङ पर हमला करने के लिए निङकाङ से कूच कर रहा था। वह लिङश्येन में अपनी योजना बदलकर दक्षिणी हुनान की ओर मुड़ गया। उधर च्याङशी के दुश्मन, वाङ च्युन और चिन हान-तिङ की कमान में तीसरी फौजी कोर की पांच रेजीमेन्टें तथा हू वन-तओ की कमान में छठी फौजी कोर की छै रेजीमेन्टें मिलकर फिर युङशिन पर हमला करने लगीं। इस समय हमारी सिर्फ एक रेजीमेन्ट युङशिन में थी जिसने व्यापक जनता के संरक्षण में, चारों ओर से होने वाले छापामार हमले के तरीके से इन ग्यारह रेजीमेन्टों को युङशिन काउन्टी-केन्द्र समेत आसपास के तीस ली* के घेरे में पचीस दिन तक उलझाए रखा। अन्त में

दुश्मन के भीषण प्रहार के कारण युङशिन हमारे हाथ से निकल गया और कुछ ही समय बाद ल्येनह्वा और निङकाङ भी हमारे हाथ से निकल गए। इतने में च्याङशी के दुश्मनों की फौजों में अचानक आपसी मुठभेड़ होने लगी; हू वन-तओ की छठी फौजी कोर हड़बड़ाकर पीछे हट गई और उसने तुरन्त ही वाङ च्युन की तीसरी फौजी कोर को चाङशू में उलझा लिया। च्याङशी की सेना की बाकी पांच रेजीमेन्टें भी हड़बड़ाकर युङशिन काउन्टी-केन्द्र में भाग गईं। अगर हमारा मुख्य दस्ता दक्षिणी हुनान न गया होता, तो इन दुश्मनों को तितर-बितर करना, स्वाधीन शासन-व्यवस्था के इलाके को विस्तृत करके चीआन, आनफू व फिङश्याङ तक फैला देना और उसे फिङच्याङ और ल्यूयाङ के साथ जोड़ देना बिलकुल सम्भव हो जाता। लेकिन हमारा मुख्य दस्ता चला गया था और हमारे पास जो एक रेजीमेन्ट थी, वह थकान से चूर थी; इसलिए यह फैसला किया गया कि य्वान वन-छाए और वाङ च्वो की दो टुकड़ियों से सहयोग करके चिङकाङशान पहाड़ों की रक्षा करने के लिए रेजीमेन्ट का एक हिस्सा यहां ठहर जाए और बाकी सैनिक मेरे नेतृत्व में क्वेइतुङ की ओर जाकर मुख्य दस्ते से जा मिलें और उसे साथ लेकर वापस आ जाएं। उस समय मुख्य दस्ता दक्षिणी हुनान से क्वेइतुङ की ओर हट रहा था और २३ अगस्त को हम वहां उससे जा मिले।

जुलाई के मध्य में लाल सेना का मुख्य दस्ता लिङश्येन पहुंचा ही था कि २९वीं रेजीमेन्ट के अफसरों और सिपाहियों ने आज्ञापालन करने से इनकार कर दिया। इसका कारण था उनका राजनीतिक ढुलमुलपन और दक्षिणी हुनान में अपने घर वापस लौटने की इच्छा। उधर २८वीं रेजीमेन्ट दक्षिणी हुनान जाने के खिलाफ

थी और दक्षिणी च्याङशी जाना चाहती थी तथा किसी भी सूरत में युङशिन लौटना नहीं चाहती थी। तू श्यू-चिङ ने २६वीं रेजीमेन्ट के गलत विचारों को प्रोत्साहन दिया और सेना-कमेटी इसकी रोक-थाम करने में असफल रही। फलस्वरूप मुख्य दस्ता १७ जुलाई को लिङश्येन से छनचओ की ओर चल पड़ा। २४ जुलाई को छनचओ में उसने फ़ान श-शङ की कमान में कार्यवाही करने वाली शत्रु-सेना से लड़ाई की। शुरू में वह जीत गया लेकिन बाद में हार गया, और मैदान से हट गया। २६वीं रेजीमेन्ट ने अपनी मर्जी से काम लिया और झटपट घर के लिए ईचाङ की ओर रवाना हो गई। नतीजा यह हुआ कि उसका एक भाग लछाङ में हू फ़ङ-चाङ के अधीन डाकुओं द्वारा नष्ट कर दिया गया और दूसरा भाग छनचओ-ईचाङ क्षेत्र में तितर-बितर हो गया। यह पता नहीं चल सका कि आखिर उसका हुआ क्या। उस दिन जो आदमी फिर से इकट्ठे हुए थे, वे एक सौ से ज्यादा नहीं थे। सौभाग्य से मुख्य शक्ति यानी २८वीं रेजीमेन्ट को ज्यादा नुकसान नहीं हुआ। उसने १८ अगस्त को क्वेइतुङ पर कब्जा कर लिया। २३ अगस्त को यह रेजीमेन्ट चिङकाङशान पहाड़ों से आई सेना से मिल गई और यह फैसला किया गया कि इस मिलीजुली सैन्य-शक्ति को छुङई और शाङयू से होकर चिङकाङशान पहाड़ों पर लौट जाना चाहिए। जब हम छुङई पहुंचे, तो बटालियन कमाण्डर य्वान छुङ-छ्वेन ने अपने अधीन एक पैदल कम्पनी और एक तोपखाना कम्पनी को साथ लेकर बगावत कर दी। इन दोनों कम्पनियों को तो वापस बुला लिया गया, लेकिन इस कार्यवाही में रेजीमेन्ट कमाण्डर वाङ अड़-च्वो शहीद हो गए। तब हम वापस लौटने के लिए तो रवाना हो चुके थे, लेकिन अभी

वापस नहीं आ पाए थे। इस मौके का फायदा उठाकर हुनान और च्याङशी की शत्रु-सेनाओं में से दो टुकड़ियों ने ३० अगस्त को चिङकाङशान पहाड़ों पर धावा बोल दिया। एक बटालियन से भी कम हमारी रक्षात्मक शक्ति ने अनुकूल ठिकानों में जमकर दुश्मन का मुकाबला किया और उसे खदेड़ दिया तथा इस तरह अपने इस आधार-क्षेत्र की रक्षा की।

अगस्त की विफलता के कारण ये थे : (१) एक सैन्य-दल के अफसर व सिपाही, जो ढुलमुलपन के शिकार थे और घर जाने के लिए बेचैन थे, अपनी युद्ध-क्षमता खो चुके थे ; और एक अन्य सैन्य-दल के अफसरों व सिपाहियों में, जो दक्षिणी हुनान जाने में आनाकानी कर रहे थे, सक्रियता की कमी थी। (२) कड़ाके की गर्मी में लम्बा कूच करने की वजह से हमारे सैनिक थक गए थे। (३) लिङश्येन से दुस्साहसिक ढंग से कई सौ ली आगे बढ़ जाने के कारण सीमान्त क्षेत्र से हमारे सैनिकों का सम्पर्क टूट गया था और वे अकेले पड़ गए थे। (४) दक्षिणी हुनान में आम जनता अभी जागृत नहीं हुई थी, इसलिए यह कूच निरा फौजी दुस्साहस साबित हुआ था। (५) दुश्मन की स्थिति का हमें पता नहीं था। और (६) तैयारी नाकाफी थी, अफसर व सिपाही फौजी कार्यवाही का महत्व नहीं समझते थे।

स्वाधीन शासन-व्यवस्था वाले इलाके में मौजूदा परिस्थिति

इस साल के अप्रैल से लाल इलाकों का दायरा कदम-ब-कदम बढ़ता गया है। २३ जून को लुङय्वानखओ (युङशिन और निङ-

काङ की सीमा पर) का युद्ध हुआ, जिसमें हमने च्याङशी से आई हुई शत्रु-सेनाओं को चौथी बार हरा दिया। उस युद्ध के बाद सीमान्त क्षेत्र अपने विकास के चरम शिखर पर पहुंच गया, उसमें निङकाङ, युङशिन और ल्येनह्वा तीन काउन्टियां, चीआन और आनफू के छोटे हिस्से, स्वेइछ्वान का उत्तरी भाग और लिङश्येन का दक्षिण-पूर्वी भाग शामिल थे। लाल इलाकों में अधिकांश जमीन का बंटवारा हो चुका था और बाकी का बंटवारा हो रहा था। हर जगह जिले और श्याङ की राजनीतिक सत्ता कायम हो चुकी थी। निङकाङ, युङशिन, ल्येनह्वा और स्वेइछ्वान में काउन्टी सरकार कायम हो चुकी थी, और एक सीमान्त क्षेत्रीय सरकार भी कायम हो चुकी थी। सभी देहातों में मजदूर-किसानों के विद्रोही दस्ते संगठित किए गए थे, तथा जिले और काउन्टी के स्तर पर तो लाल रक्षक दलों का गठन किया गया था। जुलाई में च्याङशी के दुश्मनों ने हमला किया और अगस्त में हुनान और च्याङशी दोनों प्रान्तों के दुश्मनों ने मिलकर चिङकाङशान पहाड़ों पर हमला किया। सीमान्त क्षेत्र के सभी काउन्टी-केन्द्रों और मैदानी इलाकों पर दुश्मन का कब्जा हो गया। दुश्मन के पालतू कुत्ते—शान्ति-रक्षक दल और घर-घर की मिलिशिया—मनमानी करने लगे और तमाम काउन्टी-केन्द्रों व देहातों पर श्वेत आतंक छा गया। अधिकांश पार्टी-संगठन और राजनीतिक सत्ता के संगठन छिन्न-भिन्न हो गए। धनी किसान और मौका पाकर पार्टी के अन्दर घुसे हुए खुदगर्ज व्यक्ति एक के बाद एक गद्दार बन गए। चिङकाङशान पहाड़ों में ३० अगस्त की लड़ाई के बाद हुनान से आए हुए दुश्मन तो लिङश्येन की ओर हट गए, लेकिन च्याङशी से आए हुए दुश्मनों ने तब भी सभी काउन्टी-

केन्द्रों और अधिकांश गांवों पर कब्जा जमाए रखा। फिर भी पहाड़ी इलाकों पर कब्जा करना हमेशा दुश्मन के बस के बाहर रहा है। इन इलाकों में ये जगहें शामिल हैं : निङकाङ के पश्चिमी और उत्तरी जिले ; युङशिन के उत्तरी, पश्चिमी और दक्षिणी भागों में क्रमशः थ्येनलुङ, श्याओशीच्याङ और वानन्येनशान जिले ; ल्येनह्वा का शाङशी जिला ; स्वेइछ्वान का चिङकाङशान जिला ; और लिङश्येन के छिङशकाङ और ताय्वान जिले। जुलाई और अगस्त में विभिन्न काउन्टियों के लाल रक्षक दलों के साथ मिलकर लाल सेना की एक रेजीमेन्ट ने छोटी-बड़ी बीसियों लड़ाइयां लड़ीं, जिनमें केवल तीस राइफलों की हानि हुई ; अन्त में वह पहाड़ों के भीतर लौट गई।

जब हमारे आदमी छुङई और शाङयू होते हुए चिङकाङशान पहाड़ों को वापस आ रहे थे, तब दक्षिणी च्याङशी के दुश्मन ल्यू श-ई के मातहत स्वाधीन सातवीं डिवीजन ने स्वेइछ्वान तक हमारा पीछा किया। १३ सितम्बर को हमने ल्यू श-ई को हरा दिया, कई सौ राइफलें प्राप्त कीं और स्वेइछ्वान पर कब्जा कर लिया। २६ सितम्बर को हमारे आदमी चिङकाङशान पहाड़ों पर लौट आए। पहली अक्तूबर को हमने निङकाङ में श्युङ श-ह्वेइ के मातहत चओ हुन-य्वान की ब्रिगेड से लड़ाई लड़ी। हम जीत गए और हमने समूची निङकाङ काउन्टी को वापस ले लिया। इसी बीच हुनान की शत्रु-सेना की एक टुकड़ी में से, जो येन चुङ-रू के मातहत क्वेइतुङ में तैनात थी, १२६ सैनिक हमसे आ मिले। उन्हें रक्षक बटालियन में संगठित किया गया और पी चान-युन को उनका कमाण्डर बनाया गया। ६ नवम्बर को निङकाङ काउन्टी-केन्द्र और लुङय्वानखओ में हमने फिर चओ की ब्रिगेड की एक रेजीमेन्ट को हरा दिया।

दूसरे दिन हम युङशिन तक बढ़ गए और उस पर कब्जा कर लिया। लेकिन कुछ समय बाद ही हम निङकाङ में हट गए। फिलहाल हमारा इलाका दक्षिण में स्वेइछ्वान में चिङकाङशान पहाड़ों के दक्षिणी दामन से लेकर उत्तर में ल्येनह्वा के सीमान्त तक फैला हुआ एक तंग और अविच्छिन्न भूमि-खण्ड बन गया है, जिसमें समूची निङकाङ काउन्टी तथा स्वेइछ्वान, लिङश्येन और युङशिन के हिस्से शामिल हैं। लेकिन ल्येनह्वा का शाङशी जिला और युङशिन का थ्येनलुङ जिला व वानन्येनशान जिला इस अविच्छिन्न भूमि-खण्ड से पूरी तरह सटा हुआ नहीं है। दुश्मन फौजी हमलों और आर्थिक नाकेबन्दी द्वारा हमारे आधार-क्षेत्र को नष्ट करने की कोशिश कर रहा है और हम उसके हमलों को विफल करने की तैयारी कर रहे हैं।

फौजी समस्या

चूंकि सीमान्त क्षेत्र का संघर्ष बिलकुल फौजी संघर्ष है, इसलिए पार्टी और आम जनता, दोनों को अपने में युद्धकालीन तत्परता पैदा करनी होती है। दुश्मन से कैसे निपटें और कैसे लड़ें, ये हमारे दैनिक जीवन की केन्द्रीय समस्याएं बन गई हैं। स्वाधीन शासन-व्यवस्था को एक सशस्त्र शासन-व्यवस्था ही होना चाहिए। जहां सशस्त्र सैन्य-दल नहीं हैं, या सशस्त्र सैन्य-दल काफी नहीं हैं, या दुश्मन से निपटने की कार्यनीति गलत है, वहां पर दुश्मन तुरन्त कब्जा कर लेगा। इस प्रकार का संघर्ष दिन-ब-दिन तीव्र होता जाता है, इसलिए हमारी समस्याएं भी बहुत ही जटिल और गम्भीर हो गई हैं।

सीमान्त क्षेत्र में लाल सेना के सैनिक इन स्रोतों से आए हैं: (१) छाऊचओ और शानथओ में जो सैन्य-दल पहले ये थिङ और हो लुङ के मातहत थे;[५] (२) ऊछाङ की भूतपूर्व राष्ट्रीय सरकार की रक्षक रेजीमेन्ट;[६] (३) फिङच्याङ और ल्यूयाङ के किसान;[७] (४) दक्षिणी हुनान के किसान[८] और श्वेइखओशान के मजदूर;[९] (५) श्वी ख-श्याङ, थाङ शङ-च, पाए छुङ-शी, चू फेइ-त, ऊ शाङ और श्युङ श-ह्वेइ की फौजों के बन्दी बनाए हुए सिपाही; तथा (६) सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों के किसान। लेकिन सालभर से ऊपर लड़ने के बाद, वे सैनिक जो पहले ये थिङ और हो लुङ के नेतृत्व में चलते थे, तथा रक्षक रेजीमेन्ट और फिङच्याङ व ल्यूयाङ के किसान अपनी मूल संख्या का सिर्फ एक तिहाई रह गए हैं। दक्षिणी हुनान के किसानों की भी भारी जन-हानि हुई है। इस तरह यद्यपि अभी तक पहले की चार श्रेणियां लाल सेना की चौथी फौजी कोर की रीढ़ बनी हुई हैं, फिर भी पिछली दो श्रेणियों की संख्या उनसे कहीं ज्यादा है। इसके अलावा पिछली दो श्रेणियों में बन्दी बनाए हुए सिपाहियों की संख्या अपेक्षाकृत ज्यादा है। बिना इस श्रेणी से आदमी लिए जन-शक्ति की समस्या गम्भीर हो जाती। इस सब के बावजूद भरती होने वालों की तादाद राइफलों की तादाद में हो रही बढ़ोतरी से मेल नहीं खाती। राइफलों की हानि बहुत कम होती है जबकि सिपाही घायल हो जाते हैं या मारे जाते हैं, बीमार हो जाते हैं या भाग खड़े होते हैं, और इस तरह उनकी हानि अक्सर होती है। हुनान की प्रान्तीय कमेटी ने आनय्वान[१०] से मजदूरों को हमारे यहां भेजने का वादा किया है और हमें आशा है कि वह तुरन्त ऐसा करेगी।

जहां तक लाल सेना की वर्ग-संरचना का सवाल है, उसका एक हिस्सा मजदूरों और किसानों से बना है और दूसरा खानाबदोश सर्वहारा से। निस्सन्देह खानाबदोश सर्वहारा लोगों की बहुत बड़ी संख्या को रखना ठीक न होगा। लेकिन ऐसे लोग अच्छे लड़ाके होते हैं, और चूंकि लड़ाई रोज होती है, हताहतों की संख्या बढ़ती जाती है, इसलिए अभी भी इन हताहतों की जगह लेने के लिए खानाबदोश सर्वहारा लोगों को पाना आसान काम नहीं है। ऐसी स्थिति में एक-मात्र उपाय यह है कि राजनीतिक प्रशिक्षण का काम तेज किया जाए।

लाल सेना के अधिकांश सैनिक भाड़े की सेना से आए हैं, लेकिन एक बार लाल सेना में शामिल होने पर वे अपना स्वरूप बदल लेते हैं। प्रथमतः लाल सेना ने भाड़े पर लड़ने की व्यवस्था खत्म कर दी है, और इस तरह वह सैनिकों को इस बात का एहसास कराती है कि वे किसी और के लिए नहीं, बल्कि अपने लिए और जनता के लिए लड़ रहे हैं। लाल सेना ने आज तक नियमित तनखाह देने की व्यवस्था कायम नहीं की। वह सिर्फ अनाज देती है और खाद्य-तेल, नमक, ईंधन और साग-सब्जी के लिए भत्ता और थोड़ा जेब-खर्च देती है। लाल सेना के उन सभी अफसरों और सिपाहियों को जमीन दी गई है जो सीमान्त क्षेत्र के हैं; लेकिन जो बाहर के इलाकों से आए हैं, उन्हें जमीन देना मुश्किल होता है।

राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद लाल सेना के सभी सिपाहियों में वर्ग-चेतना पैदा हो गई है तथा उन्होंने जमीन का बंटवारा करने, राजनीतिक सत्ता कायम करने, मजदूरों व किसानों को हथियारबन्द करने इत्यादि के बारे में बुनियादी जानकारी हासिल

कर ली है। तथा वे सभी यह जान गए हैं कि वे अपने लिए, मजदूर वर्ग और किसान वर्ग के लिए लड़ रहे हैं। इसलिए बिना कोई शिकायत किए वे लोग कठोर संघर्ष में मुश्किलों का सामना कर सकते हैं। हर कम्पनी, बटालियन और रेजीमेन्ट में सिपाही-कमेटी होती है जो सिपाहियों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है तथा राजनीतिक कार्य और जन-कार्य करती है।

अनुभव ने साबित कर दिया है कि पार्टी-प्रतिनिधियों की व्यवस्था[11] खत्म नहीं की जानी चाहिए। पार्टी-शाखा कम्पनी के आधार पर संगठित की जाती है, इसलिए कम्पनी के स्तर पर पार्टी-प्रतिनिधि खास तौर पर महत्वपूर्ण होता है। उसे राजनीतिक ट्रेनिंग के काम में सिपाही-कमेटी की देखरेख करनी होती है, जन-आन्दोलन के काम का निर्देशन करना होता है और साथ ही पार्टी-शाखा के सचिव का काम भी करना होता है। तथ्यों से यह साबित होता है कि जितना ही अच्छा कम्पनी का पार्टी-प्रतिनिधि होगा, उतनी ही अच्छी कम्पनी होगी। और कम्पनी कमाण्डर के लिए ऐसी कारगर राजनीतिक भूमिका अदा करना मुश्किल होता है। निचले कार्यकर्ताओं में चूंकि हताहतों की संख्या ज्यादा होती है, इसलिए बन्दी बनाए गए दुश्मन के सिपाही अक्सर हमारी सेना में शामिल होने के कुछ ही दिन बाद प्लाटून या कम्पनी कमाण्डर बना लिए जाते हैं, और इनमें से कुछ लोग जो अभी फरवरी या मार्च में ही पकड़े गए थे, अब बटालियन कमाण्डर बन गए हैं। ऊपरी रूप से देखा जाए तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जब हमारी सेना लाल सेना कहलाती है, तो बिना पार्टी-प्रतिनिधियों के भी उसका काम चल सकता है। यह बिलकुल गलत है। दक्षिणी हुनान में २८वीं रेजीमेन्ट ने एक बार यह व्यवस्था

खत्म कर दी थी, लेकिन आगे चलकर उसे यह फिर से बहाल करनी पड़ी। अगर पार्टी-प्रतिनिधियों को "निर्देशक" का नाम दिया जाए तो लोग भूल से उन्हें क्वोमिन्ताङ के निर्देशक समझने लगेंगे, जिनसे बन्दी बनाए गए सिपाही घृणा करते हैं। इसके अलावा, नाम बदलने से व्यवस्था के स्वरूप में कोई फर्क नहीं पड़ता। इसलिए हमने यह फैसला किया कि कोई तब्दीली न की जाए। पार्टी-प्रतिनिधि भारी संख्या में हताहत हुए हैं। इस कमी को पूरा करने के लिए हमने ट्रेनिंग-क्लास खोल दिए हैं और हमें आशा है कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और हुनान व च्याङशी की प्रान्तीय कमेटियां हमें कम से कम ऐसे तीस कामरेड भेजेंगी जो पार्टी-प्रतिनिधि बनने के योग्य हों।

आम तौर पर एक सिपाही छै महीने या सालभर की ट्रेनिंग के बाद लड़ने के योग्य बन पाता है, लेकिन हमारे सिपाहियों को प्राय: बिना किसी ट्रेनिंग के ही कल भरती होकर आज लड़ना पड़ता है। वे फौजी कौशल में बहुत ही कमजोर हैं और केवल साहस के बल पर लड़ते हैं। चूंकि विश्राम और ट्रेनिंग के लिए लम्बी अवधि मिलना असम्भव है, इसलिए एकमात्र उपाय यह है कि अगर हो सके तो कुछ लड़ाइयों से बचा जाए, जिससे कि ट्रेनिंग के लिए समय निकल आए। निचले अफसरों को तैयार करने के लिए हमारे पास एक प्रशिक्षण-दस्ता है, जिसमें १५० आदमी ट्रेनिंग ले रहे हैं, और हम इसे स्थाई रूप देना चाहते हैं। हमें आशा है कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और दोनों प्रान्तीय कमेटियां हमारे यहां कम्पनी और प्लाटून कमाण्डरों और उनके ऊपर के दर्जो के और ज्यादा अफसरों को भेजेंगी।

हुनान की प्रान्तीय कमेटी ने हमसे कहा है कि सिपाहियों के रहन-सहन की ओर ध्यान दिया जाए और उसे कम से कम आम

मजदूर और किसान के रहन-सहन से कुछ ऊंचा रखा जाए। फिल-हाल हालत इससे ठीक उल्टी है, क्योंकि अनाज के अलावा हर आदमी को रोजाना खाद्य-तेल, नमक, ईंधन और साग-सब्जी के लिए पांच फ़न ही मिलते हैं और यह भी देते रहना मुश्किल है। केवल इन चीजों पर माहवारी खर्च ही चांदी के दस हजार डालरों से ऊपर आता है जो स्थानीय निरंकुश तत्वों से जुर्माना वसूल करके पूरा किया जाता है।[११] समूची सेना के पांच हजार आदमियों की सर्दी की पोशाक के लिए रूई अब हमने प्राप्त कर ली है, लेकिन कपड़े की अभी भी कमी है। इतनी सर्दी हो गई है, फिर भी हमारे बहुत से आदमी सिर्फ दो-दो इकहरे कपड़े ही पहने हुए हैं। सौभाग्य से हम कठिनाइयों के आदी हैं। इसके अलावा सभी लोग एक जैसी कठिनाइयों का सामना करते हैं। फौजी कोर के कमाण्डर से लेकर रसोइये तक हर आदमी अनाज के अलावा पांच फ़न के दैनिक भत्ते पर जिन्दगी बसर करता है। जेब-खर्च के लिए जब दो च्याओ दिए जाते हैं, तो हरेक को दो च्याओ ; जब चार च्याओ दिए जाते हैं, तो हरेक को चार च्याओ।[१२] इस तरह सिपाही किसी के खिलाफ शिकायत नहीं करते।

हर लड़ाई के बाद कुछ सैनिक घायल हो जाते हैं। अफसरों और सिपाहियों की एक बड़ी संख्या उचित भोजन न मिलने से, सर्दी लग जाने से और दूसरे कारणों से बीमार पड़ गई है। हमारा अस्पताल पहाड़ पर स्थित है, जहां चीनी चिकित्सा-प्रणाली और पश्चिमी चिकित्सा-प्रणाली दोनों तरह से इलाज होता है, लेकिन डाक्टरों और दवाइयों दोनों की कमी है। इस समय वहां आठ सौ से ऊपर मरीज हैं। हुनान की प्रान्तीय कमेटी ने हमारे लिए दवा का प्रबन्ध

करने का वादा किया था, लेकिन अभी तक हमें कोई दवा नहीं मिली। हम अब भी उम्मीद करते हैं कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और दोनों प्रान्तीय कमेटियां हमें कुछ पश्चिमी चिकित्सा-प्रणाली वाले डाक्टर और कुछ आयोडीन भेज देंगी।

लाल सेना इतनी खराब भौतिक परिस्थितियों और इतनी अधिक लड़ाइयों के बावजूद अपना संघर्ष क्यों जारी रख सकी, इसका कारण पार्टी द्वारा अदा की गई भूमिका के अलावा यह भी है कि उसके अन्दर जनवाद के सिद्धान्तों पर अमल किया जाता है। अफसर लोग सिपाहियों की मारपीट नहीं करते; अफसरों और सिपाहियों के साथ एक जैसा बरताव किया जाता है; सिपाहियों को सभा में अपनी बात कहने की पूरी आजादी है; व्यर्थ शिष्टाचार की प्रथा खत्म कर दी गई है; हिसाब-किताब की हर कोई जांच कर सकता है। सिपाही खुद भोजन का प्रबन्ध करते हैं, और खाद्य-तेल, नमक, ईंधन और साग-सब्जी के लिए जो दैनिक पांच फ़न उन्हें दिए जाते हैं, उनमें से हर आदमी के लिए रोजाना ६०-७० वन तक का थोड़ा सा पैसा जेब-खर्च के लिए बचाया जाता है, जिसे "भोजन की बचत" कहा जाता है। इन सब बातों से सिपाहियों को बहुत सन्तोष है। खास तौर से नए बन्दी बनाए हुए सिपाही यह महसूस करते हैं कि हमारी और क्वोमिन्ताङ की फौजों में जमीन-आसमान का फर्क है। वे अनुभव करते हैं कि हालांकि भौतिक परिस्थितियों में लाल सेना श्वेत सेना का मुकाबला नहीं कर सकती, लेकिन मानसिक रूप से वे मुक्त हैं। वही सिपाही जो कल तक शत्रु-सेना में साहसी नहीं था, आज लाल सेना में आकर बहुत वीर बन जाता है; यही जनवाद का असर है। लाल सेना एक भट्टी की तरह

है, जिसमें सभी बन्दी सैनिक आते ही तपकर बदल जाते हैं। चीन में सेना को भी जनवाद की उतनी ही ज्यादा जरूरत है जितनी जनता को। सामन्ती भाड़े की सेना की जड़ काटने के लिए, हमारी सेना में अमल किया जाने वाला जनवाद एक महत्वपूर्ण हथियार है।[१४]

पार्टी-संगठन अब चार स्तरों में विभाजित है: कम्पनी-शाखा, बटालियन-कमेटी, रेजीमेन्ट-कमेटी और फौजी कोर कमेटी। हर कम्पनी में एक पार्टी-शाखा होती है और हर स्क्वाड में एक पार्टी-ग्रुप होता है। "पार्टी-शाखा कम्पनी के आधार पर संगठित की जाती है"; यह इस बात का एक महत्वपूर्ण कारण है कि लाल सेना, बिना छिन्न-भिन्न हुए, इतना कठोर संग्राम क्यों जारी रख सकी। दो साल पहले, क्वोमिन्ताङ सेना में हमारे जो पार्टी-संगठन थे, वे सिपाहियों को अपने असर में बिलकुल नहीं ला सके और ये थिङ की फौज[१५] में भी हर रेजीमेन्ट में एक ही पार्टी-शाखा होती थी। इसी कारण कठिन परीक्षा के समय ऐसी फौज सफल नहीं हो पाती थी। अब लाल सेना में पार्टी-सदस्यों और गैर-पार्टी लोगों का अनुपात लगभग एक और तीन का है, यानी औसतन हर चार आदमियों में एक पार्टी-सदस्य है। हाल में हमने फैसला किया है कि लड़ने वाले सिपाहियों में से और ज्यादा पार्टी-सदस्य बनाए जाएंगे, जिससे कि पार्टी-सदस्यों और गैर-पार्टी लोगों का अनुपात पचास-पचास प्रतिशत का हो जाए।[१६] इस समय कम्पनी-शाखाओं में अच्छे सचिवों की कमी है। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी से हमारी यह मांग है कि वह इस कमी की पूर्ति के लिए उन सक्रिय कार्यकर्ताओं में से, जो अपनी मौजूदा जगह पर नहीं रह सकते, बहुत से लोग हमारे यहां भेज दे। दक्षिणी हुनान से आए प्रायः सभी कार्यकर्ता सेना में पार्टी

का काम कर रहे हैं। लेकिन अगस्त में दक्षिणी हुनान में हटते समय इनमें से कुछ कार्यकर्ता तितर-बितर हो गए, इसलिए अब हम एक भी कार्यकर्ता नहीं दे सकते।

स्थानीय सशस्त्र सैन्य-दलों में लाल रक्षक दल और मजदूर-किसानों के विद्रोही दस्ते हैं। विद्रोही दस्ते बल्लमों और चिड़िया मारने की बन्दूकों से लैस हैं; ये श्याङ के आधार पर संगठित हैं और हर श्याङ में एक दस्ता है, जिसके सदस्यों की संख्या श्याङ की जन-संख्या के अनुपात के अनुसार होती है। उसका काम प्रतिक्रान्तिकारियों का दमन करना, श्याङ की राजनीतिक सत्ता की रक्षा करना और दुश्मन के आने पर युद्ध में लाल सेना और लाल रक्षक दलों की सहायता करना है। विद्रोही दस्ते सबसे पहले युङशिन में गुप्त रूप से संगठित किए गए थे। पूरी काउन्टी पर हमारा कब्जा हो जाने के बाद वे खुले में आ गए हैं। सीमान्त क्षेत्र की दूसरी काउन्टियों में अब इस संगठन का प्रसार हो गया है और उसका नाम वही है। लाल रक्षक दलों के हथियार मुख्यत: पांच कारतूसों वाली राइफलें हैं, लेकिन कुछ नौ कारतूसों वाली और एक कारतूस वाली राइफलें भी हैं। निङकाङ में १४०, युङशिन में २२०, ल्येनह्वा में ४३, छालिङ में ५०, लिङश्येन में ६०, स्वेइछ्वान में १३०, और वानआन में १०; कुल मिलाकर ६८३ राइफलें हैं। इन राइफलों में अधिकांश तो लाल सेना ने दी हैं लेकिन कुछ को लाल रक्षक दलों ने खुद ही दुश्मन से छीना है। स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के शान्ति-रक्षक दलों और घर-घर की मिलिशिया से अक्सर युद्ध करते हुए विभिन्न काउन्टियों में अधिकांश लाल रक्षक दल दिन-प्रति-दिन अपनी युद्ध-क्षमता बढ़ाते जा रहे हैं। २१ मई की घटना[१७] से पहले

सभी काउन्टियों में किसान आत्मरक्षा दल थे। उनके पास कुल मिलाकर ६७० राइफलें थीं – यूआनश्येन में ३००, छालिङ में ३००, लिङश्येन में ६०, स्वेइछ्वान में ५०, युङशिन में ८०, ल्येनह्वा में ६०, निङकाङ में (य्वान वन-छाए के आदमियों के पास) ६० और चिङकाङशान पहाड़ों में (वाङ च्वो के आदमियों के पास) ६०। उस घटना के बाद – य्वान और वाङ के आदमियों की राइफलों के अलावा जिन्हें कोई क्षति नहीं हुई – स्वेइछ्वान में छै और ल्येनह्वा में एक राइफल ही बच रही। बाकी सब राइफलें स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों ने छीन ली थीं। किसान आत्मरक्षा दलों द्वारा अपनी राइफलों को अपने अधिकार में रखने में इस तरह असफल रहने का कारण अवसरवादी कार्यदिशा ही थी। काउन्टियों के लाल रक्षक दलों में अब भी राइफलों की बहुत कमी है और उनकी राइफलें स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों से भी कम हैं। लाल सेना को चाहिए कि वह लाल रक्षक दलों की मदद करने के लिए उन्हें हथियार देती रहे। लाल सेना को चाहिए कि वह जनता को हथियारबन्द करने में भरसक मदद दे, बशर्ते कि इससे उसकी अपनी खुद की युद्ध-क्षमता कम न हो। हमने यह नियम बनाया है कि लाल सेना की हर बटालियन में चार कम्पनियां होंगी, और हर कम्पनी के पास ७५ राइफलें होंगी; यदि इन राइफलों को रक्षक कम्पनी, मशीनगन कम्पनी, ट्रेंच-मोर्टर कम्पनी, रेजीमेन्टल हेडक्वार्टर और तीन बटालियन-हेडक्वार्टरों की राइफलों से जोड़ दिया जाए तो हर रेजीमेन्ट के पास १,०७५ राइफलें हो जाएंगी। लड़ाई में जब्त की गई राइफलों को यथासम्भव स्थानीय सैन्य-दल को लैस करने के काम में लाना चाहिए। लाल रक्षक दलों के कमाण्डर ऐसे लोग

होने चाहिए जो काउन्टियों से लाल सेना द्वारा स्थापित प्रशिक्षण-दस्ते में भेजे गए हों और वहां का कोर्स पूरा कर आए हों। लाल सेना को चाहिए कि वह स्थानीय सैन्य-दलों का नायक बनने के लिए बाहर के इलाकों के लोगों को भेजने की बात लगातार कम करे। चू फेइ-त भी अपने शान्ति-रक्षक दलों और घर-घर की मिलिशिया को हथियारबन्द कर रहा है, और सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की सैन्य-शक्ति संख्या व युद्ध-क्षमता दोनों की दृष्टि से काफी ज्यादा है। इसलिए हमारे स्थानीय लाल सैन्य-दल को बढ़ाने में एक क्षण की भी देरी नहीं की जानी चाहिए।

लाल सेना के लिए उसूल है, केन्द्रित रहो ; लाल रक्षक दलों के लिए उसूल है, बिखरे रहो। इस समय जबकि प्रतिक्रियावादी राजनीतिक सत्ता कुछ समय के लिए स्थिर है, लाल सेना पर हमला करने के लिए दुश्मन बड़ी तादाद में सैन्य-शक्ति इकट्ठी कर सकता है, और लाल सेना के लिए बिखरना लाभकारी नहीं है। हमारा अनुभव है कि सेना के बिखरने से लगभग हर बार हार हुई है, लेकिन अपने से कम, बराबर या कुछ ज्यादा शक्ति वाले दुश्मन से लड़ने के लिए सेना को केन्द्रित रखने से अक्सर जीत हुई है। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने जिस इलाके में छापामार युद्ध बढ़ाने का निर्देश दिया है, वह कई हजार ली लम्बा-चौड़ा है और हमारे लिए बहुत ज्यादा बड़ा है। उसने शायद हमारी शक्ति को ज्यादा आंकने के कारण ही ऐसा किया है। लाल रक्षक दलों के लिए बिखरना लाभकारी है और अब काउन्टियों के सभी लाल रक्षक दल अपनी फौजी कार्यवाही में इसी तरीके को अपनाने लगे हैं।

शत्रु-सेना को अपने प्रचार से प्रभावित करने का सबसे कारगर तरीका है बन्दी सैनिकों को छोड़ देना और उनके घायलों की दवा-दारू करना। जब भी शत्रु-सेना के सिपाही या प्लाटून, कम्पनी और बटालियन के कमाण्डर पकड़े जाते हैं, तो हम तुरन्त उनके अन्दर प्रचार करते हैं। जो लोग रहना चाहते हैं और जो लोग जाना चाहते हैं, उन्हें दो अलग-अलग हिस्सों में बांट दिया जाता है और जाने वालों को यात्रा के लिए भत्ता दिया जाता है और छोड़ दिया जाता है। इस तरह दुश्मन का यह मिथ्या आरोप कि "कम्युनिस्ट डाकू हर किसी को देखते ही मार डालते हैं", तुरन्त खत्म हो जाता है। याङ छ-शङ की नवीं डिवीजन की पत्रिका "दस दिन की समीक्षा" हमारे इस तरीके के बारे में आश्चर्य से चिल्ला उठी थी : "कितना जहरीला है!" लाल सेना के सैनिक बन्दी सैनिकों का सच्चे दिल से खयाल रखते हैं और उन्हें स्नेहपूर्वक विदा करते हैं। "नए भाइयों की विदाई-सभा" के हर मौके पर बदले में बन्दी सैनिक अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हुए भाषण करते हैं। घायल दुश्मन की दवा-दारू करना भी एक बहुत कारगर तरीका है। हमारी देखादेखी इन दिनों शत्रु-पक्ष के ली वन-पिन जैसे चतुर लोग भी बन्दियों का वध नहीं करते और घायलों की दवा-दारू करते हैं। फिर भी अगली मुठभेड़ में ही हमारे आदमी अपने हथियार लिए हुए हमसे फिर आ मिलते हैं। और अब तक ऐसा दो बार हो चुका है। इसके अलावा हम यथासम्भव लिखित प्रचार भी करते रहते हैं, जैसे नारे लिखना। हम जहां भी जाते हैं, नारों से दीवारों को रंग देते हैं। लेकिन हमारे यहां चित्र बनाने में कुशल आदमियों की कमी है। हमें आशा है कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और दोनों प्रान्तीय कमेटियां हमारे यहां

ऐसे कुछ आदमी भेज देंगी।

जहां तक फौजी आधार-क्षेत्रों का ताल्लुक है, पहला आधार-क्षेत्र चिङकाङशान पहाड़ आधार-क्षेत्र है, जो निङकाङ, लिङश्येन, स्वेइछ्वान और युङशिन इन चार काउन्टियों के सीमान्त पर स्थित है। पहाड़ों की उत्तरी ढलान निङकाङ काउन्टी के माओफिङ में है और दक्षिणी ढलान स्वेइछ्वान काउन्टी के ह्वाङआओ में है। दोनों में ६० ली का फासला है। पूर्वी ढलान युङशिन काउन्टी के नाशान में है और पश्चिमी ढलान लिङश्येन काउन्टी के श्वेइखओ में। दोनों में ८० ली का फासला है। इसकी परिधि नाशान से लेकर लुङ-य्वानखओ (दोनों युङशिन में हैं), शिनछङ, माओफिङ, तालुङ (ये सभी निङकाङ में हैं), शतू, श्वेइखओ, श्याछुन (ये सभी लिङश्येन में हैं), इङफानश्वी, ताएच्याफू, ताफ़न, तुइचिछ्येन, ह्वाङआओ, ऊतओच्याङ और छआओ (ये सभी स्वेइछ्वान में हैं) से होते हुए फिर वापस नाशान तक कुल मिलाकर ५५० ली लम्बी है। पहाड़ों में "बड़ा कुआं", "छोटा कुआं", "ऊपरी कुआं", "मध्यम कुआं" और "निचला कुआं", छिफिङ, श्याच्वाङ, शिङचओ, छाओफिङ, पाएनीहू और लोफू जैसी जगहों में धान के खेत और गांव दोनों हैं। ये जगहें पहले डाकुओं और भगोड़ों का अड्डा थीं, लेकिन अब वे हमारा आधार-क्षेत्र बन गई हैं। लेकिन यहां की आबादी दो हजार से कम है और धान की पैदावार दस हजार तान से कम है। इसलिए फौज की भारी रसद निङकाङ, युङशिन और स्वेइछ्वान इन तीन काउन्टियों से भेजनी होती है। पहाड़ों में सामरिक महत्व के सभी दर्रों में किलेबन्दी की गई है। अस्पताल, बिस्तर व कपड़ों की वर्कशापें, युद्ध-सामग्री का विभाग और रेजीमेन्टों के पृष्ठभागीय कार्यालय

सब यहीं पर हैं। इस समय निङकाङ से पहाड़ों को रसद भेजी जा रही है। यदि रसद काफी हो तो दुश्मन कभी भीतर नहीं पैठ पाएगा। दूसरा आधार-क्षेत्र च्योलूङ पहाड़ आधार-क्षेत्र है, जो निङकाङ, युङशिन, ल्येनह्वा और छालिङ इन चार काउन्टियों के सीमान्त पर स्थित है। यह चिङकाङशान पहाड़ों से कम महत्वपूर्ण है। चारों काउन्टियों के स्थानीय सशस्त्र सैन्य-दलों के लिए यह आखिरी आधार-क्षेत्र है। इसकी भी किलेबन्दी की जा चुकी है। श्वेत राजनीतिक सत्ता से घिरी हुई लाल स्वाधीन शासन-व्यवस्था के लिए यह जरूरी है कि वह पहाड़ों के सामरिक महत्व से लाभ उठाए।

भूमि-समस्या

सीमान्त क्षेत्र में भूमि की स्थिति : मोटे तौर से कहा जाए, तो ६० फीसदी से ज्यादा जमीन जमींदारों के पास थी और ४० फीसदी से कम जमीन किसानों के पास। च्याङशी खण्ड के स्वेइछ्वान में जमीन का स्वामित्व सबसे ज्यादा केन्द्रित था जहां लगभग ८० फीसदी जमीन जमींदारों के पास थी। उसके बाद युङशिन का नम्बर आता था जहां लगभग ७० फीसदी जमीन जमींदारों के पास थी। वानआन, निङकाङ और ल्येनह्वा में भूमिधर-किसान ज्यादा थे, लेकिन जमींदारों के पास फिर भी ज्यादा जमीन थी। कुल जमीन का ६० फीसदी हिस्सा उनके पास था जबकि किसानों के पास कुल जमीन का सिर्फ ४० फीसदी भाग था। हुनान खण्ड की छालिङ और लिङश्येन दो काउन्टियों में लगभग ७० फीसदी जमीन जमींदारों के पास थी।

मध्यवर्ती वर्ग की समस्या : जमीन की जब यह स्थिति है, तो समूची जमीन को जब्त करने और उसे फिर से बांटने[१८] के सवाल पर जनता के बहुमत का समर्थन प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन देहात के लोग आम तौर से तीन वर्गों में बंटे हुए हैं : बड़े व मध्यम जमींदारों का वर्ग, छोटे जमींदारों व धनी किसानों का मध्यवर्ती वर्ग और मध्यम व गरीब किसानों का वर्ग। धनी किसानों के हित अक्सर छोटे जमींदारों के हितों में गुंथे हुए होते हैं। धनी किसानों की जमीन कुल जमीन का एक छोटा हिस्सा है लेकिन छोटे जमींदारों की जमीन मिला ली जाए तो उनकी कुल जमीन काफी बड़ी हो जाती है। शायद सारे देश में बहुत कुछ इसी तरह की स्थिति होगी। जो भूमि-नीति सीमान्त क्षेत्र में अपनाई गई है, वह है सारी जमीन जब्त कर लेना और उसका मुकम्मिल तौर पर बंटवारा करना। इस तरह लाल इलाके में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग तथा मध्यवर्ती वर्ग दोनों पर हमला किया जाता है। नीति तो ऐसी ही है, लेकिन जब हम उसे अमल में लाते हैं, तब मध्यवर्ती वर्ग की तरफ से हमें काफी अड़चनों का सामना करना पड़ता है। क्रान्ति के शुरू के दौर में मध्यवर्ती वर्ग ने ऊपरी रूप से तो गरीब किसानों के सामने घुटने टेक दिए, लेकिन वास्तव में वे लोग जमीन के बंटवारे में देर लगाने के लिए अपनी भूतपूर्व सामाजिक स्थिति और बिरादरी की सत्ता से फायदा उठाकर गरीब किसानों को धमकाते थे। जब और देर लगाना मुमकिन न रहा तो उन लोगों ने अपनी जमीन के वास्तविक क्षेत्रफल को छिपाए रखा या अच्छी जमीन अपने लिए रख ली और खराब जमीन दूसरों के लिए छोड़ दी। इस दौर में गरीब किसान, जो बहुत दिनों से उत्पीड़न के शिकार

थे और जिन्हें क्रान्ति की विजय अनिश्चित लग रही थी, अक्सर मध्यवर्ती वर्ग के प्रस्ताव मान लेते थे और सक्रिय कार्यवाही करने का साहस नहीं करते थे। मध्यवर्ती वर्ग के खिलाफ गांवों में सक्रिय कार्यवाही सिर्फ तभी की जाती है जब क्रान्तिकारी उभार का समय आ जाता है – मसलन, जब एक या अनेक काउन्टियों में राजनीतिक सत्ता हथिया ली जाती है, प्रतिक्रियावादी फौज को कई बार हरा दिया जाता है और लाल सेना की ताकत बार-बार जाहिर हो चुकी होती है। मिसाल के लिए युङशिन काउन्टी के दक्षिणी भाग को ही लीजिए। वहां मध्यवर्ती वर्ग सबसे बड़ा था और जमीन के बंटवारे में देर लगाने तथा अपनी जमीन के वास्तविक क्षेत्रफल को छिपाने की अत्यन्त गम्भीर घटनाएं भी हुई थीं। जब लाल सेना २३ जून को लुङय्वानखओ में बड़ी जीत हासिल कर चुकी और जिला सरकार ने जमीन के बंटवारे में देर लगाने वाले कई व्यक्तियों को दण्ड दे दिया, तभी हम सही मायने में जमीन को बांटने का काम आगे बढ़ा सके। लेकिन हर काउन्टी में सामन्ती बिरादरी व्यवस्था का बोल-बाला है और अधिकांशतः एक गांव या कई गांवों में एक ही बिरादरी के लोग रहते हैं। इस तरह गांवों में वर्ग-चेतना लाने में और बिरादरी के संस्कारों पर काबू पाने में काफी समय लगेगा।

श्वेत आतंक के समय मध्यवर्ती वर्ग द्वारा रंग बदलना : क्रान्तिकारी उभार के समय मध्यवर्ती वर्ग को प्रहार सहना पड़ता है, इसलिए श्वेत आतंक शुरू होने पर वह तुरन्त दूसरी तरफ चला जाता है। युङशिन और निङकाङ में छोटे जमींदारों और धनी किसानों ने ही प्रतिक्रियावादी फौज को उकसाया था कि वह वहां के क्रान्तिकारी किसानों के बहुत से घरों में आग लगा दे। उन्होंने प्रतिक्रिया-

वादियों के निर्देश पर पागलपन के साथ मकानों को फूंक दिया और लोगों को गिरफ्तार कर लिया। जब लाल सेना निङकाङ, शिनछङ, कूछङ और लुङशि के इलाके में वापस आई, तब वहां कई हजार किसान इस प्रतिक्रियावादी प्रचार के शिकार हो चुके थे कि कम्युनिस्ट उन्हें मार डालेंगे ; और वे प्रतिक्रियावादियों के साथ युङशिन भाग गए। हमारे इस प्रचार के बाद ही कि "जो किसान दूसरी तरफ चले गए हैं, उन्हें मारा नहीं जाएगा" और "जो किसान दूसरी तरफ चले गए हैं, वे शौक से लौटकर अपनी फसल काट सकते हैं", कुछ किसान धीरे-धीरे वापस लौटे।

जब सारे देश में क्रान्ति उतार पर होती है, तो स्वाधीन शासन-व्यवस्था वाले इलाकों में सबसे कठिन समस्या होती है मध्यवर्ती वर्ग पर हमारी मजबूत गिरफ्त का न होना। मध्यवर्ती वर्ग क्रान्ति के साथ मुख्यतः इसलिए विश्वासघात करता है क्योंकि उस पर क्रान्ति ने जरूरत से ज्यादा प्रहार किया है। लेकिन जब सारे देश में क्रान्तिकारी उभार मौजूद होता है, तब गरीब-किसान वर्ग की हिम्मत बंधती है क्योंकि उसे सहारे के लिए एक चीज मिल जाती है। उधर मध्यवर्ती वर्ग को मनमानी करने का साहस नहीं होता, क्योंकि उसके लिए डर की एक चीज पैदा हो जाती है। जब ली चुङ-रन और थाङ शङ-च के बीच का युद्ध हुनान की ओर फैल रहा था तब छालिङ के छोटे जमींदारों ने किसानों के साथ सुलह करने की कोशिश की। कुछ ने नए साल के तोहफे के तौर पर किसानों को सुअर का गोश्त भेंट किया (उस समय लाल सेना छालिङ से हटकर स्वेइछ्वान चली गई थी)। लेकिन उस युद्ध के समाप्त होने के बाद फिर ऐसी कोई घटना नहीं सुनी गई। आज जबकि सारे देश में

प्रतिक्रान्तिकारी ज्वार तेजी से उठ रही है, ऐसे समय श्वेत इलाके में मध्यवर्ती वर्ग के, जिस पर भारी प्रहार किया गया था, प्रायः सभी लोग स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग से जा मिले हैं और गरीब-किसान वर्ग अकेला पड़ गया है। यह सचमुच एक बहुत गम्भीर सवाल है।[१६]

दैनिक जीवन का दबाव मध्यवर्ती वर्ग के रंग बदलने का एक कारण : एक दूसरे का सामना करने वाले लाल और श्वेत इलाके दो शत्रु-देशों जैसे बन गए हैं। दुश्मन द्वारा की जाने वाली सख्त नाकेबन्दी के कारण और निम्न-पूंजीपति वर्ग के प्रति हमारे अनुचित व्यवहार के कारण दोनों इलाकों के बीच व्यापार लगभग बन्द हो गया है ; नमक, कपड़े और दवाइयों जैसी दैनिक आवश्यकता की चीजें कम हैं और महंगी हैं ; लकड़ी, चाय और तेल जैसी खेती की उपज की चीजें बाहर नहीं भेजी जा सकतीं ; इसलिए किसानों की आमदनी का जरिया बन्द हो जाता है और इसका आम लोगों पर असर पड़ता है। गरीब-किसान वर्ग इन सब मुसीबतों को बहुत कुछ झेल लेता है, लेकिन मध्यम वर्ग जब ये मुसीबतें बर्दाश्त नहीं कर सकता तो वह स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग के सामने घुटने टेक देता है। अगर चीन में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों तथा युद्ध-सरदारों की फूट और लड़ाई जारी नहीं रहती, अगर देशव्यापी क्रान्तिकारी स्थिति विकसित नहीं होती, तो छोटे इलाके की लाल स्वाधीन शासन-व्यवस्था पर भारी आर्थिक दबाव पड़ेगा और उसका लम्बे अरसे तक टिकना सन्देह में पड़ जाएगा। कारण यह कि इस तरह का आर्थिक दबाव मध्यम वर्ग के लिए ही असहनीय नहीं है, वह किसी दिन मजदूरों,

गरीब किसानों और लाल सेना के सैनिकों के लिए भी असहनीय हो सकता है। एक समय युङशिन और निङकाङ दोनों काउन्टियों में और चीजें तो दरकिनार, खाना पकाने के लिए नमक तक न था, और कपड़े व दवाइयों का आना एकदम बन्द हो गया था। अब वहां नमक तो मिल जाता है, लेकिन उसकी कीमत बहुत ज्यादा है। कपड़े और दवाइयों का अब भी बिलकुल अभाव है। निङकाङ, पश्चिमी युङशिन और उत्तरी स्वेइछ्वान में (जो इस समय सबके सब हमारी स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अन्दर हैं) लकड़ी, चाय और तेल बहुतायत से पैदा होते हैं, लेकिन वे अब भी बाहर नहीं भेजे जा सकते।[२०]

जमीन के बंटवारे का मापदण्ड : श्याङ को जमीन के बंटवारे की इकाई माना जाता है। उन इलाकों में जहां पहाड़ियां ज्यादा हैं और खेती की जमीन कम है, जैसे युङशिन का श्याओच्याङ जिला, तीन-चार श्याङों को एक इकाई मान लिया जाता है। लेकिन इस तरह के इलाके बहुत कम हैं। देहात में औरत-मर्द, बूढ़े-जवान सभी लोगों को बराबर हिस्सा मिलता है। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के तरीके के अनुसार अब जमीन के बंटवारे में एक तब्दीली कर दी गई है, जिसमें श्रमशक्ति को मापदण्ड बनाया गया है और श्रमशक्ति वाले आदमी को श्रमशक्ति-रहित आदमी के मुकाबले दुगुनी जमीन दी जाती है।[२१]

भूमिधर-किसानों को रियायतें देने की समस्या : इस पर अभी विस्तार से बहस नहीं की गई है। भूमिधर-किसानों में से धनी किसानों ने खुद निवेदन किया है कि उत्पादक शक्ति को मापदण्ड माना जाए, यानी जिनके पास ज्यादा श्रमशक्ति और पूंजी (जैसे

खेती-औजार) हैं, उन्हें ज्यादा जमीन दी जानी चाहिए। धनी किसान महसूस करते हैं कि उन्हें न तो बराबर-बराबर जमीन बांटने से और न श्रमशक्ति के अनुसार जमीन बांटने से कोई लाभ होगा। उन्होंने जता दिया है कि वे ज्यादा श्रमशक्ति लगाने को तैयार हैं, जो उनकी पूंजी की शक्ति के साथ मिलकर उन्हें और बड़ी फसलें खड़ी करने में मदद देगी। यदि उन्हें दूसरे आम लोगों के बराबर ही जमीन दी जाएगी और उनके विशेष प्रयत्नों और अतिरिक्त पूंजी की अवहेलना की जाएगी (यानी उसे बेकार छोड़ दिया जाएगा), तो उन्हें असन्तोष होगा। जमीन बांटने का काम यहां अब भी केन्द्रीय कमेटी के तरीके के अनुसार चलाया जाता है। लेकिन इस समस्या पर और बहस करने की जरूरत है, और जब हम किसी निष्कर्ष पर पहुंचेंगे तो दूसरी रिपोर्ट पेश करेंगे।

भूमि-कर : निङकाङ में यह कर फसल के बीस फीसदी के हिसाब से उगाहा जाता है, जो केन्द्रीय कमेटी द्वारा निश्चित दर से पांच फीसदी ज्यादा है। उगाही आजकल चल रही है, इसलिए अभी दर बदलना ठीक नहीं है, लेकिन उसे अगले साल कम किया जाएगा। इसके अलावा, हमारी स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अन्तर्गत स्वेइछ्वान, लिङश्येन और युङशिन के हिस्से सभी पहाड़ी इलाके हैं, और वहां के किसान इतने गरीब हैं कि कर लगाना उचित नहीं होगा। सरकार और लाल रक्षक दल के खर्च के लिए हम श्वेत इलाकों में स्थानीय निरंकुश तत्वों से जुर्माना वसूल करने पर निर्भर रहते हैं। जहां तक लाल सेना की रसद का सवाल है, चावल तो फिलहाल निङकाङ में भूमि-कर वसूल करके मिल जाता है और पैसा भी स्थानीय निरंकुश तत्वों से जुर्माना वसूल करके मिल जाता है। अक्तूबर में स्वेइछ्वान

में छापामार कार्यवाही के दौरान हमने दस हजार से ज्यादा य्वान इकट्ठे किए, जो कुछ दिन तक चलेंगे। जब यह रकम खर्च हो जाएगी, तो हम देखेंगे कि क्या किया जा सकता है।

राजनीतिक सत्ता की समस्या

काउन्टी, जिले और श्याङ के स्तर पर जनता की राजनीतिक सत्ता हर जगह कायम कर दी गई है, लेकिन यह हकीकत से कहीं अधिक महज नाम के लिए है। बहुत जगह मजदूरों, किसानों व सैनिकों की कोई प्रतिनिधि-परिषद है ही नहीं। श्याङ, जिले और यहां तक कि काउन्टी की राजनीतिक सत्ता की कार्यकारिणी कमेटी भी किसी न किसी तरह की आम सभा में चुन ली जाती है। लेकिन जरूरत पड़ने पर जल्दबाजी से आयोजित की गई सभा में न तो किसी सवाल पर बहस की जा सकती है और न जनता को राजनीतिक ट्रेनिंग ही दी जा सकती है। इसके अलावा इस बात की बहुत अधिक सम्भावना रहती है कि बुद्धिजीवी और पदलोलुप लोग इन सभाओं के जरिए अपना उल्लू सीधा कर लें। कुछ जगहों में प्रतिनिधि-परिषद तो कायम कर ली गई है, लेकिन उसे कार्यकारिणी कमेटी का चुनाव करने तक के लिए एक अस्थाई संस्था मात्र समझा जाता है। एक बार चुनाव हो जाने पर एकछत्र सत्ता कार्यकारिणी कमेटी के हाथ में आ जाती है और फिर प्रतिनिधि-परिषद की चर्चा कभी नहीं सुनाई पड़ती। ऐसा नहीं है कि मजदूरों, किसानों व सैनिकों की कोई सामर्थ्यवान प्रतिनिधि-परिषद न हो, लेकिन उनकी तादाद बहुत थोड़ी है। इसका कारण इस नई राजनीतिक व्यवस्था — प्रतिनिधि-परिषद — के बारे में प्रचार और शिक्षा की कमी है। मनमाने हुक्म चलाने की सामन्ती काल की जो कुरीति जन-साधारण के मन में, और पार्टी के आम सदस्यों के मन में भी बहुत गहराई से घर कर चुकी है, वह तुरन्त मिटाई नहीं जा सकती। जब कोई समस्या आ खड़ी होती है, तो लोग सस्ता नुस्खा ढूंढ़ लेते हैं और कष्टदायी जनवादी पद्धति को पसन्द नहीं करते। जन-संगठनों में जनवादी केन्द्रीयता व्यापक रूप से और कारगर तरीके से तभी अमल में लाई जा सकती है, जब क्रान्तिकारी संघर्ष में उसका कारगर होना प्रकट कर दिया जाए और जन-समुदाय यह समझ जाए कि जनवादी केन्द्रीयता के जरिए ही उसकी शक्तियों को सबसे अच्छी तरह गोलबन्द किया जा सकता है और उसके संघर्ष की भरपूर सहायता की जा सकती है। पहले की भूलों को कदम-ब-कदम सुधारने के हेतु हम सभी स्तरों की प्रतिनिधि-परिषदों के लिए एक विस्तृत संगठनात्मक नियम (केन्द्रीय कमेटी द्वारा दी गई रूपरेखा के आधार पर) तैयार कर रहे हैं। लाल सेना में सभी स्तरों पर सिपाहियों के प्रतिनिधि-सम्मेलन अब स्थाई तौर पर कायम किए जा रहे हैं, जिससे सिर्फ सिपाही-कमेटियां रखने और सिपाहियों के प्रतिनिधि-सम्मेलन न रखने की पिछली भूल को सुधारा जा सके।

आम जनता इस समय जिसे आम तौर से "मजदूरों, किसानों व सैनिकों की सरकार" समझती है वह कार्यकारिणी कमेटी ही है, क्योंकि प्रतिनिधि-परिषद की सत्ता से अभी भी अपरिचित रहने के कारण आम जनता कार्यकारिणी कमेटी को ही वास्तविक सत्ता समझती है। अपने पीछे किसी प्रतिनिधि-परिषद के न रहने पर कार्यकारिणी कमेटी अक्सर अपने काम में आम जनता की राय

पर ध्यान नहीं देती। वह जमीन को जब्त करने और फिर से बांटने के मामले में आगा-पीछा करती है और समझौते करती है, फण्ड को नष्ट-भ्रष्ट करती है या उसका गबन करती है, तथा श्वेत शक्तियों से घबराती है या दृढ़तापूर्वक संघर्ष नहीं करती ; ऐसी बातें जहां-तहां नजर आती हैं। इसके अलावा कार्यकारिणी कमेटी का पूर्ण अधिवेशन बहुत कम होता है और सारा काम उसकी स्थाई समिति करती है। जिले और श्याङ दोनों स्तर की सरकारों में तो स्थाई समिति भी कम ही बैठती है और उसके अध्यक्ष, सचिव, कोषाध्यक्ष और लाल रक्षक दल के नायक (या विद्रोही दस्ते के नायक) जो नियमित रूप से दफ्तर में आते हैं, अलग-अलग काम निपटाते हैं। इस तरह सरकारी काम में भी नियमित रूप से जनवादी केन्द्रीयता पर अमल नहीं होता।

शुरू के दिनों में छोटे जमींदार और धनी किसान राजनीतिक सत्ता की कार्यकारिणी कमेटियों में, खासकर श्याङ के स्तर वाली कार्यकारिणी कमेटियों में पद पाने के लिए धक्का-मुक्की करते थे। लाल फीते लगाए और जोश का दिखावा करते हुए वे धोखाधड़ी के सहारे कार्यकारिणी कमेटी में घुस जाते थे, सभी काम अपने हाथ में ले लेते थे और गरीब-किसान सदस्यों को महज सहायक पात्र बना देते थे। उन्हें तभी निकाला जा सकेगा जब संघर्ष के दौरान उनका नकाब उतार दिया जाएगा और गरीब-किसान वर्ग उठ खड़ा होगा। यद्यपि इस तरह की हालत हर जगह नहीं है, फिर भी बहुत सी जगहों में देखने को मिलती है।

आम जनता में पार्टी की प्रतिष्ठा और प्रभुत्व बहुत ज्यादा है, लेकिन इस मामले में सरकार उससे बहुत पीछे है। इसका कारण

यह है कि सुविधा के लिए पार्टी बहुत से काम सीधे ही निपटा देती है और राजनीतिक सत्ता के संगठन को ताक पर रख देती है। इसकी बहुत सी मिसालें हैं। कुछ जगहों में राजनीतिक सत्ता के संगठनों में पार्टी का कोई भी नेतृत्वकारी ग्रुप नहीं है, दूसरी जगहों में ऐसे ग्रुप तो हैं लेकिन उनका पूरी तरह उपयोग नहीं होता। आगे से पार्टी को चाहिए कि वह सरकार का नेतृत्व करने का अपना कर्तव्य निभाए। पार्टी को चाहिए कि वह अपनी नीतियों और अपने उपायों को कार्यान्वित करने का कार्य – उनके बारे में प्रचार-कार्य को अपवाद के रूप में छोड़कर – सरकारी संगठनों के जरिए ही करवाए। सीधे सरकार को आदेश देने की क्वोमिन्ताङ की गलत रीति से बचना चाहिए।

पार्टी-संगठन की समस्या

अवसरवाद के खिलाफ संघर्ष : यह कहा जा सकता है कि २१ मई की घटना के समय के आसपास सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों के पार्टी-संगठन अवसरवादियों के नियंत्रण में थे। जब प्रतिक्रान्ति आरम्भ हुई, तो दृढ़तापूर्वक संघर्ष बहुत कम किया गया था। पिछले साल अक्तूबर में जब लाल सेना (मजदूर-किसानों की क्रान्तिकारी सेना की पहली फौजी कोर की पहली डिवीजन की पहली रेजीमेन्ट) सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों में आ पहुंची, तो थोड़े से ही पार्टी-सदस्य, जो छिपे हुए थे, बाकी रह गए थे। पार्टी के सभी संगठन दुश्मन द्वारा नष्ट कर दिए गए थे। पिछले नवम्बर से लेकर अप्रैल तक का दौर पार्टी के पुनर्निर्माण का दौर था और इसके बाद का दौर पार्टी के

भारी प्रसार का दौर है। लेकिन पिछले बारह महीनों में पार्टी के अन्दर अवसरवाद की अभिव्यक्ति जहां-तहां हुई। कुछ पार्टी-सदस्य लड़ने का संकल्प न होने के कारण दुश्मन के आने पर दूर पहाड़ों में भाग जाते थे। वे लोग इसे "घात में पड़े रहना" कहते थे। कुछ दूसरे पार्टी-सदस्यों ने, यद्यपि वे बहुत सक्रिय थे, अन्धाधुन्ध विद्रोह करने का रास्ता अपनाया। ये सभी चीजें निम्न-पूंजीवादी विचारों की अभिव्यक्ति थीं। बहुत दिनों तक संघर्ष की आंच में तपने और पार्टी के अन्दर शिक्षा पाने के बाद ऐसी बातें अब पहले के मुकाबले धीरे-धीरे कम होती जा रही हैं। गत वर्ष ऐसे ही निम्न-पूंजीवादी विचार लाल सेना में भी मौजूद थे। दुश्मन के आने पर या तो जान पर खेलकर लड़ने या भाग खड़े होने का प्रस्ताव रखा जाता था। फौजी कार्यवाही पर बहस के दौरान बहुधा ये दोनों बातें एक ही आदमी कहता था। पार्टी के भीतर लम्बा संघर्ष चलने और वस्तुगत तथ्यों से सबक लेने – मसलन, जान पर खेलकर लड़ने से जो हानि हुई और भाग खड़े होने से जो हार हुई उससे सीखने – के बाद ही ये गलतियां धीरे-धीरे ठीक हुई।

स्थानीयतावाद : सीमान्त क्षेत्र की अर्थव्यवस्था खेतिहर है। कुछ जगहों में खेतीबाड़ी अभी मूसल के ही युग में है (पहाड़ी इलाकों में धान कूटने के लिए आम तौर पर काठ के मूसल का प्रयोग किया जाता है, जबकि मैदानों में बहुत सी पत्थर की ढेंकियां इस्तेमाल होती हैं)। सामाजिक संगठन की इकाई हर जगह बिरादरी है, जिसमें सभी लोग एक ही कुल-नाम के होते हैं। गांव के पार्टी-संगठनों में अक्सर यह होता है कि बहुत सी पार्टी-शाखाओं में, एक ही स्थान के बाशिन्दे होने के कारण, एक ही कुल-नाम के लोग होते हैं, इसलिए

पार्टी-शाखा की बैठक असल में बिरादरी की बैठक हो जाती है। ऐसी हालत में एक "लड़ाकू बोलशेविक पार्टी" का निर्माण करना सचमुच बहुत कठिन है। ऐसे सदस्य इस बात को अच्छी तरह नहीं समझ पाते कि कम्युनिस्ट पार्टी देशों या प्रान्तों के बीच भेद-भाव नहीं करती, और न इस बात को ही अच्छी तरह समझ पाते हैं कि वह काउन्टियों, जिलों या श्याङों के बीच भेद-भाव नहीं करती। विभिन्न काउन्टियों के पारस्परिक सम्बन्धों में और एक ही काउन्टी के विभिन्न जिलों और श्याङों के पारस्परिक सम्बन्धों में स्थानीयतावाद बड़ी गहराई तक मौजूद है। स्थानीयतावाद को दूर करने में दलीलों का बहुत सीमित असर हो सकता है। इस काम में श्वेत शक्ति का उत्पीड़न, जो स्थानीयतावाद से रहित है, बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। मिसाल के लिए, जब दो प्रान्तों का प्रतिक्रान्तिकारी "संयुक्त दमन" जनता को संघर्ष में समान हित के सूत्र में बांध देता है, सिर्फ तभी उसका स्थानीयतावाद धीरे-धीरे दूर हो सकता है। ऐसे बहुत से सबक मिलने के फलस्वरूप स्थानीयतावाद कम होता जा रहा है।

मूल निवासियों और आकर बसने वालों की समस्या : सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों में एक और विचित्र बात है, यानी मूल निवासियों और आकर बसने वालों के बीच की खाई। मूल निवासियों और आकर बसने वाले उन लोगों के बीच, जिनके बाप-दादे कई सौ साल पहले उत्तर से यहां आए थे, एक चौड़ी खाई रही है। एक दूसरे से वे लोग इतना गहरा परम्परागत बैर करते हैं कि कभी-कभी उनके बीच बहुत कटु संघर्ष हो जाता है। आकर बसने वालों की संख्या दसियों लाख है, जो फूच्येन और क्वाङतुङ की सीमा से लेकर

हुनान और च्याङशी की सीमा से होते हुए दक्षिणी हुपे तक के इलाके में रहते हैं। आकर बसने वालों का, जो पहाड़ी इलाके में रहते हैं, मैदानों में रहने वाले मूल निवासियों द्वारा उत्पीड़न किया जाता है, और उन्हें कभी कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं हुआ। उन्होंने पिछले दो साल की राष्ट्रीय क्रान्ति का स्वागत किया था और समझा था कि अब समय आ गया है जब वे भी सिर उठाकर चल सकेंगे। लेकिन दुर्भाग्यवश क्रान्ति असफल हो गई और पहले की ही तरह मूल निवासियों द्वारा उनका उत्पीड़न जारी रहा। हमारे इलाके में मूल निवासियों और आकर बसने वालों की समस्या निङकाङ, स्वेइछ्वान, लिङश्येन और छालिङ में है, और निङकाङ में वह सबसे गम्भीर है। निङकाङ के मूल निवासियों के क्रान्तिकारियों ने आकर बसने वालों के साथ मिलकर कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में पिछले दो साल में मूल निवासियों के स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की राजनीतिक सत्ता को उलट दिया और सारी काउन्टी पर अधिकार कर लिया। पिछले साल जून में च्याङशी की चू फेइ-त सरकार प्रतिक्रान्तिकारी हो गई। सितम्बर में स्थानीय निरंकुश तत्व व बुरे शरीफजादे हमारा "दमन करने" के लिए चू की सेना को निङकाङ ले आए और उन्होंने मूल निवासियों व आकर बसने वालों के बीच फिर संघर्ष भड़का दिया। सैद्धान्तिक रूप से मूल निवासियों और आकर बसने वालों के बीच की यह खाई शोषित मजदूर वर्ग व किसान वर्ग में नहीं होनी चाहिए, और कम्युनिस्ट पार्टी में तो उसे जरा भी नहीं होना चाहिए। लेकिन वास्तव में अनेक वर्षों की परम्परा के कारण वह अब भी बनी हुई है। मिसाल के लिए, सीमान्त क्षेत्र में अगस्त की विफलता के बाद मूल निवासियों के

स्थानीय निरंकुश तत्व व बुरे शरीफजादे प्रतिक्रियावादी फौजों को निङकाङ वापस ले आए और यह प्रचार करते रहे कि आकर बसने वाले लोग मूल निवासियों का कत्लेआम कर देंगे। इस पर अधिकतर मूल निवासी किसान दूसरी तरफ चले गए, तथा उन्होंने सफेद फीते लगाकर घरों में आग लगाने और पहाड़ों को छान मारने में श्वेत सेना की अगुवाई की। अक्तूबर और नवम्बर में जब लाल सेना ने श्वेत सेना को खदेड़ दिया, तब मूल निवासी किसान भी प्रतिक्रियावादियों के साथ भाग खड़े हुए और आकर बसने वाले किसानों ने मूल निवासी किसानों की सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया। यह स्थिति जब पार्टी के अन्दर प्रतिबिम्बित हो जाती है, तो अक्सर निरर्थक संघर्ष पैदा हो जाता है। हमारी नीति यह है : एक ओर तो हम "जो किसान दूसरी तरफ चले गए हैं, उन्हें मारा नहीं जाएगा" और "जो किसान दूसरे पक्ष में चले गए हैं, उन्हें वापस लौटने पर भी जमीन दी जाएगी" का प्रचार करते हैं, जिससे वे अपने ऊपर से स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों का असर दूर कर सकें और बिना किसी दुविधा के घर लौट सकें ; दूसरी ओर हम काउन्टी सरकारों द्वारा यह फरमान जारी करवाते हैं कि आकर बसने वाले किसानों ने जो सम्पत्ति हथिया ली है, उसे वे उसके मालिकों को वापस लौटा दें और यह इश्तहार लगवा देते हैं कि मूल निवासी किसानों की रक्षा की जाएगी। और हमें पार्टी के भीतर शिक्षा का काम और जोरों से चलाना चाहिए जिससे पार्टी-सदस्यों के दोनों हिस्सों की एकता की गारन्टी हो सके।

पदलोलुप लोगों का रंग बदलना : क्रान्तिकारी उभार के समय (जून में) पार्टी-सदस्यों की खुली भरती से फायदा उठाकर बहुत

से पदलोलुप लोग पार्टी में घुस आए, जिससे कि सीमान्त क्षेत्र में पार्टी-सदस्यों की संख्या एकदम बढ़कर दस हजार से अधिक हो गई। पार्टी-शाखाओं और जिला कमेटियों के नेतागण अधिकतर नए सदस्य थे, इसलिए पार्टी के भीतर अच्छी शिक्षा मिलना नामुमकिन था। जैसे ही श्वेत आतंक शुरू हुआ, पदलोलुप लोग दूसरे पक्ष में चले गए। हमारे साथियों को गिरफ्तार करवाने में वे प्रतिक्रियावादियों के आगे-आगे रहे और श्वेत इलाकों के अधिकांश पार्टी-संगठन बिलकुल ठप हो गए। सितम्बर के बाद पार्टी के भीतर बड़ी सख्ती के साथ सफाई की गई और पार्टी-सदस्यता देने के बारे में कड़ी शर्तें लगाई गई। युङशिन और निङकाङ दोनों काउन्टियों के सभी पार्टी-संगठन तोड़ दिए गए और फिर से रेजिस्ट्रेशन करने का काम शुरू हुआ। हालांकि पार्टी-सदस्यों की संख्या बहुत कम हो गई, लेकिन उनकी जुझारू क्षमता काफी बढ़ गई। पहले सभी पार्टी-संगठन खुले रूप से काम करते थे, लेकिन सितम्बर के बाद गुप्त संगठन बनाए गए, ताकि यदि प्रतिक्रियावादी आ जाएं तो भी काम चलना बन्द न हो। साथ ही हम हर तरह की कोशिश करते रहे हैं कि श्वेत इलाकों के अन्दर चले जाएं और दुश्मन के खेमे के अन्दर जाकर काम करें। लेकिन आसपास के शहरों में पार्टी-संगठनों के लिए अभी कोई आधार कायम नहीं किया जा सका है। इसका कारण यह है कि पहले तो शहरों में दुश्मन ज्यादा शक्तिशाली है, और दूसरे इन शहरों पर कब्जा करने के दौरान हमारी सेना ने पूंजीपति वर्ग के हितों को बहुत ज्यादा नुकसान पहुंचाया था, इसलिए पार्टी-सदस्यों के लिए वहां पैर जमाना मुश्किल है। इस समय हम लोग भूलें सुधार रहे हैं और शहरों में अपने संगठन बनाने

की भरसक कोशिश कर रहे हैं, लेकिन अभी तक कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली है।

पार्टी के नेतृत्वकारी संगठन : शाखा कार्यकारिणी का नाम शाखा कमेटी रखा गया है। शाखा के ऊपर जिला कमेटी है और जिला कमेटी के ऊपर काउन्टी कमेटी है। विशेष स्थिति में जिला कमेटियों और काउन्टी कमेटियों के बीच विशेष-जिला कमेटियां भी बनाई गई हैं – जैसे युङशिन काउन्टी के उत्तरी भाग की विशेष-जिला कमेटी और दक्षिण-पूर्वी भाग की विशेष-जिला कमेटी। सीमान्त क्षेत्र में निङकाङ, युङशिन, ल्येनह्वा, स्वेइछ्वान और लिङश्येन में कुल मिलाकर पांच काउन्टी कमेटियां हैं। छालिङ में पहले एक काउन्टी कमेटी थी। लेकिन चूंकि वहां का काम ठीक तरह से नहीं जम सका, इसलिए पिछले जाड़ों और इस वर्ष वसन्त में जो संगठन बनाए गए थे, उनमें से अधिकांश को श्वेत शक्तियों ने नष्ट कर दिया है और पिछले छै महीनों में हम निङकाङ और युङशिन के पास उसके पहाड़ी इलाकों में ही काम कर सके हैं। इसी वजह से उसकी काउन्टी कमेटी को विशेष-जिला कमेटी के तौर पर फिर से संगठित किया गया है। हमारे साथियों को यग्रोश्येन और आनरन काउन्टियों में भेजा गया। वहां छालिङ होकर ही पहुंचा जा सकता है। वे लोग वहां से नाकामयाब होकर लौट आए हैं। जनवरी में वानआन काउन्टी कमेटी ने हमारे साथ स्वेइछ्वान में संयुक्त मीटिंग की। इसके बाद छै महीने से ज्यादा समय तक के लिए श्वेत शक्तियों ने उसे हमसे अलग कर दिया। सितम्बर में जब लाल सेना छापामार युद्ध के सिलसिले में वानआन पहुंची, तब कहीं उससे फिर एक बार सम्पर्क हुआ। अस्सी क्रान्तिकारी किसान हमारे आदमियों के साथ चिङकाङशान पहाड़ों

में आ गए और उन्हें वानआन के लाल रक्षक दल के रूप में संगठित किया गया। आनफू में कोई पार्टी-संगठन नहीं है। युङशिन की सीमा से सटी चीआन काउन्टी की पार्टी-कमेटी ने हमसे केवल दो बार ही सम्पर्क कायम किया; और आश्चर्य है कि उसने हमारी कोई सहायता नहीं की। क्वेइतुङ काउन्टी के शाय्येन इलाके में मार्च और अगस्त में दो बार भूमि का बंटवारा हुआ। वहां पार्टी-संगठन बना दिए गए हैं और दक्षिणी हुनान की विशेष कमेटी की देखरेख में काम कर रहे हैं। इस विशेष कमेटी का केन्द्र लुङशी का शअङतुङ है। काउन्टी कमेटियों के ऊपर हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की विशेष कमेटी है। २० मई को निङकाङ के माओफिङ में सीमान्त क्षेत्र की पहली पार्टी-कांग्रेस हुई और उसने २३ सदस्यों की पहली विशेष कमेटी चुनी, जिसका सचिव माओ त्सेतुङ को बनाया गया। जुलाई में हुनान प्रान्तीय कमेटी ने याङ खाए-मिङ को भेजा और वे कार्यवाहक सचिव बन गए। सितम्बर में याङ बीमार पड़ गए और थान चन-लिन ने उनकी जगह ले ली। अगस्त में जब लाल सेना का मुख्य दस्ता दक्षिणी हुनान चला गया था और श्वेत शक्तियां सीमान्त क्षेत्र पर पूरा दबाव डाल रही थीं, तब हमने युङशिन में एक संकट-कालीन मीटिंग की। अक्तूबर में जब लाल सेना निङकाङ लौट आई तो हमने माओफिङ में सीमान्त क्षेत्र की दूसरी पार्टी-कांग्रेस बुलाई। यह कांग्रेस १४ अक्तूबर को शुरू हुई और तीन दिन तक चलती रही। इसमें "राजनीतिक समस्याएं और सीमान्त क्षेत्रीय पार्टी-संगठन के कार्य" इत्यादि प्रस्ताव पास किए गए और निम्न-लिखित उन्नीस सदस्यों की दूसरी विशेष कमेटी चुनी गई: थान चन-लिन, चू तेह, छन ई, लुङ छाओ-छिङ, चू छाङ-च्ये, ल्यू थ्येन-

छ्येन, य्वान फान-चू, थान स-छुङ, थान पिङ, ली छ्वे-फ़ेइ, सुङ ई-य्वे, य्वान वन-छाए, वाङ च्वो-नुङ, छन चङ-रन, माओ त्सेतुङ, वान शी-श्येन, वाङ च्वो, याङ खाए-मिङ और हो थिङ-इङ। इनमें से पांच व्यक्तियों की एक स्थाई समिति बनाई गई जिसके सचिव थान चन-लिन (एक मजदूर) थे और उप-सचिव छन चङ-रन (एक बुद्धिजीवी) थे। १४ नवम्बर को लाल सेना की चौथी फौजी कोर की छठी पार्टी-कांग्रेस हुई जिसमें २३ सदस्यों की एक सेना-कमेटी चुनी गई। इनमें से पांच सदस्यों की एक स्थाई समिति बनाई गई जिसके सचिव चू तेह बने। सीमान्त क्षेत्र की विशेष कमेटी और सेना-कमेटी ये दोनों ही मोर्चा-कमेटी के मातहत हैं। ६ नवम्बर को मोर्चा-कमेटी को पुनर्गठित किया गया। इसमें पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा नामजद पांच सदस्य थे: माओ त्सेतुङ, चू तेह, स्थानीय पार्टी-संगठन के सचिव (थान चन-लिन), एक मजदूर साथी (सुङ छ्याओ-शङ), और एक किसान साथी (माओ ख-वन)। माओ त्सेतुङ को इस कमेटी का सचिव बनाया गया। मोर्चा-कमेटी ने फिलहाल एक सेक्रेटेरिएट, एक प्रचार विभाग, एक संगठन विभाग, एक श्रमिक आन्दोलन कमीशन और एक फौजी कमीशन कायम किया है। मोर्चा-कमेटी स्थानीय पार्टी-संगठन की भी इंचार्ज है। विशेष कमेटी बनाए रखना अब भी जरूरी है, क्योंकि कभी-कभी मोर्चा-कमेटी को सेना के साथ जाना होता है। हमारा खयाल है कि सर्वहारा वर्ग के विचारधारात्मक नेतृत्व का सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। सीमान्त क्षेत्र की काउन्टियों के पार्टी-संगठनों में प्रायः सबके सब सदस्य किसान हैं, जो सर्वहारा वर्ग के विचारधारात्मक नेतृत्व के बिना भटक जाएंगे। काउन्टी-केन्द्रों और दूसरे बड़े कस्बों

में श्रमिक आन्दोलन पर पूरा ध्यान देने के अलावा हमें राजनीतिक सत्ता के संगठनों में मजदूरों के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ानी चाहिए। सभी स्तरों पर पार्टी के नेतृत्वकारी संगठनों में भी मजदूरों और गरीब किसानों का अनुपात बढ़ाते जाना चाहिए।

क्रान्ति के स्वरूप की समस्या

चीन के बारे में कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के प्रस्ताव से हम पूरी तरह सहमत हैं। बेशक, इस समय चीन पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की मंजिल में है। चीन की पूर्ण जनवादी क्रान्ति के कार्यक्रम के अन्तर्गत बाहरी कार्य है साम्राज्यवाद को उलटना, जिससे पूर्ण राष्ट्रीय मुक्ति प्राप्त की जा सके, तथा अन्दरूनी कार्य है शहरों में दलाल-पूंजीपति वर्ग की शक्ति और प्रभाव को मिटाना, भूमि-क्रान्ति को पूरा करना, जिससे देहातों में सामन्ती सम्बन्धों को खत्म किया जा सके, और युद्ध-सरदारों की सरकार को उलट देना। ऐसी जनवादी क्रान्ति से गुजरने पर ही समाजवाद की तरफ संक्रमण करने के लिए सही बुनियाद कायम की जा सकती है। सालभर जगह-जगह लड़ने के बाद हम इस बात को अच्छी तरह महसूस करते हैं कि समूचे देश के पैमाने पर क्रान्तिकारी ज्वार उतार पर है। एक तरफ तो थोड़े से छोटे इलाकों में लाल राजनीतिक सत्ता कायम हो चुकी है; लेकिन दूसरी तरफ समूचे देश की जनता को अब भी आम जनवादी अधिकार प्राप्त नहीं हुए हैं, मजदूरों और किसानों को, यहां तक कि पूंजीवादी-जनवादी व्यक्तियों को भी भाषण देने और सभा करने की आजादी नहीं है और कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल

होना सबसे बड़ा अपराध है। जहां भी लाल सेना जाती है, वहां की आम जनता उसे उदासीन और विरक्त नजर आती है, और हमारे द्वारा प्रचार किए जाने के बाद ही वह धीरे-धीरे जागती है। शत्रु की जो भी सेना हो, उससे हमें कठोर लड़ाई लड़नी पड़ती है; शत्रु-सेनाओं में मुश्किल से कहीं कोई बलवा या विद्रोह होता है। यही बात दुश्मन की छठी फौजी कोर पर भी लागू होती है, जिसने २१ मई की घटना के बाद सबसे ज्यादा "बागी" भरती किए थे। हमें अकेलेपन का भारी एहसास होता है। हर क्षण, मन में जीवन के इस अकेलेपन को खत्म करने की इच्छा बनी रहती है। क्रान्ति को एक प्रचण्ड देशव्यापी ज्वार में बदल देने के लिए यह जरूरी है कि जनवाद के लिए राजनीतिक और आर्थिक संघर्ष छेड़ दिया जाए जिसमें शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग भी शामिल हो।

इस साल फरवरी के पहले तक हमने निम्न-पूंजीपति वर्ग के प्रति अपनी नीति अपेक्षाकृत अच्छी तरह लागू की। मार्च में दक्षिणी हुनान की विशेष कमेटी के प्रतिनिधि निङकाङ आए; उन्होंने दक्षिण पक्ष की ओर झुकने और काफी मात्रा में आगजनी और मारकाट न करने पर, तथा इस बात पर हमारी आलोचना की कि हम इस तथाकथित नीति को लागू करने में असफल हुए हैं कि "निम्न-पूंजीपति वर्ग के लोगों को सर्वहारा बना दो और फिर उन्हें क्रान्ति में ढकेल दो।" इस पर मोर्चा-कमेटी का नेतृत्व बदल दिया गया और हमारी नीति बदल दी गई। जब अप्रैल में हमारी सारी सेना सीमान्त क्षेत्र में आ गई, तब हालांकि ज्यादा आगजनी और मारकाट नहीं की गई, फिर भी खूब सख्ती के साथ शहरों में मध्यम व्यापारियों की सम्पत्ति जब्त की गई और देहातों में छोटे जमीं-

दारों और धनी किसानों से पैसा वसूल किया गया। दक्षिणी हुनान की विशेष कमेटी ने "सभी कारखानों को मजदूरों के हाथ में देने" का जो नारा पेश किया था, उसका भी व्यापक रूप से प्रचार किया गया। निम्न-पूंजीपति वर्ग पर हमला करने की इस उग्रवामपंथी नीति ने उसके अधिकांश लोगों को स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की तरफ ढकेल दिया। इसके फलस्वरूप उन्होंने सफेद फीते लगा लिए और हमारा विरोध किया। पिछले दिनों यह नीति धीरे-धीरे बदल गई है, इसलिए परिस्थिति धीरे-धीरे सुधर रही है। खास तौर से स्वेइछ्वान में अच्छी सफलता मिली है ; काउन्टी-केन्द्र और दूसरे कस्बों में व्यापारी हमसे कन्नी नहीं काटते और उनमें से अनेक लोग लाल सेना की तारीफ भी करते हैं। छाओलिन के मेले में (यह मेला तीन दिन में एक बार दोपहर के वक्त लगता है) बीस हजार आदमी जमा होते हैं, जो एक अभूतपूर्व बात है। यह इस बात का सबूत है कि हमारी नीति अब सही है। स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों ने जनता को भारी टैक्सों और लेवियों से लाद दिया था ; स्वेइछ्वान के शान्ति-स्थापक दल[१२] ने ह्वाङआओ से लेकर छाओलिन तक की सत्तर ली लम्बी सड़क पर पांच चुंगियां लगा दी थीं, जिनसे खेती की कोई भी उपज मुक्त नहीं थी। हमने शान्ति-स्थापक दल को कुचल दिया और ये सब चुंगियां खत्म कर दीं। इस तरह हमें सभी किसानों और मझोले व छोटे व्यापारियों का समर्थन प्राप्त हो गया।

पार्टी की केन्द्रीय कमेटी हमसे चाहती है कि हम एक ऐसा राज-नीतिक कार्यक्रम घोषित करें जिसमें निम्न-पूंजीपति वर्ग के हितों का भी ध्यान रखा गया हो। और हम अपनी तरफ से यह प्रस्ताव

रखते हैं कि सभी जगहों के मार्गदर्शन के लिए पार्टी की केन्द्रीय कमेटी समूची जनवादी क्रान्ति का एक ऐसा कार्यक्रम तैयार करे जिसमें मजदूरों के हितों, भूमि-क्रान्ति और राष्ट्रीय मुक्ति का ध्यान रखा गया हो।

चीन में, जहां कृषि-अर्थव्यवस्था की प्रधानता है, क्रान्ति की एक खास विशेषता है विद्रोह का विकास करने के लिए सैन्य-बल का प्रयोग करना। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को हम सुझाव देते हैं कि वह फौजी मामलों में भारी शक्ति लगाए।

स्वाधीन शासन-व्यवस्था के इलाके की समस्या

उत्तरी क्वाङतुङ से लेकर हुनान और च्याङशी प्रान्तों की सीमाओं से होते हुए दक्षिणी हुपे तक जो इलाका फैला हुआ है, वह सबका सब लोश्याओ पर्वतशृंखला के प्रदेश में है। हमने समूची पर्वतशृंखला में विचरण किया है, और उसके विभिन्न भागों की तुलना करने से पता चलता है कि उसका मध्य भाग, जिसका केन्द्र निङकाङ है, हमारी सशस्त्र स्वाधीन शासन-व्यवस्था के लिए सबसे अनुकूल है। उत्तरी भाग का धरातल आगे बढ़ने या अपनी रक्षा करने के लिए उतना अनुकूल नहीं है जितना मध्य भाग का। इसके अलावा उत्तरी भाग दुश्मन के बड़े राजनीतिक केन्द्रों के अत्यन्त निकट है। जब तक छाङशा या ऊहान पर शीघ्र अधिकार करने की योजना न बनाई जाए, तब तक ल्यूयाङ, लीलिङ, फिङश्याङ और थुङकू के इलाके में बड़ा सैन्य-दल रखना खतरनाक होगा। उत्तरी भाग से दक्षिणी भाग का धरातल ज्यादा अच्छा है, लेकिन वहां जन-आधार उतना

अच्छा नहीं है जितना मध्य भाग में। राजनीतिक दृष्टि से दक्षिणी भाग हुनान और च्याङशी पर उतना असर नहीं डाल सकता जितना मध्य भाग, जहां की हर कार्यवाही का असर दोनों प्रान्तों की निचली नदी-घाटियों पर पड़ सकता है। मध्य भाग की श्रेष्ठताएं ये हैं : (१) जन-आधार, जिसे बनाने में सालभर से ज्यादा समय लग गया ; (२) पार्टी-संगठनों के लिए काफी अच्छा आधार ; (३) स्थानीय सशस्त्र सैन्य-दल, जिनका निर्माण हमने इधर सालभर से ज्यादा समय में किया है और जो संघर्ष के अनुभव से सम्पन्न हैं – यह एक दुर्लभ सफलता है तथा लाल सेना की चौथी फौजी कोर के साथ मिलकर ये स्थानीय सशस्त्र सैन्य-शक्तियां किसी भी शत्रु-सेना के लिए अदम्य हैं ; (४) एक बढ़िया फौजी आधार-क्षेत्र – चिङकाङशान पहाड़, तथा सभी काउन्टियों में स्थानीय सशस्त्र सैन्य-दलों के लिए आधार-क्षेत्र ; (५) यह दोनों प्रान्तों पर और उनकी मुख्य नदियों की निचली घाटियों पर असर डाल सकता है, जबकि दक्षिणी हुनान या दक्षिणी च्याङशी सिर्फ एक प्रान्त पर या प्रान्त की ऊपरी नदी-घाटी और प्रान्त के पिछवाड़े पर ही असर डाल सकते हैं। इनकी तुलना में इस भाग का राजनीतिक महत्व कहीं ज्यादा है। मध्य भाग की कमी यह है कि चूंकि इस इलाके को बहुत दिनों तक स्वाधीन शासन-व्यवस्था के अन्तर्गत रहने के परिणाम-स्वरूप "घेरा डालने और विनाश करने" वाले शत्रु के बड़े सैन्य-दलों का सामना करना पड़ता है इसलिए आर्थिक समस्या, खासकर नकद पैसे की समस्या, यहां अत्यन्त गम्भीर रूप में मौजूद है।

जहां तक यहां हमारी कार्यवाही की योजना का सम्बन्ध है, हुनान की प्रान्तीय कमेटी ने जून और जुलाई में कुछ हफ्तों के अन्दर तीन

बार अपनी राय बदली है। पहले य्वान त-शङ आए और लोश्याओ पर्वतशृंखला के मध्य भाग में हमारी राजनीतिक सत्ता कायम करने की योजना स्वीकृत हो गई। उसके बाद तू श्यू-चिङ और याङ खाए-मिङ आए और यह प्रस्ताव रखा गया कि लाल सेना बिना किसी हिचकिचाहट के दक्षिणी हुनान की तरफ बढ़ जाए और लाल रक्षक दलों के साथ मिलकर सीमान्त क्षेत्र की रक्षा करने के लिए सिर्फ दो सौ राइफलों का दल पीछे छोड़ा जाए। उनका कहना था कि यह नीति "एकदम ठीक" है। मुश्किल से दस दिन बीते होंगे कि तीसरी बार य्वान त-शङ फिर आए। हमारे लिए वे एक पत्र लाए थे, जिसमें बहुत सी झिड़कियों के अलावा यह सुझाव भी दिया गया था कि लाल सेना पूर्वी हुनान के लिए रवाना हो जाए ; इसके लिए भी यह कहा गया था कि यह "एकदम ठीक" नीति है, और इस पर "बिना किसी हिचकिचाहट के" अमल किया जाए। जब हमें इस तरह के कठोर निर्देश मिलने लगे, तो हम सचमुच दुविधा में पड़ गए। उन्हें न मानने का मतलब था आज्ञा भंग करना और मानने का मतलब था निश्चित रूप से हार खाना। जब दूसरा पत्र आया, तो सेना-कमेटी, विशेष कमेटी और युङशिन काउन्टी कमेटी ने एक संयुक्त सम्मेलन किया जिसमें दक्षिणी हुनान जाना खतरनाक समझा गया और यह फैसला किया गया कि प्रान्तीय कमेटी के प्रस्ताव पर अमल न किया जाए। लेकिन कुछ दिन बाद तू श्यू-चिङ और याङ खाए-मिङ ने फिर एक बार प्रान्तीय कमेटी के प्रस्ताव पर जोर दिया और २९वीं रेजीमेन्ट के सैनिकों की घर लौटने की बेचैनी का फायदा उठाकर छनचओ पर हमला करने के लिए लाल सेना को घसीट ले गए। इस तरह सीमान्त क्षेत्र और लाल सेना

दोनों को पराजय का मुंह देखना पड़ा। लाल सेना अपने लगभग आधे सैनिक खो बैठी ; दुश्मन ने सीमान्त क्षेत्र में अनगिनत मकान जला दिए और अनगिनत लोगों की हत्या कर डाली ; तथा एक के बाद एक काउन्टी पर दुश्मन का कब्जा होता गया और उनमें से कुछ काउन्टियां इस समय तक दुश्मन के कब्जे में हैं। जहां तक पूर्वी हुनान की तरफ कूच करने का सवाल है, जब तक हुनान, हुपे और च्याङशी प्रान्तों में स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की राजनीतिक सत्ता के भीतर फूट न पड़े, तब तक लाल सेना की मुख्य शक्तियों का उधर बढ़ना निश्चय ही अनुचित होगा। अगर जुलाई में दक्षिणी हुनान की ओर बढ़ने की बात न हुई होती, तो न सिर्फ सीमान्त क्षेत्र अगस्त की विफलता से बच जाता, बल्कि हम च्याङशी प्रान्त के चाङशू में क्वोमिन्ताङ की छठी फौजी कोर और वाङ च्युन के क्वोमिन्ताङ सैन्य-दल के बीच हुए युद्ध से लाभ उठाकर युङशिन में शत्रु-सेना को भी कुचल देते और चीआन व आनफू पर बढ़े चले जाते, तथा हमारा हिरावल दस्ता फिङश्याङ पहुंच जाता और लोश्याओ पर्वतशृंखला के उत्तरी भाग में लाल सेना की पांचवीं फौजी कोर से सम्पर्क कायम कर लेता। इतना होने पर भी हमारे लिए यही उचित होता कि हम अपना हेडक्वार्टर निङकाङ में ही कायम रखें और पूर्वी हुनान में सिर्फ छापामार यूनिट ही भेजें। चूंकि स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की पांतों में आपसी युद्ध नहीं छिड़ा था और दुश्मन की शक्तिशाली सेना अब भी हुनान की सीमा पर फिङश्याङ, छालिङ और यओश्येन में थी, इसलिए अगर हम अपनी मुख्य शक्तियों को उत्तर की ओर भेजते तो दुश्मन को हम पर हमला करने का अवसर मिल जाता। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने हमसे पूर्वी या दक्षिणी हुनान की ओर बढ़ने के बारे में विचार करने को कहा था, लेकिन अमल में पूर्व और दक्षिण दोनों ओर बढ़ने में खतरा था। यद्यपि पूर्वी हुनान की ओर बढ़ने के सुझाव पर अमल नहीं किया गया, पर दक्षिणी हुनान की ओर बढ़ने का अभियान असफल साबित हो चुका है। यह कटु अनुभव हमेशा याद रखने लायक है।

अब हम एक ऐसे दौर में हैं जबकि स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग के शासन में फूट नहीं पड़ी है और "दमन करने" के लिए सीमान्त क्षेत्र के चारों ओर जो शत्रु-सेना तैनात की गई है उसमें अब भी दस से ज्यादा रेजीमेन्टें हैं। लेकिन अगर नकद पैसा हासिल करने के बारे में कोई रास्ता निकल आए (खाने और कपड़े की समस्या फिलहाल कोई बड़ी समस्या नहीं है), तो सीमान्त क्षेत्र में हमारे काम की जो बुनियाद पड़ चुकी है उस पर निर्भर रहकर, शत्रु की इतनी ही नहीं, इससे और बड़ी सैन्य-शक्ति से हम निपट सकेंगे। जहां तक सीमान्त क्षेत्र का सम्बन्ध है, अगर एक बार लाल सेना हट गई तो अगस्त जैसे सत्यानाश का फौरन सामना करना पड़ेगा। यद्यपि हमारे सभी लाल रक्षक दल मारे नहीं जाएंगे, फिर भी पार्टी और जन-समुदाय के आधार को भारी क्षति उठानी पड़ेगी। यद्यपि कुछ पहाड़ी इलाकों में स्वाधीन शासन-व्यवस्था पांव जमाए रख सकती है, लेकिन मैदान के हम सब लोगों को अन्डर-ग्राउन्ड होकर काम करना पड़ेगा, जैसा कि अगस्त और सितम्बर में हुआ था। अगर लाल सेना यहां से नहीं हटती तो अपने मौजूदा आधार के सहारे हम कदम-ब-कदम इर्द-गिर्द के तमाम इलाकों में फैल सकते हैं और हमारा भविष्य बहुत उज्ज्वल बन सकता है। लाल

सेना के विकास के लिए एकमात्र तरीका यह है कि वह चिङकाङ-शान पहाड़ों के इर्द-गिर्द, यानी निङकाङ, युङशिन, लिङश्येन और स्वेइछ्वान इन चारों काउन्टियों में रहकर, जहां हमारा जन-आधार मौजूद है, और इस बात का फायदा उठाते हुए कि हुनान और च्याङशी के शत्रुओं के हितों में टकराव है, उन्हें चारों तरफ से अपनी रक्षा करनी पड़ती है और इस तरह वे अपनी शक्ति को केन्द्रित नहीं कर सकते, दुश्मन से दीर्घकालीन संघर्ष करे। सही कार्यनीति अपनाकर, ऐसी कोई लड़ाई न लड़कर जिसमें हम जीत न सकें और शत्रु के सैनिकों व हथियारों को अपने कब्जे में न कर सकें, हम धीरे-धीरे लाल सेना को बढ़ा सकते हैं। अप्रैल से जुलाई तक सीमान्त क्षेत्र के जन-समुदाय में जो तैयारियां की गई थीं उन्हें देखते हुए अगर लाल सेना का मुख्य दस्ता दक्षिणी हुनान की ओर न बढ़ा होता, तो निस्सन्देह लाल सेना अगस्त में अपना विकास कर सकती थी। हालांकि यह गलती हुई है, लेकिन अब लाल सेना सीमान्त क्षेत्र में लौट आई है जहां का धरातल और जन-आधार अनुकूल है, इसलिए आगे की सम्भावनाएं अब भी बुरी नहीं हैं। लाल सेना को सीमान्त क्षेत्र जैसी जगहों में संघर्ष करने का संकल्प करना चाहिए और लड़ाई में डटे रहने की क्षमता बढ़ानी चाहिए; तब कहीं वह अपने अस्त्र-शस्त्र बढ़ा सकती है और ट्रेनिंग देकर अच्छे सैनिकों को तैयार कर सकती है। सालभर सीमान्त क्षेत्र में लाल झण्डा फहराता रहा है। यद्यपि लाल झण्डा हुनान, हुपे और च्याङशी प्रान्तों और समूचे देश के स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग की तीव्र घृणा का पात्र बन गया है, फिर भी उसने निकट के प्रान्तों के मजदूरों, किसानों और सिपाहियों की आशाओं को भी धीरे-धीरे जगा दिया

है। अब जरा सिपाहियों के बारे में गौर कीजिए। चूंकि युद्ध-सरदार सीमान्त क्षेत्र में "डाकुओं का विनाश करने" की मुहिम को अपना मुख्य काम घोषित कर रहे हैं और "डाकुओं का विनाश करने की मुहिम में सालभर लग गया और दस लाख य्वान खर्च हो गए" (लू ती-फिङ) जैसे बयान निकाल रहे हैं, या यह कि लाल सेना के पास, "बताया जाता है, २०,००० सैनिक और ५,००० राइफलें हैं" (वाङ च्युन), इसलिए ऐसी बातों से दुश्मन के सिपाहियों और हताश निचले अफसरों का ध्यान धीरे-धीरे हमारी तरफ खिंचता जा रहा है, और उनमें से अधिकाधिक लोग हमारे साथ मिलने के लिए शत्रु से अपना सम्बन्ध तोड़ लेंगे। इस तरह लाल सेना के विकास के लिए एक और स्रोत खुल गया है। साथ ही, सीमान्त क्षेत्र में लाल झण्डे के कभी न उतरने से न सिर्फ कम्युनिस्ट पार्टी की शक्ति प्रकट होती है, बल्कि शासक वर्गों का दिवालियापन भी प्रकट होता है। समूचे देश की राजनीति में इसका भारी महत्व है। इसलिए हमारा सदैव यही मत रहा है कि लोश्याओ पर्वतश्रृंखला के मध्य भाग में लाल राजनीतिक सत्ता का निर्माण और विस्तार करना नितान्त आवश्यक और सही है।

नोट

१ यह युद्ध अक्तूबर १९२७ में हुआ था।

२ यह युद्ध नवम्बर और दिसम्बर १९२७ में हुआ था।

३ लाल सेना में सिपाहियों के प्रतिनिधि-सम्मेलनों और सिपाही-कमेटियों की

व्यवस्था बाद में खत्म कर दी गई। लेकिन १९४७ में जन-मुक्ति सेना में कार्यकर्ताओं के नेतृत्व में काम करने वाले सैनिक-सम्मेलनों और सिपाही-कमेटियों की व्यवस्था कायम कर दी गई।

[४] "ली" लम्बाई का एक चीनी नाप है जो ०.५ किलोमीटर के बराबर होता है। – अनु०

[५] ये क्रमशः कामरेड ये थिङ और कामरेड हो लुङ के नेतृत्व में चलने वाले सैन्य-दल थे जिन्होंने १ अगस्त १९२७ को नानछाङ विद्रोह में भाग लिया था (ये थिङ के सैन्य-दल के बारे में देखिए : नोट १५)। क्वाङतुङ के तट पर स्थित छाऊचओ और शानथओ पर धावा बोलते समय उन्हें परास्त कर दिया गया। उनका एक भाग चू तेह, लिन प्याओ और छन ई आदि कामरेडों के नेतृत्व में क्वाङतुङ से हट गया और छापामार कार्यवाही करने के लिए च्याङशी होता हुआ दक्षिणी हुनान पहुंच गया। वह सैन्य-दल अप्रैल १९२८ में चिङकाङशान पहाड़ों पर कामरेड माओ त्सेतुङ के सैन्य-दल से जा मिला।

[६] १९२७ के क्रान्तिकारी दिनों में ऊछाङ की राष्ट्रीय सरकार की रक्षक रेजीमेन्ट के अधिकांश कार्यकर्ता कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। वाङ चिङ-वेइ और उसके साथियों द्वारा क्रान्ति के प्रति गद्दारी कर दिए जाने के बाद, नानछाङ विद्रोह में भाग लेने के लिए जुलाई १९२७ के अन्त में यह रेजीमेन्ट ऊछाङ से चल दी। रास्ते में उसे खबर मिली कि विद्रोही सैन्य-दल नानछाङ से दक्षिण की ओर चला गया है। उसके बाद यह रेजीमेन्ट श्यूश्वेइ जाकर फिङच्याङ और ल्यूयाङ की किसान-सेना से मिल गई।

[७] १९२७ के वसन्त में हुनान प्रान्त के फिङच्याङ और ल्यूयाङ इलाके में किसानों की काफी शक्तिशाली सशस्त्र सैन्य-शक्ति संगठित की गई। २१ मई को श्वी ख-श्याङ ने छाङशा में प्रतिक्रान्तिकारी विप्लव किया और क्रान्तिकारी जन-समुदाय का कत्लेआम किया। प्रतिक्रान्तिकारियों पर जवाबी हमला करने के लिए ३१ मई को फिङच्याङ और ल्यूयाङ इलाके की किसान-सेना छाङशा की ओर बढ़ी ; लेकिन अवसरवादी छन तू-श्यू द्वारा रोक दिए जाने पर वह पीछे हट गई। इसके बाद उसके एक भाग को छापामार युद्ध चलाने के लिए स्वतंत्र रेजीमेन्ट के रूप में पुनर्गठित किया गया। १ अगस्त के नानछाङ विद्रोह के बाद

यह किसान-सेना श्यूश्वेइ, थुङकू, फिङच्याङ और ल्यूयाङ के इलाके में ऊछाङ की भूतपूर्व राष्ट्रीय सरकार की रक्षक रेजीमेन्ट से जा मिली और फिङश्याङ की कोयला-खान के हथियारबन्द मजदूरों के साथ मिलकर उसने शरद-फसल विद्रोह कर दिया। अक्तूबर में कामरेड माओ त्सेतुङ इस विद्रोही सैन्य-दल को चिङकाङशान पहाड़ों में ले गए।

[८] १९२८ के आरम्भ में जब कामरेड चू तेह दक्षिणी हुनान में क्रान्तिकारी छापामार युद्ध का निर्देशन कर रहे थे, ईचाङ, छनचओ, लेइयाङ, युङशिङ और चिशिङ इन पांच काउन्टियों में, जहां किसान आन्दोलन की नींव डाली जा चुकी थी, किसान-सेनाएं संगठित की गईं। आगे चलकर कामरेड माओ त्सेतुङ के सैन्य-दल से जा मिलने के लिए कामरेड चू तेह इन किसान-सेनाओं को चिङकाङशान पहाड़ों में ले गए।

[९] हुनान प्रान्त की छाङनिङ काउन्टी में श्वेइखओशान अपनी सीसे की खान के लिए प्रसिद्ध है। १९२२ में वहां के खान-मजदूरों ने कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मजदूर संघ कायम किया ; वे लोग कई साल तक प्रतिक्रान्तिकारियों के खिलाफ संघर्ष करते रहे। १९२७ में शरद-फसल विद्रोह के बाद उनमें से बहुत से लोग लाल सेना में भरती हो गए।

[१०] च्याङशी प्रान्त की फिङश्याङ काउन्टी की आनय्वान कोयला-खान, जिसमें लगभग १२ हजार मजदूर काम करते थे, हान-ये-फिङ लोहा-इस्पात कम्पनी की मिलकियत थी। १९२१ से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की हुनान प्रान्तीय कमेटी अपने कार्यकर्ताओं को वहां भेजने लगी जिन्होंने वहां पार्टी-संगठनों और एक मजदूर संघ को संगठित किया।

[११] १९२९ में लाल सेना के अन्दर पार्टी-प्रतिनिधि का नाम बदलकर राजनीतिक कमिसार कर दिया गया। १९३१ में कम्पनी के राजनीतिक कमिसार का नाम बदलकर राजनीतिक निर्देशक कर दिया गया।

[१२] फौज का आंशिक खर्च चलाने के लिए "स्थानीय निरंकुश तत्वों से जुर्माना वसूल करना" केवल एक अस्थाई तरकीब थी। फौज की बढ़ोतरी और इलाके के प्रसार के साथ-साथ फौज का खर्च निकालने के लिए कर लगाना आवश्यक और सम्भव हो गया।

१३ यह चलन लाल सेना में बहुत दिनों तक बना रहा। उस समय यह आवश्यक था। लेकिन आगे चलकर अफसरों और सिपाहियों के प्रति उनके पद के अनुसार कुछ भिन्न व्यवहार किया जाता था।

१४ यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने क्रान्तिकारी सेना में कुछ हद तक जनवाद पर अमल करने की आवश्यकता पर खास जोर दिया है, क्योंकि लाल सेना की प्रारम्भिक अवस्था में जनवाद पर जोर दिए बिना किसान रंगरूटों और पकड़े हुए श्वेत सैनिकों में क्रान्तिकारी उत्साह पैदा नहीं किया जा सकता था और कार्यकर्ताओं को प्रतिक्रियावादी सेनाओं के युद्धपतिवाद के प्रभाव से मुक्त नहीं किया जा सकता था। जाहिर है कि सेना में जनवाद पर सैनिक अनुशासन की सीमाओं के भीतर रहकर ही अमल किया जाना चाहिए। इससे अनुशासन को शिथिल नहीं बल्कि और भी दृढ़ हो जाना चाहिए। इसलिए सेना में आवश्यक जनवाद को बढ़ावा देने के साथ-साथ अतिजनवाद की मांगों का, यानी अनुशासनहीनता का, विरोध करना चाहिए। ऐसी अनुशासनहीनता ने लाल सेना के प्रारम्भिक दिनों में गम्भीर रूप धारण कर लिया था। सेना में अतिजनवाद के विरुद्ध कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा चलाए गए संघर्ष के सम्बन्ध में देखिए: "पार्टी के भीतर गलत विचारों को सुधारने के बारे में"।

१५ १९२६ के उत्तरी अभियान में कामरेड ये थिङ की कमान में एक स्वतंत्र रेजीमेन्ट थी। उस रेजीमेन्ट की रीढ़ कम्युनिस्ट थे। यह रेजीमेन्ट लड़ने में अत्यन्त कुशल सैन्य-दल के रूप में प्रसिद्ध हो गई। क्रान्तिकारी सेना ने जब ऊछाङ पर अधिकार कर लिया, तो उसे बढ़ाकर २४वीं डिवीजन बना दिया गया और नानछाङ विद्रोह के बाद उसे फिर बढ़ाकर ११वीं फौजी कोर बना दिया गया।

१६ आगे के अनुभव से यह मालूम हो गया कि यदि लाल सेना में एक तिहाई लोग पार्टी-सदस्य हों तो काम ठीक चलता है। लाल सेना में और बाद में जन-मुक्ति सेना में आम तौर पर यह अनुपात कायम रखा गया।

१७ च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ की शह पाकर हुनान में क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रान्तिकारी सेनानायक श्वी ख-श्याङ और हो च्येन आदि ने २१ मई १९२७ को छाङशा में मजदूर संघों, किसान सभाओं और दूसरे क्रान्तिकारी संगठनों के प्रान्तीय हेडक्वार्टरों पर हमला करने का हुक्म दिया। कम्युनिस्टों

तथा क्रान्तिकारी मजदूरों व किसानों को गिरफ्तार कर लिया गया और उनकी हत्या कर दी गई। यह क्वोमिन्ताङ के दो प्रतिक्रान्तिकारी गुटों – ऊहान गुट जिसका सरगना वाङ चिङ-वेइ था और नानकिङ गुट जिसका सरगना च्याङ काई-शेक था – के बीच खुले सहयोग की घोषणा थी।

१८ यह उस भूमि-कानून की एक धारा थी जिसे १९२८ में हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में जारी किया गया था। कामरेड माओ त्सेतुङ ने बाद में बतलाया कि केवल जमींदारों की जमीन जब्त करने के बजाय सारी की सारी जमीन जब्त करना एक प्रकार की गलती थी जो भूमि सम्बन्धी संघर्षों के अनुभव की कमी के कारण पैदा हुई थी। अप्रैल १९२९ में शिङक्वो काउन्टी के भूमि-कानून में "सारी की सारी जमीन जब्त करो" की धारा के बदले "सार्वजनिक जमीन और जमींदार वर्ग की जमीन जब्त करो" की धारा रखी गई।

१९ देहातों में मध्यवर्ती वर्ग को अपने पक्ष में करने के कार्य का महत्व देखकर कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस वर्ग पर जरूरत से ज्यादा प्रहार करने की गलत नीति को शीघ्र ही सुधार लिया। जो कुछ इस लेख में कहा गया है, उसके अलावा, मध्यवर्ती वर्ग के प्रति अपनाई जाने वाली नीति के बारे में कामरेड माओ त्सेतुङ के विचार निम्नलिखित दस्तावेजों में भी मिलते हैं: लाल सेना की चौथी फौजी कोर की छठी पार्टी-कांग्रेस (नवम्बर १९२८) में रखा गया प्रस्ताव (जिसमें "अन्धाधुन्ध आग लगाने और मारकाट करने की मनाही करना" और "मझोले व छोटे व्यापारियों के हितों की रक्षा करना" भी शामिल है); जनवरी १९२९ में लाल सेना की चौथी फौजी कोर की घोषणा (जिसमें ऐलान किया गया है कि "शहर के उन व्यापारियों को, जो धीरे-धीरे अपनी कमाई इकट्ठी कर लेते हैं, तब तक अलग छोड़ देना चाहिए जब तक वे हमारा हुक्म मानते रहें"); और अप्रैल १९२९ में शिङक्वो काउन्टी का भूमि-कानून (देखिए: इस लेख का १८वां नोट) इत्यादि।

२० क्रान्तिकारी युद्ध का विकास करने और क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का प्रसार करने से तथा उद्योग-धन्धों व व्यापार की रक्षा करने के लिए क्रान्तिकारी सरकार द्वारा अपनाई गई नीति से यह हालत बदली जा सकती थी और वास्तव में आगे चलकर बदली भी गई। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि राष्ट्रीय उद्योग-

धन्धों और व्यापार की दृढ़ता से रक्षा की जाए और उग्रवामपंथी नीतियों का विरोध किया जाए।

२१ जमीन के बंटवारे में श्रमशक्ति को मापदण्ड बनाना अनुचित है। लाल इलाकों में दरअसल बहुत दिनों तक जमीन को परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार बांटा गया।

२२ "शान्ति-स्थापक दल" एक प्रकार का स्थानीय प्रतिक्रान्तिकारी सैन्य-दल था।

पार्टी के भीतर गलत विचारों को सुधारने के बारे में*

दिसम्बर १६२६

लाल सेना की चौथी फौजी कोर के अन्दर कम्युनिस्ट पार्टी संगठन में तरह-तरह के गैर-सर्वहारा विचार मौजूद हैं जो पार्टी की सही कार्यदिशा को लागू करने में बहुत अड़चनें डालते हैं। अगर उन्हें पूरी तरह न सुधारा गया, तो निश्चय ही लाल सेना की चौथी फौजी कोर वे उत्तरदायित्व नहीं सम्भाल पाएगी जिन्हें चीन के महान क्रान्तिकारी संघर्ष ने उसे सौंपा है। चौथी फौजी कोर के पार्टी-संगठन में मौजूद विभिन्न गलत विचारों की जड़ अवश्य ही यह है कि उसकी बुनियादी इकाइयों में अधिकांश लोग किसानों और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्सों से आए हुए हैं ; फिर भी पार्टी के नेतृत्वकारी संगठनों द्वारा इन गलत विचारों के खिलाफ एकजुट होकर और डटकर काफी संघर्ष न करना और पार्टी की सही कार्य-

*यह एक प्रस्ताव है जिसे कामरेड माओ त्सेतुङ ने लाल सेना की चौथी फौजी कोर की नवीं पार्टी-कांग्रेस के लिए लिखा था। चीनी जनता की सैन्य-शक्ति का निर्माण करने का कार्य एक कठिन प्रक्रिया रहा है। चीन की लाल सेना (जो जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के समय आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना कहलाई तथा अब जन-मुक्ति सेना कहलाती है) की स्थापना

दिशा के बारे में सदस्यों को काफी शिक्षा न देना भी ऐसे गलत विचारों के कायम रहने और बढ़ने का एक महत्वपूर्ण कारण हैं। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सितम्बर के पत्र की भावना के अनुरूप, यह कांग्रेस बतलाती है कि चौथी फौजी कोर के पार्टी-संगठन में विभिन्न गैर-सर्वहारा विचारों की अभिव्यक्ति किन रूपों में होती है, उनके स्रोत क्या हैं, और उन्हें कैसे सुधारना चाहिए, तथा तमाम साथियों का आवाहन करती है कि वे ऐसे विचारों को पूरी तरह नेस्तनाबूद कर दें।

विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण के बारे में

लाल सेना के अनेक साथियों में विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण असाधारण रूप से फैला हुआ है। वह इन रूपों में प्रकट होता है :

१. ये साथी फौजी मामले और राजनीति को परस्पर एक दूसरे का विरोधी समझते हैं और यह मानने से इनकार करते हैं कि फौजी मामले महज राजनीतिक कार्य पूरे करने के अनेक उपायों में से ही एक उपाय हैं। कुछ लोग यहां तक कहते हैं कि "अगर तुम

१ अगस्त १९२७ को नानछाङ विद्रोह के समय की गई थी, और दिसम्बर १९२९ तक उसे कायम हुए दो साल से ज्यादा समय हो चुका था। इस अवधि में लाल सेना के अन्दर मौजूद कम्युनिस्ट पार्टी संगठन ने विभिन्न प्रकार के गलत विचारों का विरोध करते हुए बहुत कुछ सीखा और काफी समृद्ध अनुभव प्राप्त किए। कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा लिखा गया यह प्रस्ताव इन्हीं अनुभवों का सारतत्व है। इस प्रस्ताव ने लाल सेना के निर्माण का काम पूरी तरह मार्क्सवादी-लेनिनवादी आधार पर जमा दिया और पुरानी किस्म की फौजों के सभी असरात खत्म कर

फौजी मामलों में अच्छे होगे, तो स्वाभाविक रूप से राजनीति में भी अच्छे हो जाओगे ; अगर तुम फौजी मामलों में अच्छे नहीं होगे, तो राजनीति में भी अच्छे नहीं होगे" — यह एक कदम और आगे बढ़कर राजनीति को फौजी मामलों के मातहत रख देना है।

२. वे यह समझते हैं कि लाल सेना का कार्य श्वेत सेना के कार्य की ही तरह केवल युद्ध करना है। वे यह नहीं समझ पाते कि चीनी लाल सेना क्रान्ति के राजनीतिक कार्यों को पूरा करने के लिए बनाया गया एक सशस्त्र संगठन है। खास तौर से इस समय, लाल सेना को निश्चय ही अपनी गतिविधियां सिर्फ लड़ने तक ही सीमित नहीं रखनी चाहिए। शत्रु के सैन्य-बल को चकनाचूर करने के लिए लड़ने के अलावा उसे ऐसे महत्वपूर्ण काम भी सम्भाल लेने चाहिए जैसे आम जनता में प्रचार करना, उसे संगठित करना, उसे हथियारबन्द करना, तथा क्रान्तिकारी राजनीतिक सत्ता कायम करने में और कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन कायम करने में भी उसकी मदद करना। जब लाल सेना लड़ती है तो वह केवल लड़ने के लिए ही नहीं लड़ती, बल्कि आम जनता में प्रचार करने के लिए, आम जनता को संगठित करने के लिए, उसे हथियारबन्द करने के लिए और क्रान्तिकारी

दिए। इस प्रस्ताव को सिर्फ लाल सेना की चौथी फौजी कोर में ही नहीं, बल्कि आगे-पीछे लाल सेना की सभी यूनिटों में भी अमल में लाया गया। इस तरह समूची चीनी लाल सेना पूरी तरह और सही मायनों में जनता की फौज बन गई। पिछले बीस वर्ष से कुछ अधिक समय में, चीनी जनता की सेना ने अपनी पार्टी-सरगरमियों और राजनीतिक काम में बहुत बड़ी प्रगति की है और नया सृजन किया है। अतः उनका रंगरूप बदलकर बिलकुल नया हो गया है, लेकिन बुनियादी कार्यदिशा अब भी वही है जिसे इस प्रस्ताव में निर्धारित किया गया था।

राजनीतिक सत्ता कायम करने में उसकी मदद करने के लिए लड़ती है। ऐसे उद्देश्यों को छोड़ देने पर लड़ना एकदम निरर्थक हो जाता है और लाल सेना के कायम रहने का कोई कारण नहीं रह जाता।

३. इसलिए, ये साथी संगठनात्मक रूप से लाल सेना के राजनीतिक काम करने वाले विभागों को फौजी काम करने वाले विभागों के मातहत रख देते हैं और यह नारा देते हैं : "फौजी हेडक्वार्टर को फौज के बाहर के मामले निपटाने दो।" यदि यह विचार और भी बढ़ता गया, तो इसकी वजह से आम जनता से अलगाव होने, राजसत्ता पर फौज का नियंत्रण कायम होने और सर्वहारा नेतृत्व से हट जाने का खतरा पैदा हो जाएगा – यह क्वोमिन्ताङ सेना की ही तरह युद्धपतिवाद की राह पर चलना होगा।

४. इसके साथ ही प्रचार-कार्य में वे लोग प्रचार-दलों के महत्व पर ध्यान नहीं देते। जन-संगठन के बारे में, वे लोग फौज में सिपाही-कमेटियों के संगठन-कार्य और स्थानीय मजदूर-किसानों के संगठन-कार्य की उपेक्षा कर देते हैं। इसके फलस्वरूप प्रचार-कार्य और संगठन-कार्य दोनों को ही तिलांजलि दे दी जाती है।

५. वे लोग लड़ाई जीतने पर घमण्ड से भर जाते हैं और हारने पर पस्त हो जाते हैं।

६. स्वार्थपूर्ण विभागवाद – यानी वे लोग केवल चौथी फौजी कोर के हितों को ही ध्यान में रखते हैं और यह नहीं समझ पाते कि स्थानीय जन-समुदाय को हथियारबन्द करना लाल सेना का एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह संकीर्ण ग्रुपवाद का ही एक बढ़ा-चढ़ा रूप है।

७. चौथी फौजी कोर के सीमित वातावरण से आगे न देख सकने के कारण चन्द साथियों का यह विचार है कि दूसरी कोई

भी क्रान्तिकारी शक्ति मौजूद नहीं है। इसलिए यह विचार उनके दिमाग में बहुत गहरी जड़ें जमा चुका है कि अपनी शक्ति को सुरक्षित रखा जाए और लड़ाई से बचा जाए। यह अवसरवाद का अवशेष है।

८. कुछ साथी मनोगत और वस्तुगत परिस्थितियों को भुलाकर क्रान्ति के प्रति उतावलेपन के शिकार हो जाते हैं ; वे आम जनता में छोटे-छोटे और बारीक काम करने का झंझट उठाने से कतराते हैं, तथा दिन-रात हवाई मनसूबे बांधते रहते हैं और सिर्फ बड़े-बड़े काम ही करना चाहते हैं। यह मुहिमजोई का अवशेष[1] है।

विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण के स्रोत ये हैं :

१. निम्न राजनीतिक स्तर। इसके परिणामस्वरूप हमारे कुछ साथी फौज में राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका को नहीं पहचान पाते तथा यह नहीं समझ पाते कि लाल सेना और श्वेत सेना बुनियादी तौर से अलग-अलग हैं।

२. भाड़े की सेना की मनोवृत्ति। पिछली लड़ाइयों में पकड़े गए दुश्मन के बहुत से सैनिक लाल सेना में शामिल हो गए हैं। ऐसे लोग भाड़े की सेना की गहरी मनोवृत्ति भी अपने साथ लाते हैं। इस तरह उनके कारण विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण के लिए साधारण सैनिकों में एक आधार बन जाता है।

३. पिछले दो कारणों से एक नया कारण पैदा हो जाता है, यानी सैन्य-शक्ति में अत्यधिक विश्वास होना और आम जनता की शक्ति में विश्वास का अभाव होना।

४. पार्टी द्वारा फौजी काम पर सक्रिय रूप से ध्यान न दे पाने और बहस न कर पाने से भी कुछ साथियों में विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण पैदा हो जाता है।

इसमें सुधार के उपाय इस प्रकार हैं :

१. शिक्षा द्वारा पार्टी के अन्दर राजनीतिक स्तर को ऊंचा करो, जिससे कि विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण की सैद्धान्तिक जड़ों को उखाड़ फेंका जाए तथा लाल सेना और श्वेत सेना के बुनियादी फर्क को साफ-साफ पहचान लिया जाए। साथ ही अवसरवाद और मुहिमजोई के अवशेषों को खत्म कर देना चाहिए और चौथी फौजी कोर के स्वार्थपूर्ण विभागवाद को नेस्तनाबूद कर देना चाहिए।

२. अफसरों और सिपाहियों की राजनीतिक शिक्षा को, विशेषकर भूतपूर्व बन्दी सैनिकों की राजनीतिक शिक्षा को तेजी से बढ़ाओ। साथ ही स्थानीय सरकारों द्वारा संघर्ष के अनुभव से सम्पन्न मजदूरों और किसानों को चुनकर हर मुमकिन तरीके से लाल सेना में भरती कराना चाहिए, जिससे कि विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण की जड़ को संगठनात्मक रूप से कमजोर बनाया जा सके और यहां तक कि उसे उखाड़ फेंका जा सके।

३. स्थानीय पार्टी-संगठनों को इस काम के लिए उत्साहित करो कि वे लाल सेना के पार्टी-संगठनों की आलोचना करें, तथा जनता की राजनीतिक सत्ता के संगठनों को इस बात के लिए उत्साहित करो कि वे लाल सेना की आलोचना करें, जिससे कि लाल सेना के पार्टी-संगठनों पर और लाल सेना के अफसरों व सिपाहियों पर असर पड़े।

४. पार्टी को चाहिए कि वह फौजी काम पर सक्रिय रूप से ध्यान दे और उस पर विचार-विमर्श करे। पार्टी द्वारा विचार किए जाने और फैसले लिए जाने के बाद ही सारा काम साधारण सैनिकों द्वारा पूरा किया जाना चाहिए।

५. लाल सेना के नियम-विनियम तैयार करो जिनमें उसके कर्तव्यों, उसकी फौजी मशीनरी और राजनीतिक मशीनरी के सम्बन्धों, लाल सेना और आम जनता के सम्बन्धों, सिपाही-कमेटियों के अधिकारों व कर्तव्यों तथा फौजी व राजनीतिक संगठनों से उनके सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से बताया गया हो।

अतिजनवाद के बारे में

जब से लाल सेना की चौथी फौजी कोर ने पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के आदेशों को स्वीकार कर लिया है, तब से अतिजनवाद की अभिव्यक्ति काफी कम हो गई है। मिसाल के लिए, पार्टी के फैसले अब काफी अच्छी तरह अमल में लाए जा सकते हैं ; अब कोई इस तरह के गलत प्रस्ताव पेश नहीं करता कि लाल सेना में "जनवादी केन्द्रीयता नीचे से ऊपर की ओर" लागू की जाए, अथवा "सभी समस्याओं के बारे में पहले निचले स्तर के संगठनों को बहस करने दी जाए और फिर ऊपरी स्तर के संगठनों को फैसला करने दिया जाए"। लेकिन वास्तव में ऐसी अभिव्यक्ति का कम होना महज अस्थाई और ऊपरी है और इसका मतलब यह नहीं है कि अतिजनवादी विचार अब निर्मूल कर दिए गए हैं। दूसरे शब्दों में, बहुत से साथियों के दिमाग में अतिजनवाद की जड़ें अब भी बहुत गहरी जमी हुई हैं। पार्टी के फैसलों पर अमल करने में तरह-तरह की आनाकानी करना इसका एक सबूत है।

इसमें सुधार के उपाय इस प्रकार हैं :

१. सिद्धान्त के क्षेत्र में अतिजनवाद की जड़ें काट दो। पहले,

यह बता दिया जाए कि अतिजनवाद से यह खतरा है कि वह पार्टी-संगठन को हानि पहुंचाता है अथवा पूरी तरह नष्ट भी कर देता है, और पार्टी की जुझारू क्षमता को कमजोर बना देता है अथवा पूरी तरह तहस-नहस भी कर देता है, तथा पार्टी को अपने जुझारू कार्य पूरे करने में बिलकुल असमर्थ बना देता है, और इस प्रकार क्रान्ति की पराजय का कारण बन जाता है। दूसरे, यह बता दिया जाए कि अतिजनवाद का स्रोत है अनुशासन के प्रति निम्न-पूंजीपति वर्ग की व्यक्तिवादी अरुचि। जब यह प्रवृत्ति पार्टी के भीतर आ जाती है, तो वह राजनीतिक और संगठनात्मक दृष्टि से अतिजनवादी विचारों में विकसित हो जाती है। ये विचार सर्वहारा वर्ग के जुझारू कार्यों से कतई मेल नहीं खाते।

२. संगठन-कार्य के क्षेत्र में, केन्द्रित निर्देशन के अधीन जनवाद पर सख्ती से अमल करो। इसे निम्नलिखित कार्यदिशाओं के अन्तर्गत किया जाना चाहिए :

(१) पार्टी के नेतृत्वकारी संगठनों को चाहिए कि वे निर्देशन की सही कार्यदिशा अपनाएं और जब भी समस्याएं उठ खड़ी हों तो उनका समाधान करने के लिए उपाय निकालें, जिससे कि वे अपने आपको नेतृत्व-केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित कर सकें।

(२) ऊपर के संगठनों को यह मालूम होना चाहिए कि नीचे के संगठनों की हालत क्या है और आम जनता के जीवन की हालत क्या है, जिससे कि सही निर्देशन के लिए उन्हें वस्तुगत आधार मिल सके।

(३) किसी भी स्तर के पार्टी-संगठन को बिना यथेष्ट विचार किए फैसले नहीं करने चाहिए। लेकिन एक बार फैसला कर लेने पर उसे दृढ़ता से अमल में लाना चाहिए।

(४) ऊपर के पार्टी-संगठनों ने ज्यादा महत्व के जो भी फैसले किए हों, उन्हें तुरन्त नीचे के संगठनों और आम पार्टी-सदस्यों तक पहुंचा दिया जाना चाहिए। इसका तरीका है – सक्रिय तत्वों की मीटिंग बुलाना या पार्टी-शाखा के आम सदस्यों की मीटिंग बुलाना, अथवा यहां तक कि पूरे कालम [२] के पार्टी-सदस्यों की भी मीटिंग बुलाना (जब परिस्थिति उपयुक्त हो) और ऐसी मीटिंगों में रिपोर्ट पेश करने के लिए लोगों को नियुक्त करना।

(५) पार्टी के निचले संगठनों और आम पार्टी-सदस्यों को चाहिए कि वे ऊपर के संगठनों के निर्देशों पर विस्तार से विचार करें जिससे कि वे उनका महत्व पूरी तरह समझ सकें और यह तय कर सकें कि उन्हें अमल में लाने के तरीके क्या होंगे।

संगठनात्मक अनुशासन की अवहेलना के बारे में

चौथी फौजी कोर के पार्टी-संगठन में संगठनात्मक अनुशासन की अवहेलना की प्रवृत्ति इन रूपों में प्रकट होती है :

(क) अल्पमत का बहुमत के अधीन न होना। मिसाल के लिए, जब अल्पमत वाले यह देखते हैं कि उनका प्रस्ताव रद्द कर दिया गया है, तो वे पार्टी-संगठन के फैसले को सच्चे दिल से अमल में नहीं लाते।

इसमें सुधार के उपाय इस प्रकार हैं :

१. मीटिंगों में सभी लोगों को अपनी राय यथेष्ट रूप से जाहिर करने देना चाहिए। विवादास्पद सवालों के सही और गलत पहलुओं

को समझौते या लगी-लिपटी के बिना स्पष्ट कर लेना चाहिए। स्पष्ट नतीजे पर पहुंचने के लिए, जो बात एक मीटिंग में तय न हो उस पर दूसरी मीटिंग में विचार कर लेना चाहिए (बशर्ते कि काम में हर्ज न हो)।

२. पार्टी-अनुशासन की एक मांग यह है कि अल्पमत वाले बहुमत वालों की बात मानें। अगर अल्पमत वालों का सुझाव रद्द कर दिया जाए, तो अल्पमत वालों को चाहिए कि वे बहुमत द्वारा स्वीकृत फैसले का समर्थन करें। जरूरत हो तो दूसरी मीटिंग में वे इस सवाल को बहस के लिए फिर उठा सकते हैं, लेकिन इसके सिवा उन्हें इस फैसले के खिलाफ कोई भी आचरण नहीं करना चाहिए।

(ख) संगठनात्मक अनुशासन की अवहेलना करके आलोचना करना :

१. पार्टी के भीतर की जाने वाली आलोचना पार्टी-संगठन को मजबूत करने और उसकी जुझारू क्षमता को बढ़ाने का साधन है। लेकिन ऐसी बात नहीं है कि लाल सेना के पार्टी-संगठन में सदैव ही ऐसी आलोचना होती हो, और कभी-कभी वह व्यक्तिगत आक्षेपों का रूप ले लेती है। नतीजा यह होता है कि उससे व्यक्तियों को ही नहीं बल्कि पार्टी-संगठन को भी नुकसान पहुंचता है। यह निम्न-पूंजीवादी व्यक्तिवाद की अभिव्यक्ति है। इसे सुधारने का उपाय यह है कि पार्टी-सदस्यों के सामने यह स्पष्ट कर दिया जाए कि आलोचना का उद्देश्य पार्टी की जुझारू क्षमता को बढ़ाना है जिससे कि वर्ग-संघर्ष में जीत हासिल हो सके, और आलोचना को व्यक्तिगत आक्षेपों के लिए कभी इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

२. बहुत से पार्टी-सदस्य पार्टी के अन्दर आलोचना नहीं करते, बल्कि उसके बाहर करते हैं। इसका कारण यह है कि आम पार्टी-सदस्यों ने पार्टी के संगठन (उसकी मीटिंगों आदि) का महत्व अभी नहीं समझा और वे पार्टी के भीतर और बाहर की जाने वाली आलोचना में कोई फर्क नहीं समझते। इसे सुधारने का उपाय यह है कि पार्टी-सदस्यों को शिक्षित किया जाए जिससे वे यह समझ लें कि पार्टी का संगठन महत्वपूर्ण है और पार्टी-कमेटियों या साथियों की आलोचना पार्टी-मीटिंगों में की जानी चाहिए।

निरपेक्ष समानतावाद के बारे में

लाल सेना में निरपेक्ष समानतावाद किसी समय बहुत गम्भीर सीमा तक बढ़ गया था। इसकी कुछ मिसालें इस प्रकार हैं : घायल सिपाहियों को घावों की गम्भीरता के अनुसार अलग-अलग भत्ते देने पर आपत्ति करना और सबको एक समान भत्ते देने की मांग करना। अफसरों का घोड़े पर चढ़ना काम के लिए जरूरी न समझना और उसे असमानता का द्योतक समझना। सप्लाई के एकदम समान बंटवारे की मांग करना और खास हालत के लिहाज से सप्लाई का कुछ ज्यादा हिस्सा देने का विरोध करना। उमर या शारीरिक हालत को देखे बगैर, चावल ढोने में सबके लिए एक जैसी मात्रा की मांग करना। रहने की जगह बांटते समय बराबर-बराबर जगह की मांग करना, और हेडक्वार्टर द्वारा कुछ बड़ा मकान लेने पर उसकी भी निन्दा करना। फैटीग-ड्यूटी में बराबर-बराबर काम मांगना और दूसरों के मुकाबले तनिक भी ज्यादा काम करने

से इनकार करना। यहां तक कि जब घायल दो हों और स्ट्रेचर सिर्फ एक ही हो, तो किसी एक को ले जाने के बजाय दोनों को छोड़ देना बेहतर समझना। निरपेक्ष समानतावाद, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणों में बताया गया है, लाल सेना के अफसरों व सिपाहियों में अब भी गम्भीर रूप में मौजूद है।

राजनीतिक मामलों में मौजूद अतिजनवाद की ही तरह निरपेक्ष समानतावाद भी दस्तकारी व लघु किसान-अर्थव्यवस्था की ही उपज है – फर्क सिर्फ इतना है कि इनमें से एक तो राजनीतिक जीवन में प्रकट होता है और दूसरा भौतिक जीवन में।

इसे सुधारने के उपाय ये हैं : यह बताना आवश्यक है कि पूंजीवाद के निर्मूलन से पहले निरपेक्ष समानतावाद केवल किसानों का और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्सों का भ्रममात्र ही होता है, तथा समाजवाद के अन्तर्गत भी निरपेक्ष समानता कायम नहीं की जा सकती, क्योंकि तब भी भौतिक चीजों का वितरण "हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार, और हर एक को उसके काम के अनुसार" के उसूल तथा काम की आवश्यकताओं के अनुसार ही किया जाएगा। कुल मिलाकर लाल सेना के सैनिकों में भौतिक चीजों का समान बंटवारा होना चाहिए, मसलन अफसरों और सिपाहियों को बराबर वेतन मिलना चाहिए, क्योंकि संघर्ष की मौजूदा परिस्थितियों का यही तकाजा है। लेकिन अयुक्तिसंगत निरपेक्ष समानतावाद का विरोध किया जाना चाहिए। क्योंकि वह हमारे संघर्ष के लिए जरूरी नहीं है ; इसके विपरीत वह हमारे संघर्ष में बाधक होता है।

मनोगतवाद के बारे में

कुछ पार्टी-सदस्यों में मनोगतवाद गम्भीर सीमा तक मौजूद है, जो राजनीतिक परिस्थिति का विश्लेषण करने और काम का निर्देशन करने में बहुत ही हानिकारक होता है। कारण, राजनीतिक परिस्थिति के मनोगतवादी विश्लेषण और काम के मनोगतवादी निर्देशन का लाजमी नतीजा या तो अवसरवाद होता है, या मुहिमजोई। जहां तक पार्टी के अन्दर की जाने वाली मनोगतवादी आलोचना, गैरजिम्मेदाराना व निराधार बातचीत या पारस्परिक सन्देह का सवाल है, इन सबसे अक्सर बेउसूली विवाद उठ खड़े होते हैं और पार्टी का संगठन टूटता है।

पार्टी के अन्दर की जाने वाली आलोचना के बारे में एक बात का जिक्र और कर देना चाहिए और वह यह कि कुछ साथी अपनी आलोचना में बड़ी समस्याओं पर ध्यान न देकर केवल छोटी-छोटी समस्याओं पर ही ध्यान देते हैं। वे नहीं समझते कि आलोचना का मुख्य कार्य राजनीतिक और संगठनात्मक गलतियां बताना है। जहां तक व्यक्तिगत खामियों का सवाल है, जब तक उनका सम्बन्ध राजनीतिक और संगठनात्मक गलतियों से न हो, तब तक जरूरत से ज्यादा नुक्ताचीनी करने और सम्बन्धित साथी को परेशानी में डालने की आवश्यकता नहीं। इसके अलावा एक बड़ा खतरा यह है कि यदि एक बार ऐसी आलोचना का सिलसिला चल गया, तो पार्टी-सदस्यों का ध्यान मामूली खामियों पर ही पूरी तरह केन्द्रित हो जाएगा, हर कोई दब्बू बन जाएगा, जरूरत से ज्यादा सशंकित रहेगा और पार्टी के राजनीतिक कार्यों को भूल जाएगा।

इसे सुधारने का मुख्य उपाय है पार्टी-सदस्यों को शिक्षित करना, जिससे कि उनके चिन्तन और पार्टी-जीवन को राजनीतिक और वैज्ञानिक सतह तक ऊंचा उठाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें चाहिए कि : (१) राजनीतिक परिस्थिति का विश्लेषण करने और वर्ग-शक्तियों को आंकने में, पार्टी-सदस्यों को मनोगतवादी विश्लेषण और मूल्यांकन के बदले मार्क्सवादी-लेनिनवादी तरीका लागू करना सिखाएं; (२) पार्टी-सदस्यों का ध्यान सामाजिक और आर्थिक छानबीन और अध्ययन की ओर खींचें जिसके आधार पर संघर्ष की कार्यनीति और काम के तरीके निर्धारित किए जाएं, तथा यह समझने में साथियों की मदद करें कि वास्तविक परिस्थितियों की छानबीन किए बिना वे हवाई कल्पना और मुहिमजोई के गढ़े में जा गिरेंगे; तथा (३) पार्टी के भीतर की जाने वाली आलोचना में मनोगतवाद, स्वेच्छाचारिता और घटिया दर्जे की नुक्ताचीनी से सावधान रहें; जो कुछ कहा जाए, वह तथ्यों पर आधारित हो और आलोचनाओं का केन्द्र-बिन्दु राजनीति को बनाया जाए।

व्यक्तिवाद के बारे में

लाल सेना के पार्टी-संगठन में व्यक्तिवादी प्रवृत्ति इन रूपों में प्रकट होती है :

१. बदला लेने की मनोवृत्ति। कुछ साथी पार्टी के अन्दर किसी सैनिक साथी द्वारा आलोचना किए जाने पर उससे पार्टी के बाहर बदला लेने के अवसर ढूंढ़ते हैं; मारपीट या गाली-गलौज बदला

लेने का एक तरीका है। वे पार्टी के अन्दर भी बदला लेने का मौका ढूंढ़ते हैं। "तुमने मेरी इस मीटिंग में आलोचना की है, इसलिए मैं दूसरी मीटिंग में तुम्हारे दोष दिखाकर तुमसे बदला लूंगा।" बदला लेने की इस मनोवृत्ति का एकमात्र कारण है व्यक्तिगत बातों को प्रस्थान-बिन्दु बनाकर वर्ग के हितों और समूची पार्टी के हितों की अवहेलना करना। इस मनोवृत्ति का निशाना शत्रु-वर्ग नहीं होते, बल्कि अपनी ही पांतों के व्यक्ति होते हैं। यह एक ऐसा घुन है जो संगठन को और उसकी जुझारू क्षमता को कमजोर बना देता है।

२. संकीर्ण ग्रुपवाद। कुछ साथी केवल अपने छोटे से ग्रुप के हितों को ही ध्यान में रखते हैं और आम हितों को नजरअन्दाज कर देते हैं। हालांकि ऊपर से देखने पर तो यह व्यक्तिगत हितों की तलाश नहीं जान पड़ती, लेकिन वास्तव में इसमें एक बहुत ही संकीर्ण किस्म का व्यक्तिवाद निहित होता है। इसलिए इसका प्रभाव भी बहुत ही विनाशकारी और विघटनकारी होता है। लाल सेना में संकीर्ण ग्रुपवादी मनोवृत्ति का बराबर बोलबाला रहा है। हालांकि आलोचना करने से अब स्थिति उतनी गम्भीर नहीं रह गई है, फिर भी उसके अवशेष अब तक मौजूद हैं और उन्हें दूर करने के लिए और भी कोशिश करना जरूरी है।

३. मुलाजिमों जैसी मनोवृत्ति। कुछ साथी यह महसूस नहीं करते कि पार्टी और लाल सेना, जिनके वे सदस्य हैं, ये दोनों ही क्रान्तिकारी काम पूरा करने के साधन हैं। वे यह नहीं समझते कि वे खुद क्रान्ति के निर्माता हैं, बल्कि यह महसूस करते हैं कि वे केवल किसी वरिष्ठ अफसर के प्रति ही उत्तरदायी हैं, क्रान्ति के प्रति

नहीं। क्रान्ति के प्रति यह निष्क्रिय, मुलाजिमों जैसी मनोवृत्ति भी व्यक्तिवाद का ही एक रूप है। इससे यह मालूम हो जाता है कि क्रान्ति के लिए बिलाशर्त काम करने वाले सक्रिय तत्वों की तादाद इतनी कम क्यों है। अगर मुलाजिमों जैसी मनोवृत्ति दूर न की गई तो सक्रिय तत्वों की संख्या नहीं बढ़ेगी और क्रान्ति का भारी बोझ इने-गिने लोगों के कन्धों पर ही रहेगा, जिससे संघर्ष को गहरा धक्का लगेगा।

४. ऐशो-आराम की मनोवृत्ति। लाल सेना में ऐसे लोग भी काफी हैं जिनका व्यक्तिवाद ऐशो-आराम की मनोवृत्ति के रूप में प्रकट होता है। वे हमेशा इस बात की आशा लगाए रहते हैं कि उनकी यूनिट बड़े शहरों में कूच करेगी। वे काम करने के लिए नहीं, बल्कि ऐशो-आराम करने के लिए बड़े शहरों में जाना चाहते हैं। उन्हें लाल इलाकों में, जहां का जीवन कठिन है, काम करना कतई पसन्द नहीं है।

५. निष्क्रियता। कुछ साथी, जब कोई बात उनकी इच्छा के विरुद्ध पड़ती है, निष्क्रिय हो जाते हैं और काम करना बन्द कर देते हैं। इसका मुख्य कारण राजनीतिक शिक्षा की कमी है, हालांकि कभी-कभी इसका कारण नेतृत्व द्वारा अनुचित ढंग से कामकाज चलाना, अनुचित ढंग से काम बांटना या अनुचित ढंग से अनुशासन लागू करना भी होता है।

६. सेना को छोड़ देने की इच्छा। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ रही है जो लाल सेना छोड़कर स्थानीय काम करना चाहते हैं। इसका कारण विशुद्ध रूप से व्यक्तिगत नहीं बल्कि यह भी है: (१) लाल सेना में जीवन की भौतिक कठिनाइयां, (२) लम्बे संघर्ष के बाद थकान का एहसास, और (३) नेतृत्व द्वारा अनुचित ढंग से कामकाज चलाना, अनुचित ढंग से काम बांटना या अनुचित ढंग से अनुशासन लागू करना।

इसे सुधारने का मुख्य उपाय यह है कि विचारधारा के क्षेत्र में व्यक्तिवाद को दूर करने के लिए राजनीतिक शिक्षा का काम जोरों से बढ़ाया जाए। इसके अलावा, उचित ढंग से कामकाज चलाना चाहिए, उचित ढंग से काम बांटना चाहिए और उचित ढंग से अनुशासन लागू करना चाहिए। साथ ही भौतिक परिस्थितियों को अधिक अनुकूल बनाने के लिए लाल सेना के भौतिक जीवन को सुधारने के उपाय खोजने चाहिए तथा आराम और बहाली का जो भी मौका मिले उससे फायदा उठाना चाहिए। राजनीतिक शिक्षा का काम करते समय हमें यह जरूर बता देना चाहिए कि सामाजिक उत्पत्ति की दृष्टि से व्यक्तिवाद पार्टी के भीतर निम्न-पूंजीवादी और पूंजीवादी विचारों का ही प्रतिबिम्ब है।

घुमन्तू विद्रोहियों की विचारधारा के बारे में

लाल सेना में घुमन्तू विद्रोहियों की राजनीतिक विचारधारा इसलिए पैदा होती है क्योंकि उसमें खानाबदोश लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या मौजूद है और चीन में, खास तौर से उसके दक्षिणी प्रान्तों में, खानाबदोश लोग बड़ी संख्या में मौजूद हैं। यह विचारधारा इन रूपों में प्रकट होती है: (१) कुछ लोग आधार-क्षेत्रों और जनता की राजनीतिक सत्ता की स्थापना करने के कठिन कार्य करने में और इस तरह अपना राजनीतिक प्रभाव बढ़ाने में आनाकानी

करते हैं और उसे केवल चलती-फिरती छापामार कार्यवाही के तरीके से बढ़ाने की कोशिश करते हैं। (२) कुछ लोग लाल सेना को बढ़ाने के लिए स्थानीय लाल रक्षक दलों और स्थानीय लाल सेना को बढ़ाने और इस प्रकार नियमित लाल सेना को बढ़ाने की कार्य-दिशा अपनाने के बजाय "आदमी भाड़े पर रखने और घोड़े खरीदने" तथा "भगोड़ों को भरती करने और बागियों को शामिल करने" की कार्यदिशा अपनाते हैं। (३) कुछ लोग आम जनता के साथ मिलकर कठोर संघर्ष चलाने का धीरज नहीं रखते और केवल बड़े शहरों में जाकर शाहखर्ची से खाने-पीने की आशा लगाए रहते हैं। घुमन्तू विद्रोहियों की विचारधारा के ये तमाम रूप लाल सेना के समुचित कर्तव्य पूरे करने में भारी रुकावट डालते हैं। इसलिए इस विचारधारा को निर्मूल करना दरअसल लाल सेना के पार्टी-संगठन के भीतर होने वाले विचारधारात्मक संघर्ष का एक महत्व-पूर्ण लक्ष्य है। यह समझ लेना होगा कि ह्वाङ छाओ[३] या ली छ्वाङ[४] की जैसी घुमन्तू विद्रोहियों की मनोवृत्ति को आज की हालत में हरगिज इजाजत नहीं दी जा सकती।

इसे सुधारने के उपाय इस प्रकार हैं :

१. राजनीतिक शिक्षा का काम तेजी से चलाओ, गलत विचारों की आलोचना करो और घुमन्तू विद्रोहियों की मनोवृत्ति को निर्मूल कर दो।

२. लाल सेना के बुनियादी दस्तों और नए भरती किए गए बन्दी सैनिकों के बीच आवारागर्दी के दृष्टिकोण के खिलाफ राजनीतिक शिक्षा का काम बढ़ाओ।

३. लाल सेना की वर्ग-संरचना बदलने के लिए, संघर्ष के अनुभव

से सम्पन्न सक्रिय मजदूरों और किसानों को उसकी पांतों में लेने की कोशिश करो।

४. जुझारू मजदूरों और किसानों के जन-समुदाय के बीच से लाल सेना के नए दस्ते बनाओ।

मुहिमजोई के अवशेषों के बारे में

लाल सेना का पार्टी-संगठन मुहिमजोई के खिलाफ पहले ही संघर्ष चला चुका है, लेकिन पूरी तरह नहीं। इसलिए लाल सेना में मुहिमजोई की विचारधारा के अवशेष अब भी बने हुए हैं। वे इन रूपों में प्रकट होते हैं : (१) मनोगत और वस्तुगत परिस्थितियों का ध्यान रखे बिना आंख मूंदकर काम करना। (२) शहरों के लिए पार्टी की नीति को अपर्याप्त रूप से और पूरा जोर लगाए बिना अमल में लाना। (३) शिथिल फौजी अनुशासन, खासकर हारने के वक्त। (४) कुछ दस्तों द्वारा घरों में आग लगाने का कुकर्म किया जाना। (५) भगोड़ों को गोली मार देने की व्यवस्था और शारीरिक दण्ड देने की व्यवस्था – इन दोनों से ही मुहिमजोई की प्रवृत्ति प्रकट होती है। सामाजिक उत्पत्ति की दृष्टि से, मुहिमजोई का जन्म आवारा-सर्वहारा विचार और निम्न-पूंजीवादी विचार के मेल से होता है।

इसे सुधारने के उपाय इस प्रकार हैं :

१. विचारधारा की दृष्टि से मुहिमजोई को नेस्तनाबूद कर दो।

२. नियम-विनियमों और नीतियों के जरिए मुहिमजोई के व्यवहार का अन्त कर दो।

नोट

[१] १९२७ में क्रान्ति की पराजय होने के बाद, थोड़े समय के लिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में एक "वामपंथी" मुहिमजोई का रुझान पैदा हो गया। मुहिमजोई के शिकार साथियों ने चीनी क्रान्ति को "स्थाई क्रान्ति" और चीन की क्रान्तिकारी परिस्थिति को "स्थाई उभार" मान लिया और इस प्रकार उन्होंने व्यवस्थित ढंग से पीछे हटने के कार्य का संगठन करने से इनकार कर दिया, तथा फरमानशाही के तरीके अपनाकर थोड़े से पार्टी-सदस्यों और जन-समुदाय के एक छोटे हिस्से के भरोसे समूचे देश में ऐसे बहुत से स्थानीय विद्रोह कराने का गलत प्रयत्न किया, जिनकी सफलता की कोई सम्भावना नहीं थी। १९२७ के अन्त में, मुहिमजोई की इस प्रकार की कार्यवाही बड़े पैमाने पर फैली हुई थी। १९२८ के आरम्भ में वह धीरे-धीरे ठप हो गई, यद्यपि कुछ पार्टी-सदस्यों के अन्दर मुहिमजोई का पक्षपोषण करने की भावना फिर भी बनी रही। मुहिमजोई दुस्साहसवाद ही है।

[२] उस समय लाल सेना की संगठन-व्यवस्था में एक कालम, पैदल सेना की एक रेजीमेन्ट के बराबर होता था। —अनु०

[३] ह्वाङ छाओ नामक व्यक्ति थाङ वंश के अन्तिम दिनों में किसान विद्रोहों का नेता था। वह छाओचओ की य्वानच्वी काउन्टी (वर्तमान फिङ्य्वान प्रान्त की होत्से काउन्टी) का निवासी था। ८७५ ईसवी में, यानी थाङ वंश के सम्राट शी चुङ के शासन-काल के छ्येनफू-संवत के द्वितीय वर्ष में, वाङ श्येन-च के विद्रोही दस्ते का समर्थन करने के लिए ह्वाङ छाओ ने लोगों को इकट्ठा करके विद्रोह कर दिया। वाङ श्येन-च के मारे जाने के बाद ह्वाङ छाओ ने वाङ की बची-खुची टुकड़ी को अपने दस्ते में ले लिया तथा वह "सारी दुनिया में तहलका मचा देने वाला सेनापति "कहलाया। ह्वाङ छाओ के विद्रोही दस्ते ने शानतुङ से निकलकर दो बार अभियान किया। पहली बार वह शानतुङ से लड़ते हुए हनान पहुंचा और आनह्वेइ और हुपे से होकर शानतुङ लौट आया। दूसरी बार हनान, च्याङशी, पूर्वी चच्याङ, फूच्येन, क्वाङतुङ, क्वाङशी और हुनान से होकर हुपे पहुंचा और वहां से पूर्व की ओर आनह्वेइ और चच्याङ में जा पहुंचा। इसके बाद उसने ह्वाए नदी को पार करके हनान में प्रवेश किया और लोयाङ पर कब्जा कर लिया। अन्त में उसने थुङक्वान दर्रे को पार करते हुए शाही राजधानी छाङआन पर कब्जा कर लिया। ह्वाङ छाओ सम्राट छी के नाम से छाङआन में गद्दी पर बैठ गया। आन्तरिक विग्रह (सेनानायक चू वन ने थाङ वंश की फौज के सामने आत्मसमर्पण कर दिया) और शाथो कबीले के सरदार ली ख-युङ की फौज के हमलों से मजबूर होकर ह्वाङ छाओ को छाङआन छोड़ना पड़ा और वह हनान से होकर शानतुङ लौट गया, जहां पराजय का सामना करने के कारण उसने आत्महत्या कर ली। ह्वाङ छाओ द्वारा दस वर्ष तक चलाया गया युद्ध चीन के इतिहास में एक अत्यन्त प्रसिद्ध किसान युद्ध था। चीनी राजवंशों के इतिहासकारों ने लिखा है कि "जो लोग भारी करों और तरह-तरह की वसूली से पीड़ित थे, वे सभी उसके चारों ओर गोलबन्द हो गए"। चूंकि वह केवल सरल रूप से घुमन्तू युद्ध ही चलाता रहा और उसने अपेक्षाकृत दृढ़ आधार-क्षेत्र स्थापित नहीं किए, इसलिए उसकी फौज "घुमन्तू विद्रोही दल" कहलाती थी।

[४] ली छ्वाङ, जो शेनशी प्रान्त के मीचि नामक स्थान के निवासी राजा छ्वाङ (निडर राजा) ली चि-छङ का संक्षिप्त नाम था, मिङ वंश के अन्त में एक किसान विद्रोह का नेता था। १६२८ ईसवी में, यानी मिङ वंश के सम्राट स चुङ के शासन-काल के छुङ्चन-संवत के प्रथम वर्ष में, उत्तरी शेनशी के किसानों ने विद्रोह छेड़ दिया। ली उस विद्रोही दस्ते में शामिल हो गया जो काओ इङ-श्याङ के नेतृत्व में था। उसने हनान और आनह्वेइ में तथा फिर शेनशी में मुहिमें चलाईं। १६३६ में काओ की मृत्यु होने के बाद, ली ने उसका पद सम्भाल लिया और राजा छ्वाङ की उपाधि धारण कर ली। जन-समुदाय में उसका मुख्य नारा था, "राजा छ्वाङ का साथ दो, गल्ला-टैक्स मत दो।" अपने सैनिकों में अनुशासन कायम रखने के लिए उसने यह नारा दिया था, "किसी की हत्या का मतलब होगा मेरे बाप की हत्या, किसी के साथ बलात्कार का अर्थ होगा मेरी मां के साथ बलात्कार।" इस तरह उसने आम जनता का समर्थन प्राप्त कर लिया और उसका आन्दोलन किसान विद्रोहों की मुख्य धारा बनकर समूचे देश में फैल गया। लेकिन उसने भी अपेक्षाकृत दृढ़ आधार-क्षेत्र कायम नहीं किए और जगह-जगह घूमता रहा। राजा छ्वाङ की उपाधि धारण कर लेने के बाद वह अपने दस्ते को सछ्वान प्रान्त में ले गया और वहां से लड़ते हुए दक्षिणी शेनशी लौट आया।

इसके बाद उसने हुपे और हनान में मुहिमें चलाईं और हुपे प्रान्त के श्याङयाङ पर कब्जा कर लिया। फिर हनान से होकर शेनशी प्रान्त में शीआन पर कब्जा कर लिया। अन्त में १६४४ ईसवी में उसने शानशी से होकर पेकिङ पर अधिकार कर लिया। कुछ ही दिन बाद उसे मिङ वंश के एक सेनानायक ऊ सान-क्वेइ से पराजित होना पड़ा, जिसने ली छ्वाङ पर संयुक्त रूप से हमला करने के लिए छिङ हमलावरों के साथ सांठगांठ की थी।

एक चिनगारी सारे जंगल में आग लगा सकती है*

५ जनवरी १९३०

हमारी पार्टी के कुछ कामरेड अब भी यह नहीं जानते कि वर्तमान परिस्थिति का किस प्रकार सही मूल्यांकन किया जाए और इसके साथ ही किस तरह सही कदम उठाए जाएं। यद्यपि उन्हें यह विश्वास है कि क्रान्तिकारी उभार आना अवश्यम्भावी है, फिर भी उन्हें यह भरोसा नहीं कि वह शीघ्र ही आने वाला है। इसलिए वे च्याङशी पर अधिकार करने की योजना अस्वीकार करते हैं और इसी पक्ष में हैं कि फ़ूच्येन, क्वाङतुङ और च्याङशी के मिलन-स्थल पर स्थित तीन क्षेत्रों में चलती-फिरती छापामार कार्यवाही ही की जाए; साथ ही छापामार इलाकों में लाल राजनीतिक सत्ता कायम करने के बारे में उनकी कोई गम्भीर धारणा नहीं है, इसलिए इस बारे में भी उनकी कोई गम्भीर धारणा नहीं है कि ऐसी लाल राजनीतिक सत्ता को सुदृढ़ बनाकर और उसका प्रसार करके राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी उभार को तेज किया जाए। मालूम होता है, वे यह समझते हैं कि क्रान्तिकारी उभार अब भी बहुत दूर है इसलिए कठोर परि-

* यह पत्र कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा पार्टी में उस समय मौजूद कुछ निराशा-वादी विचारों की आलोचना करने के लिए लिखा गया था।

श्रम द्वारा अपनी राजनीतिक सत्ता का निर्माण करना व्यर्थ होगा। इसके बदले वे चाहते हैं कि चलती-फिरती छापामार कार्यवाही के आसान तरीके द्वारा हमारा राजनीतिक प्रभाव फैलाया जाए और जब सारे देश की आम जनता को पूरी तरह या करीब-करीब पूरी तरह हमारे पक्ष में कर लिया जाए, तो राष्ट्रव्यापी सशस्त्र विद्रोह कर दिया जाए, जो लाल सेना के शरीक होने पर एक राष्ट्रव्यापी महान क्रान्ति बन जाएगा। उनका यह सिद्धान्त कि राष्ट्रीय पैमाने पर और सभी इलाकों में पहले आम जनता को अपने पक्ष में कर लिया जाए और बाद में राजनीतिक सत्ता कायम की जाए, चीनी क्रान्ति की वास्तविक स्थिति से मेल नहीं खाता। चीन एक अर्ध-उपनिवेश है जिसे पाने के लिए कई साम्राज्यवादी ताकतें होड़ कर रही हैं — इस तथ्य को न समझना ही उनके इस सिद्धान्त की जड़ है। यदि यह बात साफ समझ में आ जाए, तो पहले यह बात भी समझ में आ सकती है कि सारी दुनिया में अकेले चीन के अन्दर ही शासक वर्गों में एक दीर्घकालीन और उलझनभरे युद्ध जैसी अनोखी चीज क्यों मौजूद है, दिन-पर-दिन यह युद्ध और भी भीषण और विस्तृत क्यों होता जाता है और कभी कोई एकीकृत राजनीतिक सत्ता क्यों पैदा नहीं हुई। दूसरे, उन्हें यह बात समझ में आ सकती है कि किसान समस्या कितनी महत्वपूर्ण है, और इस प्रकार यह बात भी समझ में आ सकती है कि आज राष्ट्रव्यापी पैमाने पर देहातों में विद्रोह क्यों फूट पड़े हैं। तीसरे, उन्हें यह बात समझ में आ सकती है कि मजदूर-किसानों की जनवादी राजनीतिक सत्ता का नारा क्यों सही है। चौथे, उन्हें यह बात समझ में आ सकती है कि पहली अनोखी चीज — यानी सारी दुनिया में अकेले चीन के

अन्दर ही शासक वर्गों में एक दीर्घकालीन और उलझनभरा युद्ध जारी होना — के अनुकूल और इसी से पैदा होने वाली दूसरी अनोखी चीज यह है कि लाल सेना और छापामार दस्ते मौजूद हैं और बढ़ रहे हैं, और इनके साथ ही साथ श्वेत राजनीतिक सत्ता के घेरे के बीच छोटे लाल इलाके कायम हुए हैं और बढ़ रहे हैं (ऐसी अनोखी चीज आज चीन को छोड़कर और कहीं नहीं दिखाई देती)। पांचवें, उन्हें यह बात समझ में आ सकती है कि लाल सेना, छापामार दस्तों और लाल इलाकों का निर्माण और विकास अर्ध-औपनिवेशिक चीन में सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में चलने वाले किसान संघर्ष का सबसे ऊंचा रूप है, एक अर्ध-उपनिवेश में किसान संघर्ष की बढ़ती का लाजमी नतीजा है और निस्सन्देह सारे देश में क्रान्तिकारी उभार को तेज करने का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। और छठे, उन्हें यह बात भी समझ में आ सकती है कि राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी उभार को तेज करने का काम विशुद्ध चलती-फिरती छापामार कार्यवाही की नीति से पूरा नहीं हो सकता। उधर चू तेह और माओ त्सेतुङ ने और फ़ाङ च-मिन[1] ने भी जिस तरह की नीति अपनाई है, वह निस्सन्देह एक सही नीति है — अर्थात आधार-क्षेत्र कायम करने की नीति, योजना के अनुसार राजनीतिक सत्ता स्थापित करने की नीति, भूमि-क्रान्ति को गहराई से चलाने की नीति, व्यापक तरीके से पहले श्याङ के लाल रक्षक दल, फिर जिले के लाल रक्षक दल, फिर काउन्टी के लाल रक्षक दल, फिर स्थानीय लाल सेना और तब नियमित लाल सेना का विकास करके जनता की सशस्त्र सैन्य-शक्तियों का विस्तार करने की नीति, और राजनीतिक सत्ता का प्रसार करने के लिए लहरों की तरह आगे बढ़ने की नीति, वगैरह-

वगैरह। सिर्फ इसी तरह हम समूचे देश की क्रान्तिकारी जनता का विश्वास प्राप्त कर सकते हैं, जैसे कि सोवियत संघ ने समूची दुनिया में प्राप्त किया है। सिर्फ इसी तरह हम प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों के लिए घोर कठिनाइयां पैदा कर सकते हैं, उनकी बुनियाद को हिला सकते हैं और उनके आन्तरिक विघटन में शीघ्रता ला सकते हैं। और सिर्फ इसी तरह हम सही मायने में ऐसी लाल सेना का निर्माण कर सकते हैं जो आने वाली महान क्रान्ति में हमारा मुख्य हथियार बन सके। संक्षेप में यह कि सिर्फ इसी तरह क्रान्तिकारी उभार को तेज करना सम्भव है।

क्रान्ति के प्रति उतावलेपन के शिकार कामरेड क्रान्ति की आत्मगत शक्तियों[१] को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर आंकते हैं और प्रतिक्रान्ति की शक्तियों को कम करके आंकते हैं। इस तरह के मूल्यांकन का मुख्य कारण मनोगतवाद है। निस्सन्देह, इसका अन्त मुहिमजोई में ही होगा। दूसरी ओर, अगर क्रान्ति की आत्मगत शक्तियों को कम करके आंका जाए और प्रतिक्रान्ति की शक्तियों को बढ़ा-चढ़ा कर आंका जाए, तो यह मूल्यांकन भी अनुचित होगा और लाजमी तौर से इससे एक दूसरे ढंग का बुरा नतीजा निकलेगा। इसलिए चीन की राजनीतिक स्थिति को परखने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं को समझना जरूरी है :

१. यद्यपि चीन में क्रान्ति की आत्मगत शक्तियां अभी कमजोर हैं, लेकिन उसी तरह चीन की पिछड़ी और नाजुक सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था पर टिकी प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों की सभी संस्थाएं (राजसत्ता के संगठन, सशस्त्र सेनाएं, राजनीतिक पार्टियां आदि) भी कमजोर हैं। इससे इस बात की व्याख्या करने में मदद

मिलती है कि पश्चिमी योरप के देशों में अभी क्रान्ति क्यों नहीं फूट सकती, जहां यद्यपि क्रान्ति की आत्मगत शक्तियां शायद चीन से ज्यादा मजबूत हैं लेकिन प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों की शक्तियां हमारे देश से अनेक गुना मजबूत हैं। चीन में अभी क्रान्ति की आत्मगत शक्तियां कमजोर हैं, लेकिन इसके साथ ही चूंकि प्रतिक्रान्ति की शक्तियां भी अपेक्षाकृत कमजोर हैं, इसलिए निश्चय ही पश्चिमी योरप की अपेक्षा चीन में क्रान्ति ज्यादा तेजी से उभार की तरफ बढ़ेगी।

२. १९२७ में क्रान्ति की पराजय के बाद क्रान्ति की आत्मगत शक्तियां सचमुच बहुत कमजोर हो गई हैं। जो शक्ति बच गई है, वह बहुत छोटी है और ऐसे कामरेड जो केवल ऊपरी चीजें देखकर ही फैसला कर लेते हैं स्वभावत: निराश हो जाते हैं। लेकिन अगर अन्तर्वस्तु को देखा जाए, तो नतीजा कुछ और ही निकलता है। यहां यह पुरानी चीनी कहावत लागू होती है : "एक चिनगारी सारे जंगल में आग लगा सकती है।" दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि हमारी शक्ति अभी बहुत छोटी है, लेकिन वह बहुत तेजी से बढ़ेगी। चीन में जैसी स्थिति आज मौजूद है, उसमें इस शक्ति का बढ़ना सम्भव ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है। यह बात ३० मई के आन्दोलन और उसके बाद के महान क्रान्तिकारी आन्दोलन से पूरी तरह साबित हो गई है। जब हम किसी चीज का अध्ययन करें, तो हमें उसकी अन्तर्वस्तु को परखना चाहिए, उसके बाहरी रूप को अन्तर्वस्तु की देहरी तक पहुंचने के लिए मार्गदर्शक भर मानना चाहिए, तथा एक बार देहरी पार कर लेने पर हमें उस चीज की अन्तर्वस्तु को मजबूती से पकड़ लेना चाहिए ; विश्लेषण

की यही पद्धति एक विश्वसनीय और वैज्ञानिक पद्धति है।

३. इसी तरह प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों को आंकने में हमें केवल उनके बाहरी रूप को ही नहीं देखना चाहिए, बल्कि उनकी अन्तर्वस्तु का भी अध्ययन करना चाहिए। हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में हमारी स्वाधीन शासन-व्यवस्था के प्रारम्भिक दिनों में कुछ कामरेड हुनान प्रान्तीय कमेटी के गलत मूल्यांकन पर सचमुच विश्वास करते थे। वे समझते थे कि हमारा वर्ग-शत्रु चुटकी बजाते ही उड़ जाएगा। हुनान के शासक लू ती-फिङ[३] की शक्तियों को आंकते हुए हुनान प्रान्तीय कमेटी ने उस समय (मई से जून १९२८ तक) जिन शब्दों का प्रयोग किया था – "पैर उखड़े हुए" और "दहशत खाया हुआ" – वे आज तक भी मजाक का विषय बने हुए हैं। इस तरह के मूल्यांकन का नतीजा राजनीतिक मुहिमजोई ही हो सकता था। लेकिन नवम्बर १९२८ से लेकर फरवरी १९२९ तक के चार महीनों में (च्याङ काई-शेक और क्वाङशी के युद्ध-सरदारों[४] में युद्ध छिड़ने से पहले) दुश्मन की "संयुक्त दमन करने" की तीसरी मुहिम[५] जब चिङकाङशान पहाड़ों की तरफ बढ़ती आ रही थी, तब कुछ कामरेडों ने यह सवाल उठाया था, "हम लाल झण्डे को कब तक फहराते रख सकते हैं?" असलियत यह थी कि उस समय तक चीन में बरतानिया, अमरीका और जापान के बीच बिलकुल खुले रूप में संघर्ष होने लगा था और च्याङ काई-शेक, क्वाङशी गुट और फङ य्वी-श्याङ के बीच उलझनभरी लड़ाई शुरू होने की परिस्थिति पैदा होती जा रही थी। इसलिए दरअसल यही वह समय था जब प्रतिक्रान्तिकारी ज्वार कम होने लगी थी और क्रान्तिकारी ज्वार फिर से उभरने लगी थी। लेकिन ठीक ऐसे

ही समय न सिर्फ लाल सेना और स्थानीय पार्टी-संगठनों में निराशावादी विचार मौजूद थे, बल्कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी भी सतही परिस्थितियों से कमोबेश विचलित हो उठी थी और उसके स्वर से निराशा झलकने लगी थी। उस समय पार्टी ने अपने विश्लेषण में जो निराशा दिखलाई, उसका सबूत पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के फरवरी वाले पत्र[६] से मिलता है।

४. मौजूदा वस्तुगत परिस्थिति भी ऐसी है जो उन कामरेडों को आसानी से उलझन में डाल सकती है जो आज की हालत की अन्तर्वस्तु को न देखकर महज उसके बाहरी रूप को ही देखते हैं। खासकर लाल सेना में काम करने वाले हमारे कुछ कामरेड, लड़ाई में हारने पर, सब तरफ से घिर जाने पर, या शत्रु की ज्यादा ताकतवर सेना द्वारा पीछा किए जाने पर, अक्सर अनजाने में ही उन हालतों को सर्वव्यापी और बढ़ा-चढ़ा रूप दे बैठते हैं जो दरअसल क्षणिक, विशेष और स्थानीय होती हैं, मानो चीन और तमाम दुनिया की समूची परिस्थिति आशाप्रद न हो और क्रान्ति की विजय की सम्भावना धुंधली और दूर हो। वे चीजों को देखते समय वाह्य रूप को पकड़े रहते हैं और अन्तर्वस्तु पर ध्यान नहीं देते। इसका कारण यह है कि उन्होंने समूची परिस्थिति की अन्तर्वस्तु का वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं किया। अगर कोई पूछे कि चीन में शीघ्र क्रान्तिकारी उभार आएगा या नहीं, तो हम निश्चित जवाब तभी दे सकेंगे जब हम विस्तृत रूप से इस बात की जांच-पड़ताल कर लें कि क्रान्तिकारी उभार लाने वाले अन्तरविरोध सचमुच बढ़ रहे हैं या नहीं। चूंकि अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर साम्राज्यवादी देशों के बीच, साम्राज्यवादी देशों और उपनिवेशों के बीच तथा साम्राज्यवादियों और

उनके अपने ही देश के सर्वहारा वर्ग के बीच अन्तरविरोध बढ़ रहे हैं, इसलिए साम्राज्यवादी इस बात की और भी जरूरत महसूस करते हैं कि वे चीन पर अधिकार करने के लिए मैदान में उतर आएं। चीन पर अधिकार करने के लिए साम्राज्यवादियों का संघर्ष जैसे-जैसे तीव्र होता जाता है, वैसे-वैसे साम्राज्यवादी ताकतों और समूचे चीनी राष्ट्र का अन्तरविरोध और स्वयं साम्राज्यवादियों के आपसी अन्तरविरोध, दोनों ही चीन की धरती में साथ-साथ बढ़ते जाते हैं। इस तरह चीन के प्रतिक्रियावादी शासकों के विभिन्न गुटों के बीच ऐसा उलझनभरा युद्ध आरम्भ हो जाता है जो दिन-पर-दिन फैलता और भीषण होता रहता है, और उनके आपसी अन्तरविरोध दिन-पर-दिन बढ़ते जाते हैं। प्रतिक्रियावादी शासकों के इन विभिन्न गुटों के बीच के अन्तरविरोधों – युद्ध-सरदारों की उलझनभरी लड़ाइयों – के परिणामस्वरूप टैक्सों में बढ़ोतरी होती जाती है। इस तरह टैक्स देने वाले आम लोगों और प्रतिक्रियावादी शासकों के बीच का अन्तरविरोध दिन-पर-दिन तीव्र होता जाता है। साम्राज्य-वाद और चीन के राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों के बीच अन्तरविरोध होने की वजह से चीन के राष्ट्रीय उद्योग-धन्धे साम्राज्यवाद से रियायतें हासिल नहीं कर पाते। इससे चीनी पूंजीपति वर्ग और चीनी मजदूर वर्ग के बीच का अन्तरविरोध बढ़ जाता है; चीनी पूंजीपति मजदूरों का घोर शोषण करके अपना रास्ता निकालने की कोशिश करते हैं और चीनी मजदूर इसके विरोध में उठ खड़े होते हैं। चीन में साम्राज्यवाद द्वारा व्यापारिक आक्रमण किए जाने, चीन के सौदागर पूंजीपतियों द्वारा लूट-खसोट किए जाने, सरकार द्वारा अधिक कर लगाए जाने आदि की वजह से जमींदार वर्ग और किसानों के बीच

का अन्तरविरोध और अधिक बढ़ जाता है, अर्थात लगान और सूदखोरी द्वारा किया जाने वाला शोषण और अधिक बढ़ जाता है तथा किसानों में जमींदारों के प्रति नफरत और अधिक बढ़ जाती है। विदेशी माल का दबाव पड़ने, आम मजदूर-किसानों की क्रय-शक्ति में सख्त कमी होने और सरकारी टैक्स में बढ़ोतरी होने का नतीजा यह होता है कि चीन में बने माल के व्यापारी और स्वतंत्र उत्पादक दिन-पर-दिन दिवालिया बनते जाते हैं। चूंकि प्रतिक्रिया-वादी सरकार रसद और पैसे की कमी होते हुए भी अपनी फौज को बेहिसाब बढ़ाती जाती है तथा इस प्रकार वह दिन-पर-दिन युद्ध-विस्तार करती जाती है, इसलिए आम सैनिकों को लगातार तंगी की हालत का सामना करना पड़ता है। सरकारी टैक्स बढ़ाए जाने, जमींदारों द्वारा लगान और सूद में लगातार बढ़ोतरी किए जाने, और आए दिन युद्ध की विभीषिका के फैलते जाने से सारे देश में अकाल और डकैतियों का बोलबाला हो गया है तथा आम किसानों और शहरी गरीबों की हालत इतनी ज्यादा गिर गई है कि वे मुश्किल से जिन्दा रह सकते हैं। चूंकि स्कूलों के पास अपना काम जारी रखने के लिए पैसे नहीं होते, इसलिए बहुत से विद्यार्थियों को चिन्ता रहती है कि कहीं उनकी पढ़ाई बन्द न हो जाए; चूंकि उत्पादन पिछड़ा हुआ है, इसलिए बहुत से स्नातकों को काम मिलने की आशा नहीं होती। यदि हम एक बार इन सभी अन्तरविरोधों को समझ लें, तो पता चल जाएगा कि चीन की हालत कितनी नाजुक और डांवांडोल है और उसकी वर्तमान परिस्थिति कितनी उथल-पुथल वाली है। इस बात का भी पता चल जाएगा कि साम्राज्यवादियों, युद्ध-सरदारों और जमींदारों के खिलाफ क्रान्तिकारी उभार अवश्य

आकर रहेगा और वह भी बहुत जल्द ही आएगा। सारे चीन में सूखे ईंधन का ढेर लगा हुआ है जो शीघ्र ही भड़क उठेगा। "एक चिनगारी सारे जंगल में आग लगा सकती है" – यह कहावत बहुत अच्छी तरह बता देती है कि वर्तमान परिस्थिति किस दिशा में विकसित होगी। जगह-जगह मजदूरों की हड़तालों, किसानों के विद्रोहों, आम सैनिकों की बगावतों और विद्यार्थियों की हड़तालों के विकास पर एक नजर डालने से ही मालूम हो जाता है कि निस्सन्देह "एक चिनगारी" से "सारे जंगल में आग" लगने में ज्यादा देर नहीं है।

ऊपर की बातों का सारांश ५ अप्रैल १९२९ को पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के नाम मोर्चा-कमेटी द्वारा भेजे गए पत्र में दिया गया था। उसका एक हिस्सा इस प्रकार है :

केन्द्रीय कमेटी के [९ फरवरी १९२९ के] पत्र में वस्तुगत स्थिति और हमारी आत्मगत शक्तियों का बहुत ही निराशापूर्ण लेखा-जोखा दिया गया है। क्वोमिन्ताङ ने "दमन करने" की जो तीन मुहिमें चिङकाङशान पहाड़ों के खिलाफ चलाई थीं, वे प्रतिक्रान्तिकारी ज्वार के उभार का उच्चतम चिन्ह थीं। लेकिन वह ज्वार वहीं रुक गई और उसके बाद से प्रतिक्रान्तिकारी ज्वार धीरे-धीरे घटती गई जबकि क्रान्तिकारी ज्वार धीरे-धीरे बढ़ती गई। यद्यपि हमारी पार्टी की जुझारू क्षमता और संगठनात्मक शक्ति उस हद तक घट गई है जिस हद तक कि केन्द्रीय कमेटी ने उसका वर्णन किया है, फिर भी प्रतिक्रान्तिकारी ज्वार के क्रमशः घटने के साथ-साथ हम जल्दी ही उन्हें बहाल कर

लेंगे और पार्टी-कार्यकर्ताओं की उदासीनता भी शीघ्र ही दूर हो जाएगी। आम जनता अवश्य ही हमारी तरफ हो जाएगी। क्वोमिन्ताङ की जन-संहार की नीति,[७] जैसा कि एक कहावत है, "मछलियों को गहरे पानी में भगा देने" का काम करती है, और सुधारवाद को भी फिर कभी जन-समर्थन प्राप्त नहीं हो पाता। यह बात निश्चित है कि क्वोमिन्ताङ के बारे में जनता के भ्रम बहुत जल्दी दूर हो जाएंगे। तब जो हालत पैदा होगी, उसमें जनता को अपने पक्ष में करने में कोई भी पार्टी कम्युनिस्ट पार्टी का मुकाबला नहीं कर सकेगी। हमारी पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस[८] ने जो राजनीतिक कार्यदिशा और संगठनात्मक कार्यदिशा निर्धारित की हैं, वे सही हैं ; और वे इस प्रकार हैं : मौजूदा मंजिल में क्रान्ति जनवादी है न कि समाजवादी, पार्टी का तात्कालिक कार्य [यहां "बड़े शहरों में" जोड़ दिया जाना चाहिए था] है आम जनता को अपने पक्ष में करना, न कि तुरन्त विद्रोह कर देना। लेकिन क्रान्ति शीघ्रता से फैलेगी और सशस्त्र विद्रोह के लिए प्रचार करते समय और उसकी तैयारी करते समय हमें एक सकारात्मक रुख अपनाना चाहिए। घोर उथल-पुथल वाली वर्तमान परिस्थिति में सकारात्मक नारे देकर और सकारात्मक रुख अपनाकर ही हम जनता का नेतृत्व कर सकते हैं। यह भी निश्चित है कि ऐसा सकारात्मक रुख अपनाकर ही पार्टी अपनी जुझारू क्षमता फिर से प्राप्त कर सकती है।... क्रान्ति की विजय की एकमात्र कुंजी सर्वहारा वर्ग का नेतृत्व है। पार्टी के लिए सर्वहारा-आधार बनाना और केन्द्रीय क्षेत्रों के उद्योग-धन्धों में पार्टी-शाखाएं कायम करना इस समय पार्टी का महत्वपूर्ण संगठना-

त्मक कार्य है ; लेकिन साथ ही, शहरों में संघर्ष की मदद करने के लिए और क्रान्तिकारी उभार को तेज करने के लिए मुख्य शर्तें ये हैं : देहातों में संघर्षों का विकास करना, छोटे इलाकों में लाल राजनीतिक सत्ता की स्थापना करना, और लाल सेना का निर्माण और विस्तार करना। इसलिए शहरों में संघर्ष को तिलांजलि देना गलत है, लेकिन हमारे विचार से किसी पार्टी-सदस्य का इस बात से डरना भी गलत है कि किसानों की ताकत कहीं मजदूरों से आगे न बढ़ जाए और इसलिए क्रान्ति के लिए हानिकर न साबित हो। कारण, अर्ध-औपनिवेशिक चीन में क्रान्ति अनिवार्य रूप से सिर्फ तभी असफल होती है जब किसान संघर्ष को मजदूर वर्ग का नेतृत्व नहीं मिलता, लेकिन किसान संघर्ष के मजदूरों की शक्ति से आगे बढ़ जाने से क्रान्ति को कभी नुकसान नहीं पहुंचता।

लाल सेना की फौजी कार्यवाही सम्बन्धी कार्यनीति के सवाल का भी उक्त पत्र में निम्नलिखित उत्तर दिया गया है :

केन्द्रीय कमेटी हमें यह कहती है कि लाल सेना को बरकरार रखने और जनता को जागृत करने के लिए हम अपनी सैन्य-शक्ति को बहुत सी छोटी-छोटी टुकड़ियों में बांटकर देहातों में भेजें, तथा चू तेह और माओ त्सेतुङ सेना से अलग हो जाएं, जिससे कि मुख्य निशाना दुश्मन से छिपा रहे। यह एक अयथार्थवादी दृष्टिकोण है। १९२७ के जाड़ों में हमने यह योजना बनाई कि हम अपनी सेना को कम्पनियों या बटालियनों के रूप में देहातों में भेजें जो खुद कार्यवाही करें और छापामार कार्यनीति अपनाते हुए

जनता को जागृत करें ताकि वे खुद दुश्मन का निशाना न बनें ; हमने इसकी कई बार कोशिश भी की, लेकिन हर बार असफल रहे। इसके कारण ये हैं : (१) नियमित लाल सेना के अधिकांश सैनिक दूसरे क्षेत्रों से आए हैं और उनकी पृष्ठभूमि स्थानीय लाल रक्षक दलों से भिन्न है। (२) छोटी-छोटी टुकड़ियों में बांटने के परिणामस्वरूप नेतृत्व कमजोर पड़ जाता है और प्रतिकूल परिस्थितियों का मुकाबला करने की क्षमता नहीं रहती, जिससे आसानी से पराजय हो जाती है। (३) छोटी टुकड़ियों को एक-एक करके नष्ट कर देना दुश्मन के लिए आसान होगा। (४) परिस्थिति जितनी ही प्रतिकूल हो, उतना ही यह आवश्यक हो जाता है कि सैन्य-शक्ति केन्द्रित हो और नेतृत्व जमकर संघर्ष चलाए, तभी दुश्मन के खिलाफ अन्दरूनी एकता कायम की जा सकती है। सिर्फ अनुकूल परिस्थितियों में ही छापामार कार्यवाही के लिए सैन्य-शक्ति विभक्त करने की सलाह दी जा सकती है और सिर्फ तभी नेताओं को आम सैनिकों के साथ हमेशा रहने की जरूरत नहीं होती जैसा कि उन्हें इसके विपरीत स्थिति में करना पड़ता है।

उपरोक्त अंश का दोष यह है कि सैन्य-शक्ति के विकेन्द्रीकरण के खिलाफ जो दलीलें दी गई हैं, वे सब नकारात्मक हैं। यह कतई नाकाफी है। अपनी सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करने का सकारात्मक कारण यह है कि केन्द्रित होकर ही हम अपेक्षाकृत बड़े शत्रु-दल को नष्ट कर सकते हैं और नगरों व कस्बों पर अधिकार कर सकते हैं। अपेक्षाकृत बड़े शत्रु-दल को नष्ट करके ही और नगरों व कस्बों पर

अधिकार करके ही हम जन-समुदाय को बड़े पैमाने पर जागृत कर सकते हैं और एक दूसरे से जुड़ी हुई कई काउन्टियों में एकीकृत राजनीतिक सत्ता कायम कर सकते हैं। इस तरीके से ही हम पास-पड़ोस और दूर के जनमत पर अपना असर पैदा कर सकते हैं (जिसे हम "अपना राजनीतिक प्रभाव फैलाना" कहते हैं) और क्रान्तिकारी उभार को तेज करने में कारगर रूप से योग दे सकते हैं। मिसाल के लिए, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में पिछले से पिछले साल और पश्चिमी फ़ूच्येन में पिछले साल हमने जो राजनीतिक सत्ता कायम की थी,[६] वह सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करने की नीति का ही परिणाम था। यह एक ग्राम उसूल है। लेकिन क्या ऐसे अवसर नहीं आ सकते जब सैन्य-शक्ति को विभक्त करना पड़े? हां, ऐसे अवसर आ सकते हैं। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के नाम मोर्चा-कमेटी द्वारा भेजे गए पत्र में लाल सेना की छापामार कार्यनीति की चर्चा की गई है; उसमें छोटे दायरे के अन्दर सैन्य-शक्ति को बिखेरने की बात भी शामिल है :

पिछले तीन वर्षों के संघर्ष के परिणामस्वरूप हमने जो कार्यनीति निकाली है, वह उन तमाम कार्यनीतियों से भिन्न है जो चीन में या विदेशों में, वर्तमान समय में या प्राचीन काल में आजमाई गई हैं। हमारी कार्यनीति से ग्राम जनता को अधिकाधिक व्यापक पैमाने पर संघर्ष में जूझने के लिए जागृत किया जा सकता है, तथा दुश्मन चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, हमसे पार नहीं पा सकता। हमारी कार्यनीति छापामार कार्यनीति ही है। उसकी मुख्य बातें ये हैं :

"जन-समुदाय को जागृत करने के लिए उसके बीच अपनी सैन्य-शक्ति को बिखेर दो और दुश्मन से निपटने के लिए अपनी सैन्य-शक्ति को केन्द्रित कर दो।"

"जब दुश्मन आगे बढ़ता है, तो हम पीछे हट जाते हैं; जब दुश्मन पड़ाव डालता है, तो हम उसे हैरान-परेशान करते हैं; जब दुश्मन थक जाता है, तो हम उस पर धावा बोल देते हैं; जब दुश्मन पीछे हटता है, तो हम उसका पीछा करते हैं।"

"स्थाई आधार-क्षेत्रों[७] को बढ़ाने के लिए लहरों की तरह आगे बढ़ने की नीति अपनाओ; जब ताकतवर दुश्मन पीछा कर रहा हो, तो भंवर की तरह चक्कर लगाने की नीति अपनाओ।"

"कम से कम समय में ज्यादा से ज्यादा ग्राम जनता को अच्छे से अच्छे उपायों द्वारा जागृत करो।"

यह कार्यनीति जाल फेंकने की तरह है। हमें इस योग्य होना चाहिए कि किसी भी क्षण जाल दूर तक फेंक सकें और उसे किसी भी क्षण फिर समेट सकें। ग्राम जनता को अपने पक्ष में करने के लिए हम यह जाल दूर तक फेंकते हैं और दुश्मन से निपटने के लिए उसे समेट लेते हैं। पिछले तीन वर्ष में हमने इसी तरह की कार्यनीति अपनाई है।

यहां "जाल दूर तक फेंकने" का मतलब है छोटे दायरे में अपनी सैन्य-शक्ति को बिखेरना। मिसाल के लिए, जब हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में हमने युङशिन काउन्टी-केन्द्र पर पहली बार अधिकार किया, तो हमने युङशिन की सीमाओं के अन्दर २९वीं और ३१वीं

रेजीमेन्टों को बांट दिया। फिर जब हमने युङशिन काउन्टी-केन्द्र पर तीसरी बार अधिकार किया, तो हमने २८वीं रेजीमेन्ट को आनफ़ू की सीमा पर, २९वीं रेजीमेन्ट को ल्येनह्वा में और ३१वीं रेजीमेन्ट को चीआन काउन्टी की सीमा पर भेजकर सैन्य-शक्ति को एक बार फिर विभक्त कर दिया। उसके बाद भी हमने पिछले साल अप्रैल और मई के महीनों में अपनी सैन्य-शक्ति दक्षिणी च्याङशी की काउन्टियों में और जुलाई में पश्चिमी फ़ूच्येन की काउन्टियों में विभक्त कर दी थी। जहां तक किसी बड़े दायरे में अपनी सैन्य-शक्ति बिखेरने का सवाल है, यह काम केवल दो स्थितियों के तैयार होने पर ही सम्भव हो सकता है: जब परिस्थितियां अपेक्षाकृत अनुकूल हों और नेतृत्व करने वाले संगठन अपेक्षाकृत मजबूत हों। कारण, सैन्य-शक्ति को विभक्त करने का उद्देश्य यह है कि हम इस बात के और भी योग्य बनें कि हम आम जनता को अपने पक्ष में कर सकें, भूमि-क्रान्ति में गहराई ला सकें और राजनीतिक सत्ता कायम कर सकें तथा लाल सेना व स्थानीय सैन्य-दल को बढ़ा सकें। जब यह उद्देश्य सफल न होता दीखे, या उल्टे सैन्य-शक्ति को विभक्त करने से लाल सेना की हार हो जाए और उसकी शक्ति कमजोर हो जाए, जैसा कि दो वर्ष पूर्व अगस्त में छनचओ पर हमला करने के लिए हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में सैन्य-शक्ति को विभक्त करते समय हुआ था, तो सैन्य-शक्ति को विभक्त न करना ही अच्छा है। यदि ऊपर कही हुई दोनों स्थितियां मौजूद हों, तो हमें निस्सन्देह अपनी सैन्य-शक्ति को विभक्त कर देना चाहिए, क्योंकि उस हालत में केन्द्रित रहने के मुकाबले विभक्त हो जाना ही ज्यादा लाभकारी होता है।

पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का फरवरी का पत्र सही भावना से नहीं लिखा गया था और चौथी फौजी कोर के कुछ पार्टी-कामरेडों पर उसका बुरा असर पड़ा। केन्द्रीय कमेटी ने उस समय अपने एक गश्ती पत्र में यह भी लिखा था कि हो सकता है च्याङ काई-शेक और क्वाङशी के युद्ध-सरदारों के बीच लड़ाई न हो। लेकिन उसके बाद से केन्द्रीय कमेटी के मूल्यांकन और उसके निर्देश आम तौर से सही रहे हैं। अनुचित मूल्यांकन वाले गश्ती पत्र को दुरुस्त करते हुए एक दूसरा गश्ती पत्र भेजा जा चुका है। यद्यपि उसने लाल सेना के नाम लिखे गए अपने पत्र के सम्बन्ध में कोई भूल-सुधार नहीं किया, तो भी उसके बाद वाले निर्देश उतने निराशापूर्ण नहीं हैं और लाल सेना की कार्यवाहियों के बारे में केन्द्रीय कमेटी के विचार हमारे विचारों से मिलते हैं। फिर भी कुछ कामरेडों पर उस पत्र का जो बुरा असर पड़ा था वह अभी जारी है। इसलिए मेरा विचार है कि इस सम्बन्ध में थोड़ा स्पष्टीकरण करना अब भी जरूरी है।

पिछले साल अप्रैल में मोर्चा-कमेटी ने केन्द्रीय कमेटी के सामने यह योजना भी रखी थी कि सालभर के अन्दर च्याङशी प्रान्त पर अधिकार कर लिया जाए, और इस सम्बन्ध में बाद में य्वीतू में एक निर्णय भी कर लिया गया। केन्द्रीय कमेटी के नाम पत्र में उस समय ये तर्क पेश किए गए:

> च्योच्याङ के पास च्याङ काई-शेक और क्वाङशी के युद्ध-सरदारों की सेनाएं एक दूसरे के निकट आती जा रही हैं और शीघ्र ही भारी लड़ाई होगी। आम जनता का संघर्ष फिर शुरू

होने से और साथ ही प्रतिक्रियावादी शासकों के आपसी अन्तर-विरोधों के बढ़ जाने से एक क्रान्तिकारी उभार के शीघ्र ही आने की सम्भावना पैदा हो गई है। ऐसी परिस्थिति में हमें अपने काम का कैसे प्रबन्ध करना चाहिए, इसके लिए हम यह महसूस करते हैं कि जहां तक दक्षिण के प्रान्तों का सवाल है, क्वाङतुङ और हुनान में दलाल-पूंजीपतियों और जमींदारों की सेनाएं बहुत शक्तिशाली हैं, तथा हुनान में अपनी मुहिमजोई की गलतियों की वजह से पार्टी अपने भीतर और बाहर करीब-करीब अपने समस्त जन-समुदाय से हाथ धो चुकी है। लेकिन फ़ूच्येन, च्याङशी और चच्याङ इन तीन प्रान्तों में हालत कुछ और है। पहले तो सैनिक दृष्टि से दुश्मन वहां सबसे अधिक कमजोर है। चच्याङ में केवल एक छोटी सी प्रान्तीय सेना है जो च्याङ पो-छङ[११] के नेतृत्व में है। फ़ूच्येन में यद्यपि दुश्मन के पांच सैन्य-समुदाय हैं, जिनमें चौदह रेजीमेन्टें हैं, लेकिन क्वो फ़ङ-मिङ की ब्रिगेड पहले ही नष्ट की जा चुकी है; छन क्वो-ह्वेइ और लू शिङ-पाङ[१२] के अधीन सेनाएं डकैतों के दल हैं जिनकी युद्ध-क्षमता बहुत कम है; समुद्रतट पर मैरीन-सेना की जो दो ब्रिगेडें तैनात हैं, उन्होंने कभी लड़ाई देखी तक नहीं है, इसलिए निश्चय ही उनमें भी अधिक युद्ध-क्षमता नहीं हो सकती; चाङ चन[१३] ही थोड़ा बहुत लड़ सकता है, लेकिन फ़ूच्येन की प्रान्तीय कमेटी के विश्लेषण के अनुसार उसके नेतृत्व में भी थोड़ी बहुत युद्ध-क्षमता वाली केवल दो रेजीमेन्टें ही हैं। इसके अलावा फ़ूच्येन में इस समय भारी उथल-पुथल, गड़बड़ी और फूट का राज है। च्याङशी में चू फेइ-त[१४] और श्युङ श-ह्वेइ[१५]

की दो कमानों में कुल मिलाकर सोलह रेजीमेन्टें हैं। उनकी सैन्य-शक्ति फ़ूच्येन और चच्याङ दोनों से बढ़कर है, लेकिन हुनान के मुकाबले बहुत कम है। दूसरे, इन तीन प्रान्तों में मुहिम-जोई की अपेक्षाकृत कम गलतियां हुई हैं। चच्याङ की स्थिति के बारे में हमें साफ़-साफ़ मालूम नहीं है, लेकिन च्याङशी और फ़ूच्येन में पार्टी-संगठन का आधार और जन-आधार हुनान के मुकाबले बेहतर हैं। च्याङशी का ही उदाहरण लीजिए। उत्तरी च्याङशी में अब भी तआन, श्यूश्वेइ और थुङकू में हमारा कुछ आधार बना हुआ है; पश्चिमी च्याङशी के निङकाङ, युङशिन, ल्येनह्वा और स्वेइछ्वान में पार्टी और लाल रक्षक दलों की शक्ति अब भी मौजूद है; दक्षिणी च्याङशी में भविष्य और भी उज्ज्वल है, क्योंकि चीआन, युङफ़ङ और शिङक्वो जैसी काउन्टियों में लाल सेना की दूसरी और चौथी रेजीमेन्टों की शक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही है; इसके अलावा फ़ाङ च-मिन के नेतृत्व में चलने वाली लाल सेना को किसी भी तरह नष्ट नहीं किया जा सका है। इन सब बातों के कारण हम इस स्थिति में पहुंच गए हैं कि नानछाङ को घेर लें। हम केन्द्रीय कमेटी से सिफारिश करते हैं कि क्वोमिन्ताङ के युद्ध-सरदारों के बीच चलने वाली दीर्घ-कालीन लड़ाई के दौरान, हम च्याङशी पर अधिकार करने के लिए और साथ ही पश्चिमी फ़ूच्येन और पश्चिमी चच्याङ पर भी कब्जा करने के लिए च्याङ गुट और क्वाङशी गुट दोनों से मोर्चा लें। इन तीनों प्रान्तों में हमें लाल सेना का विस्तार करना चाहिए और जनता की स्वाधीन शासन-व्यवस्था कायम करनी चाहिए, तथा इस योजना को एक साल के भीतर पूरा कर लेना चाहिए।

च्याङशी पर अधिकार करने के उपर्युक्त प्रस्ताव में कमी केवल यह है कि उसमें सालभर की मियाद रखी गई है। जहां तक च्याङशी पर अधिकार करने का सम्बन्ध है, इस प्रस्ताव का आधार खुद च्याङशी की परिस्थितियों के अलावा यह विचार भी था कि देश-व्यापी क्रान्तिकारी उभार आना शीघ्र ही शुरू हो जाएगा। यदि इसका भरोसा हमें न होता कि क्रान्तिकारी उभार आना शीघ्र शुरू हो जाएगा, तो हम सालभर में च्याङशी पर अधिकार करने के फैसले पर कतई नहीं पहुंचते। प्रस्ताव में यही एक कमी थी कि सालभर की मियाद रखी गई थी, जिसे नहीं रखा जाना चाहिए था, और इस प्रकार "क्रान्तिकारी उभार शीघ्र ही आने वाला है" में प्रयुक्त "शीघ्र" शब्द से कमोबेश उतावलेपन की गन्ध आने लगी। जहां तक च्याङशी की आत्मगत और वस्तुगत परिस्थितियों का सवाल है, उन पर हमारा ध्यान देना उचित ही है। केन्द्रीय कमेटी के नाम भेजे गए पत्र में बताई गई आत्मगत परिस्थितियों के अलावा वस्तुगत परिस्थितियों के बारे में तीन बातें अब स्पष्ट रूप से कही जा सकती हैं: पहली बात यह है कि च्याङशी की अर्थव्यवस्था मुख्यतया सामन्ती है, सौदागर पूंजीपति वर्ग की शक्ति अपेक्षाकृत कम है और जमींदारों की सशस्त्र सैन्य-शक्ति किसी भी दक्षिणी प्रान्त के जमींदारों की सशस्त्र सैन्य-शक्ति के मुकाबले कमजोर है। दूसरी बात यह है कि च्याङशी की अपनी कोई प्रान्तीय सेना नहीं है तथा यहां हमेशा दूसरे प्रान्तों की सेनाएं तैनात रही हैं। "कम्युनिस्टों का विनाश करने" या "डाकुओं का विनाश करने" के लिए भेजी गई सेना स्थानीय स्थिति से परिचित नहीं होती, इस कार्य में उसकी प्रत्यक्ष रुचि उतनी नहीं होती जितनी

कि स्थानीय सेना की होती है, तथा आम तौर पर उसमें उत्साह की कमी होती है। तीसरी बात यह है कि च्याङशी साम्राज्यवाद के असर से अपेक्षाकृत दूर है और वह क्वाङतुङ की तरह नहीं है जो हाङकाङ के पास है और जिसकी प्रायः हर चीज अंग्रेजों के नियंत्रण में है। यदि एक बार ये तीनों बातें समझ में आ जाएं, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा च्याङशी में किसान विद्रोह क्यों व्यापक पैमाने पर हुए हैं तथा वहां लाल सेना व छापामार दस्तों की संख्या अन्य प्रान्तों के मुकाबले ज्यादा क्यों है।

"क्रान्तिकारी उभार शीघ्र ही आने वाला है" में "शीघ्र" शब्द की किस तरह व्याख्या की जाए? बहुत से कामरेडों के सामने यह एक आम सवाल है। मार्क्सवादी कोई ज्योतिषी नहीं होते। उन्हें भविष्य के घटना-विकास और परिवर्तनों की महज आम दिशा ही बतानी चाहिए और वे केवल इतना ही बता भी सकते हैं; उन्हें यांत्रिक ढंग से दिन, घड़ी, पल निश्चित नहीं करने चाहिए और न वे ऐसा कर ही सकते हैं। लेकिन जब मैं कहता हूं कि चीन में क्रान्तिकारी उभार शीघ्र ही आने वाला है, तो मेरा मतलब हरगिज यह नहीं होता, जैसा कि कुछ लोग समझते हैं कि वह "सम्भवतः आने वाला है", जो महज एक सुन्दर सपना है, हमारी पहुंच से परे है, और एक ऐसी चीज है जिसका कार्यवाही करने के लिए कोई महत्व नहीं। वह समुद्र में चलने वाले उस जहाज की तरह है, जिसके मस्तूल का ऊपरी भाग तट पर खड़े लोगों को दूर से ही दिखाई देता है; वह पूर्व में उगते हुए भोर के सूरज की तरह है, जिसकी जगमगाती किरणें किसी ऊंचे पहाड़ की चोटी पर खड़े लोगों को दिखाई देती हैं; वह शीघ्र ही पैदा होने वाले उस शिशु के समान

है, जो बेचैन होकर अपनी मां के गर्भ में हरकत करता रहता है।

नोट

१ कामरेड फ़ाङ च-मिन, जो च्याङशी प्रान्त के ईयाङ नामक स्थान के निवासी और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के सदस्य थे, उत्तर-पूर्वी च्याङशी में लाल इलाके के और लाल सेना की दसवीं फौजी कोर के संस्थापक थे। १९३४ में उत्तर की ओर अभियान करने में उन्होंने लाल सेना के जापान-विरोधी हिरावल दस्ते का नेतृत्व किया। जनवरी १९३५ में क्वोमिन्ताङ की प्रतिक्रान्तिकारी सेना के विरुद्ध लड़ाई करते समय वे पकड़ लिए गए और जुलाई में च्याङशी प्रान्त के नानछाङ में वीरतापूर्वक शहीद हो गए।

२ अर्थात क्रान्ति की संगठित शक्तियां।

३ लू ती-फिङ क्वोमिन्ताङ का युद्ध-सरदार था, जो १९२८ में हुनान प्रान्त का क्वोमिन्ताङ गवर्नर भी रहा।

४ मार्च-अप्रैल १९२९ में च्याङ काई-शेक के, जो नानकिङ में क्वोमिन्ताङ का युद्ध-सरदार था, तथा ली चुङ-रन व पाए छुङ-शी के, जो क्वाङशी प्रान्त में क्वोमिन्ताङ के युद्ध-सरदार थे, बीच का युद्ध।

५ हुनान और च्याङशी में क्वोमिन्ताङ के युद्ध-सरदारों द्वारा चिङकाङशान पहाड़ों पर स्थापित लाल सेना के आधार-क्षेत्र पर किया गया तीसरा आक्रमण, जो १९२८ के अन्त से १९२९ के शुरू तक चलता रहा।

६ यहां उस पत्र का हवाला दिया गया है जिसे ९ फरवरी १९२९ को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने मोर्चा-कमेटी के नाम भेजा था। इस लेख में केन्द्रीय कमेटी के नाम मोर्चा-कमेटी के ५ अप्रैल १९२९ के पत्र से जो अंश उद्धृत किए गए हैं उनसे उक्त पत्र का सारांश, जो मुख्यतः उस समय की परि-

स्थिति के मूल्यांकन और लाल सेना की फौजी कार्यवाही से सम्बन्धित कार्यनीति के बारे में था, मोटे तौर पर जाहिर होता है। केन्द्रीय कमेटी के इस पत्र में प्रस्तुत किया गया दृष्टिकोण अनुचित था, इसलिए मोर्चा-कमेटी ने केन्द्रीय कमेटी के नाम अपने पत्र में भिन्न दृष्टिकोण पेश किया।

७ यहां जन-संहार के उन जघन्य उपायों का हवाला दिया गया है जिन्हें प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों ने जनता की क्रान्तिकारी शक्तियों के खिलाफ इस्तेमाल किया था।

८ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस का आयोजन जुलाई १९२८ में किया गया था। इसमें बताया गया कि १९२७ की क्रान्ति की हार के बाद चीन की क्रान्ति का स्वरूप पूंजीवादी-जनवादी अर्थात साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी ही रहा और यह भी बताया गया कि क्रान्ति का नया उभार अवश्यम्भावी था लेकिन वह अभी नहीं आया था अतएव क्रान्ति की आम कार्यदिशा अब भी यही थी कि आम जनता को अपने पक्ष में किया जाए। छठी कांग्रेस ने १९२७ के छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी आत्मसमर्पणवाद को नेस्तनाबूद कर दिया और साथ ही १९२७ के अन्त और १९२८ के शुरू में पार्टी में पैदा हुई "वामपंथी" मुहिमजोई की भी भर्त्सना की।

९ १९२९ में चिङकाङशान पहाड़ों की लाल सेना एक नया क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र बनाने के लिए पूर्व की ओर बढ़ी तथा उसने फ़ूच्येन प्रान्त के पश्चिमी भाग में लुङ्येन, युङतिङ और शाङहाङ काउन्टियों में जनता की क्रान्तिकारी राजनीतिक सत्ता कायम कर दी।

१० यहां मजदूर-किसानों की लाल सेना द्वारा स्थापित अपेक्षाकृत मजबूत क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का हवाला दिया गया है।

११ च्याङ पो-छङ उस समय चच्याङ प्रान्त में क्वोमिन्ताङ की शान्ति-रक्षक कोर का कमाण्डर था।

१२ छन क्वो-ह्वेइ और लू शिङ-पाङ ये दोनों फ़ूच्येन के कुख्यात डाकू थे, जिनकी सेनाएं क्वोमिन्ताङ की सेना में मिला दी गई थीं।

१३ चाङ चन क्वोमिन्ताङ की सेना का डिवीजनल कमाण्डर था।

१४ चू फेइ-त क्वोमिन्ताङ का युद्ध-सरदार था, जो उस समय च्याङशी प्रान्त का क्वोमिन्ताङ गवर्नर था।

१५ श्युङ श-ह्वेइ उस समय च्याङशी प्रान्त में क्वोमिन्ताङ की सेना का डिवीजनल कमाण्डर था।

हमें आर्थिक काम पर ध्यान देना चाहिए*

२० अगस्त १९३३

क्रान्तिकारी युद्ध के तेज होने से यह एकदम जरूरी हो गया है कि हम आर्थिक मोर्चे पर तुरन्त आन्दोलन चलाने के लिए और आर्थिक निर्माण के सभी आवश्यक और सम्भव कार्यों का उत्तर-दायित्व उठाने के लिए जन-समुदाय को गोलबन्द करें। क्यों? इसलिए कि इस समय हमारे सभी कार्यों का लक्ष्य यह होना चाहिए कि हमें क्रान्तिकारी युद्ध में विजय प्राप्त हो और इसमें भी सबसे पहले दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम[१] को नष्ट करने में पूरी विजय प्राप्त हो; हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि हमें ऐसी भौतिक परिस्थितियां प्राप्त हों जिनसे लाल सेना की रसद और दूसरे सब सामान की सप्लाई की गारन्टी हो जाए, आम जनता के रहन-सहन की हालत में सुधार हो जाए, ताकि वह क्रान्तिकारी युद्ध में और भी सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित हो सके, आर्थिक मोर्चे पर आम जनता को संगठित किया जाए और उसे शिक्षित किया जाए जिससे कि युद्ध में हमें नई

* यह भाषण कामरेड माओ त्सेतुङ ने अगस्त १९३३ में आयोजित दक्षिणी च्याङशी की सत्रह काउन्टियों के एक आर्थिक निर्माण सम्मेलन में दिया था।

जन-शक्ति मिलती रहे, और आर्थिक निर्माण द्वारा मजदूर-किसान संश्रय को, मजदूर-किसानों के जनवादी अधिनायकत्व को सुदृढ़ बनाया जा सके और सर्वहारा नेतृत्व को मजबूत बनाया जा सके। इन सब बातों के लिए यह जरूरी है कि आर्थिक निर्माण का काम किया जाए। क्रान्तिकारी काम में लगे हुए हर व्यक्ति को यह बात साफ-साफ समझ लेनी चाहिए। पहले कुछ साथी सोचते थे कि क्रान्तिकारी युद्ध के कारण सभी लोग व्यस्त रहते हैं, इसलिए आर्थिक निर्माण के लिए समय निकालना असम्भव है। इसलिए जब वे किसी को आर्थिक निर्माण की बात करते देखते थे, तो वे उस पर "दक्षिणपंथी भटकाव" का लेबिल थोप देते थे। उनके विचार में क्रान्तिकारी युद्ध के दौरान आर्थिक निर्माण का काम चलाना असम्भव है और यह तभी सम्भव हो सकेगा जब युद्ध की अन्तिम विजय के बाद परिस्थिति शान्तिपूर्ण और स्थिर हो जाएगी। साथियो, इस तरह के विचार गलत हैं। जो साथी इस तरह सोचते हैं, वे यह नहीं समझते कि आर्थिक निर्माण किए बिना क्रान्तिकारी युद्ध के लिए भौतिक परिस्थितियों की गारन्टी नहीं हो सकती और लम्बे युद्ध के दौरान जनता अशक्त हो जाएगी। जरा सोचिए तो, दुश्मन आर्थिक नाकेबन्दी कर रहा है, बेईमान व्यापारी और प्रतिक्रियावादी हमारी वित्त-व्यवस्था और व्यापार को तहस-नहस कर रहे हैं और हमारे लाल इलाकों के बाह्य व्यापार में भारी अड़चनें पैदा हो गई हैं। अगर हम ये अड़चनें दूर नहीं करते, तो क्या इसका गहरा असर क्रान्तिकारी युद्ध पर नहीं पड़ेगा? नमक बहुत महंगा है, कभी-कभी मिलता भी नहीं है। शरद और जाड़ों में धान सस्ता रहता है, लेकिन वसन्त और गरमियों में बहुत महंगा हो जाता है।

इन सब बातों का तात्कालिक प्रभाव मजदूरों और किसानों के रहन-सहन पर पड़ता है और उसमें सुधार करना असम्भव हो जाता है। इससे क्या हमारी बुनियादी कार्यदिशा पर – मजदूर-किसान संश्रय पर – असर नहीं पड़ेगा? यदि मजदूर-किसान जन-समुदाय अपने रहन-सहन की हालत से असन्तुष्ट हो जाए, तो क्या इसका प्रभाव लाल सेना के प्रसार पर और क्रान्तिकारी युद्ध में भाग लेने के लिए जन-समुदाय को गोलबन्द करने के कार्य पर नहीं पड़ेगा? इसलिए, यह एकदम गलत धारणा है कि क्रान्तिकारी युद्ध के दौरान आर्थिक निर्माण नहीं करना चाहिए। इस मत के लोग अक्सर यह भी कहते हैं कि सभी कामों को युद्ध-प्रयास के मातहत रखा जाना चाहिए। वे यह नहीं जानते कि आर्थिक निर्माण का काम छोड़ देने से युद्ध-प्रयास सभी कामों से ऊपर नहीं रहता, बल्कि कमजोर पड़ जाता है। आर्थिक मोर्चे पर अपने काम को विस्तृत करके ही और लाल इलाकों की अर्थव्यवस्था का विकास करके ही हम क्रान्तिकारी युद्ध को एक यथेष्ट भौतिक आधार प्रदान कर सकते हैं, अपना फौजी आक्रमण सुचारु रूप से जारी रख सकते हैं और दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम पर करारी चोट कर सकते हैं; ऐसा करके ही हम लाल सेना का विस्तार करने के लिए साधन-स्रोत प्राप्त कर सकते हैं और युद्ध का मोर्चा हजारों ली आगे के स्थान में ले जा सकते हैं, ताकि परिस्थिति अनुकूल हो जाने पर लाल सेना निश्चिन्त होकर नानछाङ और च्योच्याङ पर हमला कर सके और रसद जुटाने के कुछ काम से छुट्टी पाकर अपना सारा ध्यान दुश्मन से लड़ने पर केन्द्रित कर सके; और केवल ऐसा करके ही हम आम जनता की रहन-सहन की जरूरतों

को बहुत कुछ पूरा कर सकते हैं, ताकि वह और भी उत्साह के साथ लाल सेना में भरती हो जाए या और भी उत्साह के साथ तरह-तरह के क्रान्तिकारी कामों में जुट जाए। सभी कामों को युद्ध-प्रयास के मातहत रखने का यही मतलब होता है। विभिन्न स्थानों में जो लोग क्रान्तिकारी काम में लगे हुए हैं, उनमें बहुत से अब भी यह नहीं समझते कि क्रान्तिकारी युद्ध में आर्थिक निर्माण-कार्य का महत्व क्या है, और बहुत सी स्थानीय सरकारों ने आर्थिक निर्माण की समस्याओं के बारे में विचार-विमर्श की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया है। विभिन्न स्थानीय सरकारों के राष्ट्रीय आर्थिक विभाग अभी तक सुसंगठित नहीं हुए हैं और कुछ में संचालक तक नहीं हैं या कुछ में सिर्फ जगह भरने के लिए ही अयोग्य व्यक्ति नियुक्त कर दिए गए हैं। सहकारी समितियों का विकास अभी प्रारम्भिक दौर में ही है और अनाज का नियमन करने का काम सिर्फ कुछ ही जगहों में शुरू हुआ है। विभिन्न स्थानों में आम जनता के बीच आर्थिक निर्माण के काम का प्रचार नहीं किया गया है (हालांकि यह नितान्त आवश्यक है) और आर्थिक निर्माण के लिए संघर्ष करने का उत्साहपूर्ण वातावरण तैयार नहीं किया गया है। इन सब बातों का कारण है आर्थिक निर्माण के महत्व पर ध्यान न देना। इस सम्मेलन में आप लोगों के विचार-विनिमय के जरिए और वापस जाकर आप लोगों द्वारा दी जाने वाली रिपोर्टों के जरिए हमें सभी सरकारी कर्मचारियों और व्यापक मजदूर-किसान जन-समुदाय में आर्थिक निर्माण के लिए उत्साहपूर्ण वातावरण पैदा करना चाहिए। हमें सभी लोगों को यह बात स्पष्ट कर देनी चाहिए कि क्रान्तिकारी युद्ध में आर्थिक निर्माण का महत्व क्या है, ताकि वे आर्थिक-निर्माण

बौण्डों की बिक्री को बढ़ावा देने, सहकारिता आन्दोलन का विकास करने और हर जगह अनाज की सार्वजनिक खत्तियां और अकाल-निवारण खत्तियां कायम करने की भरसक कोशिश करें। हर काउन्टी में अनाज के नियमन के लिए एक उप-विभाग कायम किया जाना चाहिए और मुख्य जिलों और हाटों में उसकी शाखाएं खोली जानी चाहिए। एक तरफ तो लाल इलाकों के अन्दर ऐसे स्थानों से, जहां अतिरिक्त अन्न पैदा होता है, उन स्थानों में अनाज भेजना चाहिए जहां अन्न की कमी है, ताकि ऐसा न हो जाए कि कहीं तो अन्न का ढेर लगा हो और कहीं उसके लाले पड़ रहे हों तथा कहीं तो अन्न बहुत सस्ता हो और कहीं बहुत महंगा ; दूसरी तरफ हमारे इलाकों के अतिरिक्त अनाज का योजना के अनुसार (असीमित मात्रा में नहीं) निर्यात करना चाहिए तथा जरूरत की चीजें श्वेत इलाकों से खरीदनी चाहिए, और इसमें बेईमान व्यापारियों को बीच में शोषण नहीं करने देना चाहिए। हम सभी को भरसक कोशिश करनी चाहिए कि खेती और दस्तकारी की पैदावार बढ़ाएं, ज्यादा खेती-औजार बनाएं और ज्यादा मात्रा में चूना तैयार करें जिससे कि अगले साल और भी ज्यादा अच्छी फसल हो ; और हमें कोशिश करनी चाहिए कि वुल्फ्रैम, इमारती लकड़ी, कपूर, कागज, तम्बाकू, लिनेन का कपड़ा, सूखा कुकुरमुत्ता और पिपरमिन्ट का तेल जैसी स्थानीय उपजों की पैदावार को पहले के स्तर पर पहुंचा दें और श्वेत इलाकों में इनका भारी मात्रा में निर्यात करें।

हमारे बाह्य व्यापार में, निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में मात्रा की दृष्टि से अनाज का स्थान पहला है। जरूरी चीजों के एवज में लगभग ३० लाख तान धान का हर साल निर्यात किया जाता है,

यानी ३० लाख की आबादी में फी आदमी एक तान का औसत बैठता है ; सचमुच इस मात्रा से कम तो यह हो नहीं सकता। लेकिन यह सब व्यापार है किसके हाथ में? यह सारा का सारा धन्धा व्यापारियों के हाथ में है, जो बीच में पड़कर हमारा निर्मम शोषण करते हैं। पिछले साल वानआन और थाएहो काउन्टियों में व्यापारी लोग किसानों से ५ च्याओ फी तान के हिसाब से धान खरीदकर कानचओ में उसे ४ य्वान फी तान के भाव से बेचते थे और इस तरह सातगुना मुनाफा कमाते थे। दूसरी मिसाल लीजिए। हर साल हमारी ३० लाख आम जनता को लगभग ९० लाख य्वान का नमक चाहिए और लगभग ६० लाख य्वान का सूती कपड़ा चाहिए। कहना न होगा कि पहले डेढ़ करोड़ य्वान के नमक और सूती कपड़े के आयात का सारा धन्धा पूरी तरह व्यापारियों के हाथ में था और हमने इसके बारे में पूछा तक नहीं। बिचवान बनकर व्यापारियों ने दरअसल बुरी तरह शोषण किया है। मिसाल के लिए, वे मेइश्येन काउन्टी गए और वहां उन्होंने एक य्वान में सात चिन के भाव से नमक खरीदा, और उसे उन्होंने एक य्वान में बारह ल्याङ[1] के भाव से बेचने के लिए हमारे इलाकों में भेज दिया। इस तरह का शोषण क्या एक भयानक बात नहीं है? इस तरह के काम को हम पहले जैसा नहीं छोड़ सकते, और अब से हमें इसे खुद करना होगा। वाह्य व्यापार-विभाग को इस सिलसिले में बहुत जोरदार कोशिश करनी होगी।

३० लाख य्वान की कीमत के आर्थिक-निर्माण बौण्डों का उपयोग हम किस तरह करेंगे? हमारी योजना है कि हम उनका उपयोग इस तरह करेंगे : १० लाख य्वान युद्ध के खर्च के लिए लाल सेना

के नाम कर दिए जाएंगे और २० लाख य्वान सहकारी समितियों, अनाज का नियमन करने वाले विभाग और वाह्य-व्यापार विभाग को पूंजी के रूप में उधार दे दिए जाएंगे। इस बाद वाली रकम का थोड़ा सा हिस्सा उत्पादन बढ़ाने के काम में लाया जाएगा और बाकी बड़ा हिस्सा वाह्य व्यापार बढ़ाने पर खर्च किया जाएगा। हमारा उद्देश्य उत्पादन बढ़ाना ही नहीं है, बल्कि अपनी उत्पादित वस्तुओं को श्वेत इलाकों में उचित मूल्य पर बेचना और फिर अपनी आम जनता में वितरित करने के लिए कम कीमतों पर नमक और कपड़ा खरीदना भी है, जिससे कि दुश्मन की नाकेबन्दी तोड़ी जा सके और व्यापारियों के शोषण की रोकथाम की जा सके। हमें चाहिए कि हम जनता की अर्थव्यवस्था को निरन्तर विकसित करते रहें, आम जनता के रहन-सहन की स्थिति में भारी सुधार करें, वित्तीय आय में अत्यधिक बढ़ती करें और इस प्रकार क्रान्तिकारी युद्ध और आर्थिक निर्माण के लिए मजबूत भौतिक बुनियाद तैयार कर दें।

यह एक महान कार्य है, एक महान वर्ग-संघर्ष है। लेकिन हमें अपने आपसे पूछना चाहिए कि क्या एक भीषण युद्ध के दौरान यह कार्य पूरा किया जा सकता है? मैं समझता हूं कि पूरा किया जा सकता है। हम लुङयेन तक रेल बनाने की बात नहीं कर रहे हैं, न फिलहाल कानचओ तक मोटर-सड़क बनाने की बात कर रहे हैं। अनाज की बिक्री पर पूरे इजारे की बात हम नहीं कर रहे, और न इस बात की चर्चा कर रहे हैं कि व्यापारियों को अलग रखकर डेढ़ करोड़ य्वान के नमक और कपड़े का सारा व्यापार सरकार अपने हाथ में ले ले। हम इन सब बातों की चर्चा नहीं कर

रहे, और न यह सब हम कर ही रहे हैं। जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं और जो हम कर रहे हैं, वह यह है कि हम खेती और दस्तकारी का उत्पादन बढ़ाएं, अनाज व वुल्फ़ैम का निर्यात करें और नमक व कपड़े का आयात करें, और फिलहाल हम इस काम को २० लाख के कोष और आम जनता द्वारा लगाए गए पैसे से शुरू करें। क्या यह ऐसा काम है जिसे नहीं करना चाहिए और जिसे नहीं किया जा सकता अथवा जो हो नहीं सकता ? हम इस तरह के काम में हाथ डाल चुके हैं और उसका कुछ फल भी मिल चुका है। इस साल शरद की फसल पिछले साल से २०-२५ फीसदी ज्यादा है, और जिस २० फीसदी बढ़ती का हमने अनुमान लगाया था उससे ज्यादा है। दस्तकारी के धन्धों में खेती-औजारों और चूने का उत्पादन बहाल हो रहा है और वुल्फ़ैम का उत्पादन भी बहाल होने लगा है। तम्बाकू, कागज और लकड़ी की पैदावार भी पनपने लगी है। अनाज का नियमन करने में भी इस साल काफी सफलता मिली है। नमक का आयात करने का कुछ काम भी शुरू हो गया है। ये सफलताएं ही हमारे इस दृढ़ विश्वास का आधार हैं कि भविष्य में और प्रगति करना सम्भव है। क्या यह दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गलत नहीं है कि आर्थिक निर्माण युद्ध के बाद ही सम्भव है, अभी नहीं ?

इस तरह यह स्पष्ट है कि मौजूदा मंजिल में आर्थिक निर्माण को केन्द्रीय कार्य के, यानी क्रान्तिकारी युद्ध के इर्द-गिर्द चलना चाहिए। इस समय क्रान्तिकारी युद्ध केन्द्रीय कार्य है, आर्थिक निर्माण का कार्य उसी के लिए हाथ में लिया गया है, उसी के चारों ओर घूमता है और उसी के मातहत है। उसी प्रकार आर्थिक निर्माण को अपने तमाम मौजूदा कार्यों का केन्द्र मानते हुए क्रान्तिकारी युद्ध की अवहेलना

करने या उसे अलग छोड़कर आर्थिक निर्माण का कार्य हाथ में लेने का दृष्टिकोण भी गलत है। जब गृहयुद्ध समाप्त हो जाएगा, सिर्फ तभी आर्थिक निर्माण के कार्य को हमारे सभी कार्यों का केन्द्र माना जा सकेगा और माना जाना चाहिए। गृहयुद्ध के दौरान शान्ति-कालीन आर्थिक निर्माण के ऐसे कार्य जिन्हें भविष्य में किया जा सकता है और किया जाना चाहिए न कि वर्तमान परिस्थितियों में, सम्पन्न करने की इच्छा महज एक खामखयाली है। मौजूदा काम वे हैं जिनकी युद्ध को तुरत दरकार है; इनमें से प्रत्येक काम युद्ध के लिए है और कोई भी काम युद्ध से अलग शान्ति-काल का काम नहीं है। यदि कोई साथी युद्ध से अलग आर्थिक निर्माण करने का विचार रखता हो, तो उसे तुरत अपनी भूल सुधार लेनी चाहिए।

नेतृत्व का सही ढंग और काम का सही तरीका अपनाए बिना आर्थिक मोर्चे पर तेजी से आन्दोलन बढ़ाना असम्भव होगा। यह भी एक महत्वपूर्ण समस्या है जो इस सम्मेलन में सुलझाई जानी है, क्योंकि लौटने पर आप लोगों को तुरत न केवल बहुत से काम खुद करने होंगे, बल्कि उन बहुत से आदमियों का निर्देशन भी करना होगा जो आपके साथ मिलकर काम करेंगे। विशेष रूप से श्याङ और नगर के स्तर पर काम करने वाले साथी और सहकारी समितियों, अनाज विभागों, व्यापार विभागों और खरीद कार्यालयों जैसे संगठनों में काम करने वाले साथी, सहकारी समितियों का संगठन करने के लिए, अनाज का नियमन और उसकी ढुलाई का प्रबन्ध करने के लिए तथा आयात-निर्यात के व्यापार की देखभाल करने के लिए स्वयं आम जनता को गोलबन्द करने के व्यावहारिक काम में जुटे हुए हैं। यदि उनके नेतृत्व का ढंग सही न होगा, यदि वे काम के

सही और कारगर तरीके नहीं अपनाएंगे, तो हमारे काम पर तुरत असर पड़ेगा, हम तरह-तरह के कामों के लिए व्यापक जन-समुदाय का समर्थन हासिल नहीं कर सकेंगे और इस वर्ष शरद और जाड़ों में और अगले वर्ष वसन्त और गरमियों में केन्द्रीय सरकार के आर्थिक निर्माण की सम्पूर्ण योजना को पूरा नहीं कर सकेंगे। इसलिए मैं इन बातों की ओर साथियों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं :

पहले, संगठनात्मक रूप से आम जनता को गोलबन्द करो। सबसे पहले, सभी स्तरों की सरकारों के अध्यक्ष-मण्डलों तथा राष्ट्रीय आर्थिक विभागों व वित्तीय विभागों में काम करने वाले साथियों को चाहिए कि वे बौण्डों की बिक्री, सहकारी समितियों का विकास, अनाज का नियमन और उत्पादन व व्यापार का विकास जैसे कामों को अपनी कार्यसूची में शामिल करके अक्सर उन पर विचार-विमर्श करें, उनकी देखभाल करें और उनकी जांच-पड़ताल करें। इसके बाद, वे जन-संगठनों, मुख्यत: मजदूर संघों और गरीब किसानों के संघों को क्रियाशील बनाएं। मजदूर संघों को चाहिए कि वे अपने सभी सदस्यों को आर्थिक मोर्चे में शामिल होने के लिए गोलबन्द करें। सहकारी समितियों को विकसित करने और बौण्ड खरीदने के लिए आम जनता को गोलबन्द करने में गरीब किसानों के संघ मजबूत आधार हैं ; जिले और श्याङ की सरकारों को चाहिए कि वे उनका जोरदार नेतृत्व करें। इसके अलावा, गांव की मीटिंग या एक ही मकान में रहने वाले परिवारों की मीटिंग करके हमें आर्थिक निर्माण के लिए प्रचार करना चाहिए, तथा क्रान्तिकारी युद्ध और आर्थिक निर्माण के आपसी सम्बन्ध को साफ-साफ बता देना चाहिए और जन-समुदाय के जीवन-स्तर को सुधारने और अपनी जुझारू क्षमता

को बढ़ाने के बारे में बहुत ही व्यावहारिक ढंग से बातें बतानी चाहिए। हमें आम जनता का आवाहन करना चाहिए कि वह बौण्ड खरीदे, सहकारी समितियों को विकसित करे, अनाज का नियमन करे, वित्त-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाए और व्यापार में बढ़ती करे ; हमें इन नारों के लिए संघर्ष करने के वास्ते आम जनता का आवाहन करना चाहिए और उसका उत्साह बढ़ाना चाहिए। यदि हम इस प्रकार संगठनात्मक रूप से आम जनता को गोलबन्द नहीं करेंगे और उसके बीच प्रचार नहीं करेंगे, अर्थात यदि सभी स्तरों की सरकारों के अध्यक्ष-मण्डल, राष्ट्रीय आर्थिक विभाग व वित्तीय विभाग जोरों से आर्थिक निर्माण के काम पर विचार-विनिमय नहीं करेंगे, और उसका निरीक्षण नहीं करेंगे, यदि वे जन-संगठन को क्रियाशील बनाने में गफलत करेंगे और प्रचार के लिए जनता की आम सभाएं बुलाने के काम पर ध्यान नहीं देंगे, तो हमारा उद्देश्य पूरा नहीं हो सकेगा।

दूसरे, आम जनता को गोलबन्द करने के तरीके में हमें नौकरशाही नहीं बरतनी चाहिए। नौकरशाही का नेतृत्व क्रान्तिकारी काम के किसी भी क्षेत्र में नहीं होना चाहिए ; उसी तरह आर्थिक निर्माण के काम में भी उसे कतई बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। नौकरशाही की इस दुष्ट प्रवृत्ति को हौदी में फेंक देना चाहिए, क्योंकि कोई भी साथी उसे पसन्द नहीं करता। हर साथी को वह तरीका पसन्द करना चाहिए जो जन-समुदाय को पसन्द हो, यानी ऐसा तरीका जिसका हर मजदूर और किसान स्वागत करता हो। नौकरशाही का एक रूप उदासीनता या अन्यमनस्कता बरतकर काम में ढिलाई आने देना है। इसके विरुद्ध हमें तीव्र संघर्ष चलाना चाहिए।

उसका दूसरा रूप फरमानशाही है। फरमानशाह लोग ऊपर से देखने में अपने काम में ढीले नहीं होते और बहुत परिश्रमी जान पड़ते हैं। वास्तव में फरमानशाही के ढंग से सहकारी समितियों को विकसित करने में सफलता नहीं मिल सकेगी। फिलहाल ऊपरी तौर पर अगर वे विकसित भी हो गईं, तो उन्हें सुदृढ़ नहीं किया जा सकेगा। अन्त में वे जन-समुदाय का विश्वास खो बैठेंगी और उनके विकास में बाधा पड़ेगी। फरमानशाही के ढंग से बौण्डों की बिक्री बढ़ाने, बिना यह सोचे कि आम जनता समझती है या नहीं, अथवा वह कितना खरीद सकती है, और तानाशाही के ढंग से मनमानी रकम बांध देने से अन्त में आम जनता नाराज हो जाएगी और अच्छी बिक्री असम्भव होगी। हमें फरमानशाही को अवश्य ही तिलांजलि दे देना चाहिए। जरूरत इस बात की है कि हम जन-समुदाय को समझाने-बुझाने के लिए उसमें जोरदार तरीके से प्रचार करें और विशिष्ट परिस्थितियों और जन-समुदाय की वास्तविक भावनाओं के अनुसार सहकारी समितियों का विकास करें, बौण्डों की बिक्री बढ़ाएं और आर्थिक निर्माण के लिए जनता को गोलबन्द करने का तमाम काम करें।

तीसरे, आर्थिक निर्माण आन्दोलन को बढ़ाने के लिए बहुत से कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। बात सौ-पचास आदमियों की नहीं, बल्कि हजारों या दसियों हजार आदमियों की है जिन्हें संगठित करना है, ट्रेनिंग देना है और आर्थिक निर्माण के मोर्चे पर भेजना है। आर्थिक मोर्चे पर वे लोग कमाण्डर होंगे और व्यापक जन-समुदाय सैनिक। लोग अक्सर कार्यकर्ताओं की कमी पर आहें भरते हैं। साथियो, क्या वास्तव में कार्यकर्ताओं की कमी है? जो जन-

समुदाय भूमि सम्बन्धी संघर्षों, आर्थिक संघर्षों और क्रान्तिकारी युद्ध में तप चुका है, उसमें अनगिनत कार्यकर्ता प्रकाश में आए हैं। हम कैसे कह सकते हैं कि कार्यकर्ताओं की कमी है? अपना यह गलत दृष्टिकोण छोड़ दें, तो आपको चारों तरफ कार्यकर्ता ही कार्यकर्ता दिखाई देंगे।

चौथे, इस समय आर्थिक निर्माण का कार्य युद्ध के आम कार्य से ही नहीं, बल्कि दूसरे कार्यों से भी अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। भूमि के बंटवारे से सम्बन्धित मुकम्मिल जांच के आन्दोलन[३] द्वारा ही भूमि की सामन्ती और अर्ध-सामन्ती मिलकियत पूरी तरह खत्म की जा सकती है, उत्पादन में किसानों की सक्रियता बढ़ाई जा सकती है, और व्यापक किसान जन-समुदाय को आर्थिक निर्माण के मोर्चे में शीघ्र शामिल किया जा सकता है। श्रम-कानूनों को दृढ़ता से लागू करके ही आम मजदूरों की जीवन-स्थिति को सुधारा जा सकता है, उन्हें आर्थिक निर्माण के कार्य में सक्रिय रूप से और जल्दी प्रवृत्त किया जा सकता है और किसानों पर उनका नेतृत्व सुदृढ़ किया जा सकता है। चुनाव आन्दोलन में और भूमि के बंटवारे से सम्बन्धित मुकम्मिल जांच के आन्दोलन के साथ विकसित होने वाले भण्डाफोड़-आन्दोलन[४] में सही मार्गदर्शन के जरिए ही हमारी सरकारी संस्थाएं सुदृढ़ बनाई जा सकती हैं, जिससे हमारी सरकार क्रान्तिकारी युद्ध तथा आर्थिक काम समेत अन्य विभिन्न कामों का और भी जोरों से नेतृत्व कर सके। सांस्कृतिक और शैक्षणिक कार्य द्वारा आम जनता के राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा करना भी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को विकसित करने के लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। कहना न होगा कि एक दिन के लिए भी

लाल सेना का प्रसार करने के काम में गफलत नहीं करनी चाहिए। हर आदमी समझता है कि लाल सेना की जीत के बिना दुश्मन की आर्थिक नाकेबन्दी और भी मजबूत हो जाएगी। दूसरी ओर, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास से और आम जनता की जीवन-स्थिति में सुधार से लाल सेना का प्रसार करने के काम में निस्सन्देह बड़ी सहायता मिलेगी और व्यापक जन-समुदाय को मोर्चे की ओर उत्साह से चलने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकेगा। सारांश में यह कहा जा सकता है कि यदि हम उपर्युक्त शर्तें, जिनमें यह बहुत महत्वपूर्ण नई शर्त – आर्थिक निर्माण – भी शामिल है, पूरी कर लेंगे और यदि हम क्रान्तिकारी युद्ध के लिए उन सबका उपयोग करेंगे, तो क्रान्तिकारी युद्ध में विजय निस्सन्देह हमारी ही होगी।

नोट

१ १९३० से १९३४ तक च्याङ काई-शेक की फौज ने लाल इलाके पर, जिसका केन्द्र च्याङशी का रुइचिन था, बड़े पैमाने पर पांच हमले किए, जो "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमें कहलाते हैं। पांचवीं मुहिम वास्तव में १९३३ के अक्तूबर में शुरू हुई, लेकिन च्याङ काई-शेक ने उस साल की गरमियों से ही उसकी सक्रिय रूप से तैयारियां शुरू कर दी थीं।

२ "चिन" और "ल्याङ" चीनी तौल-प्रणाली की इकाइयां हैं। एक "चिन" दस "ल्याङ" के बराबर होता है और एक "ल्याङ" दस "छ्येन" के बराबर (उस समय एक "चिन" सोलह "ल्याङ" के बराबर होता था)। एक "चिन" में ५०० ग्राम होते हैं। –अनु०

३ एक ऐसा आन्दोलन जो लाल इलाके में भूमि के बंटवारे के बाद इस बात

की जांच-पड़ताल करने के उद्देश्य से चलाया गया था कि भूमि का वितरण बिलकुल ठीक हुआ है या नहीं।

४ भण्डाफोड़-आन्दोलन एक ऐसा जनवादी आन्दोलन था जिसमें व्यापक जनता को प्रोत्साहित किया जाता था कि वह जनवादी सरकार के किन्हीं कर्मचारियों के काले कारनामों का भण्डाफोड़ करे।

देहाती क्षेत्रों में वर्ग-विश्लेषण कैसे करें ?*

अक्तूबर १९३३

१. जमींदार

जमींदार वह व्यक्ति होता है जिसके पास जमीन होती है, जो स्वयं मेहनत नहीं करता या बहुत कम मात्रा में मेहनत करता है, और जो किसानों के शोषण पर जिन्दगी बसर करता है। जमींदार द्वारा किए जाने वाले शोषण का मुख्य रूप होता है लगान वसूल करना ; इसके अलावा वह पैसा उधार देने का काम भी कर सकता है, भाड़े पर मजदूर रख सकता है, या उद्योग और व्यापार में लग सकता है। लेकिन किसानों से लगान वसूल करना जमींदार द्वारा किए जाने वाले शोषण का मुख्य रूप है। सामुदायिक भूमि का प्रबन्ध करना और पाठशालाओं की भूमि[1] से लगान वसूल करना भी लगान-वसूली द्वारा शोषण करने की श्रेणी में आता है।

दिवालिया जमींदार भी जमींदार की ही श्रेणी में रखा जाएगा,

---

* भूमि-सुधार के काम में जो भटकाव पैदा हुए थे उन्हें ठीक करने के लिए और भूमि-समस्या को सही ढंग से हल करने के लिए कामरेड माओ त्सेतुङ ने यह दस्तावेज अक्तूबर १९३३ में लिखा था। इसे उस समय की मजदूर-किसानों की जनवादी केन्द्रीय सरकार ने देहातों में वर्ग-हैसियत निश्चित करने की कसौटी के रूप में स्वीकार कर लिया था।

यदि वह मेहनत नहीं करता और दूसरों को दगा देकर या लूट-पाट करके अथवा दोस्तों-रिश्तेदारों की सहायता पर जिन्दगी बसर करता है, और उसकी जीवन-स्थिति सामान्य मध्यम किसान से बेहतर होती है।

युद्ध-सरदार, नौकरशाह, स्थानीय निरंकुश तत्व और बुरे शरीफजादे जमींदार वर्ग के राजनीतिक प्रतिनिधि होते हैं और वे इस वर्ग के अत्यन्त खूंखार सदस्य होते हैं। स्थानीय निरंकुश तत्वों और बुरे शरीफजादों के छुटभैये अक्सर धनी किसानों के बीच भी पाए जाते हैं।

जो लोग जमीन का लगान वसूल करने और सम्पत्ति का प्रबन्ध करने में जमींदारों की मदद करते हैं, और जिनकी आमदनी मुख्य रूप से जमींदारों द्वारा किसानों के शोषण पर निर्भर रहती है और जिनकी जीवन-स्थिति सामान्य मध्यम किसान से बेहतर होती है, उन्हें भी जमींदारों की ही श्रेणी में गिना जाएगा।

जिस आदमी की आमदनी का मुख्य जरिया सूदखोरी से शोषण करना होता है और जिसकी जीवन-स्थिति सामान्य मध्यम किसान से बेहतर होती है, वह सूदखोर कहलाता है और उसे भी जमींदारों की ही श्रेणी में गिना जाएगा।

२. धनी किसान

आम तौर पर धनी किसान के पास अपनी खुद की जमीन होती है। लेकिन कुछ धनी किसान ऐसे होते हैं जिनके पास खेती की जमीन का महज एक हिस्सा अपना खुद का होता है और जो बाकी

जमीन को दूसरों से लगान पर लेते हैं। कुछ अन्य धनी किसान ऐसे होते हैं जिनके पास अपनी खुद की जमीन होती ही नहीं और जो समूची जमीन दूसरों से लगान पर लेते हैं। धनी किसान के पास आम तौर पर औसत से अधिक और अच्छे उत्पादन-यंत्र होते हैं और औसत से अधिक चल पूंजी होती है; वह स्वयं श्रम में हिस्सा लेता है, लेकिन उसकी आमदनी का एक भाग अथवा अधिकांश भाग हमेशा शोषण द्वारा प्राप्त होता है। भाड़े पर मजदूरी कराना (लम्बी अवधि के लिए भाड़े पर मजदूर रखना) धनी किसान द्वारा किए जाने वाले शोषण का मुख्य रूप है। इसके अलावा वह अपनी जमीन का एक हिस्सा लगान पर उठाकर लगान-वसूली द्वारा भी शोषण कर सकता है, रुपया उधार दे सकता है अथवा उद्योग और व्यापार में लग सकता है। अधिकांश धनी किसान सामुदायिक भूमि का प्रबन्ध भी करते हैं। कुछ के पास काफी मात्रा में अच्छी भूमि होती है, वे भाड़े पर मजदूर रखने के बदले खुद मेहनत करते हैं, लेकिन लगान-वसूली, सूदखोरी आदि के जरिए दूसरे किसानों का शोषण भी करते हैं। इनको भी धनी किसानों की श्रेणी में गिना जाएगा। धनी किसान नियमित रूप से शोषण-कार्य में लगे रहते हैं और बहुत से धनी किसानों की आमदनी का अधिकांश भाग शोषण से प्राप्त होता है।

३. मध्यम किसान

बहुत से मध्यम किसानों के पास अपनी खुद की जमीन होती है। कुछ के पास खेती की जमीन का सिर्फ एक हिस्सा अपना खुद का

होता है, बाकी जमीन को वे लगान पर लेते हैं। कुछ मध्यम किसान ऐसे होते हैं जिनके पास अपनी खुद की कोई जमीन नहीं होती और जो खेती की सारी जमीन लगान पर ही लेते हैं। सभी मध्यम किसानों के पास खेती-औजार यथेष्ट मात्रा में होते हैं। मध्यम किसान की आमदनी का जरिया पूर्णतः या मुख्यतः उसका अपना ही श्रम होता है। आम तौर पर वह दूसरों का शोषण नहीं करता। बहुत से मध्यम किसान ऐसे भी होते हैं जिन्हें दूसरों को थोड़ा सा लगान या सूद देकर उनके शोषण का शिकार भी बनना पड़ता है। लेकिन मध्यम किसान आम तौर पर अपनी श्रमशक्ति को नहीं बेचता। कुछ मध्यम किसान (खुशहाल मध्यम किसान) थोड़ी मात्रा में दूसरों का शोषण भी करते हैं, लेकिन यह उनकी आमदनी का नियमित या मुख्य जरिया नहीं होता।

४. गरीब किसान

कुछ गरीब किसानों के पास खेती की जमीन का सिर्फ एक हिस्सा ही अपना खुद का होता है और उनके पास खेती-औजार भी पूरे नहीं होते; अन्य गरीब किसान ऐसे होते हैं जिनके पास जमीन बिलकुल नहीं होती तथा खेती-औजार केवल अपूर्ण मात्रा में होते हैं। आम तौर पर गरीब किसानों को खेती की जमीन लगान पर लेनी पड़ती है, और दूसरों को लगान या सूद देकर अथवा अपने श्रम को अंशतः भाड़े पर उठाकर उन्हें दूसरों के शोषण का शिकार बनना पड़ता है।

आम तौर से, मध्यम किसान को अपनी श्रमशक्ति बेचने की

जरूरत नहीं पड़ती, लेकिन गरीब किसान को अपनी श्रमशक्ति का एक छोटा अंश बेचना पड़ता है। यह मध्यम किसान और गरीब किसान के बीच भेद करने की मुख्य कसौटी है।

५. मजदूर

आम तौर पर मजदूरों (जिनमें खेत-मजदूर भी शामिल हैं) के पास जमीन या औजार बिलकुल नहीं होते। उनमें से कुछ ही लोग ऐसे होते हैं जिनके पास बहुत थोड़ी जमीन और बहुत थोड़े औजार होते हैं। मजदूर लोग पूर्णतः या मुख्यतः अपनी श्रमशक्ति बेचकर जीविका कमाते हैं।

नोट

१ चीन के देहाती इलाकों में तरह-तरह की सार्वजनिक भूमि थी। कुछ सार्वजनिक भूमि राज्य से सम्बन्धित थी, जैसे जिले या श्याङ की सरकार की भूमि; कुछ बिरादरी व्यवस्था से सम्बन्धित थी, जैसे किसी बिरादरी के पुरखों के मंदिर की भूमि; कुछ धर्म से सम्बन्धित थी, जैसे बौद्ध या ताओपंथी मंदिर या कैथोलिक गिरजाघर अथवा मस्जिद की भूमि; कुछ सार्वजनिक कल्याण-कार्य से सम्बन्धित भूमि थी, जैसे अकाल-निवारण के लिए अनाज-संग्रह के काम आने वाली भूमि, पुल व सड़कें बनवाने और उनकी देखभाल करने के काम आने वाली भूमि; और कुछ शिक्षा-कार्य से सम्बन्धित भूमि थी, जैसे पाठशाला की भूमि। इस तरह की अधिकांश भूमि दरअसल जमींदारों और धनी किसानों के हाथ में थी। किसान लोग उसके केवल एक छोटे से अंश के प्रबन्ध में भाग ले सकते थे।

हमारी आर्थिक नीति*

२३ जनवरी १९३४

केवल अत्यन्त बेशर्म क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार ही, जिन्होंने अपने शासित प्रदेशों की जनता को लगभग मुफलिस बना दिया है और उनके वित्तीय साधनों को लगभग समाप्त कर दिया है, हररोज ये अफवाहें फैलाते हैं कि लाल इलाके बिलकुल तबाह हो गए हैं। साम्राज्यवाद और क्वोमिन्ताङ का मकसद यह है कि लाल इलाकों को नष्ट कर दिया जाए, यहां जो आर्थिक निर्माण का काम प्रगति कर रहा है उसे जड़ से खत्म कर दिया जाए और जो लाखों-लाख मजदूर-किसान आजाद हुए हैं उनकी खुशहाली को बरबाद कर दिया जाए। इसलिए उन्होंने न केवल "घेरा डालने और विनाश करने" की फौजी मुहिमों के लिए सैन्य-शक्ति संगठित की है, बल्कि आर्थिक नाकेबन्दी की निर्मम नीति भी लागू की है। लेकिन हमने व्यापक जन-समुदाय और लाल सेना का नेतृत्व करते हुए, न सिर्फ "घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की मुहिमों को एक के बाद एक नष्ट किया है, बल्कि दुश्मन की आर्थिक नाकेबन्दी की घातक

---

*यह रिपोर्ट कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा जनवरी १९३४ में च्याङशी प्रान्त के रुइचिन में आयोजित मजदूर-किसान प्रतिनिधियों की दूसरी राष्ट्रीय कांग्रेस में प्रस्तुत की गई थी।

योजना को मटियामेट करने के लिए आर्थिक निर्माण के हर प्रकार के सम्भव तथा आवश्यक कार्य भी जारी रखे हैं। इस सिलसिले में भी हमने एक के बाद एक कामयाबी हासिल की है।

हमारी आर्थिक नीति का सिद्धान्त यह है कि आर्थिक निर्माण के सभी सम्भव तथा आवश्यक कार्य किए जाएं और युद्ध के लिए अपनी आर्थिक शक्ति को केन्द्रित किया जाए, तथा साथ ही जनता की जीवन-स्थिति को सुधारने के लिए भरसक प्रयत्न किए जाएं, आर्थिक क्षेत्र में मजदूर-किसान संश्रय को सुदृढ़ बनाया जाए, किसानों पर सर्वहारा वर्ग का नेतृत्व कायम करने की गारन्टी की जाए तथा निजी अर्थव्यवस्था पर राजकीय अर्थव्यवस्था का नेतृत्व कायम करने की कोशिश की जाए, और इस प्रकार भविष्य में समाजवाद की ओर विकास करने की पूर्वशर्तें तैयार की जाएं।

हमारे आर्थिक निर्माण का केन्द्रीय कार्य है कृषि-उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन बढ़ाना, वाह्य व्यापार बढ़ाना और सहकारी समितियों का विकास करना।

स्पष्ट है कि लाल इलाकों में इस समय कृषि प्रगति कर रही है। १९३२ की तुलना में १९३३ की पैदावार दक्षिणी च्याङशी और पश्चिमी फ़ूच्येन के इलाके में १५ फीसदी बढ़ी है और फ़ूच्येन-चच्याङ-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में २० फीसदी बढ़ी है। सछ्वान-शेनशी सीमान्त क्षेत्र में फसल अच्छी हुई है। जब कोई लाल इलाका स्थापित होता है, तो अक्सर एक या दो साल तक उसकी खेती की उपज कम हो जाती है।[१] लेकिन जमीन का बंटवारा होने और जमीन की मिलकियत तय होने के बाद तथा हमारे द्वारा उत्पादन को प्रोत्साहन दिए जाने के बाद, चूंकि किसान-समुदाय का श्रम-उत्साह बढ़ जाता है

इसलिए उत्पादन फिर से पनपने लगता है। इस समय कुछ स्थानों में कृषि-उत्पादन न सिर्फ क्रान्ति से पहले के स्तर तक पहुंच गया है, बल्कि उससे भी आगे बढ़ गया है। कुछ स्थानों में न केवल उस जमीन का पुनरुद्धार किया गया है जो क्रान्तिकारी विद्रोहों के समय बेकार हो गई थी, बल्कि नई जमीन को भी खेती के काम में लाया गया है। बहुत से स्थानों में आपसी-सहायता श्रमिक ग्रुप और जुताई दल[२] संगठित किए गए हैं ताकि गांवों में श्रमशक्ति का समुचित उपयोग किया जा सके, और बैलों की कमी पूरी करने के लिए बैल सहकारी-समितियां कायम की गई हैं। साथ ही महिलाएं भी बड़ी संख्या में उत्पादन में भाग ले रही हैं। यह सब क्वोमिन्ताङ काल में हरगिज सम्भव नहीं था। उस समय भूमि पर जमींदारों का अधिकार था; किसान अपने प्रयत्नों से न तो उसे सुधारने के लिए तैयार थे, और न सुधार ही सकते थे। जब हमने किसानों में जमीन बांट दी तथा किसानों के उत्पादन को प्रोत्साहित और पुरस्कृत किया, तभी उनके श्रम-उत्साह का विकास हुआ और उत्पादन में भारी सफलता प्राप्त हुई। यह बता देना जरूरी है कि वर्तमान परिस्थितियों में हमारे आर्थिक निर्माण में कृषि-उत्पादन का पहला स्थान है। कृषि के जरिए न सिर्फ अनाज की सबसे महत्वपूर्ण समस्या हल की जाती है, बल्कि कपड़ा, शक्कर, कागज, और अन्य दैनिक आवश्यकताओं के लिए कपास, सन, गन्ना, बांस, आदि कच्चे माल की समस्या भी हल की जाती है। जंगलात और पशुपालन भी कृषि के महत्वपूर्ण अंग हैं। इस बात की इजाजत दी जा सकती है और यह आवश्यक भी है कि लघु किसान-अर्थव्यवस्था के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण कृषि-उपजों के लिए उपयुक्त योजनाएं बनाई जाएं और उन्हें पूरा

करने के लिए किसानों को गोलबन्द कर लिया जाए। इसकी ओर हमें और भी ज्यादा ध्यान देना चाहिए और इसके लिए और भी ज्यादा प्रयत्न करना चाहिए। कृषि-उत्पादन के लिए आवश्यक परिस्थितियों – श्रमशक्ति, बैल, खाद, बीज और सिंचाई आदि की जो कठिन समस्याएं उठती हैं, उन्हें हल करने में हमें किसानों का सक्रियता से नेतृत्व करना चाहिए। इस सिलसिले में हमारा सबसे बुनियादी काम है संगठित रूप में श्रमशक्ति के उपयोग को व्यवस्थित करना और उत्पादन में भाग लेने के लिए स्त्रियों को प्रोत्साहित करना। आपसी-सहायता श्रमिक ग्रुपों और जुताई दलों को संगठित करना तथा जुताई के लिए महत्वपूर्ण मौसम वसन्त और ग्रीष्म में गांवों के सभी लोगों को गोलबन्द करना और उन्हें प्रोत्साहित करना, श्रमशक्ति की समस्या को हल करने के आवश्यक उपाय हैं। एक अन्य बड़ी समस्या यह है कि काफी किसानों (लगभग २५ फीसदी) के पास बैलों की कमी है। हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि बैल सहकारी-समितियों को संगठित किया जाए, जिन परिवारों के पास बैल नहीं हैं उन्हें प्रोत्साहित किया जाए कि वे सामूहिक उपयोग के वास्ते बैल खरीदने के लिए स्वेच्छा से शेयर खरीदें। सिंचाई खेती का प्राण है ; उस पर भी हमें खूब ध्यान देना चाहिए। यह ठीक है कि अभी हम राजकीय खेती या सामूहिक खेती का सवाल नहीं उठा सकते, लेकिन कृषि के विकास को तेजी से आगे बढ़ाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि भिन्न-भिन्न स्थानों में छोटे पैमाने के प्रयोगात्मक फार्म स्थापित किए जाएं तथा कृषि अनुसन्धान स्कूल कायम किए जाएं और खेती की उपज के लिए प्रदर्शनी-भवन बनाए जाएं।

हमारे माल के निर्यात में दुश्मन की नाकेबन्दी ने कठिनाइयां पैदा कर दी हैं। लाल इलाकों में दस्तकारी की बहुत सी चीजों का उत्पादन कम हो गया है, खास तौर से तम्बाकू और कागज का। लेकिन निर्यात करने में इस तरह की कठिनाइयां पूर्ण रूप से अलंघनीय नहीं हैं। व्यापक जन-समुदाय की मांग की वजह से हमारे पास स्वयं एक विस्तृत बाजार मौजूद है। सबसे पहले अपने उपयोग के लिए और उसके बाद निर्यात के लिए, हमें योजना के अनुसार दस्तकारी के धन्धों और कुछ उद्योगों को बहाल और विकसित करना चाहिए। पिछले दो वर्षों में, खास तौर पर १९३३ के पूर्वार्ध से, दस्तकारी के बहुत से धन्धे और कुछ उद्योग इसलिए पनपने लगे हैं क्योंकि हम उनकी ओर ध्यान देने लगे हैं और आम जनता के बीच उत्पादक सहकारी-समितियां कदम-ब-कदम विकसित हो रही हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण धन्धे तम्बाकू, कागज, वुल्फ्रैम, कपूर, खेती-औजार और खाद (जैसे चूना) सम्बन्धी हैं। इनके अलावा, वर्तमान परिस्थिति में हमें सूती कपड़े बुनने, दवाइयां बनाने और शक्कर बनाने का काम खुद करने के प्रति लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए। फूच्येन-चच्याङ-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में कागज बनाने, सूती कपड़ा बुनने और शक्कर बनाने जैसे कुछ उद्योग-धन्धे, जो पहले वहां मौजूद नहीं थे, अब विकसित हो गए हैं और उनमें सफलता प्राप्त हुई है। खाने के नमक की कमी को दूर करने के लिए क्षार-युक्त मिट्टी से नमक बनाने का काम शुरू कर दिया गया है। उद्योग-धन्धों को चालू रखने के लिए उपयुक्त योजना बनाना जरूरी है। बिखरे हुए दस्तकारी धन्धों के आधार पर सर्वतोमुखी और ब्योरेवार योजना बनाना निस्सन्देह असम्भव है। फिर भी कुछ मुख्य कारो-

बारों में, सबसे पहले राजकीय कारोबारों और सहकारी कारोबारों में, उत्पादन के लिए काफी ब्योरेवार योजना बनाना नितान्त आवश्यक है। हमारे प्रत्येक राजकीय या सहकारी औद्योगिक कारोबार को आरम्भ से ही कच्चे माल के उत्पादन का सही अनुमान लगाने तथा दुश्मन के और अपने इलाकों में खपत की सम्भावना का सही अन्दाज लगाने पर ध्यान देना चाहिए।

वर्तमान समय में जनता के वाह्य व्यापार को योजना के अनुसार संगठित करना और कुछ आवश्यक तिजारती माल की खरीद-फरोख्त का सीधे राज्य द्वारा निर्देशन करना खास तौर से जरूरी है, मिसाल के लिए, खाने के नमक और सूती कपड़े के आयात, अनाज और वुल्फ्रैम के निर्यात तथा अपने ही इलाकों में अनाज के नियमन का निर्देशन सीधे राज्य द्वारा किया जाना जरूरी है। इस तरह का काम सबसे पहले फ़ूच्येन-चच्याङ-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में उठाया गया था और १९३३ के वसन्त में केन्द्रीय क्षेत्र में शुरू किया गया था। वाह्य व्यापार विभाग तथा अन्य संस्थाएं कायम होने के बाद इसमें प्रारम्भिक सफलता मिल चुकी है।

इस समय हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के तीन अंग हैं : राजकीय कारोबार, सहकारी कारोबार और निजी कारोबार।

राजकीय कारोबार अभी केवल उन धन्धों तक ही सीमित हैं जो सम्भव और आवश्यक हैं। राज्य द्वारा संचालित उद्योग और व्यापार अब पनपने लगे हैं और उनके भावी विकास की असीमित सम्भावनाएं मौजूद हैं।

जहां तक निजी अर्थव्यवस्था का सवाल है, जब तक वह हमारी सरकार द्वारा निर्धारित कानूनी सीमाओं को लांघती नहीं, तब तक

हम उस पर न सिर्फ रोक नहीं लगाएंगे बल्कि उसको बढ़ावा और प्रोत्साहन भी देंगे, क्योंकि निजी अर्थव्यवस्था का विकास इस समय राज्य और जनता के हित के लिए आवश्यक है। कहना न होगा कि अभी निजी अर्थव्यवस्था का पलड़ा एकदम भारी है और काफी लम्बे समय तक यह स्थिति अनिवार्य रूप से कायम रहेगी। इस समय लाल इलाकों में निजी कारोबारों का पैमाना छोटा है।

सहकारी कारोबार तेजी से बढ़ रहे हैं। सितम्बर १९३३ में च्याङशी और फ़ूच्येन दोनों प्रान्तों की सत्रह काउन्टियों से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वहां कुल मिलाकर विभिन्न प्रकार की १,४२३ सहकारी समितियां कायम हो चुकी हैं, जिनकी कुल पूंजी ३,००,००० य्वान से ज्यादा है। उपभोक्ता सहकारी-समितियां और अनाज सहकारी-समितियां सबसे ज्यादा फली-फूली हैं ; इनके बाद उत्पादक सहकारी-समितियों का नम्बर आता है। ऋणदाता सहकारी-समितियों का काम अभी शुरू ही हुआ है। जब सहकारी कारोबारों और राजकीय कारोबारों के कार्य में तालमेल कायम हो जाएगा और काफी लम्बे अरसे तक उनका विकास हो जाएगा, तब वे आर्थिक क्षेत्र में एक भारी शक्ति बन जाएंगे तथा कदम-ब-कदम निजी कारोबारों पर हावी हो जाएंगे और उन पर नेतृत्व कायम कर लेंगे। इसलिए हर सम्भव उपाय से राजकीय कारोबारों का विकास और बड़े पैमाने पर सहकारी कारोबारों का विकास किया जाना चाहिए, और इसके साथ-साथ निजी कारोबारों के विकास को भी बढ़ावा देना चाहिए।

राजकीय कारोबारों को विकसित करने और सहकारी कारोबारों की मदद करने के लिए हमने जन-समुदाय के समर्थन से ३०

लाख य्वान मूल्य के आर्थिक-निर्माण बौण्ड जारी किए हैं। इस तरह जन-समुदाय की शक्ति पर भरोसा करना ही इस समय आर्थिक निर्माण के लिए आवश्यक निधि की समस्या को हल करने का एकमात्र सम्भव उपाय है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास द्वारा अपनी वित्तीय आय को बढ़ाना हमारी वित्तीय नीति का बुनियादी उसूल है। इसका असर फ़ूच्येन-चच्याङ-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में साफ दीख चुका है और केन्द्रीय क्षेत्र में भी साफ दिखाई देने लगा है। हमारे वित्तीय और आर्थिक संगठनों का कर्तव्य है कि वे इस उसूल को गम्भीरता से लागू करें। हमें इस बात की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए कि राजकीय बैंक बुनियादी तौर से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की आवश्यकताओं के अनुसार नोट जारी करें और विशुद्ध वित्तीय आवश्यकताओं को गौण स्थान दें।

किफायत को हमारे सरकारी खर्च का मार्गदर्शक उसूल होना चाहिए। सभी सरकारी कर्मचारियों को यह स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए कि भ्रष्टाचार और फिजूलखर्ची ये दोनों ही बहुत बड़े जुर्म हैं। भ्रष्टाचार और फिजूलखर्ची के खिलाफ चलाए गए हमारे संघर्षों में कुछ सफलता अवश्य प्राप्त हो चुकी है, लेकिन इस दिशा में और अधिक प्रयत्न करने की जरूरत है। हमारे आमदनी-खर्च का लेखा-जोखा तैयार करने की प्रणाली का मार्गदर्शक सिद्धान्त यह होना चाहिए कि एक-एक पाई युद्ध के लिए बचाई जाए, क्रान्तिकारी कार्य के लिए बचाई जाए तथा हमारे आर्थिक निर्माण के लिए बचाई जाए। राजकीय आय को खर्च करने के हमारे और क्वोमिन्ताङ के तरीके में तीव्र अन्तर होना चाहिए।

आज जबकि चीन आर्थिक तबाही का सामना कर रहा है, जबकि कोटि-कोटि जनता भूख और ठंड की मुसीबतें झेल रही है, ऐसे समय हमारी जन-सरकार तमाम कठिनाइयों की परवाह न करके क्रान्तिकारी युद्ध और राष्ट्र-हित के लिए बड़ी लगन के साथ आर्थिक निर्माण का काम कर रही है। यह बिलकुल साफ है कि जब हम साम्राज्यवाद और क्वोमिन्ताङ को परास्त कर लेंगे तथा योजनाबद्ध और सुसंगठित आर्थिक निर्माण का काम अपने कन्धों पर उठा लेंगे, केवल तभी हम इस अभूतपूर्व तबाही से समूचे देश की जनता का उद्धार कर सकेंगे।

नोट

१ जहां लाल इलाके स्थापित होते थे वहां अक्सर एक या दो साल तक खेती की उपज कम हो जाती थी। इसका मुख्य कारण यह था कि भूमि-वितरण में जमीन की मिलकियत का सवाल अभी तय नहीं हुआ था और न ही नई आर्थिक व्यवस्था पूरी तरह कायम हुई थी। इसलिए किसान अभी अपना मन उत्पादन में पूरी तरह नहीं लगा सके थे।

२ आपसी-सहायता श्रमिक ग्रुप और जुताई दल लाल इलाकों के किसानों द्वारा व्यक्तिगत खेती के आधार पर श्रमशक्ति को अपेक्षाकृत अच्छी तरह संगठित करके कृषि-उत्पादन को आगे बढ़ाने के लिए कायम किए गए थे। उनमें स्वेच्छा से शामिल होने और आपसी लाभ के सिद्धान्त पर अमल किया जाता था। इसके आधार पर सदस्य एक दूसरे के लिए बराबर मात्रा में काम करते थे और यदि कोई सदस्य अपने साथियों की उतनी मदद नहीं कर पाता था जितनी दूसरे लोग उसकी करते थे, तो वह इसके बदले हिसाब से पैसा दे देता था। एक दूसरे की सहायता करने के अलावा आपसी-सहायता श्रमिक ग्रुप, मदद के मामले में लाल

सेना के सैनिकों के परिवारों को तरजीह देते थे और उन बूढ़ों के लिए भी काम करते थे जिनका अपना कोई नहीं रह गया हो (ऐसे काम में भोजन के अलावा वे मजदूरी नहीं लेते थे)। चूंकि आपसी सहायता के ये उपाय उत्पादन में बड़ी मदद करते थे और यथोचित रूप से अपनाए जाते थे, इसलिए आम जनता इनका उत्साह के साथ समर्थन करने लगी। कामरेड माओ त्सेतुङ ने इनका वर्णन "छाङकाङ श्याङ का सर्वेक्षण" और "छाएशी श्याङ का सर्वेक्षण" शीर्षक अपनी रचनाओं में किया है।

आम जनता की जीवन-स्थिति का खयाल रखो और काम करने के तरीकों पर ध्यान दो*

२७ जनवरी १९३४

बहस के दौरान, साथी लोग दो समस्याओं पर जोर नहीं दे पाए हैं और मैं महसूस करता हूं कि उन समस्याओं का जिक्र किया जाना चाहिए।

पहली समस्या आम जनता की जीवन-स्थिति के बारे में है।

इस समय हमारा केन्द्रीय कार्य है क्रान्तिकारी युद्ध में भाग लेने के लिए आम जनता को गोलबन्द करना, इस तरह के युद्ध द्वारा साम्राज्यवाद और क्वोमिन्ताङ का तख्ता उलट देना, सारे देश में क्रान्ति का प्रसार करना और साम्राज्यवाद को चीन से बाहर खदेड़ देना। जो भी इस केन्द्रीय कार्य को उचित महत्व नहीं देता, वह एक अच्छा क्रान्तिकारी कार्यकर्ता नहीं है। यदि हमारे साथियों को इस केन्द्रीय कार्य का सचमुच बोध हो जाए और वे यह समझ लें कि किसी भी कीमत पर सारे देश में क्रान्ति का प्रसार होना ही

* यह कामरेड माओ त्सेतुङ के उस समापन भाषण का एक अंश है जिसे उन्होंने जनवरी १९३४ में च्याङशी प्रान्त के रुइचिन नामक स्थान में आयोजित मजदूर-किसान प्रतिनिधियों की दूसरी राष्ट्रीय कांग्रेस में दिया था।

चाहिए, तो वे ग्राम जनता के तात्कालिक हितों की समस्या को, उसकी जीवन-स्थिति की समस्या को जरा भी नजरअन्दाज नहीं कर सकते, उसे हल्के ढंग से नहीं ले सकते। कारण यह कि क्रान्तिकारी युद्ध ग्राम जनता का युद्ध होता है ; ग्राम जनता को गोलबन्द करके और उस पर भरोसा करके ही हम यह युद्ध चला सकते हैं।

अगर हम युद्ध चलाने के लिए केवल ग्राम जनता को गोलबन्द करने का ही काम करें तथा इसके अलावा और कोई काम न करें, तो क्या हम दुश्मन को शिकस्त देने में कामयाब हो सकते हैं ? कतई नहीं। अगर हम जीतना चाहते हैं तो हमें और भी बहुत सा काम करना होगा। हमें भूमि सम्बन्धी संघर्षों में किसानों का नेतृत्व करना होगा और उनमें जमीन बांटनी होगी, उनके श्रम के उत्साह को बढ़ाना होगा तथा कृषि-उत्पादन बढ़ाना होगा, मजदूरों के हितों की रक्षा करनी होगी, सहकारी समितियों की स्थापना करनी होगी, बाह्य व्यापार बढ़ाना होगा, और ग्राम जनता के सामने जो समस्याएं हैं – कपड़े-लत्ते, खुराक, मकान, ईंधन, चावल, खाद्य-तेल व नमक, बीमारी व स्वास्थ्य-रक्षा तथा शादी-व्याह की जो समस्याएं हैं – उन्हें हल करना होगा। संक्षेप में यह कि ग्राम जनता को अपने रोजमर्रा के जीवन में जितनी भी वास्तविक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उन सभी पर हमें ध्यान देना चाहिए। यदि हम इन समस्याओं पर गौर करें, इन्हें हल करें और ग्राम जनता की आवश्यकताओं को पूरा कर दें, तो हम सचमुच जन-जीवन के संगठनकर्ता बन जाएंगे और ग्राम जनता वास्तव में हमारे चारों ओर गोलबन्द हो जाएगी तथा हृदय से हमारा समर्थन करेगी। साथियो, तब क्या क्रान्तिकारी युद्ध में भाग लेने के लिए हम ग्राम

जनता का आवाहन कर सकेंगे ? कर सकेंगे, अवश्य कर सकेंगे।

अपने कुछ कार्यकर्ताओं की ऐसी हालत का हमें पता चला है : वे केवल लाल सेना का प्रसार करने, परिवहन-कोर को बढ़ाने, भूमि-कर वसूल करने और बौण्ड की बिक्री बढ़ाने की ही बातें करते हैं ; जहां तक दूसरी बातों का सम्बन्ध है, वे न तो उनके बारे में बहस करते हैं और न उन पर ध्यान देते हैं, यहां तक कि वे उन्हें बिलकुल ही नजरअन्दाज कर देते हैं। मिसाल के लिए, एक समय था जब थिङचओ नगर सरकार केवल लाल सेना का प्रसार करने और परिवहन-कोर के लिए जनता को गोलबन्द करने में ही जुटी रहती थी और ग्राम जनता की जीवन-स्थिति की समस्या पर रत्ती भर भी ध्यान नहीं देती थी। थिङचओ नगर की ग्राम जनता के सामने ये समस्याएं थीं : उसके पास ईंधन नहीं था ; पूंजीपतियों ने नमक को अपने जखीरों में जमा कर रखा था, इसलिए बाजार में नमक नहीं मिलता था ; कुछ लोगों के पास रहने को घर न थे ; चावल की कमी थी और उसका भाव बहुत चढ़ा हुआ था। थिङ-चओ नगर की ग्राम जनता के सामने ये वास्तविक समस्याएं थीं और वह बड़ी उम्मीदें लगाए बैठी थी कि उन्हें हल करने में हम उसकी मदद करेंगे। लेकिन थिङचओ नगर सरकार ने इनमें से किसी समस्या पर भी गौर नहीं किया। यही कारण था कि जब नगर की नई मजदूर-किसान प्रतिनिधि-परिषद का चुनाव हुआ और परिषद ने पहली कुछ मीटिंगों में महज लाल सेना का प्रसार करने तथा परिवहन-कोर के लिए जनता को गोलबन्द करने पर ही विचार किया और ग्राम जनता की जीवन-स्थिति को कतई नजरअन्दाज कर दिया, तो सौ से अधिक प्रतिनिधियों को बाद की मीटिंगों में भाग

लेने की कोई इच्छा ही न रही और इस परिषद की और मीटिंगें नहीं हो सकीं। नतीजा यह हुआ कि लाल सेना का प्रसार करने में और परिवहन-कोर के लिए जनता को गोलबन्द करने में बहुत कम सफलता मिली। यह एक प्रकार की स्थिति है।

साथियो, आपको दो आदर्श श्याङों के बारे में जो पुस्तिकाएं दी गई हैं, उन्हें आपने पढ़ा होगा। वहां बिलकुल दूसरी ही स्थिति है। च्याङशी के छाङकाङ श्याङ[1] और फूच्येन के छाएशी श्याङ[2] में कितनी अधिक संख्या में लोग लाल सेना में भरती हुए हैं! छाङकाङ श्याङ में हर सौ नौजवान नर-नारियों में से अस्सी लाल सेना में भरती हो गए हैं। छाएशी श्याङ में यह संख्या सौ में अट्ठासी तक पहुंच गई है। बौण्ड-बिक्री भी अच्छी हुई है। छाङकाङ श्याङ की आबादी महज १,५०० है, लेकिन वहां के लोगों ने ४,५०० य्वान के मूल्य के बौण्ड खरीदे हैं। इसी तरह अन्य कार्यक्षेत्रों में भी भारी सफलताएं प्राप्त की गई हैं। इन सबका आखिर कारण क्या है? कुछ मिसालें देने से बात साफ हो जाएगी। छाङकाङ श्याङ में जब एक गरीब किसान के घर की एक कोठरी पूरी की पूरी तथा दूसरी कोठरी का लगभग आधा हिस्सा जल गया तो श्याङ सरकार ने उसकी मदद के लिए जनता से चन्दा देने की अपील की। एक दूसरी मिसाल लीजिए, उसी इलाके के तीन आदमी भूख से पीड़ित थे तो श्याङ सरकार और आपसी-सहायता सोसायटी ने तुरत चावल जमा करके उनकी मदद की। पिछली गर्मियों में जब अनाज की कमी हो गई तो श्याङ सरकार ने जनता की सहायता के लिए दो सौ ली से ज्यादा दूर स्थित कुङल्वे काउन्टी[3] से चावल मंगवाए। छाएशी श्याङ में भी इस सिलसिले में बहुत अच्छा काम किया गया।

इस तरह की श्याङ सरकारें सचमुच आदर्श सरकारें हैं। वे थिङचओ नगर सरकार से बिलकुल भिन्न हैं जिसके नेतृत्व का ढंग नौकरशाहाना है। हमें छाङकाङ और छाएशी श्याङों से शिक्षा लेनी चाहिए और थिङचओ नगर की तरह के नौकरशाह नेताओं का विरोध करना चाहिए।

मैं इस कांग्रेस के सामने तहेदिल से सुझाव रखता हूं कि हम आम जनता की भूमि और श्रम की समस्याओं से लेकर ईंधन, चावल, खाद्य-तेल और नमक की समस्या तक, उसकी जीवन-स्थिति से सम्बन्धित तमाम समस्याओं में गहरी दिलचस्पी लें। महिलाएं हल चलाना और पटेला फेरना सीखना चाहती हैं। उन्हें यह सिखाने के लिए हम किसे पकड़ें? बच्चे स्कूल जाना चाहते हैं। क्या हमने कोई प्राथमिक पाठशाला खोली है? सामने जो लकड़ी का पुल नजर आ रहा है, वह बहुत तंग है और लोगों के गिर जाने का अंदेशा है। क्या उसकी मरम्मत नहीं की जानी चाहिए? बहुत से लोगों के फोड़े-फुंसी निकल आए हैं या उन्हें अन्य शिकायतें हैं। इसका हम क्या उपाय कर सकते हैं? आम जनता की जीवन-स्थिति से सम्बन्ध रखने वाली इस तरह की सभी समस्याओं को हमें अपनी कार्यसूची में शामिल कर लेना चाहिए। उन पर हमें बहस करनी चाहिए, फैसले लेने चाहिए, फैसलों पर अमल करना चाहिए और नतीजों की जांच कर लेनी चाहिए। आम जनता में हमें यह एहसास पैदा कर देना चाहिए कि हम उसके हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा हमारा और उसका जीवन घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। जो इससे भी बड़े काम, यानी क्रान्तिकारी युद्ध के काम, हमने प्रस्तुत किए हैं, उन्हें उपरोक्त बातों के आधार पर समझने में जनता की

मदद करनी चाहिए जिससे कि वह क्रान्ति का समर्थन करे और सारे देश में उसका प्रसार करे, हमारी राजनीतिक अपीलों पर अमल करे और क्रान्ति की विजय के लिए अन्त तक संघर्ष करे। छाङकाङ श्याङ की आम जनता कहती है : "कम्युनिस्ट पार्टी सचमुच बहुत अच्छी है ! उसने हमारी हर बात का ध्यान रखा है।" छाङकाङ श्याङ के कार्यकर्ता हम सबके लिए एक आदर्श हैं। कितने आदरणीय लोग हैं वे ! उन्होंने व्यापक जन-समुदाय का सच्चा स्नेह प्राप्त कर लिया है। युद्ध के लिए गोलबन्द होने का उन्होंने जो आवाहन किया है, उसे व्यापक जन-समुदाय का समर्थन प्राप्त हुआ है। क्या हम आम जनता का समर्थन प्राप्त करना चाहते हैं ? क्या हम चाहते हैं कि आम जनता युद्ध के मोर्चे के लिए भरपूर प्रयत्न करे ? अगर चाहते हैं, तो हमें आम जनता में जाना चाहिए, उसके उत्साह व उसकी पहलकदमी को उभारना चाहिए, उसके दुख-सुख का ध्यान रखना चाहिए, उसके हित में सच्चाई से और लगन से काम करना चाहिए और उसकी उत्पादन तथा जीवन-स्थिति की सभी समस्याओं को हल करना चाहिए – नमक, चावल, मकान, कपड़े-लत्ते और बच्चे जनने तक की सभी समस्याओं को हल करना चाहिए। यदि हम ऐसा करेंगे तो व्यापक जन-समुदाय जरूर हमारा समर्थन करेगा और क्रान्ति को अपना प्राण, अपना सबसे शानदार फरहरा समझेगा। यदि लाल इलाकों पर क्वोमिन्ताङ ने हमला किया, तो व्यापक जन-समुदाय लड़ाई में जान की बाजी लगा देगा। इसमें रत्तीभर भी सन्देह नहीं है। क्या हमने दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी मुहिमों को वास्तव में चकनाचूर नहीं कर दिया ?

क्वोमिन्ताङ इस समय किलेबन्दी-लड़ाई की नीति[४] पर चल रही है, बड़ी सरगरमी के साथ बहुत से "कच्छप-कवच" निर्मित कर रही है मानो वे उसके लोहे के दुर्ग हों। साथियो, क्या ये सचमुच लोहे के दुर्ग हैं ? कतई नहीं ! भला सोचिए तो : क्या सामन्ती सम्राटों के हजारों साल से चले आ रहे प्रासाद अपनी दीवारों व खाइयों समेत मजबूती से नहीं खड़े थे ? लेकिन जैसे ही आम जनता उठी, वे एक के बाद एक ढहते चले गए। रूस का जार संसार में सबसे खूंखार शासकों में से एक था, लेकिन जब सर्वहारा वर्ग और किसानों की क्रान्ति फूटी, तो उसका क्या रह गया ? कुछ भी नहीं। उसके लोहे के दुर्गों का क्या हुआ ? वे सब ढह गए। साथियो, लोहे का असली दुर्ग क्या है ? वह आम जनता ही है, कोटि-कोटि जनता जो सचमुच और सच्चे हृदय से क्रान्ति का समर्थन करती है। वही वास्तव में लोहे का दुर्ग है जिसे दुनिया की कोई भी शक्ति गिरा नहीं सकती, और हरगिज गिरा नहीं सकती। प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां हमें बरबाद नहीं कर सकतीं ; उल्टे हम उन्हें अवश्य बरबाद कर सकते हैं। क्रान्तिकारी सरकार के चारों ओर कोटि-कोटि जनता को गोलबन्द करके और अपने क्रान्तिकारी युद्ध का प्रसार करके, हम सभी किस्म की प्रतिक्रान्ति का सफाया कर डालेंगे और सारे चीन पर अधिकार कर लेंगे।

दूसरी समस्या काम करने के तरीकों के सम्बन्ध में है।

हम लोग क्रान्तिकारी युद्ध के नेता व संगठनकर्ता हैं तथा जन-जीवन के नेता व संगठनकर्ता भी हैं। क्रान्तिकारी युद्ध का संगठन करना और जनता की जीवन-स्थिति को सुधारना – ये हमारे दो प्रमुख कार्य हैं। यहां हमारे सामने काम करने के तरीकों की गम्भीर

समस्या आ खड़ी होती है। हमें न केवल कार्य निर्धारित करने चाहिए, बल्कि उन्हें पूरा करने के तरीकों की समस्या को भी हल करना चाहिए। यदि हमारा कार्य नदी पार करना हो, तो हम पुल या नाव के बिना उसे पार नहीं कर सकते। पुल या नाव की समस्या हल किए बिना नदी पार करने की सारी चर्चा व्यर्थ होगी। तरीकों की समस्या हल किए बिना कार्यों की चर्चा व्यर्थ है। हम भले ही "लाल सेना के प्रसार" का मंत्र हजार बार जपें, पर लाल सेना के प्रसार में नेतृत्व की ओर ध्यान दिए बिना, अथवा उसके प्रसार के तरीकों को खास तौर से महत्व दिए बिना हमें हरगिज सफलता नहीं मिलेगी। न ही हम किसी दूसरे क्षेत्र में, मिसाल के लिए भूमि के बंटवारे की जांच-पड़ताल में या आर्थिक निर्माण में या संस्कृति व शिक्षा के क्षेत्र में अथवा नए इलाकों तथा सीमान्त क्षेत्रों में अपना काम पूरा कर सकेंगे, अगर हम केवल कार्य ही निर्धारित करते रहें और उन्हें पूरा करने के तरीकों पर ध्यान न दें, अगर हम काम के नौकरशाही तरीकों का विरोध न करें और काम के व्यावहारिक और ठोस तरीके न अपनाएं, और अगर हम काम करने के फरमानशाही ढंग का त्याग न करें और धीरज के साथ समझाने-बुझाने का तरीका न अपनाएं।

शिङक्वो के साथियों ने अव्वल दर्जे का काम किया है और वे आदर्श कार्यकर्ता कहलाने योग्य हैं। इसी तरह उत्तर-पूर्वी च्याङशी के साथियों ने भी बेहतरीन काम किया है और वे भी आदर्श कार्यकर्ता हैं। शिङक्वो और उत्तर-पूर्वी च्याङशी के साथियों ने आम जनता के जीवन की समस्या को क्रान्तिकारी युद्ध से जोड़ लिया है और उन्होंने अपने क्रान्तिकारी कार्यों की समस्या के साथ ही काम के क्रान्तिकारी

तरीकों की समस्या भी हल कर ली है। वे संजीदगी से काम कर रहे हैं, बड़ी बारीकी के साथ समस्याएं हल कर रहे हैं और अपनी क्रान्तिकारी जिम्मेदारियों को सच्चे दिल से निभा रहे हैं; वे क्रान्तिकारी युद्ध के तथा साथ ही साथ जन-जीवन के भी अच्छे संगठनकर्ता और नेता हैं। इसके अलावा फूच्येन प्रान्त की शाङहाङ, छाङथिङ और युङतिङ काउन्टियों के कुछ स्थानों में; दक्षिणी च्याङशी प्रान्त के शोच्याङ तथा कुछ अन्य स्थानों में; हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की छालिङ, युङशिन और चीआन काउन्टियों के कुछ स्थानों में; हुनान-हुपे-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की याङशिन काउन्टी के कुछ स्थानों में; च्याङशी प्रान्त की अन्य बहुत सी काउन्टियों के जिलों और श्याङों में; और रुइचिन काउन्टी में जहां केन्द्रीय सरकार का प्रत्यक्ष शासन है—इन सब स्थानों में साथियों ने अपने काम में प्रगति की है और वे भी हमारी प्रशंसा के पात्र हैं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन सभी जगहों में जहां हमारा नेतृत्व है, बहुत से सक्रिय कार्यकर्ता, ऐसे साथी जो बेहतरीन काम कर सकते हैं, आम जनता के बीच से ही पैदा हुए हैं। इन साथियों के कन्धों पर एक विशेष जिम्मेदारी है—वह यह कि जहां काम ठीक नहीं होता, वहां उसे सुधारने में मदद करें तथा जो साथी अब भी अच्छी तरह काम नहीं कर पाते, उनकी सहायता करें। हम एक महान क्रान्तिकारी युद्ध के बीच से गुजर रहे हैं। बड़े पैमाने पर "घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की मुहिम को हमें तोड़ देना है और सारे देश में क्रान्ति का प्रसार करना है। सभी क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं के सिर पर भारी जिम्मेदारी है। इस कांग्रेस के बाद अपने काम में सुधार करने के लिए हमें कारगर उपाय करने होंगे। आगे

बढ़े इलाकों को और आगे बढ़ाना होगा और पिछड़े इलाकों को आगे बढ़े इलाकों की बराबरी में ले आना होगा। हमें छाङकाङ जैसे हजारों श्याङ और शिङक्वो जैसी बीसियों काउन्टियां बनानी होंगी। ये हमारे मजबूत गढ़ होंगे। इन गढ़ों से आगे बढ़कर हम दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को छिन्न-भिन्न कर डालेंगे और सारे देश में साम्राज्यवाद व क्वोमिन्ताङ के शासन को उखाड़ फेंकेंगे।

नोट

१ छाङकाङ श्याङ च्याङशी प्रान्त की शिङक्वो काउन्टी में है।

२ छाएशी श्याङ फ़ूच्येन प्रान्त की शाङहाङ काउन्टी में है।

३ कुङल्वे काउन्टी उस समय च्याङशी के लाल इलाके में थी, जिसका प्रशासनिक केन्द्र चीआन काउन्टी के दक्षिण-पूर्व में तुङकू कस्बा था। इस जगह का नाम कामरेड ह्वाङ कुङ-ल्वे के नाम पर रखा गया था। कामरेड ह्वाङ कुङ-ल्वे लाल सेना की तीसरी फौजी कोर के कमाण्डर थे और अक्तूबर १९३१ में उन्होंने यहीं अपने प्राणों का बलिदान किया था।

४ जुलाई १९३३ में च्याङशी के लूशान पर्वत में आयोजित एक सैनिक सम्मेलन में च्याङ काई-शेक द्वारा यह फैसला किया गया कि "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के लिए वह लाल इलाकों के चारों ओर किलेबन्दियां कायम करने की नई फौजी कार्यनीति अपनाएगा। जनवरी १९३४ के अन्त तक च्याङशी में अनुमानतः २,९०० किलेबन्दियां बनाई जा चुकी थीं। बाद में, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना से लड़ते हुए जापानी हमलावरों ने भी च्याङ काई-शेक की यही कार्यनीति अपनाई थी। ऐतिहासिक तथ्यों ने यह पूरी तरह साबित कर दिया है कि कामरेड माओ त्सेतुङ की लोकयुद्ध की रणनीति पर डटे रहने से प्रतिक्रान्ति की इस कार्यनीति को अवश्य विफल और परास्त किया जा सकता है।

जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में*

२७ दिसम्बर १९३५

वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति की विशेषताएं

साथियो, राजनीतिक परिस्थिति में अब एक महान परिवर्तन हो चुका है। हमारी पार्टी ने इस बदली हुई परिस्थिति के अनुकूल अपने कार्य निर्धारित किए हैं।

वर्तमान परिस्थिति क्या है?

वर्तमान परिस्थिति की बुनियादी विशेषता यह है कि जापानी साम्राज्यवाद चीन को अपना उपनिवेश बनाना चाहता है।

हम सब जानते हैं कि लगभग सौ वर्षों से चीन कई साम्राज्यवादी देशों के संयुक्त प्रभुत्व के अधीन एक अर्ध-औपनिवेशिक देश रहा

*यह रिपोर्ट कामरेड माओ त्सेतुङ ने उत्तरी शेनशी के वायाओपाओ में आयोजित पार्टी के सक्रिय तत्वों के सम्मेलन में पेश की थी। यह सम्मेलन चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा दिसम्बर १९३५ में आयोजित वायाओपाओ मीटिंग के बाद हुआ था। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की यह मीटिंग अत्यन्त महत्वपूर्ण थी क्योंकि इसमें पार्टी के भीतर मौजूद इस गलत दृष्टिकोण की आलोचना की

है। साम्राज्यवाद के विरुद्ध चीनी जनता के संघर्ष और साम्राज्यवादी देशों के आपसी संघर्ष के कारण ही चीन अपनी अर्ध-स्वाधीन स्थिति को अब तक कायम रख सका है। प्रथम विश्वयुद्ध ने कुछ समय के लिए जापानी साम्राज्यवाद को यह अवसर दे दिया था कि वह अकेले ही चीन पर अपना प्रभुत्व जमा ले। लेकिन जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध चीनी जनता के संघर्ष और अन्य साम्राज्यवादी देशों के हस्तक्षेप के कारण चीन को जापान के हवाले करने वाली २१ मांगों[१] की सन्धि, जिस पर उस समय के अव्वल नम्बर के गद्दार य्वान श-खाए[२] ने हस्ताक्षर किए थे, मजबूरी से अप्रभावी घोषित कर दी गई। १९२२ में संयुक्त राज्य अमरीका ने वाशिंगटन

गई कि चीन का राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग जापान का प्रतिरोध करने में मजदूरों और किसानों का संश्रयकारी नहीं बन सकता, तथा इसमें राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा स्थापित करने की कार्यनीति निर्धारित की गई। राजनीतिक ब्यूरो के निर्णयों के आधार पर कामरेड माओ त्सेतुङ ने अपनी इस रिपोर्ट में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के साथ इस शर्त पर कि जापान का प्रतिरोध अवश्य किया जाए, फिर से संयुक्त मोर्चा बनाने की सम्भावना और महत्व की विस्तार से व्याख्या की, और संयुक्त मोर्चे में कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना की निर्णयात्मक महत्व की नेतृत्वकारी भूमिका पर जोर दिया, तथा चीनी क्रान्ति के दीर्घकालीन स्वरूप को बतलाया और एक लम्बे अरसे से पार्टी के भीतर मौजूद उस संकीर्ण रुद्धद्वारवाद और क्रान्ति के प्रति उस उतावलेपन की आलोचना की जो पार्टी और लाल सेना को द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के काल में प्राप्त होने वाली गम्भीर असफलताओं के बुनियादी कारण थे। साथ ही कामरेड माओ त्सेतुङ ने १९२७ की क्रान्ति की उस पराजय के ऐतिहासिक सबक की ओर भी पार्टी का ध्यान आकर्षित किया जो छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी अवसरवाद के कारण हुई थी, और उन्होंने इस बात की ओर भी संकेत किया कि च्याङ काई-शेक निश्चय ही क्रान्तिकारी शक्तियों के बीच तोड़-

में नौ देशों का सम्मेलन बुलाया और उसमें हुई सन्धि[३] के फलस्वरूप चीन फिर कई साम्राज्यवादी देशों के संयुक्त प्रभुत्व में आ गया। लेकिन जल्दी ही स्थिति फिर बदल गई। १८ सितम्बर १९३१ की घटना[४] के समय से जापान द्वारा चीन को अपना उपनिवेश बनाए जाने की मंजिल शुरू हुई। चूंकि जापानी आक्रमण अस्थाई तौर पर चीन के चार उत्तर-पूर्वी प्रान्तों[५] तक ही सीमित था, इसलिए कुछ लोगों को यह खयाल हो गया कि शायद जापानी साम्राज्यवाद अब और आगे न बढ़ेगा। आज स्थिति भिन्न है। जापानी साम्राज्यवादियों ने चीन की लम्बी दीवार के दक्षिण में प्रवेश करने और समूचे चीन पर अधिकार करने का इरादा जाहिर कर दिया है। अब जापानी

फोड़ करने की कोशिश करेगा। इस तरह उन्होंने हमारी पार्टी को इस योग्य बना दिया कि वह स्पष्ट सूझबूझ हासिल करके नई परिस्थिति में पैदा होने वाली समस्याओं से निपट सकी और च्याङ काई-शेक की अनगिनत चालबाजियों तथा उसके बहुत से सशस्त्र आक्रमणों के बावजूद, क्रान्तिकारी शक्तियों को नुकसान से बचा सकी। जनवरी १९३५ में, क्वेइचओ प्रान्त के चुनई में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की विस्तृत मीटिंग आयोजित की गई, जिसमें पहले के "वामपंथी" अवसरवादी नेतृत्व के स्थान पर कामरेड माओ त्सेतुङ की रहनुमाई में नया केन्द्रीय नेतृत्व कायम किया गया। चूंकि यह मीटिंग लाल सेना के लम्बे अभियान के दौरान हुई थी, इसलिए उसमें केवल सबसे फौरी फौजी मामलों पर तथा केन्द्रीय कमेटी के सचिवालय व क्रान्तिकारी फौजी कमीशन के संगठन की समस्याओं पर ही निर्णय लिए जा सके। जब लाल सेना लम्बा अभियान पूरा करके उत्तरी शेनशी में पहुंच गई, सिर्फ तभी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के लिए यह सम्भव हो सका कि वह राजनीतिक कार्यनीति सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं की व्यवस्थित रूप से व्याख्या करे। कामरेड माओ त्सेतुङ ने अपनी इस रिपोर्ट में इन्हीं समस्याओं का सम्पूर्ण रूप से विश्लेषण किया है।

साम्राज्यवाद सारे चीन को, जो कई साम्राज्यवादी ताकतों के हाथों बंटा हुआ अर्ध-औपनिवेशिक देश रहा है, अपने अधीन एक ऐसा उपनिवेश बनाना चाहता है जिस पर केवल उसी की इजारेदारी कायम हो। हाल की पूर्वी हपे की घटना [६] और राजनयिक वार्ताएं [७] इस घटना-क्रम की ओर, जिसने समूची चीनी जनता के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा कर दिया है, स्पष्टतः संकेत कर रही हैं। ऐसी स्थिति में, चीन के सभी वर्गों और राजनीतिक ग्रुपों के सामने यह सवाल दरपेश है कि वे क्या करें। प्रतिरोध करें? या आत्मसमर्पण कर दें? या दोनों के बीच डांवांडोल होते रहें?

अब हम देखें कि चीन के विभिन्न वर्ग इस प्रश्न का क्या उत्तर देते हैं।

चीन के सभी मजदूर और किसान प्रतिरोध की मांग कर रहे हैं। १९२४-२७ की क्रान्ति, १९२७ से आज तक चल रही भूमि-क्रान्ति, १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद के जापान-विरोधी उभार — इन सबने साबित कर दिया है कि चीन के मजदूर वर्ग और किसान वर्ग चीनी क्रान्ति की सबसे अधिक सुदृढ़ शक्ति हैं।

चीन का निम्न-पूंजीपति वर्ग भी प्रतिरोध की मांग कर रहा है। नौजवान विद्यार्थियों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग ने क्या एक जापान-विरोधी विशाल आन्दोलन [८] की शुरुआत नहीं कर दी है? चीन के निम्न-पूंजीपति वर्ग के इस भाग ने १९२४-२७ की क्रान्ति में हिस्सा लिया था। किसानों की ही तरह, आर्थिक स्थिति की दृष्टि से, वे भी छोटे उत्पादकों की श्रेणी में आते हैं और साम्राज्यवाद के हितों के साथ उनका बुनियादी टकराव है। साम्राज्यवाद और चीन की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों ने उन्हें बहुत अधिक हानि पहुंचाई

है और उनमें से अनेक लोगों को बेरोजगारी, दिवालियेपन और अर्ध-दिवालियेपन की स्थिति में ढकेल दिया है। अब एक विदेशी राज्य के गुलाम बनने के फौरी खतरे के कारण उनके सामने प्रतिरोध के अलावा कोई अन्य रास्ता नहीं है।

लेकिन राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग, दलाल-पूंजीपति वर्ग और जमींदार वर्ग तथा क्वोमिन्ताङ इस सवाल का क्या उत्तर देते हैं?

बड़े स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों, बड़े युद्ध-सरदारों, बड़े नौकरशाहों और बड़े दलाल-पूंजीपतियों ने तो बहुत पहले से ही अपने मनसूबे बांध रखे हैं। वे पहले से ही यह कहते रहे हैं और अब भी कहते हैं कि क्रान्ति (वह चाहे कैसी ही क्यों न हो) साम्राज्यवाद की तुलना में अवश्य बुरी ही होगी। उन्होंने गद्दारों का एक खेमा ही बना लिया है। उनके लिए तो किसी विदेशी राज्य के दास बनने या न बनने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि उन्होंने अपनी राष्ट्रीयता की भावना को ही तिलांजलि दे दी है और उनके हित साम्राज्यवाद के हितों से अभिन्न रूप से जुड़ चुके हैं। उनका सरगना च्याङ काई-शेक [९] ही है। गद्दारों का यह खेमा चीनी जनता का जानी दुश्मन है। इन गद्दारों के बिना जापानी साम्राज्यवाद अपने आक्रमण में इतना नंगा कभी नहीं हो सकता था। ये तो साम्राज्यवाद के पालतू कुत्ते हैं।

राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की समस्या पेचीदा है। इस वर्ग ने १९२४-२७ की क्रान्ति में हिस्सा लिया था। लेकिन इस क्रान्ति की लपटों से भयभीत होकर बाद में वह जनता के शत्रु, च्याङ काई-शेक गुट के पक्ष में चला गया। सवाल यह है कि क्या मौजूदा परिस्थितियों में यह सम्भावना मौजूद है कि इस वर्ग में परिवर्तन हो जाएगा? हम समझते हैं कि हां, यह सम्भावना मौजूद है। कारण यह कि राष्ट्रीय पूंजीपति

वर्ग न तो जमींदार वर्ग की तरह है और न दलाल-पूंजीपति वर्ग की तरह; उनमें अन्तर है। राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग जमींदार वर्ग से कम सामन्ती और दलाल-पूंजीपति वर्ग से कम दलाल है। राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का एक भाग विदेशी पूंजी और चीन के भूस्वामित्व से ज्यादा सम्बन्ध रखता है। यह भाग राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का दक्षिण पक्ष है। फिलहाल, हम इस बात पर विचार नहीं करेंगे कि यह भाग बदल सकता है या नहीं। समस्या इसके उन भागों की है जिनके इस प्रकार के सम्बन्ध हैं ही नहीं, या अपेक्षाकृत कम हैं। हमारा विचार है कि नई परिस्थिति में जबकि चीन को उपनिवेश बना दिए जाने का खतरा मौजूद है, राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के इन भागों का रुख बदल सकता है। यह परिवर्तन उनके ढुलमुल होने में जाहिर होता है। एक ओर तो उन्हें साम्राज्यवाद नापसन्द है और दूसरी ओर वे मुकम्मिल क्रान्ति से भी डरते हैं। वे इन दोनों स्थितियों के बीच डांवांडोल होते रहते हैं। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने १९२४-२७ की क्रान्ति में क्यों भाग लिया था और इस क्रान्ति के अन्तिम दिनों में वे च्याङ काई-शेक के पक्ष में क्यों चले गए थे। १९२७ में जब च्याङ काई-शेक ने क्रान्ति के साथ विश्वासघात किया था, तब और आज के काल में क्या अन्तर है? चीन उस समय तक एक अर्ध-उपनिवेश था, लेकिन अब वह एक उपनिवेश बनता जा रहा है। पिछले ९ वर्षों से राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग ने अपने संश्रयकारी, मजदूर वर्ग का साथ छोड़ रखा है और जमींदार वर्ग व दलाल-पूंजीपति वर्ग से दोस्ती गांठ रखी है। लेकिन क्या इससे उसे लाभ हुआ? नहीं, कुछ भी लाभ नहीं हुआ। जो कुछ उसके हाथ लगा, वह राष्ट्रीय उद्योग व वाणिज्य का दिवालियापन

या अर्ध-दिवालियापन ही है। इसलिए, हमारा विचार है कि मौजूदा परिस्थिति में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का रुख बदल सकता है। यह परिवर्तन किस हद तक होगा? इसमें आम विशेषता ढुलमुलपन ही है। लेकिन संघर्ष की कुछ विशेष मंजिलों में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का एक भाग (वाम पक्ष) संघर्ष में भाग ले सकता है और दूसरा भाग ढुलमुलपन की स्थिति से आगे बढ़कर तटस्थ हो सकता है।

छाए थिङ-खाए आदि व्यक्तियों के नेतृत्व में चल रही १९वीं राह सेना[१०] किन वर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है? वह राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग की उच्च श्रेणी तथा देहात के धनी किसानों और छोटे जमींदारों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है। छाए थिङ-खाए और उसके साथियों ने क्या एक बार अपनी जान की भी बाजी लगाकर लाल सेना से मोर्चा नहीं लिया था? हां, लिया था। लेकिन बाद में उन्होंने लाल सेना से जापान-विरोधी और च्याङ-विरोधी संश्रय कायम कर लिया। च्याङशी में उन्होंने लाल सेना पर हमला किया था, लेकिन बाद में शांघाई में जापानी साम्राज्यवाद का प्रतिरोध किया; फ़ूच्येन पहुंचने के बाद उन्होंने लाल सेना से समझौता कर लिया और च्याङ काई-शेक पर धावा बोल दिया। छाए थिङ-खाए और उसके साथी भविष्य में चाहे जो भी राह अपनाएं, और चाहे उस समय फ़ूच्येन की जन-सरकार संघर्ष के लिए जनता को गोलबन्द न करने की अपनी पुरानी लीक पर चलती रहे, उनकी जिन बन्दूकों का मुंह पहले लाल सेना की ओर था, उन्हें अब जापानी साम्राज्यवाद और च्याङ काई-शेक की ओर घुमा देना क्रान्ति के लिए उपयोगी ही माना जाएगा। यह क्वोमिन्ताङ के खेमे में दरार का द्योतक था। १८ सितम्बर

१६३१ की घटना के बाद की परिस्थितियों में यदि यह भाग क्वोमिन्ताङ के खेमे से टूटकर अलग हो सकता था, तो आज की परिस्थितियों में क्वोमिन्ताङ के दूसरे भाग टूटकर क्यों अलग नहीं हो सकते? हमारी पार्टी में वे लोग गलती पर हैं जो यह समझते हैं कि जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग का समूचा खेमा एकताबद्ध और दृढ़ है और किन्हीं भी परिस्थितियों में उसे बदला नहीं जा सकता। ऐसे लोग न केवल आज की गम्भीर परिस्थिति को नहीं समझते, बल्कि वे इतिहास को भी भूल गए हैं।

मैं अतीत के बारे में कुछ और कहना चाहता हूं। १६२६ और १६२७ में जब क्रान्तिकारी सेना ऊहान की ओर बढ़ रही थी, जब उसने ऊहान पर अधिकार कर लिया और हनान में प्रवेश किया, तब थाङ शङ-च और फ़ङ य्वी-श्याङ[११] ने क्रान्ति में भाग लिया था। १६३३ में फ़ङ य्वी-श्याङ ने छाहाड़ प्रान्त में जापान-विरोधी संश्रयबद्ध सेना की स्थापना करने में कम्युनिस्ट पार्टी के साथ कुछ समय के लिए सहयोग किया था।

दूसरी जोरदार मिसाल लीजिए। क्वोमिन्ताङ की २६वीं राह सेना ने १६वीं राह सेना के साथ मिलकर एक बार च्याङशी में लाल सेना पर हमला कर दिया, लेकिन क्या उसने दिसम्बर १६३१ में निङतू विद्रोह[१२] नहीं किया और उसके बाद वह लाल सेना का अंग नहीं बन गई? निङतू विद्रोह के नेता चाओ पो-शङ, तुङ चन-थाङ आदि क्रान्ति के पक्के साथी बन गए हैं।

तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों में मा चान-शान की जापान-विरोधी कार्यवाही[१३] से जाहिर हो गया है कि शासकों के खेमे में एक अन्य दरार पड़ गई है।

ये सभी मिसालें इस बात का संकेत करती हैं कि जब जापानी बमवर्षक सारे चीन पर धावा बोलने लगेंगे, जब संघर्ष अपनी साधारण गति बदलकर अचानक तेजी से आगे बढ़ने लगेगा, तब दुश्मन के खेमे में फूट पड़ जाएगी।

साथियो, अब इस समस्या के दूसरे पहलू को लीजिए।

यदि कोई राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की राजनीतिक और आर्थिक कमजोरी के आधार पर हमारी धारणाओं पर आपत्ति करते हुए यह कहे कि नई परिस्थितियों में भी चीन के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का रुख नहीं बदल सकता, तो क्या यह सही होगा? मैं समझता हूं, यह भी गलत होगा। यदि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग द्वारा अपना रुख न बदल सकने का कारण उसकी कमजोरी है, तो उसने १६२४-२७ में अपना सामान्य रुख क्यों बदल दिया, जबकि वह न केवल ढुलमुल ही रहा, बल्कि उसने क्रान्ति में भी भाग लिया? क्या कोई कह सकता है कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की कमजोरी एक ऐसा नया रोग है जो उसे जन्म के बाद लगा, और एक ऐसा रोग नहीं है जो उसे गर्भ से ही लग गया था? क्या कोई कह सकता है कि यह वर्ग आज तो कमजोर है, लेकिन उस समय कमजोर नहीं था? एक अर्ध-उपनिवेश की राजनीति और अर्थव्यवस्था की एक मुख्य विशेषता होती है उसके राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की कमजोरी। यही कारण है कि साम्राज्यवाद इस वर्ग पर सवारी गांठने की जुर्रत करता है और इसी वजह से इस वर्ग की एक विशेषता यह है कि वह साम्राज्यवाद को नापसन्द करता है। बेशक, इनकार करने के बजाय हम इस बात को पूरी तरह स्वीकार करते हैं कि उसकी इस कमजोरी के कारण ही साम्राज्यवाद, जमींदार वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग

के लोग घूस के रूप में कुछ अस्थाई लाभ देकर इस वर्ग को अपनी ओर खींच सकते हैं ; तथा इसी वजह से इस वर्ग में क्रान्तिकारी पूर्णता का अभाव होता है। लेकिन फिर भी हम यह नहीं कह सकते कि वर्तमान परिस्थितियों में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग तथा जमींदार वर्ग व दलाल-पूंजीपति वर्ग के बीच कोई अन्तर नहीं है।

इसलिए हम जोर देकर यह बात कहते हैं कि जब राष्ट्रीय संकट नाजुक स्थिति में होगा, तो क्वोमिन्ताङ के खेमे में फूट पड़ जाएगी। यह फूट राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के ढुलमुलपन के रूप में तथा फ़ङ य्वी-श्याङ, छाए थिङ-खाए और मा चान-शान जैसे जापान-विरोधी व्यक्तियों के रूप में, जो कुछ समय के लिए प्रसिद्ध हो गए हैं, प्रकट हुई है। बुनियादी तौर पर देखें तो यह फूट प्रतिक्रान्ति के लिए हानिप्रद तथा क्रान्ति के लिए लाभप्रद है। चीन की राजनीति और अर्थव्यवस्था के असमान विकास के कारण, और इसके फलस्वरूप क्रान्ति के असमान विकास के कारण ऐसी फूट की सम्भावना बढ़ गई है।

साथियो, यह तो समस्या का सकारात्मक पक्ष हुआ। अब उसका नकारात्मक पक्ष लीजिए, यानी यह प्रश्न कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग में कुछ लोग ऐसे हैं जो अक्सर आम जनता को धोखा देने में माहिर हैं। ऐसा क्यों है ? इसलिए कि जनता के क्रान्तिकारी कार्य के सच्चे समर्थकों के अलावा इस वर्ग में बहुत से ऐसे लोग हैं जो कुछ समय के लिए क्रान्तिकारी या अर्ध-क्रान्तिकारी जामा पहन लेते हैं। इस प्रकार वे आम जनता को धोखा देने की हैसियत हासिल कर लेते हैं, जिससे आम जनता उनकी क्रान्तिकारी पूर्णता के अभाव को आसानी से नहीं देख पाती तथा उनके दिखावे और बनावटीपन

को आसानी से भांप नहीं पाती। इससे कम्युनिस्ट पार्टी की यह जिम्मेदारी बढ़ जाती है कि वह अपने संश्रयकारियों की आलोचना करे, झूठे क्रान्तिकारियों का पर्दाफाश करे और नेतृत्व पर कब्जा करे। यदि हम इस बात से इनकार करते हैं कि भारी उथल-पुथल के दौर में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग ढुलमुल हो सकता है और क्रान्ति में शामिल हो सकता है, तो इसका अर्थ यह है कि नेतृत्व पर कब्जा करने के हमारी पार्टी के कार्य को तिलांजलि दे दी गई है, या कम से कम उसको हल्के ढंग से लिया गया है। कारण यह कि जमींदारों और दलाल-पूंजीपतियों की ही तरह, यदि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग भी गद्दारों का बीभत्स रूप लेकर सामने आ जाए, तो नेतृत्व पर कब्जा करने के लिए उससे संघर्ष करने के कार्य को एकदम तिलांजलि दी जा सकेगी, या कम से कम उसको हल्के ढंग से लिया जा सकेगा।

भारी उथल-पुथल के दौर में चीन के जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग के रुख का आम विश्लेषण करते समय एक अन्य पहलू की ओर भी संकेत करना चाहिए और वह यह कि जमींदार वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग के खेमे में भी पूर्ण एकता नहीं है। इसका कारण अर्ध-उपनिवेश की परिस्थिति है, यानी एक ऐसी परिस्थिति जिसमें बहुत सी साम्राज्यवादी ताकतें चीन पर अधिकार करने के लिए होड़ कर रही हैं। जब संघर्ष जापानी साम्राज्यवाद के खिलाफ चल रहा हो, तो अमरीका या ब्रिटेन के पालतू कुत्ते अपने मालिकों की उंगलियों पर नाचते हुए जापानी साम्राज्यवादियों और उनके पालतू कुत्तों के खिलाफ प्रच्छन्न या खुला संघर्ष चला सकते हैं। अब से पहले भी कुत्तों की ऐसी बहुत सी लड़ाइयां हो चुकी हैं और यहां हम उनकी चर्चा नहीं करेंगे। यहां हम केवल इस बात का उल्लेख

करेंगे कि थोड़े ही दिन पहले क्वोमिन्ताङ के राजनीतिज्ञ हू हान-मिन[१४] ने भी, जिसे एक बार च्याङ काई-शेक ने नजरबन्द किया था, हमारे द्वारा प्रस्तावित जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के छःसूत्री कार्यक्रम[१५] पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। क्वाङतुङ गुट और क्वाङशी गुट के युद्ध-सरदार[१६] भी, जो हू हान-मिन के हिमायती हैं,ये छलपूर्ण नारे देकर कि "खोई हुई भूमि वापस लो" और "जापान का प्रतिरोध करने के साथ-साथ डाकुओं का भी विनाश करो"[१७] (च्याङ काई-शेक का नारा है : "जापान का प्रतिरोध करने के पहले डाकुओं का विनाश करो"), च्याङ काई-शेक के विरोध में डट गए हैं। क्या यह ताज्जुब की बात नहीं है? नहीं, यह जरा भी ताज्जुब की बात नहीं है। यह सिर्फ बड़े और छोटे कुत्तों, भरे पेट वाले और खाली पेट वाले कुत्तों के बीच की लड़ाई की एक खास तौर से दिलचस्प मिसाल है। यह एक दरार है जो न तो छोटी है और न बड़ी ; यह एक अन्तरविरोध है जो गुदगुदाता भी है और साथ-साथ पीड़ा भी देता है। लेकिन यह लड़ाई, दरार या अन्तर-विरोध क्रान्तिकारी जनता के लिए लाभकारी हैं। हमें चाहिए कि दुश्मन के खेमे में जितनी भी लड़ाइयां, दरारें और अन्तरविरोध हों, उनका पूरा-पूरा ब्यौरा रखें और उन्हें अपने वर्तमान मुख्य शत्रु के खिलाफ मोड़ दें।

वर्ग-सम्बन्धों की समस्या का सारांश निकालते हुए हम कह सकते हैं कि स्थिति में हुए इस बुनियादी परिवर्तन से, यानी जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा चीन की लम्बी दीवार के दक्षिण में किए गए आक्रमण से चीन के विभिन्न वर्गों के आपसी सम्बन्ध बदल गए हैं – राष्ट्रीय क्रान्ति के खेमे की ताकत बढ़ गई है और राष्ट्रीय

प्रतिक्रान्ति के खेमे की ताकत घट गई है।

अब हम चीन की राष्ट्रीय क्रान्ति के खेमे की परिस्थिति की चर्चा करेंगे।

पहले लाल सेना के बारे में। साथियो, जैसा कि आप जानते हैं लगभग डेढ़ साल में चीन की नियमित लाल सेना के तीन मुख्य सैन्य-दलों ने भारी स्थानान्तरण किया है। पिछले साल के अगस्त में रन पी-श[१८] आदि कामरेडों ने छठे सेना-ग्रुप को लेकर उस ओर स्थानान्तरण करना शुरू किया[१९] जिस ओर कामरेड हो लुङ की सेना स्थित थी, और उसके तुरन्त बाद अक्तूबर में हमने अपना स्थानान्तरण आरम्भ किया[२०]। इस साल मार्च में सछ्वान-शेनशी सीमान्त क्षेत्र की लाल सेना ने भी अपना स्थानान्तरण शुरू किया[२१]। इन तीनों मुख्य सैन्य-दलों ने अपनी पुरानी जगह छोड़ दी और वे नए इलाकों में चले गए। इन विशाल स्थानान्तरणों के परिणाम-स्वरूप पुराने इलाके छापामार इलाके बन गए। इन स्थानान्तरणों के दौरान लाल सेना काफी कमजोर पड़ गई। यदि हम सम्पूर्ण परिस्थिति के इस पहलू को ध्यान में रखें, तो हम देखेंगे कि शत्रु ने अस्थाई और आंशिक विजय प्राप्त की है, जबकि हमें अस्थाई और आंशिक पराजय का सामना करना पड़ा है। क्या यह कथन सही है? मेरी समझ में यह सही है क्योंकि यथार्थ स्थिति ऐसी ही है। लेकिन कुछ लोग (मिसाल के लिए चाङ क्वो-थाओ[२२])यह कहते हैं कि केन्द्रीय लाल सेना[२३] असफल हो गई है। क्या यह कथन सही है? नहीं, क्योंकि यथार्थ स्थिति ऐसी नहीं है। जब कोई मार्क्सवादी किसी समस्या की छानबीन करता है, तब उसे केवल अंशों को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण वस्तु को देखना चाहिए। कुएं के अन्दर बैठा हुआ

मेंढक कहता है, "आसमान कुएं के मुंह से बड़ा नहीं है।" यह गलत है, क्योंकि आसमान का आकार कुएं के मुंह के बराबर नहीं है। यदि मेंढक यह कहता कि "आसमान का एक अंश कुएं के मुंह के बराबर है", तो उसका कथन ठीक होता क्योंकि यह यथार्थ के अनुरूप होता। हमारा कहना है कि लाल सेना एक दिशा में (अपने मूल स्थानों की रक्षा करने में) असफल रही है, लेकिन दूसरी दिशा में (लम्बे अभियान की योजना पूरी करने में) उसे विजय प्राप्त हुई है। दूसरी ओर, शत्रु को एक दिशा में (हमारी सेना के मूल स्थानों पर कब्जा करने में) विजय प्राप्त हुई है, लेकिन दूसरी दिशा में ("घेरा डालने और विनाश करने" व "पीछा करने और विनाश करने" की योजना पूरी करने में) वह असफल रहा है। केवल यही कथन ठीक है, क्योंकि हमने लम्बा अभियान पूरा कर लिया है।

लम्बे अभियान की चर्चा करते हुए, पूछा जा सकता है, "उसका महत्व क्या है?" हमारा उत्तर है कि लम्बा अभियान अपने ढंग की पहली घटना है, जिसकी इतिहास में कोई मिसाल नहीं मिलती ; वह एक घोषणापत्र है, प्रचार-दल है, बीज डालने वाली मशीन है। जब फान कू ने पृथ्वी और आकाश को जुदा किया था और तीन चक्रवर्ती तथा पांच सम्राट राज्य करते थे,[१४] तब से आज तक इतिहास में क्या कभी भी हमारे जैसा लम्बा अभियान हुआ है? बारह महीनों तक, आकाश में रोजाना बीसियों हवाई जहाजों ने हमारी टोह लेते हुए हम पर बम बरसाए, जबकि जमीन पर कई लाख फौज ने हमें घेरा, हमारा पीछा किया, हमारे रास्ते में अड़चनें डालीं और हमारा रास्ता छेंका, तथा रास्ते में हमने अकथनीय कठिनाइयों और भारी जोखिमों का सामना किया ; फिर भी अपने दोनों पैरों

के भरोसे कूच जारी रखते हुए हमने ग्यारह प्रान्तों को एक छोर से दूसरे छोर तक पार करके २०,००० ली से ज्यादा फासला तय किया। बताइए, क्या इतिहास में कभी भी हमारे जैसा लम्बा अभियान हुआ है? नहीं, कभी नहीं। लम्बा अभियान एक घोषणापत्र भी है। उसने संसार के सामने घोषित कर दिया है कि लाल सेना एक वीरों की सेना है और साम्राज्यवादी और उनके पालतू कुत्ते, च्याङ काई-शेक और उसके जैसे लोग लाल सेना के सामने कोई हस्ती नहीं रखते। उसने साम्राज्यवादियों और च्याङ काई-शेक की घेरा डालने, पीछा करने, अड़चनें डालने और रास्ता छेंकने की नाकाम कोशिशों के दिवालियेपन का ऐलान कर दिया है। लम्बा अभियान एक प्रचार-दल भी है। उसने ग्यारह प्रान्तों की लगभग बीस करोड़ जनता के सामने यह ऐलान कर दिया है कि लाल सेना का रास्ता ही उसकी मुक्ति का रास्ता है। लम्बे अभियान के बिना व्यापक जन-समुदाय इतनी जल्दी यह कैसे जान सकता था कि संसार में ऐसी महान सच्चाई भी है जो लाल सेना के रूप में अभिव्यक्त हुई है? लम्बा अभियान बीज डालने वाली मशीन भी है। उसने ग्यारह प्रान्तों में बहुत से बीज डाले हैं, जो अंकुरित, पल्लवित और पुष्पित होंगे ; उनमें फल लगेंगे और भविष्य में फसल तैयार होगी। सारांश यह कि लम्बे अभियान का अन्त हमारी विजय और शत्रु की पराजय के रूप में हुआ है। लम्बे अभियान को आखिर विजय की मंजिल तक कौन ले गया? कम्युनिस्ट पार्टी ले गई। कम्युनिस्ट पार्टी के बिना इस तरह के लम्बे अभियान की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, उसका नेतृत्वकारी संगठन, उसके कार्यकर्ता और सदस्य किसी भी किस्म की कठिनाइयों या

मुसीबतों से नहीं डरते। जो कोई क्रान्तिकारी युद्ध के संचालन के बारे में हमारी क्षमता पर सन्देह करेगा, वह अवसरवाद की दलदल में जा फंसेगा। जैसे ही लम्बा अभियान पूरा हुआ, एक नई स्थिति पैदा हो गई। चलोचन की लड़ाई में केन्द्रीय लाल सेना और उत्तर-पश्चिमी लाल सेना ने, बिरादराना एकजुटता के साथ लड़ते हुए, गद्दार च्याङ काई-शेक की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम[२५] को, जो शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र के खिलाफ चलाई जा रही थी, तहस-नहस कर दिया, और इस तरह उन्होंने पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा उत्तर-पश्चिम में क्रान्ति का राष्ट्रीय सदर-मुकाम कायम किए जाने के कार्य की नींव डाल दी।

यह तो हुआ नियमित लाल सेना की स्थिति के बारे में, लेकिन दक्षिण के विभिन्न प्रान्तों में छापामार युद्ध का हाल क्या है? दक्षिण में छापामार युद्ध को थोड़ी असफलता का सामना अवश्य करना पड़ा है, लेकिन उसे नष्ट नहीं किया जा सका है। अनेक स्थानों में वह फिर जोर पकड़ता जा रहा है तथा बढ़ता और फैलता जा रहा है।[२६]

क्वोमिन्ताङ अधिकृत इलाकों में मजदूरों का संघर्ष कारखानों की दीवारों से बाहर की ओर, आर्थिक संघर्ष से राजनीतिक संघर्ष की ओर विकसित हो रहा है। जापानी आक्रमण के विरुद्ध और गद्दारों के विरुद्ध मजदूर वर्ग के वीरतापूर्ण संघर्ष में इस समय भारी उफान आ रहा है, और परिस्थिति को देखने से लगता है कि यह संघर्ष शीघ्र ही फूट पड़ेगा।

किसानों का संघर्ष कभी नहीं रुका। विदेशी आक्रमण, घरेलू मुसीबतों और प्राकृतिक आपत्तियों से पीड़ित किसानों ने छापामार

युद्ध, जन-विद्रोह, भुखमरी-बलवों आदि के रूप में व्यापक संघर्ष आरम्भ कर दिया है। जापानी साम्राज्यवाद के हमलों के जवाब में उत्तर-पूर्वी प्रान्तों और पूर्वी हपे में जापान-विरोधी छापामार युद्ध[२७] चल रहा है।

विद्यार्थी आन्दोलन का भी काफी विकास हुआ है और अवश्य ही वह और ज्यादा विकसित होगा। लेकिन जब इस आन्दोलन को मजदूरों, किसानों और सैनिकों के संघर्ष के साथ मिलाकर चलाया जाएगा, सिर्फ तभी इसे लगातार जारी रखा जा सकेगा, तथा गद्दारों द्वारा लागू किए गए मार्शल-ला और उनकी पुलिस, उनके खुफिया विभाग, शिक्षा जगत के निरंकुश तत्वों और फासिस्टों द्वारा लागू की गई तोड़फोड़ और जन-संहार की नीति को तहस-नहस किया जा सकेगा।

हम इस बात की चर्चा पहले ही कर चुके हैं कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग और देहात के धनी किसान व छोटे जमींदार ढुलमुल होते हैं और उनमें जापान-विरोधी संघर्ष में हिस्सा लेने की सम्भावना भी मौजूद रहती है।

अल्पसंख्यक जातियां, विशेषकर भीतरी-मंगोलियाई जाति, जिनके सामने जापानी साम्राज्यवाद का सीधा खतरा बढ़ता जा रहा है, अब संघर्ष के मैदान में उतर रही हैं। भविष्य में उनका संघर्ष उत्तरी चीन की जनता के संघर्ष और उत्तर-पश्चिम में लाल सेना की कार्यवाहियों के साथ मिल जाएगा।

इन सब बातों से पता चलता है कि क्रान्तिकारी परिस्थिति अंश के दायरे से आगे बढ़कर राष्ट्रव्यापी बनती जा रही है, और असमानता की अवस्था से कदम-ब-कदम आगे बढ़कर किसी हद तक

समानता की अवस्था में पहुंचती जा रही है। अब हम एक महान परिवर्तन की पूर्ववेला में हैं। पार्टी का कार्य है कि वह लाल सेना की कार्यवाहियों को सारे देश के मजदूरों, किसानों, विद्यार्थियों, निम्न-पूंजीपति वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की सभी कार्यवाहियों के साथ मिलाकर एक राष्ट्रीय क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चा कायम करे।

राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा

प्रतिक्रान्ति और क्रान्ति दोनों की ही परिस्थिति का अवलोकन करने के बाद, हमारे लिए पार्टी के कार्यनीति-सम्बन्धी कार्यों को स्पष्ट करना आसान होगा।

पार्टी का कार्यनीति-सम्बन्धी बुनियादी कार्य क्या है? यह कार्य एक व्यापक क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने के अलावा और कुछ नहीं है।

जब क्रान्तिकारी परिस्थिति में तब्दीली होती है, तो उसी के अनुकूल क्रान्तिकारी कार्यनीति और क्रान्तिकारी नेतृत्व के तरीकों में भी तब्दीली होनी चाहिए। जापानी साम्राज्यवादियों और चीनी गद्दारों व वतनफरोशों का कार्य है चीन को उपनिवेश बना डालना; हमारा कार्य है चीन को एक स्वाधीन, आजाद और पूर्ण प्रादेशिक अखण्डता वाला देश बना देना।

चीन की स्वाधीनता और आजादी प्राप्त करना एक महान कार्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें विदेशी साम्राज्यवाद और घरेलू प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों से लड़ना होगा। जापानी साम्राज्यवाद जोर-जबरदस्ती से चीन के भीतर तक घुस आने पर आमादा

है। स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग की घरेलू प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां अब भी जनता की क्रान्तिकारी शक्तियों से अधिक शक्तिशाली हैं। जापानी साम्राज्यवाद और चीन की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों को परास्त करने का कार्य सिर्फ दो-एक दिन में पूरा नहीं हो सकता, इसलिए उसे पूरा करने के लिए एक लम्बे अरसे तक कोशिश करने को तैयार रहना चाहिए; यह कार्य थोड़ी सी शक्ति से भी पूरा नहीं किया जा सकता, इसलिए हमें इसके लिए भारी शक्ति बटोरनी चाहिए। चीन और सारी दुनिया की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां पहले के मुकाबले और ज्यादा कमजोर हो गई हैं; चीन और सारी दुनिया की क्रान्तिकारी शक्तियां पहले के मुकाबले और ज्यादा मजबूत हो गई हैं। यह एक सही अनुमान है, जो मामले के एक पहलू का प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन साथ ही हमें यह भी कहना चाहिए कि चीन और सारी दुनिया की मौजूदा प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां अस्थाई तौर पर क्रान्तिकारी शक्तियों के मुकाबले ज्यादा शक्तिशाली हैं। यह भी एक सही अनुमान है, जो मामले के दूसरे पहलू का प्रतिनिधित्व करता है। चीन के राजनीतिक और आर्थिक विकास की असमानता से ही क्रान्ति के विकास की असमानता उत्पन्न होती है। नियमत: क्रान्ति की विजय पहले उन जगहों में आरम्भ होती है, विकसित होती है और प्राप्त की जाती है, जहां प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां अपेक्षाकृत कमजोर हैं; और जहां प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां शक्तिशाली हैं, वहां क्रान्ति या तो अभी आरम्भ ही नहीं हुई अथवा वह बहुत धीरे-धीरे विकसित हो रही है। चीनी क्रान्ति की एक लम्बे अरसे से यही परिस्थिति चली आई है। इस बात की पूर्व-कल्पना की जा सकती है कि भविष्य की

किन्हीं मंजिलों में यद्यपि क्रान्ति की आम परिस्थिति और ज्यादा विकसित हो जाएगी, लेकिन उसकी असमानता फिर भी बनी रहेगी। इस तरह की असमानता को एक आम समानता में परिवर्तित करने के लिए बहुत लम्बे समय, बहुत भारी प्रयत्नों तथा पार्टी की सही कार्यनीतिक कार्यदिशा को लागू करने की आवश्यकता होगी। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा संचालित क्रान्तिकारी युद्ध[१८] अगर तीन साल में खत्म हुआ, तो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाले क्रान्तिकारी युद्ध में, जिसमें पहले ही लम्बा समय लग चुका है, देश-विदेश की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों को अन्तिम रूप से और पूर्ण रूप से खत्म करने के लिए और अधिक आवश्यक समय लगाने को हमें तैयार रहना चाहिए। जिस तरह की जल्दबाजी पहले दिखाई गई थी, उससे हरगिज काम नहीं चलेगा। हमें एक पुख्ता क्रान्तिकारी कार्यनीति भी तय करनी चाहिए; पहले की ही तरह तंग दायरे में चक्कर काटने से बड़े काम कभी नहीं किए जा सकेंगे। मैं यह नहीं कहता कि चीन में काम धीरे-धीरे ही हो सकता है; बल्कि, यह कहता हूं कि हमें साहस के साथ काम करना चाहिए, क्योंकि राष्ट्रीय पराभव के खतरे के कारण एक क्षण के लिए भी ढील डालने का अवसर नहीं है। अब से क्रान्ति निश्चय ही पहले की अपेक्षा बहुत ज्यादा तेजी से आगे बढ़ेगी, क्योंकि चीन और दुनिया युद्ध और क्रान्ति के नए काल में प्रवेश कर रहे हैं। यह सब होते हुए भी चीन का क्रान्तिकारी युद्ध दीर्घकालीन होगा; साम्राज्यवाद की शक्ति और क्रान्ति के असमान विकास के कारण ही ऐसा होगा। हम कहते हैं कि वर्तमान परिस्थिति की विशेषता यह है कि राष्ट्रीय क्रान्ति में एक नया उभार आ रहा है और चीन इस समय एक नई और महान राष्ट्रव्यापी क्रान्ति की पूर्ववेला में है; यह वर्तमान क्रान्तिकारी परिस्थिति की एक विशेषता है। यह एक वास्तविकता है जो परिस्थिति के एक पहलू का प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन साथ ही हम यह भी कहते हैं कि साम्राज्यवाद अब भी एक भारी शक्ति बना हुआ है, क्रान्तिकारी शक्तियों के विकास की असमानता एक गम्भीर कमजोरी है, और अपने शत्रुओं को हराने के लिए हमें दीर्घकालीन युद्ध करने के लिए तैयार रहना चाहिए; वर्तमान क्रान्तिकारी परिस्थिति की यह दूसरी विशेषता है। यह भी एक वास्तविकता है जो परिस्थिति के दूसरे पहलू का प्रतिनिधित्व करती है। ये दोनों विशेषताएं, दोनों वास्तविकताएं, हमें यह सबक सिखाती हैं और हमसे यह आग्रह करती हैं कि हम परिस्थिति के अनुसार अपनी कार्यनीति को बदलें तथा संघर्ष चलाने के लिए शक्तियों को संगठित करने के तरीकों को बदलें। वर्तमान परिस्थिति की मांग है कि हम रुद्धद्वारवाद को साहस के साथ तिलांजलि दे दें, व्यापक संयुक्त मोर्चे का निर्माण करें और दुस्साहसवाद की रोकथाम करें। जब तक समय परिपक्व नहीं हो जाता और हमारे पास आवश्यक शक्ति नहीं हो जाती, तब तक हमें जल्दबाजी से निर्णायक लड़ाइयां नहीं करनी चाहिए।

यहां मैं रुद्धद्वारवाद और दुस्साहसवाद के सम्बन्धों की चर्चा नहीं करूंगा और इसकी भी चर्चा नहीं करूंगा कि भविष्य में जब क्रान्ति का भारी विकास होगा तो दुस्साहसवाद से कौन से सम्भावित खतरे पैदा होंगे। इसकी हम बाद में चर्चा कर सकते हैं। यहां मैं केवल इसी बात की चर्चा करूंगा कि संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति और रुद्धद्वारवादी कार्यनीति – ये दोनों अलग-अलग कार्यनीतियां एक दूसरे के एकदम विपरीत हैं।

पहली कार्यनीति है शत्रु को घेरकर उसका विनाश करने के लिए विशाल शक्तियों को लामबन्द करना।

दूसरी कार्यनीति है अकेले ही शक्तिशाली शत्रु से भिड़ जाना।

संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति के समर्थकों का कहना है कि यदि हम इस बात का सही अनुमान नहीं लगाते कि जापानी साम्राज्यवाद द्वारा चीन को उपनिवेश बना दिए जाने की कार्यवाही से चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों और प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों की पांतबन्दी बदल सकेगी, तो हम एक व्यापक क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने की सम्भावना का सही अनुमान नहीं लगा सकेंगे। यदि हम इस बात का उचित अनुमान नहीं लगाते कि जापान की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों, चीन की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों तथा चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों के मजबूत पहलू और कमजोर पहलू क्या हैं, तो हम एक व्यापक क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने की आवश्यकता को पूरी तरह नहीं समझ सकेंगे, रुद्धद्वारवाद को खत्म करने के लिए सुदृढ़ उपाय नहीं अपना सकेंगे, तथा इस उद्देश्य के लिए संयुक्त मोर्चे को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल नहीं कर सकेंगे कि कोटि-कोटि जनता को और उन तमाम लोगों को जो क्रान्ति की मित्र-सेना बन सकते हैं, संगठित व एकताबद्ध करें, जिससे कि हम आगे बढ़कर अपने मुख्य निशाने पर – जापानी साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों, चीनी गद्दारों पर – प्रहार कर सकें; और यह अनुमान लगाए बिना हम अपने सामने के मुख्य निशाने पर प्रहार करने के लिए अपने कार्यनीतिक हथियार को काम में नहीं ला सकेंगे, बल्कि इसके विपरीत, अपने सामने विभिन्न निशाने साधने लगेंगे और हमारी गोलियां मुख्य

शत्रु के बदले गौण शत्रुओं तथा यहां तक कि हमारे संश्रयकारियों को भी लगेंगी। इसका अर्थ प्रधान शत्रु को निशाना बनाने में असमर्थ होना और अपना गोला-बारूद बरबाद कर बैठना है। इस तरह हम अपने शत्रु को एक तंग व एकान्त जगह में खदेड़कर नहीं ला सकेंगे। इस तरह हम शत्रु के खेमे और उसके मोर्चे से उन सब लोगों को खींचकर अपनी ओर नहीं ला सकेंगे जो दबाव के कारण उसके पक्ष में हो गए हैं, जो कल तक हमारे शत्रु थे लेकिन आज हमारे मित्र बन सकते हैं। इस तरह हम दरअसल शत्रु की सहायता करेंगे और क्रान्ति को गतिरोध, अलगाव, क्षीणता और ह्रास की स्थिति में डाल देंगे, यहां तक कि उसे पराजय के मार्ग पर भी ढकेल देंगे।

रुद्धद्वारवादी कार्यनीति के समर्थक कहते हैं कि उपर्युक्त सभी आलोचनाएं गलत हैं। क्रान्ति की शक्तियों को शुद्ध और एकदम शुद्ध होना चाहिए। क्रान्ति का मार्ग सीधा और एकदम सीधा होना चाहिए। जो कुछ धर्मग्रन्थ में लिखा है, बस वही सत्य है। राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग सम्पूर्ण रूप से और सदा-सदा के लिए प्रतिक्रान्तिकारी है। धनी किसानों को रत्तीभर भी रियायत नहीं दी जानी चाहिए। पीली ट्रेड यूनियनों से जमकर लड़ना चाहिए। अगर छाए थिङ-खाए से हाथ मिलाना ही पड़े तो हाथ मिलाते समय भी उसे प्रतिक्रान्तिकारी कहना ही चाहिए। क्या कभी ऐसी बिल्ली भी हुई है जिसे गोश्त प्रिय न रहा हो, या कभी ऐसा युद्ध-सरदार भी हुआ है जो प्रतिक्रान्तिकारी न रहा हो? बुद्धिजीवी दो-चार दिन तक ही क्रान्तिकारी रह सकते हैं, इसलिए उनको भरती करना खतरनाक है। अतएव, निष्कर्ष यह निकलता है कि रुद्धद्वारवाद ही एकमात्र जादू की छड़ी है, जबकि संयुक्त मोर्चा एक अवसरवादी कार्यनीति है।

साथियो, सही क्या है ? संयुक्त मोर्चा या रुद्धद्वारवाद ? मार्क्स-वाद-लेनिनवाद किसका अनुमोदन करता है ? मेरा निश्चित उत्तर है : वह संयुक्त मोर्चे का अनुमोदन करता है और रुद्धद्वारवाद का विरोध करता है । तीन साल के दुधमुंहे बच्चों के अनेक विचार सही हो सकते हैं, लेकिन उन्हें राज्य और संसार के गम्भीर काम नहीं सौंपे जा सकते, क्योंकि वे लोग उन्हें अभी समझते नहीं । क्रान्तिकारी पांतों में मौजूद बचकाने मर्ज का मार्क्सवाद-लेनिनवाद विरोध करता है । रुद्धद्वारवादी कार्यनीति के कट्टर समर्थक ही इस तरह के बचकाने मर्ज की वकालत करते हैं । दुनिया की सभी गतिविधियों की ही तरह क्रान्ति का रास्ता भी सदा टेढ़ामेढ़ा होता है, कभी सीधा नहीं होता । जैसे दुनिया की हर चीज बदल सकती है, उसी तरह क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति के खेमों में शक्तियों की पांतबन्दी भी बदल सकती है । व्यापक संयुक्त मोर्चा बनाने की पार्टी की नई कार्यनीति दो बुनियादी बातों से पैदा होती है : एक तो यह कि जापानी साम्राज्य-वाद समूचे चीन को अपना उपनिवेश बना डालने पर तुला हुआ है तथा दूसरी यह कि चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों में अब भी भारी कमजोरी बनी हुई है । प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों पर हमला करने के लिए आज यह आवश्यक है कि क्रान्तिकारी शक्तियां कोटि-कोटि जनता को संगठित करें और एक विशाल क्रान्तिकारी फौज का संचालन करें । केवल ऐसी ही शक्ति जापानी साम्राज्यवादियों तथा चीनी गद्दारों व वतनफरोशों को चकनाचूर कर सकती है ; यह सत्य सभी के सामने स्पष्ट है । इसलिए संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति ही मार्क्सवादी-लेनिनवादी कार्यनीति है । इसके विपरीत रुद्धद्वारवादी कार्यनीति दरअसल राजसी अलगाववादी कार्यनीति है । रुद्धद्वारवाद "मछलियों को गहरे पानी में तथा गौरैयों को जंगलों में भगा देता है" ; वह कोटि-कोटि जन-समुदाय को, इस विशाल फौज को शत्रु के पक्ष में ढकेल देगा, जिससे निश्चय ही शत्रु बड़ा खुश होगा । रुद्धद्वारवादी लोग दरअसल जापानी साम्राज्यवादियों तथा चीनी गद्दारों व वतनफरोशों के वफादार चाकर हैं । रुद्धद्वारवादी लोग जिसे "शुद्ध" और "सीधा" कहते हैं वह एक ऐसी चीज है जिसकी मार्क्स-वाद-लेनिनवाद भर्त्सना करता है, जबकि जापानी साम्राज्यवाद तारीफ करता है । हम निश्चय ही रुद्धद्वारवाद को हरगिज नहीं चाहते । हम क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करना चाहते हैं, जो जापानी साम्राज्यवादियों तथा चीनी गद्दारों व वतनफरोशों के लिए प्राणघातक होगा ।

लोक गणराज्य[२६]

यदि हमारी सरकार अभी तक मजदूरों, किसानों व शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के संश्रय पर आधारित रही है, तो अब से उसमें मजदूरों, किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के अलावा अन्य सभी वर्गों के उन लोगों को भी शामिल किया जाना चाहिए जो राष्ट्रीय क्रान्ति में भाग लेना चाहते हैं ।

वर्तमान काल में ऐसी सरकार का बुनियादी कार्य चीन को हड़पने के जापानी साम्राज्यवाद के प्रयत्नों का विरोध करना है । यह सरकार प्रतिनिधित्व के अपने दायरे को विस्तृत कर लेगी, ताकि इस सरकार में न केवल वे लोग भाग ले सकें जो राष्ट्रीय क्रान्ति में तो दिलचस्पी रखते हैं लेकिन भूमि-क्रान्ति में नहीं, बल्कि ऐसे लोग भी अगर चाहें

तो शामिल हो सकें, जो योरपीय और अमरीकी साम्राज्यवादियों के साथ सम्बन्ध रखने के कारण उनका विरोध नहीं करते, लेकिन जापानी साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों का विरोध तो कर सकते हैं। इसलिए, उसूली तौर पर, इस सरकार का कार्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो जापानी साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों का विरोध करने के बुनियादी कार्य के अनुरूप हो, और हमें अपनी पुरानी नीतियों में इसी के अनुरूप समुचित परिवर्तन लाना चाहिए।

वर्तमान समय में क्रान्ति के पक्ष की विशेषता है उसके पास एक खूब तपी हुई कम्युनिस्ट पार्टी तथा एक खूब तपी हुई लाल सेना का होना। यह एक भारी महत्व की बात है। यदि अब भी उसके पास ये दोनों चीजें न होतीं, तो बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। ऐसा क्यों? इसलिए कि चीन में बहुत से गद्दार और वतनफरोश मौजूद हैं और वे शक्तिशाली हैं, और वे अनिवार्य रूप से इस संयुक्त मोर्चे को तोड़ने के लिए हर सम्भव उपाय करेंगे; वे धमकी और रिश्वत, दलबन्दी व गुटबन्दी जैसे उपायों से फूट डालने की कोशिश करेंगे, तथा उन सभी शक्तियों को दबाने और उन्हें एक-एक करके नष्ट करने के लिए शस्त्र-बल का उपयोग करेंगे जो उनसे कमजोर हैं और जापान से लड़ने के लिए गद्दारों का साथ छोड़कर हमारे साथ आने को तैयार हैं। यदि जापान-विरोधी सरकार में और जापान-विरोधी फौज में कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना ये दो महत्वपूर्ण तत्व न होते, तो इस हालत से बचना मुश्किल हो जाता। १९२७ की क्रान्ति की असफलता का मुख्य कारण उस समय कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर मौजूद अवसरवादी कार्यदिशा ही थी जिससे पार्टी ने अपनी पांतों को (मजदूर-किसान आन्दोलन तथा कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व

में चलने वाली सेना को) बढ़ाने की कोशिश नहीं की, बल्कि केवल एक अस्थाई संश्रयकारी, यानी क्वोमिन्ताङ पर भरोसा किया। नतीजा यह हुआ कि साम्राज्यवाद के हुक्म पर उसके गुर्गों ने, स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग ने हजारों हाथ बढ़ाकर पहले च्याङ काई-शेक को और फिर वाङ चिङ-वेइ को अपने साथ मिला लिया, और इस तरह क्रान्ति असफल हो गई। उस समय के क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे में कोई मुख्य आधार-स्तम्भ, कोई मजबूत क्रान्तिकारी सैन्य-दल नहीं था; इसलिए जब हर तरफ बगावत मचने लगी, तो कम्युनिस्ट पार्टी को अकेले ही लड़ना पड़ा और साम्राज्यवादियों व चीन के प्रतिक्रान्तिकारियों द्वारा अपनाए गए इस दांवपेंच – अपने विरोधियों को एक-एक करके खत्म करना – को नाकाम करने में वह असमर्थ रही। यद्यपि उस समय भी हो लुङ और ये थिङ के नेतृत्व में एक सेना मौजूद थी, फिर भी राजनीतिक रूप से वह सुदृढ़ नहीं थी। इसके अलावा, चूंकि पार्टी उसका कुशलता से नेतृत्व नहीं कर पा रही थी, इसलिए आखिर में उसकी भी पराजय हुई। यह सबक रक्त बहाकर हासिल किया गया है कि क्रान्तिकारी केन्द्रीय शक्ति के अभाव में क्रान्ति पराजित हो जाती है। लेकिन आज स्थिति बिलकुल भिन्न है। इस समय हमारे पास मजबूत कम्युनिस्ट पार्टी और मजबूत लाल सेना दोनों मौजूद हैं, साथ ही लाल सेना के आधार-क्षेत्र भी हैं। आज कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना न केवल जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का सूत्रपात कर रही हैं, बल्कि भविष्य में वे अनिवार्यतः जापान-विरोधी सरकार और जापान-विरोधी सेना के सुदृढ़ आधार-स्तम्भ भी बन जाएंगी, जिससे जापानी साम्राज्यवादी और च्याङ

काई-शेक जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा भंग करने की अपनी नीति का अन्तिम मकसद हासिल नहीं कर पाएंगे। निस्सन्देह, जापानी साम्राज्यवादी और च्याङ काई-शेक धमकी और रिश्वत, दलबन्दी और गुटबन्दी जैसे उपाय अवश्य ही काम में लाएंगे, इस के प्रति हमें बहुत ही सतर्क रहना चाहिए।

स्वभावतः हम यह आशा नहीं कर सकते कि जापान-विरोधी व्यापक राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का हर हिस्सा उतना ही मजबूत हो, जितनी कि कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना हैं। इस व्यापक मोर्चे की गतिविधियों के दौरान कुछ बुरे तत्व शत्रु के प्रभाव में आकर संयुक्त मोर्चे से अलग हट सकते हैं। लेकिन ऐसे लोगों के चले जाने से हम डरते नहीं। शत्रु के प्रभाव में आकर बुरे लोग हमसे अलग हो जाएंगे, लेकिन हमारे प्रभाव में आकर अच्छे लोग हमारे साथ आ भी मिलेंगे। जब तक कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना मौजूद हैं और विकसित होती रहती हैं, तब तक जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा भी मौजूद रहेगा और विकसित होता रहेगा। राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना की नेतृत्वकारी भूमिका ऐसी ही है। कम्युनिस्ट अब दुधमुंहे बच्चे नहीं हैं, वे अब कुशलता के साथ अपनी देखभाल खुद कर सकते हैं और अपने संश्रयकारियों से अपने सम्बन्धों का निर्वाह भी कर सकते हैं। अगर जापानी साम्राज्यवादी और च्याङ काई-शेक क्रान्तिकारी पांतों के विरुद्ध दलबन्दी और गुटबन्दी जैसे उपाय काम में ला सकते हैं, तो प्रतिक्रान्तिकारी पांतों के विरुद्ध कम्युनिस्ट पार्टी भी ऐसे ही उपाय काम में ला सकती है। यदि वे हमारी पांतों से बुरे लोगों को अपनी ओर खींच ले जा सकते हैं, तो निश्चय ही हम भी उनकी पांतों से उनके "बुरे लोगों" को (जो हमारे लिए अच्छे हैं) अपनी ओर खींच सकते हैं। यदि उनकी पांतों से हम बड़ी संख्या में लोगों को अपनी ओर खींच लेंगे, तो शत्रु-दल कम हो जाएगा और हमारा दल बढ़ जाएगा। संक्षेप में, दो बुनियादी शक्तियां एक दूसरे से संघर्ष कर रही हैं; यह स्वाभाविक है कि सभी दरमियानी शक्तियों को इस या उस पक्ष के साथ होना पड़ेगा। चीन को पराधीन बनाने और चीन को बेचने की जिस नीति पर जापानी साम्राज्यवादी और च्याङ काई-शेक चल रहे हैं, वह निस्सन्देह बहुत से लोगों को हमारी ओर आने के लिए मजबूर कर देगी – या तो वे सीधे कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना की पांतों में शामिल हो जाएंगे, अथवा हमारे साथ संयुक्त मोर्चा बना लेंगे। यदि हमने रुद्धद्वारवादी कार्यनीति न अपनाई, तो ऐसा अवश्य होकर रहेगा।

"मजदूर-किसानों के गणराज्य" को "लोक गणराज्य" के रूप में क्यों बदल दिया जाए?

हमारी सरकार केवल मजदूरों और किसानों का ही नहीं, बल्कि समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती है। मजदूर-किसानों के जनवादी गणराज्य के नारे में यह बात पहले से ही निहित रही है, क्योंकि मजदूर और किसान समूचे राष्ट्र की आबादी का ८०-९० प्रतिशत भाग हैं। हमारी पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस ने जो दससूत्री कार्यक्रम[१०] निर्धारित किया था, वह न केवल मजदूरों और किसानों के हितों का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि पूरे राष्ट्र के हितों का भी प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन मौजूदा परिस्थिति की मांग है कि हम अपना नारा बदल दें और लोक गणराज्य का नारा दें। कारण यह कि जापानी आक्रमण से चीन के वर्ग-सम्बन्ध बदल गए

हैं और अब यह सम्भव है कि न सिर्फ निम्न-पूंजीपति वर्ग, बल्कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग भी जापान-विरोधी संघर्ष में शामिल हो जाए।

निस्सन्देह, लोक गणराज्य शत्रु-वर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। इसके विपरीत लोक गणराज्य साम्राज्यवाद के पालतू कुत्तों – स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों के वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग – का प्रत्यक्ष विरोधी है और वह उन्हें जनता के अन्तर्गत शामिल नहीं करता। इसकी तुलना इस बात से की जा सकती है कि च्याङ काई-शेक की "चीन गणराज्य की राष्ट्रीय सरकार" केवल बड़े-बड़े धन्नासेठों का प्रतिनिधित्व करती है, न कि आम लोगों का, जिनकी गिनती "नागरिकों" में नहीं की जाती। चीन की आबादी में ८०-९० फीसदी तक मजदूर और किसान हैं, इसलिए लोक गणराज्य को सबसे पहले उन्हीं के हितों का प्रतिनिधित्व करना चाहिए। लेकिन लोक गणराज्य साम्राज्यवादी उत्पीड़न को दूर करके चीन को आजाद और स्वाधीन बना देगा, तथा जमींदारों द्वारा किए जाने वाले उत्पीड़न को दूर करके चीन को अर्ध-सामन्ती व्यवस्था से मुक्ति दिला देगा, इसलिए वह मजदूरों और किसानों का ही नहीं, बल्कि जनता के बाकी हिस्सों का भी भला करेगा। मजदूरों, किसानों तथा जनता के बाकी हिस्सों के पूरे हितों का योग ही समूचे चीनी राष्ट्र के हितों को निर्धारित करता है। यद्यपि दलाल-पूंजीपति वर्ग और जमींदार वर्ग भी चीन की धरती पर ही रहते हैं, फिर भी वे राष्ट्र के हितों की ओर ध्यान नहीं देते; इसी कारण उनके हित बहुसंख्यक जनता के हितों से टकराते हैं। चूंकि हम मुट्ठीभर जमींदारों और दलाल-पूंजीपतियों से ही नाता तोड़ते हैं और केवल उनसे ही टकराते हैं, इसलिए हमें अधिकार

है कि हम अपने को समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधि कहें।

मजदूर वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के हितों में भी टकराव है। जब तक राष्ट्रीय क्रान्ति के हिरावल को राजनीतिक और आर्थिक अधिकार नहीं दिए जाते, और जब तक मजदूर वर्ग में साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों, वतनफरोशों, के विरुद्ध अपनी समूची शक्ति को लगाने की क्षमता पैदा नहीं की जाती, तब तक राष्ट्रीय क्रान्ति को सफलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकता। लेकिन, यदि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग साम्राज्यवाद-विरोधी संयुक्त मोर्चे में शामिल हो जाता है, तो मजदूर वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के समान हित हो जाएंगे। पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के काल में लोक गणराज्य गैर-साम्राज्यवादी और गैर-सामन्ती निजी सम्पत्ति को खत्म नहीं करेगा, बल्कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के औद्योगिक और व्यापारिक कारोबारों को जब्त करने के बदले उनके विकास को प्रोत्साहन देगा। जब तक कोई राष्ट्रीय पूंजीपति साम्राज्यवादियों और चीनी गद्दारों का समर्थन नहीं करता, तब तक हम उसकी रक्षा करेंगे। जनवादी क्रान्ति की मंजिल में श्रम और पूंजी के बीच के संघर्ष की एक सीमा निर्धारित कर दी जाती है। लोक गणराज्य का श्रम-कानून मजदूरों के हितों की रक्षा करता है, लेकिन वह राष्ट्रीय पूंजीपतियों द्वारा मुनाफा कमाने और उनके औद्योगिक व व्यापारिक कारोबारों के विकास का विरोध नहीं करता, क्योंकि ऐसा विकास साम्राज्यवाद के लिए अहितकर और चीनी जनता के लिए हितकर होता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि लोक गणराज्य साम्राज्यवाद और सामन्ती शक्तियों का विरोध करने वाले सभी तबकों की जनता के हितों का प्रतिनिधित्व करेगा। लोक गणराज्य

की सरकार मुख्य रूप से मजदूरों और किसानों पर आधारित होगी, लेकिन साथ ही वह अपने अन्दर उन अन्य सभी वर्गों के प्रतिनिधियों को भी शामिल करेगी जो साम्राज्यवाद और सामन्ती शक्तियों के विरुद्ध हैं।

लेकिन क्या ऐसे वर्गों के प्रतिनिधियों को लोक गणराज्य की सरकार में शामिल करना खतरनाक नहीं है? नहीं। मजदूर और किसान इस गणराज्य का बुनियादी जन-समुदाय हैं। शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग, बुद्धिजीवियों और उन अन्य लोगों को, जो साम्राज्य-वाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी कार्यक्रम का समर्थन करते हैं, लोक गणराज्य की सरकार में अपना मत प्रकट करने और काम करने का अधिकार देने में और उन्हें चुनने व चुने जाने का अधिकार देने में मजदूरों और किसानों, बुनियादी जन-समुदाय, के हितों का उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए। हमारे कार्यक्रम का मूल भाग मजदूरों और किसानों, बुनियादी जन-समुदाय, के हितों की रक्षा करना होना चाहिए। लोक गणराज्य की सरकार में मजदूरों और किसानों, बुनियादी जन-समुदाय, के प्रतिनिधियों का बहुमत होगा और साथ ही इस सरकार पर कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व होगा और वह सरकार के अन्दर काम करेगी; यही इस बात की गारन्टी है कि अन्य वर्गों के लोगों के शामिल होने से कोई खतरा पैदा नहीं होगा। यह एकदम स्पष्ट है कि मौजूदा मंजिल में चीनी क्रान्ति का स्वरूप पूंजीवादी-जनवादी है, सर्वहारा-समाजवादी नहीं। केवल प्रतिक्रान्तिकारी त्रात्सकीवादी[११] ही ऐसी बेसिरपैर की बातें करते हैं कि चीन में पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति पूरी हो चुकी है और आगे की क्रान्ति केवल समाजवादी ही हो सकती है। १९२४-२७ की क्रान्ति अपने स्वरूप में पूंजीवादी-जनवादी थी, जो पूरी नहीं हुई बल्कि असफल हो गई। १९२७ से अब तक जिस भूमि-क्रान्ति की अगुवाई हम कर रहे हैं वह भी अपने स्वरूप में पूंजीवादी-जनवादी ही है, क्योंकि उसका कार्य साम्राज्यवाद और सामन्तवाद का विरोध करना है, न कि पूंजीवाद का। हमारी क्रान्ति के बारे में यह बात काफी लम्बे अरसे तक लागू होती रहेगी।

बुनियादी तौर पर, अभी भी मजदूर, किसान और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां हैं। लेकिन अब राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग भी इन शक्तियों में शामिल हो सकता है।

क्रान्ति में संक्रमण भविष्य की बात है। भविष्य में जनवादी क्रान्ति अनिवार्यतः समाजवादी क्रान्ति में परिवर्तित हो जाएगी। यह संक्रमण कब होगा, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि उसके लिए आवश्यक परिस्थितियां मौजूद हैं या नहीं, और इसमें एक काफी लम्बा अरसा लग सकता है। जब तक आवश्यक राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियां परिपक्व न हो जाएं, जब तक देश की जनता की भारी बहुसंख्या के लिए संक्रमण अहितकर होने के बदले हितकर न हो जाए, तब तक संक्रमण के सवाल को उतावलेपन के साथ उठा लेना नहीं चाहिए। इस मामले में सन्देह करना और यह आशा करना कि संक्रमण जल्दी ही होगा, गलत है, जैसा कि हमारे कुछ साथी करते थे, जिनकी राय यह थी कि मुख्य प्रान्तों में जनवादी क्रान्ति की विजय शुरू होने के साथ ही क्रान्ति का संक्रमण होने लगेगा। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वे यह नहीं समझते थे कि राज-नीतिक और आर्थिक दृष्टि से चीन किस प्रकार का देश है, और वे यह भी नहीं जानते थे कि राजनीतिक और आर्थिक रूप से जनवादी

क्रान्ति को पूरा करना चीन के लिए रूस की अपेक्षा कहीं ज्यादा कठिन है और उसके लिए कहीं ज्यादा समय और प्रयत्न की आवश्यकता होगी।

अन्तरराष्ट्रीय समर्थन

अन्त में, चीनी क्रान्ति और विश्व-क्रान्ति के परस्पर सम्बन्धों के बारे में दो शब्द कहना जरूरी है।

साम्राज्यवाद – इस दानव के जन्म से ही विश्व के मामले आपस में इतने घनिष्ठ रूप से गुंथ गए हैं कि उन्हें अलग-अलग करना असम्भव हो गया है। हमारे चीनी राष्ट्र के अन्दर दुश्मन से तब तक लड़ते रहने की भावना मौजूद है जब तक हमारे खून की एक भी बूंद बाकी रहेगी, अपने खोए हुए प्रदेश और राष्ट्रीय सम्मान को अपने ही प्रयत्नों से प्राप्त करने का संकल्प मौजूद है, तथा विश्व के राष्ट्र-समुदाय में खुद अपने ही पैरों पर खड़े होने की सामर्थ्य मौजूद है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि हमें अन्तरराष्ट्रीय समर्थन की जरूरत नहीं है ; बल्कि, आज तो किसी भी देश या राष्ट्र के क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए अन्तरराष्ट्रीय समर्थन प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। पुरानी कहावत है : "वसन्त और शरद काल में कोई न्यायपूर्ण युद्ध नहीं हुआ।"[१२] साम्राज्यवाद के लिए आज यह और भी सही है, क्योंकि केवल उत्पीड़ित राष्ट्र और उत्पीड़ित वर्ग ही न्यायपूर्ण युद्ध कर सकते हैं। ऐसे सभी युद्ध, जिन्हें संसार में किसी भी जगह की जनता अपने उत्पीड़कों के विरुद्ध चलाती है, न्यायपूर्ण युद्ध हैं। रूस

की फरवरी क्रान्ति और अक्तूबर क्रान्ति न्यायपूर्ण युद्ध थीं। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद योरप के विभिन्न देशों में हुई जन-क्रान्तियां न्यायपूर्ण युद्ध थीं। चीन में अफीम-विरोधी युद्ध,[१३] थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध,[१४] ई हो थ्वान युद्ध,[१५] १९११ का क्रान्तिकारी युद्ध,[१६] १९२६-२७ का उत्तरी अभियान, १९२७ से अब तक का भूमि-क्रान्ति युद्ध और वर्तमान काल में जापानी आक्रमण का प्रतिरोध तथा वतनफरोशों के विरुद्ध दण्ड-अभियान चलाने की कार्यवाहियां – ये सभी न्यायपूर्ण युद्ध हैं। वर्तमान राष्ट्रव्यापी जापान-विरोधी उभार और विश्वव्यापी फासिस्ट-विरोधी उभार के दौरान न्यायपूर्ण युद्ध समूचे चीन और समूचे विश्व में फैल जाएंगे। सभी न्यायपूर्ण युद्ध एक दूसरे की सहायता करते हैं और सभी अन्यायपूर्ण युद्धों को न्यायपूर्ण युद्धों में बदल देना चाहिए – यही लेनिनवादी कार्यदिशा है।[१७] हमारे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को विश्व की जनता, और सबसे पहले सोवियत संघ की जनता के समर्थन की आवश्यकता है, और वह हमारा समर्थन अवश्य करेगी, क्योंकि हम और वह समान उद्देश्य के सूत्र में बंधे हुए हैं। पिछले कुछ अरसे में चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों को च्याङ काई-शेक ने विश्व की क्रान्तिकारी शक्तियों से जुदा कर दिया था और इस अर्थ में हम अकेले पड़ गए थे। लेकिन अब परिस्थिति बदल गई है और वह हमारे अनुकूल हो गई है। आगे यह और भी हमारे अनुकूल होती जाएगी। अब हम अकेले नहीं पड़ सकते। चीन के जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध और चीनी क्रान्ति की विजय के लिए यह एक आवश्यक शर्त है।

नोट

[१] १८ जनवरी १९१५ को जापानी साम्राज्यवादियों ने य्वान श-खाए की सरकार के सामने २१ मांगें प्रस्तुत कीं। ७ मई को उन्होंने अल्टीमेटम देकर ४८ घण्टों में इसका उत्तर मांगा। ये मांगें पांच भागों में बांटी गई थीं। पहले चार भागों में निम्नलिखित मांगें थीं : जर्मनी ने शानतुङ में जो अधिकार हथिया लिए थे वे जापान को दे दिए जाएं तथा उस प्रान्त में जापान को दूसरे नए अधिकार भी दिए जाएं ; जापानियों को दक्षिणी मंचूरिया और पूर्वी मंगोलिया में भूमि पट्टे पर लेने या उसके मालिक बनने का अधिकार दिया जाए और उन्हें वहां अपने निवास-स्थान बनाने का अधिकार दिया जाए, उद्योग-धन्धे चलाने तथा व्यापार करने का अधिकार दिया जाए, और रेलें व खानें निर्मित करने का एकछत्र अधिकार दिया जाए ; हान-ये-फिङ लोहा-इस्पात कम्पनी चीनी-जापानी संयुक्त कारोबार के रूप में संगठित की जाए ; और चीन अपने समुद्रतट के बन्दरगाहों या द्वीपों को किसी तीसरी ताकत को पट्टे पर या और किसी तरह से न दे। पांचवें भाग में ये मांगें की गई थीं : जापान को चीन के राजनीतिक, वित्तीय, पुलिस और फौजी मामलों पर नियंत्रण कायम करने दिया जाए तथा जापान को हुपे, च्याङशी और क्वाङतुङ प्रान्तों को मिलाने वाली महत्वपूर्ण रेलवे-लाइनों का निर्माण करने दिया जाए। य्वान श-खाए ने पांचवें भाग की मांगों को छोड़कर, जिनके बारे में उसने "और बातचीत" के लिए प्रार्थना की, अन्य सब मांगों को मंजूर कर लिया। चीनी जनता द्वारा एकमत से विरोध करने के फलस्वरूप जापान अपनी मांगों को कार्यान्वित नहीं करा सका।

[२] य्वान श-खाए छिङ वंश के अन्तिम वर्षों में उत्तरी युद्ध-सरदारों का मुखिया था। १९११ की क्रान्ति में छिङ वंश का तख्ता उलट दिए जाने के बाद वह गणराज्य का राष्ट्रपति बन बैठा और उसने उत्तरी युद्ध-सरदारों की पहली सरकार बनाई, जो बड़े जमींदारों के वर्ग तथा बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग का प्रतिनिधित्व करती थी। यह सब उसने प्रतिक्रान्तिकारी सशस्त्र सैन्य-शक्ति के सहारे तथा साम्राज्यवादियों के समर्थन से और उस समय क्रान्ति का नेतृत्व करने वाले पूंजीपति वर्ग के समझौतापरस्त स्वरूप का फायदा उठाकर किया। १९१५ में उसने अपने

को सम्राट बनाना चाहा और जापानी साम्राज्यवादियों का समर्थन प्राप्त करने के लिए जापान की २१ मांगों को भी स्वीकार कर लिया, जिनके द्वारा जापान तमाम चीन पर एकछत्र अधिकार जमाना चाहता था। उसी वर्ष दिसम्बर में उसके सम्राट बनने के विरुद्ध युन्नान प्रान्त में विद्रोह हो गया और तुरन्त ही इस विद्रोह को राष्ट्रव्यापी समर्थन प्राप्त हुआ। जून १९१६ में य्वान श-खाए की पेकिङ में मृत्यु हो गई।

[३] नवम्बर १९२१ में अमरीका सरकार द्वारा वाशिंगटन में नौ देशों का सम्मेलन बुलाया गया, जिसमें अमरीका के अलावा चीन, ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, बेलजियम, नीदरलैण्ड, पुर्तगाल और जापान शामिल थे। वास्तव में यह सुदूरपूर्व में आधिपत्य कायम करने के लिए अमरीका और जापान के बीच का संघर्ष था। ६ फरवरी १९२२ को इन नौ देशों के बीच एक सन्धि हुई, जिसका आधार अमरीका द्वारा प्रतिपादित "सभी राष्ट्रों को चीन में समान अवसर प्रदान करने" या "खुले दरवाजे" का सिद्धान्त था। इस सन्धि का उद्देश्य ऐसी स्थिति पैदा करना था जिसमें साम्राज्यवादी ताकतें चीन पर संयुक्त नियंत्रण कायम कर लें और वास्तव में अमरीकी साम्राज्यवादियों के एकछत्र अधिकार के लिए रास्ता खुल जाए, ताकि जापान के एकछत्र अधिकार करने की योजना को विफल बना दिया जाए।

[४] १८ सितम्बर १९३१ को उत्तर-पूर्वी चीन में तैनात जापान की "क्वानतुङ सेना" ने शनयाङ पर अधिकार कर लिया। "जरा भी प्रतिरोध न किया जाए" के च्याङ काई-शेक के आदेश के अन्तर्गत शनयाङ और उत्तर-पूर्व के अन्य क्षेत्रों में स्थित चीनी सेनाएं (उत्तर-पूर्वी सेना) शानहाएक्वान के दक्षिण में हट गई और फलस्वरूप जापानी सैन्य-दल ने तेजी से ल्याओनिङ, चीलिन और हेलुङ-च्याङ प्रान्तों पर अधिकार कर लिया। जापानी डाकुओं के आक्रमण की यह कार्यवाही "१८ सितम्बर की घटना" के नाम से जानी जाती है।

[५] "चार उत्तर-पूर्वी प्रान्तों" से मतलब है उस समय के ये चार प्रान्त : ल्याओनिङ, चीलिन, हेलुङच्याङ और जेहोल। ये प्रान्त ल्याओतुङ, ल्याओशी, चीलिन, सुङच्याङ, हेलुङच्याङ और जेहोल इन छै प्रान्तों, जो इस समय उत्तर-पूर्वी महा प्रशासनिक इलाके के मातहत हैं, तथा भीतरी-मंगोलियाई स्वायत्त-प्रदेश के अधिकांश भाग के अन्तर्गत पड़ते हैं। १८ सितम्बर की घटना

के बाद जापानी आक्रमणकारियों ने ल्याओनिङ, चीलिन और हेलुङच्याङ पर अधिकार कर लिया और फिर बाद में १६३३ में जेहोल पर भी अधिकार कर लिया।

⁶ जापान के उकसावे से २५ नवम्बर १६३५ को क्वोमिन्ताङ गद्दार इन रू-कङ ने पूर्वी हपे की २२ काउन्टियों में "पूर्वी हपे कम्युनिस्ट-विरोधी स्वायत्त-शासन" के नाम से एक कठपुतली सत्ता की स्थापना की थी। यह "पूर्वी हपे की घटना" के नाम से जानी जाती है।

⁷ यहां तथाकथित "हीरोता के तीन सिद्धान्तों" के विषय में च्याङ काई-शेक सरकार और जापान सरकार के बीच की राजनयिक वार्ताओं का उल्लेख किया गया है। "हीरोता के तीन सिद्धान्तों" का संकेत जापान के तत्कालीन विदेश मंत्री हीरोता द्वारा प्रतिपादित "चीन से निपटने के तीन सिद्धान्तों" की ओर है, जो इस प्रकार थे: (१) चीन द्वारा सभी जापान-विरोधी आन्दोलनों का दमन; (२) चीन, जापान तथा "मंचूक्वो" के बीच आर्थिक सहयोग की स्थापना; और (३) कम्युनिज्म के खिलाफ चीन और जापान की संयुक्त रक्षात्मक कार्यवाही। २१ जनवरी १६३६ को हीरोता ने जापानी संसद में कहा था कि "चीन सरकार ने साम्राज्य द्वारा प्रस्तावित तीनों सिद्धान्त मान लिए हैं।"

⁸ १६३५ में जनता के राष्ट्रव्यापी देशभक्तिपूर्ण आन्दोलन में एक नया उभार दिखाई दिया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में पेकिङ के विद्यार्थियों ने ६ दिसम्बर को एक देशभक्तिपूर्ण प्रदर्शन किया, जिसमें उन्होंने ये नारे लगाए: "गृहयुद्ध को बन्द करो और विदेशी आक्रमण के विरुद्ध एक हो जाओ" तथा "जापानी साम्राज्यवाद का नाश हो"। इस आन्दोलन ने लम्बे समय से चले आए उस आतंक-राज में एक बड़ी दरार पैदा कर दी जिसे क्वोमिन्ताङ सरकार ने जापानी आक्रमणकारियों की सांठगांठ से कायम कर रखा था। इस आन्दोलन को शीघ्र ही देश की सारी जनता का समर्थन प्राप्त हो गया। यह "६ दिसम्बर आन्दोलन" के नाम से जाना जाता है। नतीजा यह हुआ कि देश के विभिन्न वर्गों के बीच के सम्बन्धों में स्पष्ट रूप से नए परिवर्तन दिखाई पड़ने लगे और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तावित जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा एक ऐसी नीति बन गया जिसकी सभी देशभक्त लोग खुलेआम समान रूप से हिमायत

करने लगे। अपनी गद्दाराना नीति के कारण च्याङ काई-शेक सरकार बिलकुल अकेली पड़ गई।

⁹ जब यह रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, उस समय च्याङ काई-शेक उत्तर-पूर्व को जापान के हाथ सौंप देने के बाद उत्तरी चीन को भी बेच रहा था और साथ ही सक्रिय रूप से लाल सेना के विरुद्ध अपना युद्ध चला रहा था। इसलिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को उसके गद्दाराना स्वरूप को बेनकाब करने की यथासम्भव कोशिश करनी थी और इसीलिए पार्टी द्वारा उस समय प्रस्तावित जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में उसे शामिल नहीं किया गया। लेकिन कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस रिपोर्ट में विभिन्न साम्राज्यवादी ताकतों के बीच के अन्तरविरोधों के फल-स्वरूप चीनी जमींदार वर्ग व दलाल-पूंजीपति वर्ग के खेमे में सम्भावित विघटन की बात कही थी। और उत्तरी चीन पर जापानी आक्रमण के बाद आंग्ल-अमरीकी साम्राज्यवादियों तथा जापानी साम्राज्यवादियों के हितों के बीच तीव्र टकराव पैदा हो गया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की राय थी कि च्याङ काई-शेक गुट, जिसका आंग्ल-अमरीकी साम्राज्यवाद के हितों से घनिष्ठ सम्बन्ध था, अपने मालिकों के कहने पर जापान के प्रति अपना रवैया बदल सकता है, इसलिए हमारी पार्टी ने यह नीति अपनाई कि जापान का प्रतिरोध करने के लिए च्याङ काई-शेक को मजबूर किया जाए। शानशी से उत्तरी शेनशी लौटने पर लाल सेना ने मई १६३६ में नानकिङ की क्वोमिन्ताङ सरकार से सीधे अपील की कि वह गृहयुद्ध बन्द कर दे और सबके साथ मिलकर जापान का प्रतिरोध करे। उसी साल अगस्त में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी को पत्र लिखा, जिसमें उसने जापान के खिलाफ दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे की स्थापना का आवाहन किया और यह मांग की कि दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों के बीच बातचीत शुरू की जाए। लेकिन च्याङ काई-शेक ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। दिसम्बर १६३६ में, जब जापान का प्रतिरोध करने के लिए कम्युनिस्टों से सहयोग करने का पक्षपोषण करने वाले कुछ क्वोमिन्ताङ सेनानायकों ने शीआन में च्याङ काई-शेक को नजरबन्द कर लिया, तो उसे मजबूर होकर गृहयुद्ध बन्द करने और जापान का प्रतिरोध करने की कम्युनिस्ट पार्टी की मांग को मंजूर करना पड़ा।

१० छाए थिङ-खाए क्वोमिन्ताङ की १६वीं राह सेना का डिप्टी कमाण्डर तथा उसकी एक फौजी कोर का कमाण्डर था ; १६वीं राह सेना के दो अन्य नेता थे छन मिङ-शू और च्याङ क्वाङ-नाए। १८ सितम्बर की घटना के बाद इस सेना को, जो च्याङशी में लाल सेना से लड़ रही थी, शांघाई स्थानान्तरित कर दिया गया। शांघाई और समूचे देश में जनता के उमड़ते हुए जापान-विरोधी उभार का १६वीं राह सेना पर बड़ा गहरा असर पड़ा। २८ जनवरी १६३२ की रात को जब जापानी मैरीन-सैनिकों ने शांघाई पर आक्रमण किया तो १६वीं राह सेना और शांघाई की जनता ने उनका संयुक्त रूप से प्रतिरोध किया। लेकिन, च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ के विश्वासघात के कारण उन्हें पराजय का सामना करना पड़ा। बाद में च्याङ काई-शेक के आदेशों पर १६वीं राह सेना को फिर लाल सेना से लड़ने के लिए फ़ूच्येन भेज दिया गया। लेकिन सेना के नेताओं को कदम-ब-कदम ऐसी लड़ाई की निरर्थकता का आभास होने लगा। नवम्बर १६३३ में ली ची-शन तथा अन्य लोगों के मातहत क्वोमिन्ताङ की शक्तियों से सहयोग करके उन्होंने सार्वजनिक रूप से च्याङ काई-शेक से सम्बन्ध तोड़ने की घोषणा की, फ़ूच्येन में "चीनी लोकतंत्र की क्रान्तिकारी जन-सरकार" की स्थापना कर दी और जापान का प्रतिरोध करने तथा च्याङ काई-शेक का विरोध करने के लिए लाल सेना से समझौता कर लिया। च्याङ काई-शेक की सेनाओं के हमले से १६वीं राह सेना और फ़ूच्येन की जन-सरकार का पतन हो गया। उसके बाद से छाए थिङ-खाए और अन्य लोग कदम-ब-कदम कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करने की स्थिति की ओर बढ़ते गए।

११ १६२६ के सितम्बर में क्रान्तिकारी उत्तरी अभियान सेना के ऊहान पहुंचने पर, फ़ङ य्वी-श्याङ ने स्वेय्वान प्रान्त में अपनी कमान के सैन्य-दल सहित उत्तरी युद्ध-सरदारों के गुट से अपने सम्बन्ध-विच्छेद की घोषणा कर दी और क्रान्ति की पांतों में शिरकत की। १६२७ के प्रारम्भ में उसकी सेना उत्तरी अभियान सेना से तालमेल कायम करके हनान पर हमला करने के लिए शेनशी से आगे बढ़ी। १६२७ में च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ द्वारा क्रान्ति के साथ गद्दारी किए जाने पर यद्यपि फ़ङ य्वी-श्याङ ने कम्युनिस्ट-विरोधी कार्यवाहियों में हिस्सा लिया, तो भी उसके तथा च्याङ काई-शेक गुट के बीच हितों का टकराव हमेशा बना रहा। १८ सितम्बर १६३१ को जापान द्वारा चीन पर हमला होने पर वह प्रतिरोध का पक्षपोषक था और मई १६३३ में उसने चाङच्याखओ में जनता की जापान-विरोधी संश्रयबद्ध सेना के निर्माण में कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग किया। च्याङ काई-शेक और जापानी आक्रमणकारियों के दबाव के फलस्वरूप अगस्त में उसके प्रयास निष्फल हो गए। अपनी जिन्दगी के अन्तिम वर्षों में वह कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग के दृष्टिबिन्दु पर कायम रहा।

१२ दिसम्बर १६३१ में च्याङशी प्रान्त के निङतू में क्वोमिन्ताङ की २६वीं राह सेना के अन्दर, जो च्याङ काई-शेक द्वारा च्याङशी प्रान्त में लाल सेना पर आक्रमण करने के लिए भेजी गई थी, विद्रोह हो गया। जापान का प्रतिरोध करने के कम्युनिस्ट पार्टी के आवाहन पर कामरेड चाओ पो-शङ और कामरेड तुङ चन-थाङ के नेतृत्व में दस हजार से अधिक अफसरों व सैनिकों ने विद्रोह कर दिया और वे लाल सेना में शामिल हो गए।

१३ मा चान-शान क्वोमिन्ताङ की उत्तर-पूर्वी सेना का एक अफसर था जिसका सैन्य-दल हेलुङच्याङ में तैनात था। १८ सितम्बर की घटना के बाद ल्याओनिङ से हेलुङच्याङ की ओर बढ़ने वाले जापानी आक्रमणकारियों से उसने तथा उसके सैनिकों ने लोहा लिया।

१४ हू हान-मिन क्वोमिन्ताङ का एक कुख्यात राजनीतिज्ञ था, जो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करने की सुन यात-सेन की नीति का विरोधी था और १२ अप्रैल १६२७ को च्याङ काई-शेक द्वारा किए गए प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव में उसका सह-अपराधी था। बाद में सत्ता की छीना-झपटी में उसका च्याङ काई-शेक से संघर्ष हो गया और च्याङ काई-शेक ने उसे नजरबन्द करा दिया। १८ सितम्बर की घटना के बाद रिहा होने पर वह नानकिङ छोड़कर क्वाङचओ चला गया, जहां उसने क्वाङतुङ और क्वाङशी के युद्ध-सरदारों को काफी लम्बे अरसे तक च्याङ काई-शेक की नानकिङ सरकार के विरुद्ध भड़काए रखा।

१५ "जापान का प्रतिरोध करने तथा देश को बचाने का छैसूत्री कार्यक्रम" १६३४ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तुत और सुङ छिङ-लिङ तथा अन्य लोगों के हस्ताक्षर के साथ प्रकाशित "जापान के विरुद्ध लड़ने के लिए चीनी

जनता का बुनियादी कार्यक्रम" था। कार्यक्रम में निम्नलिखित बातें कही गई थीं : (१) जापान से लड़ने के लिए तमाम जल, स्थल व वायु सेनाओं को गोलबन्द करो ; (२) सारे देश की जनता को गोलबन्द करो ; (३) तमाम जनता को हथियारबन्द करो ; (४) युद्ध का खर्च चलाने के लिए चीन में जापानी साम्राज्यवादियों तथा गद्दारों की सम्पत्ति को जब्त करो ; (५) मजदूरों, किसानों, सैनिकों, बुद्धिजीवियों व व्यापारियों के प्रतिनिधियों द्वारा चुनी हुई अखिल-चीन राष्ट्रीय सशस्त्र प्रतिरक्षा कमेटी की स्थापना करो ; और (६) जापानी साम्राज्यवादियों के तमाम शत्रुओं से सहयोग कायम करो तथा हितैषियों की सी तटस्थता बरतने वाले सभी देशों के साथ मैत्री-सम्बन्ध कायम करो।

१६ इन युद्ध-सरदारों के नाम इस प्रकार थे – क्वाङतुङ का छन ची-थाङ और क्वाङशी का ली चुङ-रन व पाए छुङ-शी।

१७ च्याङ काई-शेक डाकू-गुट क्रान्तिकारी जनता को "डाकुओं" की संज्ञा देता था और क्रान्तिकारी जनता पर अपने सशस्त्र आक्रमण व कत्लेआम को "डाकुओं का विनाश" कहता था।

१८ कामरेड रन पी-श चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के वयोवृद्ध सदस्यों और उसके प्राथमिक संगठनकर्ताओं में से एक थे। वे १९२७ में आयोजित पार्टी की पांचवीं राष्ट्रीय कांग्रेस के समय से ही पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सदस्य थे। १९३१ में उन्हें छठी केन्द्रीय कमेटी के चौथे पूर्ण अधिवेशन में राजनीतिक ब्यूरो का सदस्य चुन लिया गया। १९३३ में वे हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की प्रान्तीय पार्टी-कमेटी के सचिव और साथ ही लाल सेना के छठे सेना-ग्रुप के राजनीतिक कमिसार भी थे। जब छठे सेना-ग्रुप तथा दूसरे सेना-ग्रुप को मिला दिया गया और उन्होंने दूसरी मोर्चा-सेना का रूप ले लिया, तो कामरेड रन पी-श को उसका राजनीतिक कमिसार नियुक्त कर दिया गया। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रथम वर्षों में वे आठवीं राह सेना के प्रधान राजनीतिक विभाग के निर्देशक रहे। १९४० में वे पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सचिवालय में काम करने लगे। १९४५ में पार्टी की सातवीं केन्द्रीय कमेटी के प्रथम पूर्ण अधिवेशन में उन्हें फिर राजनीतिक ब्यूरो और सचिवालय का सदस्य चुन लिया गया। २७ अक्तूबर १९५० को कामरेड रन पी-श का पेकिङ में देहान्त हो गया।

१९ चीनी मजदूर-किसानों की लाल सेना का छठा सेना-ग्रुप शुरू में हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में तैनात था। अगस्त १९३४ में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के आदेशानुसार उसने शत्रु का घेरा तोड़कर अपने मोर्चे की जगह बदल दी। अक्तूबर में यह पूर्वी क्वेइचओ में कामरेड हो लुङ के नेतृत्व में चलने वाले दूसरे सेना-ग्रुप से जा मिला, और इन दोनों को मिलाकर लाल सेना की दूसरी मोर्चा-सेना कायम की गई तथा हुनान-हुपे-सछ्वान-क्वेइचओ क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र की स्थापना की गई।

२० अक्तूबर १९३४ में चीनी मजदूर-किसानों की लाल सेना के पहले, तीसरे और पांचवें सेना-ग्रुपों (यानी लाल सेना की पहली मोर्चा-सेना, जो केन्द्रीय लाल सेना के नाम से भी प्रसिद्ध थी) ने पश्चिमी फूच्येन के छाङथिङ और निङह्वा से और दक्षिणी च्याङशी के रुइचिन, य्वीतू और अन्य स्थानों से कूच कर दिया और एक महान रणनीतिक स्थानान्तरण प्रारम्भ किया। ग्यारह प्रान्तों – फूच्येन, च्याङशी, क्वाङतुङ, हुनान, क्वाङशी, क्वेइचओ, सछ्वान, युन्नान, शीखाङ, कानसू और शेनशी – को पार करते हुए, बारहों महीने हिमाच्छादित रहने वाले पर्वतों और मार्गहीन घास के दलदली मैदानों को लांघकर तथा अकथनीय कठिनाइयों को झेलकर, बार-बार शत्रु की घेरेबन्दियों, पीछा करने की कार्यवाहियों, रास्ते में अड़चनें डालने और रास्ता छेंकने की कार्यवाहियों को विफल करके अपने इस अभियान में लाल सेना ने २५,००० ली (१२,५०० किलोमीटर) का लम्बा रास्ता तै किया और अन्त में वह अक्तूबर १९३५ में विजयपूर्वक उत्तरी शेनशी के क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र में पहुंच गई।

२१ सछ्वान-शेनशी सीमान्त क्षेत्र की लाल सेना चीनी मजदूर-किसानों की लाल सेना की चौथी मोर्चा-सेना थी। मार्च १९३५ में उसने सछ्वान-शेनशी सीमा पर अपने आधार-क्षेत्र से सछ्वान और शीखाङ दो प्रान्तों की सीमाओं की ओर स्थानान्तरण कर दिया। जून में वह पश्चिमी सछ्वान के माओकुङ में पहली मोर्चा-सेना से मिल गई और दाएं व बाएं दो मार्गों से उत्तर की ओर बढ़ गई। लेकिन सितम्बर में सुङफान के पास माओअरकाए क्षेत्र में आने पर चौथी मोर्चा-सेना में काम करने वाला चाङ क्वो-थाओ केन्द्रीय कमेटी के आदेशों का उल्लंघन करके बाएं मार्ग वाले सैन्य-दलों को दक्षिण की ओर ले गया, जिससे लाल सेना

की शक्ति विच्छिन्न हो गई। दूसरी मोर्चा-सेना, जिसने शत्रु का घेरा तोड़कर हुनान-हुपे-सछ्वान-क्वेइचओ सीमान्त क्षेत्र छोड़ दिया था, हुनान, क्वेइचओ और युन्नान होते हुए जून १९३६ में शीखाङ प्रान्त के कानचि में पहुंची, और वहां चौथी मोर्चा-सेना से मिल गई। चाङ क्वो-थाओ की इच्छा के विरुद्ध चौथी मोर्चा-सेना के कामरेडों ने दूसरी मोर्चा-सेना के साथ ही उत्तर की ओर स्थानान्तरण करना जारी रखा। अक्तूबर में, समूची दूसरी मोर्चा-सेना और चौथी मोर्चा-सेना का एक भाग उत्तरी शेनशी पहुंच गया और पहली मोर्चा-सेना के साथ जा मिलने में सफल हो गया।

२२ चाङ क्वो-थाओ चीनी क्रान्ति का एक गद्दार था। क्रान्ति के प्रति सट्टेबाजी का रवैया अपनाते हुए उसने अपनी जवानी के दिनों में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में शिरकत की थी। पार्टी के अन्दर उसने अनेक गलतियां करके अत्यन्त गम्भीर अपराध किए। उसका सबसे कुख्यात अपराध यह था कि १९३५ में उसने इस पराजयवादी और विघटनवादी नीति की वकालत करते हुए कि लाल सेना सछ्वान-शीखाङ सीमान्त क्षेत्र के अल्पसंख्यक-जातीय क्षेत्र में हट जाए, लाल सेना के उत्तर की ओर अभियान का विरोध किया, और पार्टी व केन्द्रीय कमेटी के विरुद्ध खुलेआम गद्दाराना कार्यवाहियां कीं, स्वयं अपनी बोगस केन्द्रीय कमेटी स्थापित कर ली तथा पार्टी की एकता व लाल सेना की एकता को तहस-नहस कर दिया, जिससे चौथी मोर्चा-सेना को भारी क्षति पहुंची। कामरेड माओ त्सेतुङ और पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की धैर्यपूर्ण शिक्षा के फलस्वरूप चौथी मोर्चा-सेना और उसके कार्यकर्ताओं का विशाल समुदाय जल्दी ही केन्द्रीय कमेटी के सही नेतृत्व के अन्तर्गत आ गया और उन्होंने बाद के संघर्षों में बड़ी गौरवशाली भूमिका अदा की। लेकिन चाङ क्वो-थाओ लाइलाज साबित हुआ और १९३८ के बसन्त में वह अकेला ही शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र से भागकर क्वोमिन्ताङ की खुफिया पुलिस में शामिल हो गया।

२३ केन्द्रीय लाल सेना या पहली मोर्चा-सेना का तात्पर्य यहां चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सीधे नेतृत्व में च्याङशी-फूच्येन क्षेत्र में निर्मित लाल सेना से है।

२४ "फान कू" चीन की पौराणिक कथाओं में वर्णित एक व्यक्ति था।

"तीन चक्रवर्ती" और "पांच सम्राट" पौराणिक कथाओं में वर्णित प्राचीन चीन के शासक थे। – अनु०

२५ जुलाई १९३५ में क्वोमिन्ताङ सेना ने शेनशी-कानसू क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र के विरुद्ध "घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम छेड़ दी। पूर्वी क्षेत्र में उत्तर शेनशी लाल सेना की २६वीं फौजी कोर ने शत्रु की दो ब्रिगेडों को पछाड़ दिया और शत्रु को पीली नदी के पूर्व में खदेड़ दिया। सितम्बर में लाल सेना की २५वीं फौजी कोर, जो हुपे-हुनान-आनह्वेइ आधार-क्षेत्र में कार्यवाही कर रही थी, दक्षिणी शेनशी और पूर्वी कानसू होते हुए उत्तरी शेनशी आने के बाद उत्तर शेनशी लाल सेना के साथ आ मिली और इन दोनों फौजों को लाल सेना के १५वें सेना-ग्रुप के रूप में संगठित कर दिया गया। कानछ्वेन-लाओशान मुहिम में इस सेना-ग्रुप ने शत्रु की ११०वीं डिवीजन के अधिकांश भाग का सफाया कर दिया, उसके डिवीजनल कमाण्डर को मार डाला और इसके बाद कानछ्वेन काउन्टी के य्वीलिनछ्याओ नामक स्थान में कार्यवाही के दौरान शत्रु की १०७वीं डिवीजन की चार बटालियनों को तहस-नहस कर दिया। शत्रु ने नए हमले करने की तैयारी की और तुङ इङ-पिन (उत्तर-पूर्वी सेना की एक फौजी कोर का कमाण्डर) को पांच डिवीजनों का नेतृत्व सौंप दिया, जिन्होंने दो रास्तों से धावा बोल दिया; पूर्वी मार्ग की एक डिवीजन ने लोछ्वान-फ़ूश्येन राजमार्ग पर उत्तर की ओर धावा बोला और अन्य चार डिवीजनों ने हुलू नदी से सटकर पश्चिमी मार्ग पर कानसू के छिङयाङ व होश्वेइ से गुजरते हुए उत्तरी शेनशी के फ़ूश्येन की तरफ धावा बोल दिया। अक्तूबर में केन्द्रीय लाल सेना उत्तरी शेनशी पहुंच गई। अगले महीने केन्द्रीय लाल सेना तथा १५वें सेना-ग्रुप ने मिलकर फ़ूश्येन के दक्षिण-पश्चिम में स्थित चलोचन में शत्रु की १०९वीं डिवीजन का सफाया कर दिया, और शत्रु का पीछा करते हुए हेश्वेइस में उसकी १०६वीं डिवीजन की एक रेजीमेन्ट को नेस्तनाबूद कर दिया। इस प्रकार, शेनशी-कानसू आधार-क्षेत्र के विरुद्ध शत्रु की तीसरी "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम पूर्णतया तहस-नहस कर दी गई।

२६ १९३४-३५ में जब चीन के दक्षिणी भाग में लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्तियों ने अपना स्थानान्तरण किया, तो वे कुछ फौजी यूनिटों को छापामार

कार्यवाहियां करने के लिए छोड़ गई। आठ प्रान्तों के चौदह क्षेत्रों – दक्षिणी च्यांग्सी, उत्तरी फ़ूच्येन, पूर्वी फ़ूच्येन, दक्षिणी फ़ूच्येन, पश्चिमी फ़ूच्येन, उत्तर-पूर्वी च्याङशी, फ़ूच्येन-च्याङशी सीमा, क्वाङतुङ-च्याङशी सीमा, दक्षिणी हुनान, हुनान-च्याङशी सीमा, हुनान-हुपे-च्याङशी सीमा, हुपे-हनान-आनह्वेइ सीमा, दक्षिणी हुनान में थुङपो पर्वत, और क्वाङतुङ के समुद्रतट के निकट हाएनान द्वीप – में ये छापामार यूनिटें जमी रहीं।

२७ १९३१ में जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा उत्तर-पूर्व पर अधिकार किए जाने के बाद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने सशस्त्र प्रतिरोध के लिए जनता का आवाहन किया। उसने जापान-विरोधी छापामार दस्ते संगठित किए, उत्तर-पूर्व की जन क्रान्तिकारी सेना का निर्माण किया और जापान-विरोधी विभिन्न स्वयंसेवक सैन्य-दलों को सहायता प्रदान की। १९३४ में पार्टी के नेतृत्व में इन तमाम सैन्य-दलों को एकीकृत करके उत्तर-पूर्व की जापान-विरोधी संयुक्त सेना के रूप में पुनर्गठित कर दिया गया और मशहूर कम्युनिस्ट याङ चिङ-य्वी को उसका प्रधान सेनापति नियुक्त कर दिया गया। यह सेना एक लम्बे अरसे तक उत्तर-पूर्व में जापान-विरोधी छापामार युद्ध चलाती रही। पूर्वी हुपे में जापान-विरोधी छापामार युद्ध का तात्पर्य मई १९३५ में जापान के विरुद्ध हुए किसान विद्रोह से है।

२८ सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में हुए क्रान्तिकारी युद्ध का तात्पर्य १९१८ से १९२० तक चलाए गए उस युद्ध से है जिसमें सोवियत जनता ने बरतानिया, संयुक्त राज्य अमरीका, फ्रांस, जापान, पोलैण्ड आदि साम्राज्य-वादी देशों के सशस्त्र हस्तक्षेप को पराजित कर दिया और श्वेत रक्षकों की बगावत को कुचल दिया।

२९ कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा यहां प्रतिपादित की गई लोक गणराज्य की राजनीतिक सत्ता और नीतियों को जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जनता के मुक्त क्षेत्रों में पूरी तरह अमली रूप दिया गया था। यही वजह है कि कम्युनिस्ट पार्टी जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध, शत्रु-पंक्तियों के पीछे, विजयपूर्वक युद्ध चलाने में जनता का नेतृत्व कर सकी। जापान के आत्मसमर्पण के बाद तीसरा क्रान्तिकारी गृहयुद्ध छिड़ गया। जैसे-जैसे

इस युद्ध की प्रगति होती गई, वैसे-वैसे जनता द्वारा मुक्त कराए गए क्षेत्रों का समूचे चीन के पैमाने पर विस्तार होता गया और एकीकृत चीन लोक गणराज्य का जन्म हुआ। इस प्रकार, कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा प्रतिपादित लोक गणराज्य का लक्ष्य अन्त में सारे देश में प्राप्त हो गया।

३० जुलाई १९२८ में आयोजित चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस ने निम्नलिखित दससूत्री कार्यक्रम निर्धारित किया : (१) साम्राज्य-वादी शासन को उखाड़ फेंकना ; (२) विदेशी पूंजी वाले उद्योग-धन्धों तथा बैंकों को जब्त करना ; (३) चीन का एकीकरण करना और विभिन्न जातियों के आत्मनिर्णय के अधिकार को मान्यता देना ; (४) क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदारों की सरकार को उखाड़ फेंकना ; (५) मजदूरों, किसानों व सैनिकों की प्रतिनिधि-परिषदों वाली सरकार की स्थापना करना ; (६) आठ घण्टे का श्रम-दिन निश्चित करना, तनख्वाह बढ़ाना, बेरोजगारों को सहायता देना, सामाजिक बीमा-व्यवस्था कायम करना, इत्यादि ; (७) जमींदार वर्ग की तमाम जमीन को जब्त करना और जमीन का किसानों में बंटवारा कर देना ; (८) सिपाहियों के रहन-सहन की स्थिति को सुधारना, सिपाहियों को जमीन और रोजगार देना ; (९) तमाम बेजा टैक्सों और तरह-तरह की लेवियों का खात्मा करना और एक समेकीकृत वर्धमान कर-व्यवस्था को लागू करना ; और (१०) विश्व-सर्वहारा से एकता कायम करना, सोवियत संघ से एकता कायम करना।

३१ त्रात्सकीवादी ग्रुप मूलतः रूसी मजदूर आन्दोलन में मौजूद लेनिनवाद-विरोधी गुट था। बाद में वह पतित होकर एक सरासर प्रतिक्रान्तिकारी गिरोह बन गया। १९३७ में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) की केन्द्रीय कमेटी के पूर्ण अधिवेशन में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में कामरेड स्तालिन ने गद्दारों के इस गुट के पतन के मार्ग की इन शब्दों में व्याख्या की थी :

> अतीत काल में, सात या आठ वर्ष पहले, त्रात्सकीवाद मजदूर वर्ग के अन्दर मौजूद ऐसे राजनीतिक रुझानों में से एक था, निस्सन्देह यह एक लेनिन-वाद-विरोधी रुझान था, और इसलिए एक बेहद गलत रुझान था, लेकिन तिस पर भी यह एक राजनीतिक रुझान ही था। ... आज का त्रात्सकीवाद मजदूर वर्ग के भीतर कोई राजनीतिक रुझान नहीं है, बल्कि तोड़फोड़ और पथभ्रष्ट

करने वालों, खुफिया एजेन्टों, जासूसों और हत्यारों का सिद्धान्तहीन और विचारहीन गिरोह है, मजदूर वर्ग के कट्टर दुश्मनों का गिरोह है, जो विदेशों की खुफिया एजेन्सियों से पैसा पाकर उनकी खिदमत करता है।

१९२७ में चीनी क्रान्ति की असफलता के बाद चीन में भी चन्द त्रात्सकीवादी निकल आए। उन्होंने छन तू-श्यू और दूसरे गद्दारों के साथ मिलकर १९२९ में एक छोटा सा प्रतिक्रान्तिकारी गुट बना लिया और इस प्रकार का प्रतिक्रान्तिकारी प्रचार करने लगे कि क्वोमिन्ताङ ने पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति पूरी कर ली है। वे सरासर जनता के विरुद्ध साम्राज्यवाद तथा क्वोमिन्ताङ के घृणित मोहरे बन गए। चीनी त्रात्सकीवादी खुलेआम क्वोमिन्ताङ के खुफिया विभाग में भरती हो गए। १८ सितम्बर की घटना के बाद मुजरिमाना गद्दार त्रात्सकी के इस आदेश का पालन करने के लिए कि "जापानी साम्राज्य द्वारा चीन पर कब्जा किए जाने में रुकावट न डाली जाए", वे जापान के खुफिया एजेन्टों के साथ सहयोग करने लगे, उनसे आर्थिक सहायता प्राप्त करने लगे तथा जापानी हमलावरों को सहायता देने वाली हर प्रकार की कार्यवाहियों में जुट गए।

१२ यह उद्धरण "मेनशियस" से लिया गया है। मेनशियस ने यह बात इसलिए कही क्योंकि बसन्त और शरद काल (७२२-४८१ ई० पू०) में चीन के सामन्त सत्ता के लिए आपस में लगातार युद्ध करते रहते थे।

१३ अफीम के व्यापार का चीनी जनता द्वारा विरोध किए जाने पर बरतानिया ने १८४०-४२ में व्यापार की रक्षा के बहाने अपना सैन्य-दल भेजकर चीन पर हमला कर दिया। लिन त्से-श्वी के नेतृत्व में चीन की सेना ने प्रतिरोध-युद्ध लड़ा। क्वाङचओ की जनता ने खुद-ब-खुद "अंग्रेजों का दमन करने वाली कोर" का संगठन किया, जिसने बरतानवी आक्रमणकारियों को भारी आघात पहुंचाया।

१४ थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध छिङ वंश के सामन्ती शासन तथा राष्ट्रीय उत्पीड़न के विरुद्ध उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में किया गया एक क्रान्तिकारी किसान युद्ध था। जनवरी १८५१ में हुङ श्यू-छ्वेन, याङ श्यू-छिङ तथा इस क्रान्ति के अन्य नेताओं ने क्वाङशी की क्वेइफिङ काउन्टी के चिनथ्येन गांव में विद्रोह कर दिया और थाइफिङ स्वर्गिक राज्य की स्थापना की घोषणा कर दी। १८५२ में विद्रोही सेना ने क्वाङशी से उत्तर की ओर बढ़कर हुनान, हुपे, च्याङशी और आनह्वेइ से गुजरते हुए अभियान किया तथा १८५३ में नानकिङ शहर पर अधिकार कर लिया। इसके बाद इस सैन्य-दल का एक हिस्सा नानकिङ से उत्तर की ओर बढ़ता गया और थ्येनचिन के निकट पहुंच गया। परन्तु थाइफिङ सेना ने जिन प्रदेशों पर कब्जा किया, वहां उसने मजबूत आधार-क्षेत्र नहीं बनाया, और नानकिङ को राजधानी बना लेने के बाद इस सेना के नेतृत्वकारी ग्रुप ने अनेक राजनीतिक और फौजी गलतियां कीं; इसलिए वह छिङ सरकार की प्रतिक्रान्तिकारी सेना तथा बरतानवी, अमरीकी और फ्रांसीसी आक्रमणकारियों के संयुक्त प्रहार का मुकाबला न कर सकी और आखिरकार १८६४ में पराजित हो गई।

१५ ई हो थ्वान युद्ध १९०० में चीन के उत्तरी भाग में किसानों व दस्तकारों द्वारा छेड़ा गया एक स्वतःस्फूर्त विशाल आन्दोलन था, जिसमें किसानों व दस्तकारों ने अपनी रहस्यपूर्ण गुप्त संस्थाओं का निर्माण करके साम्राज्यवादियों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष चलाया। लेकिन आठ साम्राज्यवादी ताकतों की संयुक्त सेनाओं ने पेकिङ व थ्येनचिन पर कब्जा करके इस आन्दोलन को अकथनीय बर्बरता के साथ कुचल दिया।

१६ देखिए: "हुनान के किसान आन्दोलन की जांच-पड़ताल की रिपोर्ट", नोट ३।

१७ देखिए: वी० आई० लेनिन की रचना "सर्वहारा क्रान्ति का युद्ध-कार्यक्रम"; तथा "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ६, परिच्छेद ३।

चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं*

दिसम्बर १६३६

अध्याय १

युद्ध का अध्ययन कैसे करें

१. युद्ध के नियम विकासमान हैं

युद्ध के नियम – यह एक ऐसा मसला है जिसका युद्ध का निर्देशन करने वाले हर किसी व्यक्ति को अध्ययन करना चाहिए और हल निकालना चाहिए।

क्रान्तिकारी युद्ध के नियम – यह एक ऐसा मसला है जिसका क्रान्तिकारी युद्ध का निर्देशन करने वाले हर किसी व्यक्ति को अध्ययन करना चाहिए और हल निकालना चाहिए।

चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के नियम – यह एक ऐसा मसला है जिसका चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का निर्देशन करने वाले हर किसी

---

*कामरेड माओ त्सेतुङ ने यह रचना द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के अनुभव का सारांश निकालने के लिए लिखी तथा उत्तरी शेनशी के लाल सेना कालेज में भाषण देने के लिए इसका इस्तेमाल किया। लेखक के कथनानुसार, इस रचना

व्यक्ति को अध्ययन करना चाहिए और हल निकालना चाहिए।

हम लोग इस समय युद्ध में लगे हुए हैं। हमारा युद्ध एक क्रान्तिकारी युद्ध है। हमारा क्रान्तिकारी युद्ध चीन के इस अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती देश में चलाया जा रहा है। इसलिए हमें न सिर्फ युद्ध के आम नियमों का अध्ययन करना चाहिए, बल्कि क्रान्तिकारी युद्ध के विशेष नियमों का भी अध्ययन करना चाहिए, और चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के और भी विशेष नियमों का अध्ययन करना चाहिए।

यह बात सभी लोग जानते हैं कि कोई काम करने में जब तक आप उसकी वास्तविक परिस्थितियों को नहीं जान लेंगे, उसके स्वरूप को और अन्य वस्तुओं के साथ उसके सम्बन्धों को नहीं समझ लेंगे, तब तक आप उसका संचालन करने वाले नियमों को नहीं जान सकेंगे, यह नहीं समझ सकेंगे कि उसे कैसे किया जाए, और उसे अच्छी तरह नहीं कर सकेंगे।

युद्ध, जिसका प्रारम्भ निजी सम्पत्ति और वर्गों के प्रादुर्भाव से ही हुआ था, वर्गों, राष्ट्रों, राज्यों या राजनीतिक ग्रुपों के बीच मौजूद

के सिर्फ पांच अध्याय पूरे किए गए, और रणनीतिक आक्रमण, राजनीतिक कार्य और अन्य समस्याओं से सम्बन्धित जो अध्याय बाकी थे, वे नहीं लिखे जा सके, क्योंकि शीआन घटना होने के परिणामस्वरूप वे बेहद व्यस्त हो गए। यह रचना, जो द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के दौरान फौजी समस्याओं के बारे में पार्टी के भीतर चल रहे वृहद वाद-विवाद का परिणाम थी, एक कार्यदिशा के खिलाफ दूसरी कार्यदिशा को प्रतिबिम्बित करती है। जनवरी १९३५ में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की एक विस्तृत मीटिंग चुनई में बुलाई गई, जिसमें कार्यदिशा से सम्बन्धित इस वाद-विवाद पर निष्कर्ष निकाला गया, कामरेड माओ त्सेतुङ

अन्तरविरोधों को, जो अपने विकास की एक निश्चित मंजिल तक पहुंच गए हों, हल करने के लिए किए जाने वाले संघर्ष का सर्वोच्च रूप है। युद्ध की वास्तविक परिस्थितियों, उसके स्वरूप और अन्य वस्तुओं के साथ उसके सम्बन्धों को समझे बिना आप युद्ध के नियमों को नहीं जान सकेंगे, यह नहीं जान सकेंगे कि युद्ध का निर्देशन कैसे किया जाए, और विजय प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

क्रान्तिकारी युद्ध – क्रान्तिकारी वर्ग-युद्ध और क्रान्तिकारी राष्ट्रीय युद्ध – की, युद्ध की सामान्य परिस्थितियों और उसके सामान्य स्वरूप के अलावा अपनी विशेष परिस्थितियां भी होती हैं और अपना विशेष स्वरूप भी होता है। इसलिए युद्ध के आम नियमों के अलावा उसके कुछ अपने विशेष नियम भी होते हैं। इन विशेष परिस्थितियों और विशेष स्वरूप को समझे बिना, उसके विशेष नियमों को समझे बिना, आप क्रान्तिकारी युद्ध का निर्देशन नहीं कर सकेंगे और उसे सफलतापूर्वक नहीं चला सकेंगे।

चीन का क्रान्तिकारी युद्ध – चाहे गृहयुद्ध हो अथवा राष्ट्रीय युद्ध – चीन की विशेष परिस्थितियों में चलाया जाता है; सामान्य

के विचारों की पुष्टि की गई तथा गलत कार्यदिशा का निषेध किया गया। अक्तूबर १९३५ में केन्द्रीय कमेटी उत्तरी शेनशी चली गई और उसी वर्ष दिसम्बर में कामरेड माओ त्सेतुङ ने "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में" शीर्षक एक रिपोर्ट पेश की, जिसमें द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के दौरान पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा से सम्बन्धित समस्याओं को बड़े व्यवस्थित रूप से हल किया गया। एक वर्ष बाद, १९३६ में, उन्होंने चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याओं की व्यवस्थित रूप से व्याख्या करने के लिए प्रस्तुत रचना लिखी।

युद्ध या सामान्य क्रान्तिकारी युद्ध की तुलना में उसकी अपनी विशेष परिस्थितियां हैं और अपना विशेष स्वरूप है। इसलिए सामान्य युद्ध और सामान्य क्रान्तिकारी युद्ध के नियमों के अलावा उसके कुछ अपने विशेष नियम भी हैं। जब तक आप उन्हें नहीं समझ लेंगे, तब तक चीन के क्रान्तिकारी युद्ध में विजय प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

इसलिए हमें सामान्य युद्ध के नियमों का अध्ययन करना चाहिए, हमें क्रान्तिकारी युद्ध के नियमों का अध्ययन करना चाहिए, और अन्त में हमें चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के नियमों का भी अध्ययन करना चाहिए।

कुछ लोगों में एक गलत धारणा मौजूद है, जिसका खण्डन हम बहुत पहले कर चुके हैं। वे कहते हैं कि सामान्य युद्ध के नियमों का अध्ययन करना काफी है, अथवा ज्यादा ठोस रूप में कहा जाए तो यह कि प्रतिक्रियावादी चीन सरकार ने, या चीन की प्रतिक्रियावादी फौजी अकादमियों ने जो फौजी मैनुअल प्रकाशित किए हैं, उनका अनुसरण करना काफी है। वे यह नहीं देखते कि इनमें केवल सामान्य युद्ध के नियम बताए जाते हैं; इसके अलावा वे सबके सब विदेशों से नकल किए गए हैं। यदि हम उनके वाह्य रूप में और उनकी विषय-वस्तु में जरा भी परिवर्तन किए बिना उनकी नकल करेंगे और उन्हें यांत्रिक ढंग से लागू करेंगे, तो यह "जूते की नाप के हिसाब से पैर काटना" होगा और हम हार जाएंगे। उनका तर्क यह है : जो ज्ञान खून बहाकर प्राप्त किया गया है, वह आखिर हमारे लिए उपयोगी क्यों नहीं है? वे यह नहीं देख पाते कि हालांकि हमें पूर्व-काल में खून बहाकर प्राप्त किए गए अनुभवों की कद्र करनी चाहिए, लेकिन हमें अपना खुद का खून बहाकर प्राप्त किए गए अनुभवों की भी

कद्र करनी चाहिए।

कुछ लोगों में एक अन्य गलत धारणा मौजूद है, जिसका खण्डन भी हम बहुत पहले कर चुके हैं। उनका कहना है कि केवल रूस के क्रान्तिकारी युद्ध के अनुभव का अध्ययन करना ही काफी है, अथवा ठोस रूप में कहा जाए तो यह कि सोवियत संघ में गृहयुद्ध के जो निर्देशक नियम थे और वहां के फौजी संगठनों ने जो फौजी मैनुअल प्रकाशित किए, उनका अनुसरण करना ही काफी है। वे यह नहीं देखते कि सोवियत संघ के इन निर्देशक नियमों व फौजी मैनुअलों में सोवियत संघ के गृहयुद्ध और सोवियत संघ की लाल सेना की अपनी विशेषताएं निहित हैं, और यदि हम उनमें जरा भी हेरफेर करने की इजाजत दिए बिना उनकी नकल करें तथा उन्हें यांत्रिक ढंग से लागू करें, तो यह भी "जूते की नाप के हिसाब से पैर काटना" होगा और हम हार जाएंगे। उन लोगों का तर्क यह है : चूंकि सोवियत संघ के युद्ध की ही तरह हमारा युद्ध भी एक क्रान्तिकारी युद्ध है, और चूंकि सोवियत संघ विजयी हो चुका है, इसलिए उसकी मिसाल पर चलने के अलावा हमारे सामने दूसरा रास्ता और क्या हो सकता है? वे यह नहीं देख पाते कि यद्यपि हमें सोवियत संघ के युद्ध के अनुभवों को विशेष रूप से ध्यान में रखना चाहिए, क्योंकि वे क्रान्ति-कारी युद्ध के सबसे आधुनिक अनुभव हैं और लेनिन तथा स्तालिन के निर्देशन में प्राप्त किए गए हैं, फिर भी हमें चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के अनुभवों को भी ध्यान में रखना चाहिए, क्योंकि चीनी क्रान्ति और चीनी लाल सेना की अपनी अनेक विशेष परिस्थितियां हैं।

कुछ लोगों में एक तीसरी गलत धारणा मौजूद है, जिसका खण्डन

भी हम बहुत पहले कर चुके हैं। उनका कहना है कि १९२६-२७ के उत्तरी अभियान के अनुभव सबसे मूल्यवान हैं और हमें उनसे सीखना चाहिए, अथवा ठोस रूप में कहा जाए तो यह कि हमें उत्तरी अभियान के पदचिन्हों पर चलते हुए तूफानी वेग से लगातार आगे बढ़ना चाहिए और बड़े शहरों पर कब्जा करना चाहिए। वे यह नहीं देख पाते कि उत्तरी अभियान के अनुभवों का अध्ययन तो करना चाहिए, लेकिन उनकी नकल नहीं करनी चाहिए और उन्हें यांत्रिक ढंग से लागू नहीं करना चाहिए, क्योंकि हमारे वर्तमान युद्ध की परिस्थितियां भिन्न हैं। हमें उत्तरी अभियान की केवल वही बातें अपनानी चाहिए जो वर्तमान परिस्थितियों में भी लागू होती हैं, तथा अपनी वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल अपने खुद के उपाय खोज निकालने चाहिए।

इस प्रकार युद्ध की परिस्थितियों की भिन्नता, अर्थात उसके काल, स्थान और स्वरूप की भिन्नता, युद्ध के निर्देशक नियमों की भिन्नता को निश्चित करती है। जहां तक काल की परिस्थिति का सवाल है, युद्ध और युद्ध के निर्देशक नियम दोनों ही विकासमान होते हैं; प्रत्येक ऐतिहासिक मंजिल की अपनी विशेषताएं होती हैं, इसलिए प्रत्येक ऐतिहासिक मंजिल में युद्ध के नियमों की भी अपनी विशेषताएं होती हैं और उन्हें भिन्न मंजिल में यांत्रिक ढंग से लागू नहीं किया जा सकता। जहां तक युद्ध के स्वरूप का सवाल है, चूंकि क्रान्तिकारी युद्ध और प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध की अपनी-अपनी विशेषताएं होती हैं, इसलिए इनमें से हर युद्ध का संचालन करने वाले नियमों की भी अपनी विशेषताएं होती हैं और एक युद्ध पर लागू होने वाले नियमों को यांत्रिक ढंग से दूसरे युद्ध पर लागू नहीं

किया जा सकता। जहां तक स्थान की परिस्थिति का सवाल है, चूंकि प्रत्येक देश या राष्ट्र की, विशेषकर बड़े देश या बड़े राष्ट्र की अपनी अलग-अलग विशेषताएं होती हैं, इसलिए प्रत्येक देश या राष्ट्र के अन्दर युद्ध के नियमों की भी अपनी अलग-अलग विशेषताएं होती हैं और इस प्रकार एक देश या राष्ट्र में लागू होने वाले नियमों को भी यांत्रिक ढंग से दूसरे देश या राष्ट्र में लागू नहीं किया जा सकता। विभिन्न ऐतिहासिक मंजिलों, विभिन्न स्वरूपों, विभिन्न स्थानों और विभिन्न राष्ट्रों के युद्धों के निर्देशक नियमों का अध्ययन करते समय हमें उनकी अपनी-अपनी विशेषताओं और उनके विकास का ध्यान रखना चाहिए तथा युद्ध की समस्या के प्रति यांत्रिक दृष्टिकोण का विरोध करना चाहिए।

बात इतनी ही नहीं है। जब कोई कमाण्डर पहले छोटी फौजी फारमेशन का संचालन करने के बाद फिर बड़ी फौजी फारमेशन के संचालन के योग्य बन जाता है, तो यह उसकी प्रगति और विकास का सूचक है। एक ही स्थान में फौजी कार्यवाही करने और अनेक स्थानों में फौजी कार्यवाही करने में भी अन्तर है। जब कोई कमाण्डर पहले अपनी एक सुपरिचित जगह में फौजी कार्यवाही करता है और फिर अनेक स्थानों में फौजी कार्यवाही करने योग्य बन जाता है, तो यह भी उसकी प्रगति और विकास का सूचक है। शत्रु-पक्ष के और स्वयं हमारे तकनीकी, कार्यनीतिक और रणनीतिक विकास के कारण एक युद्ध की हर मंजिल की परिस्थितियां भी अलग-अलग होती हैं। जब कोई कमाण्डर युद्ध की प्रारम्भिक मंजिल में सैन्य-संचालन करने के बाद उसकी आगे बढ़ी हुई मंजिल में सैन्य-संचालन के योग्य बन जाता है, तो यह उसकी और अधिक प्रगति और विकास

का सूचक है। यदि कोई कमाण्डर केवल किसी विशेष फौजी फारमेशन का संचालन करने, केवल किसी विशेष स्थान में अथवा युद्ध के विकास की किसी विशेष मंजिल में फौजी कार्यवाही करने की योग्यता रखता है, तो इसका अर्थ यह होता है कि उसने कुछ भी प्रगति नहीं की, उसका कुछ भी विकास नहीं हुआ। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो एक ही हुनर से या झलक मात्र से सन्तुष्ट हो जाते हैं; वे कभी प्रगति नहीं करते। किसी स्थान विशेष या काल विशेष में वे भले ही क्रान्ति में कोई भूमिका अदा करें, लेकिन वे कोई महत्वपूर्ण भूमिका अदा नहीं कर सकते। हमें ऐसे युद्ध-निर्देशक चाहिए जो महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हों। जैसे-जैसे इतिहास का विकास होता जाता है और युद्ध का विकास होता जाता है, वैसे-वैसे युद्ध के सभी निर्देशक नियमों का भी विकास होता जाता है; अपरिवर्तनशील कुछ भी नहीं है।

२. युद्ध का उद्देश्य युद्ध को नेस्तनाबूद करना है

युद्ध, पारस्परिक जन-संहार का यह दानव, मानव-समाज के विकास द्वारा अन्तिम रूप से खत्म हो जाएगा तथा वह भी निकट भविष्य में ही। लेकिन उसे खत्म करने का केवल एक ही उपाय है, वह यह कि युद्ध का युद्ध से विरोध किया जाए, प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध का क्रान्तिकारी युद्ध से विरोध किया जाए, राष्ट्रीय प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध का राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध से विरोध किया जाए, तथा प्रतिक्रान्तिकारी वर्ग-युद्ध का क्रान्तिकारी वर्ग-युद्ध से विरोध किया जाए। इतिहास में दो ही तरह के युद्ध होते हैं, न्यायपूर्ण युद्ध और

अन्यायपूर्ण युद्ध। हम न्यायपूर्ण युद्धों का समर्थन करते हैं और अन्यायपूर्ण युद्धों का विरोध करते हैं। सभी प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध अन्यायपूर्ण होते हैं, सभी क्रान्तिकारी युद्ध न्यायपूर्ण होते हैं। हम अपने ही हाथों से मानव जाति के युद्ध-युग को समाप्त करेंगे, और इसमें सन्देह नहीं कि हम लोग जो युद्ध कर रहे हैं, वह अन्तिम युद्ध का ही एक अंग है। लेकिन जिस युद्ध का हम आज सामना कर रहे हैं, वह भी निस्सन्देह सबसे बड़े और सबसे निर्मम युद्ध का ही एक अंग है। सबसे बड़ा और सबसे निर्मम अन्यायपूर्ण और प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध हमारे सिर पर मंडरा रहा है, और यदि हम न्यायपूर्ण युद्ध का झण्डा नहीं उठाएंगे, तो मानव जाति की भारी बहुसंख्या विपत्ति के अथाह सागर में डूब जाएगी। मानव जाति के न्यायपूर्ण युद्ध का झण्डा मानव जाति के बचाव का झण्डा है। चीन के न्यायपूर्ण युद्ध का झण्डा चीन के बचाव का झण्डा है। मानव जाति और चीनी जनगण की भारी बहुसंख्या जिस युद्ध को चलाती है वह निस्सन्देह एक न्यायपूर्ण युद्ध है, वह मानव जाति और चीन के बचाव के लिए एक अत्यन्त उच्च और गौरवशाली कार्य है, तथा विश्व-इतिहास को एक नए युग में ले जाने के लिए एक सेतु है। जब मानव-समाज की प्रगति उस मंजिल तक हो जाएगी जहां वर्ग और राज्य का खात्मा हो जाएगा, तो युद्ध भी नहीं होंगे – न प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध होंगे और न क्रान्तिकारी, न अन्यायपूर्ण युद्ध होंगे और न न्यायपूर्ण; वह मानव जाति के लिए स्थाई शान्ति का युग होगा। क्रान्तिकारी युद्ध के नियमों का हमारा अध्ययन सभी युद्धों का खात्मा करने के हमारे इरादे से आरम्भ होता है; यही हम कम्युनिस्टों और सभी शोषक वर्गों के बीच की विभाजन-रेखा है।

३. रणनीति वह है जो युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति के नियमों का अध्ययन करती है

जहां भी युद्ध होता है, वहां युद्ध की एक सम्पूर्ण स्थिति होती है। युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति के अन्तर्गत समूचा विश्व आ सकता है, समूचा देश आ सकता है, एक स्वतंत्र छापामार इलाका अथवा फौजी कार्यवाही का एक बड़ा स्वतंत्र मोर्चा भी आ सकता है। युद्ध की एक ऐसी स्थिति जिसमें विभिन्न पहलुओं और विभिन्न मंजिलों को ध्यान में रखा जाता हो, युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति कहलाती है।

रणनीति-विज्ञान का कार्य युद्ध के उन निर्देशक नियमों का अध्ययन करना होता है जो सम्पूर्ण स्थिति से सम्बन्ध रखते हैं। मुहिम-विज्ञान और कार्यनीति-विज्ञान का कार्य युद्ध के उन निर्देशक नियमों का अध्ययन करना होता है जो आंशिक स्थिति से सम्बन्ध रखते हैं।

किसी मुहिम या किसी कार्यनीतिक कार्यवाही के कमाण्डर को रणनीति के नियमों की किसी हद तक जानकारी क्यों होनी चाहिए? इसलिए कि सम्पूर्ण की जानकारी से अंश का संचालन और अधिक कुशलता से किया जा सकता है, और इसलिए कि अंश सम्पूर्ण के ही अधीन होता है। यह धारणा गलत है कि रणनीतिक विजय केवल कार्यनीतिक सफलताओं से ही मिलती है, क्योंकि इस धारणा में इस बात को नजरअन्दाज कर दिया जाता है कि किसी युद्ध की हार-जीत का निर्णय करने की प्रमुख और सर्वप्रथम समस्या यह होती है कि सम्पूर्ण स्थिति और उसकी विभिन्न मंजिलों का ठीक तरह से खयाल रखा गया है अथवा नहीं। यदि सम्पूर्ण स्थिति और उसकी विभिन्न मंजिलों का खयाल रखने में गम्भीर खामियां या गलतियां रह जाएंगी, तो अवश्य ही युद्ध में पराजय होगी। "एक चाल गलत होने से सारी बाजी हार जाती है" — यहां एक ऐसी चाल की बात कही गई है जिसका सम्पूर्ण स्थिति से सम्बन्ध है, यानी ऐसी चाल जो सम्पूर्ण स्थिति के लिए निर्णायक हो, न कि आंशिक स्थिति से सम्बन्धित चाल, जो सम्पूर्ण स्थिति के लिए निर्णायक नहीं होती। यह बात युद्ध के लिए भी उतनी ही सही है जितनी कि शतरंज के लिए।

लेकिन सम्पूर्ण स्थिति अपने अंशों से अलग होकर स्वतंत्र नहीं हो सकती। क्योंकि सम्पूर्ण स्थिति अपने सभी अंशों से बनी होती है। कभी-कभी कुछ अंश नष्ट या पराजित हो जाते हैं, फिर भी सम्पूर्ण स्थिति को भारी धक्का नहीं लगता, क्योंकि वे सम्पूर्ण स्थिति के लिए निर्णायक नहीं होते। कार्यनीतिक कार्यवाहियों या मुहिमों में कुछ पराजयों या असफलताओं से युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति नहीं बिगड़ जाती क्योंकि वे निर्णायक महत्व के तत्व नहीं हैं। लेकिन यदि मुहिमों — जिनसे मिलकर युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति बनती है — में से अधिकांश में हार हो जाए, अथवा निर्णायक महत्व की एक या दो मुहिमों में हार हो जाए, तो सम्पूर्ण स्थिति तुरन्त बदल जाएगी। उपरोक्त "मुहिमों में से अधिकांश" अथवा "एक या दो मुहिमें", ये सभी निर्णायक महत्व की होती हैं। युद्ध के इतिहास में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहां सिलसिलेवार अनेक जीतें हासिल करने के बाद किसी एक लड़ाई में हार होने से पहले की सारी सफलताओं पर पानी फिर जाता है, और ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जहां बहुत बार हारने के बाद किसी एक लड़ाई में जीत होने से एक नई स्थिति पैदा हो जाती है। ऐसे उदाहरणों में "सिलसिलेवार अनेक जीतें

हासिल करना" और "बहुत बार हारना" आंशिक ही हैं तथा वे सम्पूर्ण स्थिति में निर्णायक भूमिका अदा नहीं करते, जबकि "किसी एक लड़ाई में हार होना" और "किसी एक लड़ाई में जीत होना" निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। इन सभी उदाहरणों से पता चलता है कि सम्पूर्ण स्थिति को खयाल में रखना कितना महत्वपूर्ण है। जिस व्यक्ति के हाथ में सम्पूर्ण फौजी कमान हो, उसके लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसे युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति को खयाल में रखने पर ध्यान देना चाहिए। मुख्य बात यह है कि परिस्थितियों के आधार पर उसे अपनी फौजी यूनिटों और फौजी फारमेशनों के समुदाय बनाने की समस्या पर विचार करना चाहिए, दो-दो मुहिमों के परस्पर सम्बन्धों, फौजी कार्यवाही की विभिन्न मंजिलों के सम्बन्धों और अपनी सम्पूर्ण कार्यवाहियों तथा शत्रु की सम्पूर्ण कार्यवाहियों के बीच के सम्बन्धों की समस्याओं पर विचार करना चाहिए। इन सबके लिए अधिकतम सावधानी बरतने और प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है। यदि उसने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया और केवल गौण बातों में उलझा रहा, तो उसके लिए असफलताओं से बचना कठिन होगा।

जहां तक सम्पूर्ण और अंश के सम्बन्धों की बात है, वह रणनीति और मुहिम के बीच के सम्बन्धों पर ही लागू नहीं होती, बल्कि मुहिम और कार्यनीति के बीच के सम्बन्धों पर भी लागू होती है। इसकी मिसालें हैं एक डिवीजन की कार्यवाही और उसकी रेजीमेन्टों या बटालियनों की कार्यवाही के बीच के सम्बन्ध तथा एक कम्पनी की कार्यवाही और उसके प्लाटूनों या स्क्वाडों की कार्यवाही के बीच के सम्बन्ध। हर स्तर के कमान-अधिकारी को चाहिए कि वह

सम्पूर्ण स्थिति की, जिसका संचालन वह कर रहा हो, सबसे महत्वपूर्ण और सबसे निर्णायक महत्व वाली समस्याओं अथवा कार्यवाहियों पर अपना ध्यान केन्द्रित करे, न कि दूसरी समस्याओं और कार्यवाहियों पर।

कौन सी वस्तु महत्वपूर्ण या निर्णायक महत्व वाली है, इसका निर्णय सामान्य या अमूर्त परिस्थितियों के अनुसार नहीं, बल्कि ठोस परिस्थितियों के अनुसार किया जाना चाहिए। फौजी कार्यवाही में धावा किस दिशा में और किस बिन्दु पर करें, इसका निर्णय शत्रु की तत्कालीन स्थिति, धरातल और अपनी तत्कालीन सैन्य-शक्ति के अनुसार करना चाहिए। जहां प्रचुर मात्रा में रसद मौजूद हो, वहां इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सैनिक बहुत ज्यादा न खाएं, लेकिन जहां रसद की कमी हो, वहां इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे भूखे न रहें। श्वेत इलाके में जरा सा भेद खुल जाने से आगे होने वाली लड़ाई में हार हो सकती है, लेकिन लाल इलाके में इस तरह के भेदों के खुलने से आम तौर से कोई बहुत गम्भीर समस्या नहीं उठ खड़ी होती। कुछ मुहिमों में उच्च कमाण्डरों के व्यक्तिगत रूप से हिस्सा लेने की जरूरत होती है, लेकिन दूसरी मुहिमों में इसकी जरूरत नहीं होती। एक फौजी स्कूल के लिए सबसे महत्वपूर्ण सवाल है उसके निर्देशक और शिक्षकों को चुनकर उन्हें नियुक्त करना तथा एक शिक्षा-नीति निर्धारित करना। आम सभा करने में खास ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि उसमें शामिल होने के लिए जन-समुदाय को गोलबन्द किया जाए और उपयुक्त नारे पेश किए जाएं। इत्यादि-इत्यादि। संक्षेप में सिद्धान्त यह है कि उन महत्वपूर्ण कड़ियों पर ध्यान केन्द्रित किया जाए

जिनका असर सम्पूर्ण स्थिति पर पड़ता है।

युद्ध की सम्पूर्ण स्थिति के निर्देशक नियमों का अध्ययन करने के लिए दिमाग पर थोड़ा जोर देकर सोचना होगा। क्योंकि आंखों से इस प्रकार की सम्पूर्ण स्थिति सम्बन्धी चीजें ग्रहण नहीं की जा सकतीं, और केवल दिमाग से काम लेने पर ही हम उसे समझ सकते हैं; वरना उसे नहीं समझ सकते। लेकिन चूंकि सम्पूर्ण स्थिति अंशों से बनी होती है, इसलिए जिन लोगों को आंशिक स्थिति का अनुभव, मुहिम और कार्यनीति का अनुभव है, यदि वे अपने दिमाग से काम लें, तो इन उच्च स्तर के मामलों को समझ सकते हैं। रणनीति की समस्याएं इस प्रकार हैं:

अपने और शत्रु के बीच के सम्बन्धों पर समुचित ध्यान देना;

विभिन्न मुहिमों के सम्बन्धों या फौजी कार्यवाही की विभिन्न मंजिलों के सम्बन्धों पर समुचित ध्यान देना;

उन अंशों पर समुचित ध्यान देना जो सम्पूर्ण स्थिति से सम्बन्धित हों (उसके लिए निर्णयात्मक महत्व रखते हों);

सम्पूर्ण स्थिति की विशेषताओं पर समुचित ध्यान देना;

लड़ाई के मोर्चे और पृष्ठभाग के बीच के सम्बन्धों पर समुचित ध्यान देना;

इन चीजों के भेद और पारस्परिक सम्बन्धों पर समुचित ध्यान देना: क्षति उठाना और क्षतिपूर्ति करना, लड़ाई करना और विश्राम करना, केन्द्रित करना और बिखेरना, आक्रमण करना और रक्षा करना, आगे बढ़ना और पीछे हटना, छिपकर कार्यवाही करना और खुलकर कार्यवाही करना, मुख्य प्रहार करना और सहायक प्रहार करना, धावा बोलना और रोके रखना, केन्द्रित कमान और विकेन्द्रित कमान, दीर्घकालीन युद्ध और तुरत निर्णय की लड़ाई, मोर्चेबद्ध लड़ाई और चलायमान लड़ाई, हमारी अपनी सेना और मित्र-सेना, सेना का कोई एक अंग और अन्य अंग, ऊपरी रैंक और निचले रैंक, कार्यकर्ता और साधारण सैनिक, पुराने और नए सिपाही, वरिष्ठ और कनिष्ठ कार्यकर्ता, पुराने और नए कार्यकर्ता, लाल इलाके और श्वेत इलाके, पुराने लाल इलाके और नए लाल इलाके, किसी आधार-क्षेत्र का केन्द्रीय इलाका और उसके सरहदी इलाके, गरमियों का मौसम और सरदियों का मौसम, विजय और पराजय, बड़ी फौजी फारमेशन और छोटी फौजी फारमेशन, नियमित सेना और छापामार दस्ता, दुश्मन को नष्ट करना और जन-समुदाय को अपने पक्ष में करना, लाल सेना का विस्तार करना और उसे सुदृढ़ बनाना, फौजी कार्य और राजनीतिक कार्य, अतीत के कार्य और वर्तमान कार्य, वर्तमान कार्य और भावी कार्य, किसी एक परिस्थिति से उत्पन्न होने वाले कार्य और किसी दूसरी परिस्थिति से उत्पन्न होने वाले कार्य, स्थिर सैन्य-पंक्तियां और अस्थिर सैन्य-पंक्तियां, गृहयुद्ध और राष्ट्रीय युद्ध, एक ऐतिहासिक मंजिल और दूसरी ऐतिहासिक मंजिल, वगैरह-वगैरह।

इनमें से एक भी रणनीतिक समस्या हमें प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देती, फिर भी अगर हम खूब अच्छी तरह सोच-विचार करें, तो हम इन सब समस्याओं को समझ लेंगे, उन्हें हृदयंगम कर लेंगे और उनमें महारत हासिल कर लेंगे, अर्थात हम युद्ध से सम्बन्धित अथवा

फौजी कार्यवाही से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण समस्याओं को उसूल के उच्च स्तर पर उठाकर उन्हें हल कर सकेंगे। इस उद्देश्य को पूरा करना ही रणनीति विषयक समस्याओं का अध्ययन करने का हमारा कार्य है।

४. महत्वपूर्ण समस्या है सीखने में निपुण होना

हमने लाल सेना का संगठन आखिर क्यों किया है? इसलिए ताकि दुश्मन को हराया जा सके। हम युद्ध के नियमों का अध्ययन क्यों करते हैं? इसलिए ताकि हम उन्हें युद्ध में लागू कर सकें।

सीखना कोई आसान बात नहीं है, और जो कुछ सीखा हो उसे लागू करना और भी कठिन है। स्कूल की कक्षाओं में या पुस्तकों में बहुत से लोग फौजी विज्ञान बड़े प्रभावशाली ढंग से प्रदर्शित कर सकते हैं, लेकिन जब वास्तविक लड़ाई का मौका आता है तो कुछ लोग जीत जाते हैं और कुछ हार जाते हैं। युद्ध के इतिहास और युद्ध के हमारे अपने अनुभव से भी यही सिद्ध होता है।

तब बात की जड़ क्या है?

वास्तविक जीवन में हम "अजेय सेनापति" बनने की मांग नहीं कर सकते, प्राचीन काल से अब तक ऐसे सेनापति बहुत कम हुए हैं। हम ऐसे वीर और बुद्धिमान सेनापति बनने की मांग करते हैं, जो युद्ध के दौरान साधारणतः लड़ाइयां जीत लेते हों–ऐसे सेनापति जिनमें बुद्धिमत्ता और साहस दोनों विद्यमान हों। बुद्धिमत्ता और साहस का समन्वय प्राप्त करने के लिए हमें एक तरीका सीखना चाहिए–एक ऐसा तरीका जिसे हमें सीखने में, और जो कुछ सीखा

है उस पर अमल करने में लागू करना चाहिए।

यह तरीका आखिर क्या है? यह तरीका है शत्रु की और अपनी स्थिति के सभी पहलुओं से परिचित होना, दोनों पक्षों की कार्यवाहियों का संचालन करने वाले नियमों का पता लगाना, और स्वयं अपनी कार्यवाहियों में इन नियमों को लागू करना।

बहुत से देशों में प्रकाशित फौजी मैनुअल इस आवश्यकता की ओर संकेत करते हैं कि "उसूलों को लचीले ढंग से परिस्थिति के अनुकूल लागू किया जाए", और यह भी बताते हैं कि पराजित होने पर कौन से उपाय अपनाए जाएं। पहली बात का तकाजा यह है कि कमाण्डर उसूलों को बहुत ज्यादा गैरलचीले ढंग से लागू करके मनोगत रूप से गलतियां न करे ; दूसरी बात उसे बतलाती है कि जब मनोगत गलतियां हो गई हों, या जब वस्तुगत परिस्थितियों में अप्रत्याशित और अनिवार्य परिवर्तन हो गए हों, तो हालत को किस तरह सम्भालना चाहिए।

मनोगत गलतियां क्यों होती हैं? इसलिए कि युद्ध या लड़ाई का सैन्य-विन्यास अथवा सैन्य-संचालन किसी काल विशेष और स्थान विशेष की परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होता, मनोगत निर्देशन वस्तुगत परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होता अथवा उससे मेल नहीं खाता, दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मनोगत और वस्तुगत तत्वों का अन्तरविरोध हल नहीं हो पाता। कोई भी काम करने में ऐसी स्थिति का सामना होना अनिवार्य है ; लेकिन कुछ लोग उसे करने में ज्यादा कुशल होते हैं जबकि कुछ दूसरे लोग कम कुशल होते हैं। जिस प्रकार काम करने में हम ज्यादा कुशलता की मांग करते हैं, उसी प्रकार युद्ध में भी हम यह मांग करते हैं कि

ज्यादा बार जीत हासिल हो, अथवा उल्टे रूप में कहा जाए तो हारना कम बार पड़े। यहां बात की जड़ यही है कि मनोगत और वस्तुगत तत्वों को पूरी तरह एक दूसरे के अनुकूल बनाया जाए।

कार्यनीति सम्बन्धी एक उदाहरण लीजिए। दुश्मन के मोर्चे के किसी खास बाजू पर हमला करने के लिए जो बिन्दु चुना जाए, यदि वह ठीक उसका नाजुक स्थान भी हो, तो हमला सफल होगा। ऐसी हालत में मनोगत तत्व वस्तुगत तत्व के अनुकूल होता है, अथवा कमाण्डर की फौजी टोह, उसका विवेक और उसका निर्णय शत्रु की वास्तविक स्थिति और उसके सैन्य-वितरण की असली हालत से मेल खाते हैं। अगर हमले के लिए चुना हुआ बिन्दु दूसरे बाजू में हो या केन्द्र में हो और फलतः दुश्मन की मुख्य शक्ति का सामना करना पड़े और हमला आगे प्रगति न कर सके, तो इस तरह की अनुकूलता का अभाव होगा। अगर हमला ठीक समय पर किया जाए, रिजर्व दस्ते न तो बहुत जल्दी भेजे जाएं न बहुत देर में, और लड़ाई के निपटारे की परिस्थितियां व कार्यवाहियां हमारे अनुकूल हों और दुश्मन के प्रतिकूल हों, तो समूची लड़ाई में मनोगत संचालन पूरी तरह वस्तुगत परिस्थिति के अनुकूल होता है। ऐसी पूर्ण अनुकूलता युद्ध अथवा लड़ाई में बहुत ही दुष्कर होती है, क्योंकि युद्ध अथवा लड़ाई में दोनों परस्पर विरोधी पक्ष सशस्त्र जीते-जागते मानव-समूह होते हैं और एक दूसरे से अपना भेद छिपाते हैं ; यह बात निर्जीव वस्तुओं या प्रतिदिन के कामकाज के प्रति व्यवहार से बिलकुल भिन्न होती है। लेकिन यदि कमाण्डर का संचालन मुख्य रूप से वास्तविक परिस्थिति के अनुकूल हो, अर्थात संचालन के निर्णायक

अंश वास्तविक परिस्थिति के अनुकूल हों, तो विजय के लिए आधार तैयार हो जाएगा।

एक कमाण्डर का सही सैन्य-विन्यास उसके सही निर्णयों से उत्पन्न होता है, उसके सही निर्णय उसके सही विवेक से उत्पन्न होते हैं, तथा उसका सही विवेक सर्वांगीण व आवश्यक फौजी टोह से और ऐसी फौजी टोह के जरिए प्राप्त होने वाली विभिन्न प्रकार की सामग्री पर व्यवस्थित विचार करने से उत्पन्न होता है। वह फौजी टोह के सभी सम्भव और आवश्यक उपायों को काम में लाता है, तथा शत्रु की स्थिति के बारे में एकत्र की गई विभिन्न प्रकार की सूचनाओं पर इस तरह विचार करता है कि स्थूल को छोड़ दे और सूक्ष्म को ग्रहण कर ले, मिथ्या को हटा दे और सत्य को कायम रख ले, एक बात से दूसरी बात की ओर चले और बाह्य से आन्तरिक की ओर बढ़े ; इसके अलावा वह अपनी तरफ की परिस्थितियों पर भी ध्यान देता है तथा दोनों पक्षों का और दोनों पक्षों के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन करता है, तथा इस प्रकार वह अपने विवेक का निर्माण करता है, अपना निर्णय करता है और अपनी योजनाएं बनाता है। यह है किसी परिस्थिति की जानकारी हासिल करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया, जिससे गुजरने के बाद ही एक रणनीतिज्ञ अपनी रणनीति की योजना, मुहिम की योजना या लड़ाई की योजना बनाता है। लेकिन एक लापरवाह रणनीतिज्ञ यह सब करने के बजाय अपनी ही खुश-खयाली के आधार पर अपनी फौजी योजनाएं बनाता है, इसलिए उसकी ये योजनाएं हवाई होती हैं और वास्तविकता से मेल नहीं खातीं। एक दुस्साहसिक रणनीतिज्ञ, जो केवल उत्साह पर निर्भर रहता है, दुश्मन से जरूर धोखा खाता है, या दुश्मन की

दिखावटी या आंशिक स्थिति से भुलावे में आ जाता है, अथवा अपने मातहत लोगों के उन अनुत्तरदायी सुझावों से प्रभावित हो जाता है जो न तो सही जानकारी पर और न गहरी अन्तर्दृष्टि पर आधारित होते हैं, और इसलिए अपना सिर दीवार से टकराए बिना नहीं रहता, कारण यह कि वह इस बात को या तो जानता ही नहीं या जानना नहीं चाहता कि किसी भी फौजी योजना को आवश्यक फौजी टोह तथा अपनी और दुश्मन की परिस्थितियों तथा उनके आपसी सम्बन्धों पर गम्भीरता से विचार करने पर आधारित होना चाहिए।

परिस्थिति की जानकारी प्राप्त करने की प्रक्रिया फौजी योजना बनाने के पहले ही नहीं, बल्कि बाद में भी जारी रहा करती है। किसी योजना को उसे कार्यान्वित करने की शुरुआत से लेकर फौजी कार्यवाही के अन्त तक लागू करना परिस्थिति की जानकारी प्राप्त करने की दूसरी प्रक्रिया अर्थात उसे अमल में लाने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में इस बात की फिर से जांच करने की आवश्यकता होती है कि पहले की प्रक्रिया में जो योजना बनाई गई थी, वह वास्तविक स्थिति के अनुकूल है अथवा नहीं। यदि योजना उसके अनुकूल न हो, या पूरी तरह अनुकूल न हो, तो नई जानकारी के आधार पर हमें नया विवेक निश्चित करना चाहिए और नए निर्णय कर लेने चाहिए तथा नई स्थिति के अनुकूल मूल योजना में परिवर्तन करना चाहिए। प्रायः हर फौजी कार्यवाही की योजना में आंशिक परिवर्तन करने पड़ते हैं और कभी-कभी उसमें पूरा परिवर्तन भी करना पड़ता है। उतावलेपन से काम लेने वाले लोग अपनी योजना में तब्दीली करने की आवश्यकता को नहीं समझते या उसे बदलने में आनाकानी करते हैं और अन्धे की तरह काम करते हैं। परिणामस्वरूप, ऐसे लोग अनिवार्य रूप से अपना सिर दीवार से टकराएंगे।

ऊपर की बात एक रणनीतिक कार्यवाही, एक मुहिम या लड़ाई पर लागू होती है। यदि एक अनुभवी रणनीतिज्ञ नम्र हो और सीखने का इच्छुक हो, और अपने सैन्य-दल (कमाण्डरों, योद्धाओं, हथियारों, रसद आदि और उनके कुल योग) की हालत तथा शत्रु के सैन्य-दल (उसी प्रकार कमाण्डरों, योद्धाओं, हथियारों, रसद आदि और उनके कुल योग) की हालत से सुपरिचित हो, तथा साथ ही राजनीति, अर्थव्यवस्था, भूगोल और मौसम इत्यादि जैसी युद्ध से सम्बन्धित अन्य सभी परिस्थितियों से भी सुपरिचित हो, तो ऐसे रणनीतिज्ञ को युद्ध या फौजी कार्यवाही के संचालन में ज्यादा महारत हासिल हो जाएगी और उसकी विजय की सम्भावनाएं भी बढ़ जाएंगी। इसका कारण यह है कि लम्बे अरसे के दौरान उसने शत्रु-पक्ष और अपने पक्ष की परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त कर ली है, फौजी कार्यवाही के नियमों का पता लगा लिया है तथा मनोगत और वस्तुगत तत्वों के अन्तरविरोध को हल कर लिया है। जानकारी प्राप्त करने की यह प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण है; लम्बे अरसे के दौरान प्राप्त ऐसे अनुभवों के बिना समूचे युद्ध के नियमों को जानना और उन पर महारत हासिल करना कठिन होगा। जो व्यक्ति युद्ध-कौशल में नौसिखिया है या केवल कागज पर ही युद्ध की व्याख्या करने में निपुण है, वह वास्तव में उच्च व सुयोग्य कमाण्डर नहीं बन सकता। ऐसा कमाण्डर केवल वही बन सकता है जिसने युद्ध में शामिल होकर ही युद्ध करना सीखा हो।

उसूल के रूप में जितने भी फौजी नियम या फौजी सिद्धान्त रचे गए हैं, वे पिछले युद्धों में प्राप्त अनुभवों का सार हैं, जिन्हें लोगों ने प्राचीन और आधुनिक काल में एकत्र किया है। पिछले युद्धों के जो सबक खून बहाकर सीखे गए हैं और विरासत के रूप में हमारे लिए छोड़े गए हैं, हमें उनका गम्भीरता के साथ अध्ययन करना चाहिए। यह एक बात है। लेकिन एक बात और भी है और वह यह कि इस तरह जो निष्कर्ष निकाले गए हैं, उन्हें हमें अपने अनुभव की कसौटी पर परखना चाहिए, उनमें जो कुछ उपयोगी हो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए और जो कुछ बेकार हो उसे त्याग देना चाहिए, तथा जो निष्कर्ष विशेष रूप से हमारे हैं, उन्हें उसमें शामिल कर लेना चाहिए। अन्तिम बात बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके बिना हम युद्ध का निर्देशन नहीं कर सकते।

पढ़ना सीखने का एक तरीका है, लेकिन व्यवहार करना भी सीखने का ही एक तरीका है, और यह कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण तरीका है। युद्धकर्म के जरिए ही युद्धकर्म सीखना – यह हमारा मुख्य तरीका है। एक ऐसा आदमी भी, जिसे स्कूल में पढ़ने का मौका कभी न मिला हो, युद्धकर्म सीख सकता है – इसे वह युद्ध में सीख सकता है। क्रान्तिकारी युद्ध आम जनता का कार्य है; इसमें अक्सर ऐसा नहीं होता कि पहले सीखा जाए और फिर काम किया जाए, बल्कि ऐसा होता है कि पहले काम शुरू किया जाए और फिर सीखा जाए, क्योंकि काम करना खुद अपने आपमें सीखना ही है। एक साधारण असैनिक व्यक्ति रहने और सैनिक बनने के बीच फासला जरूर होता है, लेकिन यह फासला कोई दस हजार ली लम्बी दीवार की तरह नहीं होता और इसे जल्दी ही तय किया जा सकता है; इसका तरीका यह है

कि क्रान्ति में हिस्सा लिया जाए, युद्ध में हिस्सा लिया जाए। जब हम यह कहते हैं कि सीखना और व्यवहार करना एक मुश्किल काम है, तो हमारा मतलब यह होता है कि सर्वांगीण रूप से सीखना और कुशलता के साथ व्यवहार करना एक मुश्किल काम है। जब हम यह कहते हैं कि असैनिक व्यक्ति जल्दी ही सैनिक बन सकते हैं, तो हमारा मतलब यह होता है कि देहरी को पार करना मुश्किल नहीं है। इन दोनों बातों को एक साथ मिलाकर रखा जाए तो, जैसा कि एक चीनी कहावत में बताया गया है, यह कहा जा सकता है, "इस दुनिया में उन लोगों के लिए कोई भी काम मुश्किल नहीं जो अपने इरादे के पक्के हैं"। देहरी को पार करना मुश्किल नहीं रह जाएगा और महारत हासिल करना भी सम्भव हो जाएगा, बशर्ते कि हम पक्का इरादा कर लें और सीखने में निपुण हो जाएं।

अन्य सभी चीजों का संचालन करने वाले नियमों की ही तरह युद्ध के नियम भी हमारे मन में वस्तुगत यथार्थ[१] का प्रतिबिम्ब होते हैं; हमारे मन को छोड़कर बाकी सब कुछ वस्तुगत यथार्थ है। इसलिए हम जो कुछ सीखना और जानना चाहते हैं उसमें अपने पक्ष और शत्रु-पक्ष दोनों की ही चीजें शामिल हैं, इन दोनों पक्षों को अपने अध्ययन का विषय समझना चाहिए। केवल हमारा मन (चिन्तन शक्ति) ही अध्ययन करने वाला कर्ता है। कुछ लोग अपने को जानने में निपुण होते हैं, लेकिन अपने दुश्मन को जानने में कमजोर होते हैं; दूसरे लोग इसके उल्टे होते हैं। ये दोनों ही तरह के लोग युद्ध के नियमों को सीखने और उन्हें अमल में लाने की समस्या को हल नहीं कर सकते। प्राचीन काल में चीन के महान सैनिक विशेषज्ञ सुन ऊ चि[२] द्वारा लिखी गई पुस्तक में कहा गया है कि "दुश्मन

को पहचानो और खुद अपने को पहचानो, तभी तुम हार का खतरा उठाए बिना सैकड़ों लड़ाइयां लड़ सकते हो।" इस उक्ति का सम्बन्ध सीखने की मंजिल और अमल में लाने की मंजिल दोनों से है, इसका सम्बन्ध वस्तुगत यथार्थ के विकास के नियमों की जानकारी हासिल करने और सामने मौजूद दुश्मन को हराने के लिए इन नियमों के अनुसार अपनी कार्यवाही तय करने से भी है। हमें इस उक्ति को कम करके नहीं आंकना चाहिए।

युद्ध राष्ट्रों, राज्यों, वर्गों या राजनीतिक ग्रुपों के बीच परस्पर संघर्ष का उच्चतम रूप है, तथा युद्ध के सभी नियमों को युद्ध करने वाले सभी राष्ट्र, राज्य, वर्ग या राजनीतिक ग्रुप अपनी विजय के लिए लागू करते हैं। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि युद्ध में हार-जीत का निर्णय मुख्यत: दोनों पक्षों की फौजी, राजनीतिक, आर्थिक और प्राकृतिक स्थितियों के जरिए होता है। मगर इसका निर्णय केवल इन्हीं के जरिए नहीं होता। इसका निर्णय प्रत्येक पक्ष की युद्ध-संचालन की मनोगत क्षमता के जरिए भी होता है। युद्ध में विजय प्राप्त करने की कोशिश में कोई भी रणनीतिज्ञ भौतिक परिस्थितियों द्वारा निश्चित सीमाओं को लांघ नहीं सकता; लेकिन उन सीमाओं के भीतर रहते हुए वह विजय के लिए अवश्य प्रयत्न कर सकता है और उसे अवश्य प्रयत्न करना चाहिए। रणनीतिज्ञ की कार्यवाही का मंच वस्तुगत भौतिक स्थितियों पर बनाया जाता है; लेकिन उस मंच पर वह राग-रंग और ओजस्विता व भव्यता से परिपूर्ण अनेक नाटकों का निर्देशन कर सकता है। इसलिए एक निश्चित वस्तुगत भौतिक आधार, यानी फौजी, राजनीतिक, आर्थिक और प्राकृतिक स्थितियों के आधार पर हमारी लाल सेना के कमाण्डरों को हमारी

अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहिए तथा राष्ट्र के शत्रुओं और वर्ग-शत्रुओं का ध्वंस करने के लिए और बुराइयों से भरी हुई इस दुनिया को बदलने के लिए सारी फौज का नेतृत्व करना चाहिए। यहीं हमारी निर्देशन की मनोगत योग्यता काम में लाई जा सकती है और लाई जानी चाहिए। हम अपनी लाल सेना के किसी भी कमाण्डर को जोश में अन्धे होकर गलतियां करने की अनुमति नहीं देते। साथ ही हमें यह भी चाहिए कि उनमें से हरेक को एक ऐसा वीर बनने के लिए प्रोत्साहन दें जो साहसी भी हो और बुद्धिमान भी, जिसमें न सिर्फ सभी विघ्न-बाधाओं को जीत लेने का साहस मौजूद हो बल्कि समूचे युद्ध के दौरान होने वाले परिवर्तनों और युद्ध की प्रगति पर हावी रहने की योग्यता भी मौजूद हो। एक कमाण्डर को चाहिए कि वह युद्ध के महासागर में तैरते हुए न सिर्फ डूबने से बचे, बल्कि बड़े विश्वास के साथ नपे-तुले हाथ फेंकते हुए दूसरे किनारे पर भी पहुंच जाए। युद्ध के निर्देशक नियम वास्तव में युद्ध-सागर में तैरने की कला ही हैं।

यह तो हुआ हमारे तरीकों के बारे में।

अध्याय २

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीन का क्रान्तिकारी युद्ध

चीन का क्रान्तिकारी युद्ध, जो १९२४ में आरम्भ हुआ था, दो मंजिलों से गुजर चुका है — १९२४-२७ की मंजिल और १९२७-३६

की मंजिल ; अब वह जापानी-आक्रमण-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध की मंजिल में प्रवेश करेगा। इन तीनों मंजिलों में क्रान्तिकारी युद्ध का नेतृत्व चीनी सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, के हाथ में रहा है और रहेगा। चीन के क्रान्तिकारी युद्ध में मुख्य शत्रु साम्राज्यवाद और सामन्ती शक्तियां हैं। चीन का पूंजीपति वर्ग यद्यपि कुछ ऐतिहासिक अवसरों पर क्रान्तिकारी युद्ध में भाग ले सकता है, फिर भी अपनी स्वार्थपरता के कारण तथा अपनी राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता के अभाव के कारण वह चीन के क्रान्तिकारी युद्ध को न तो पूर्ण विजय तक ले जाने का इच्छुक है और न ले जा सकता है। चीनी किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग का जन-समुदाय क्रान्तिकारी युद्ध में सक्रिय भाग लेना और उसे पूर्ण विजय तक ले जाना चाहता है। वे लोग क्रान्तिकारी युद्ध की मुख्य शक्ति हैं ; लेकिन उनकी विशेषता छोटे पैमाने का उत्पादन है, जो उनके राजनीतिक दृष्टिकोण को सीमित कर देता है (बेरोजगार जन-समुदाय का एक हिस्सा अराजकतावादी विचारधारा रखता है)। इसलिए युद्ध में वे लोग सही नेतृत्व नहीं दे सकते। इसी कारण एक ऐसे युग में जबकि राजनीतिक मंच पर सर्वहारा वर्ग का उदय हो चुका है, चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के नेतृत्व का भार अनिवार्य रूप से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कन्धों पर आ पड़ता है। ऐसे युग में यदि सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व का अभाव हो अथवा उसके विपरीत पड़ जाए, तो कोई भी क्रान्तिकारी युद्ध निश्चित रूप से पराजित हो जाएगा। क्योंकि अर्ध-औपनिवेशिक चीन में जितने भी सामाजिक तबके और राजनीतिक ग्रुप हैं, उनमें केवल सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी ही संकीर्णता

और स्वार्थपरता से पूरी तरह मुक्त हैं, उनके राजनीतिक दृष्टिकोण में सबसे अधिक दूरदर्शिता है और वे सबसे अधिक संगठित हैं और वे संसार के प्रगतिशील वर्ग, सर्वहारा वर्ग, और उसकी पार्टियों के अनुभव से नम्रता के साथ सीखने और उसे अपने कार्य में इस्तेमाल करने के लिए सबसे ज्यादा तत्पर रहते हैं। इसी कारण किसानों, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और पूंजीपति वर्ग का नेतृत्व सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी ही कर सकते हैं ; वे ही किसानों और निम्न-पूंजीपति वर्ग की संकीर्णता को दूर कर सकते हैं, बेरोजगार लोगों की ध्वंसात्मक प्रवृत्ति को दूर कर सकते हैं, तथा पूंजीपति वर्ग के ढुलमुल होने और मुकम्मिल न होने की स्थिति को भी दूर कर सकते हैं (बशर्ते कि कम्युनिस्ट पार्टी की नीति में कोई गलती न की जाए) और इस तरह क्रान्ति तथा युद्ध को विजय-पथ पर आगे ले जा सकते हैं।

१९२४-२७ का क्रान्तिकारी युद्ध मूलतः एक ऐसी परिस्थिति में चलाया गया था जब अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग और चीनी सर्वहारा वर्ग तथा उनकी पार्टियों ने चीन के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग और उसकी पार्टी पर राजनीतिक प्रभाव डाला था, और उनके साथ राजनीतिक सहयोग कायम किया था। लेकिन क्रान्ति और युद्ध की नाजुक घड़ी में यह क्रान्तिकारी युद्ध विफल हो गया ; इसका मुख्य कारण था बड़े पूंजीपतियों के वर्ग द्वारा किया गया विश्वासघात, और साथ ही इसका कारण यह भी था कि क्रान्तिकारी पांतों में अवसरवादियों ने खुद ही क्रान्ति के नेतृत्व की बागडोर छोड़ दी थी।

१९२७ से लेकर अब तक भूमि-क्रान्ति युद्ध नई परिस्थितियों में चलाया गया है। इस युद्ध में दुश्मन केवल साम्राज्यवाद नहीं है,

बल्कि बड़े पूंजीपतियों के वर्ग और बड़े जमींदारों का संश्रय भी है। इसके अलावा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का दुमछल्ला बन गया है। केवल कम्युनिस्ट पार्टी ही इस क्रान्तिकारी युद्ध का नेतृत्व करती रही है, और युद्ध में उसने अपना एकछत्र नेतृत्व कायम कर लिया है। क्रान्तिकारी युद्ध को दृढ़ता से अन्त तक चलाने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी का यह एकछत्र नेतृत्व सबसे मुख्य शर्त है। इसके बिना इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती कि क्रान्तिकारी युद्ध इतनी दृढ़ता से चलाया जा सकता था।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने साहस और दृढ़ता के साथ चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का नेतृत्व किया है, और पन्द्रह वर्षों की लम्बी अवधि में[1] सारे देश की जनता को दिखा दिया है कि वह जनता की मित्र है और सदैव क्रान्तिकारी युद्ध की अगली पांतों में खड़ी रहती है, जनता के हितों की रक्षा के लिए, उसकी आजादी और मुक्ति के लिए लड़ती है।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने कठिन संघर्षों द्वारा तथा अपने लाखों वीर सदस्यों और दसियों हजार वीर कार्यकर्ताओं के बलिदान द्वारा समूचे राष्ट्र की दसियों करोड़ जनता में महान शिक्षात्मक भूमिका अदा की है। एक ऐसी नाजुक घड़ी में जबकि राष्ट्र के शत्रु ने हमला कर दिया है, क्रान्तिकारी संघर्ष में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की महान ऐतिहासिक उपलब्धियों ने देश को विनाश से बचाने और उसकी जीवन-रक्षा करने के लिए एक पूर्वशर्त मुहय्या कर दी है; और यह पूर्वशर्त है एक ऐसे राजनीतिक नेतृत्व की मौजूदगी जिसे अधिकांश जनता का विश्वास प्राप्त है और जिसे अनेक वर्षों की अवधि में परखे जाने के बाद जनता द्वारा चुना गया है। आज जनता

किसी और पार्टी की अपेक्षा कम्युनिस्ट पार्टी की घोषणाओं को ज्यादा तत्परता से स्वीकार करती है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा पिछले पन्द्रह वर्षों के दौरान किए गए कठिन संघर्षों के बिना चीन को गुलामी के नए संकट से बचाना असम्भव होता।

छन तू-श्यू[4] के दक्षिणपंथी अवसरवाद और ली ली-सान के "वामपंथी" अवसरवाद[5] के अलावा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में क्रान्तिकारी युद्ध के दौरान दो अन्य भूलें भी हुईं। पहली भूल १९३१-३४ के "वामपंथी" अवसरवाद[6] के रूप में हुई, जिससे भूमि-क्रान्ति युद्ध को अत्यन्त गम्भीर नुकसान उठाना पड़ा, जिसके फलस्वरूप "घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की पांचवीं मुहिम में हम उसे हराने के बजाय अपने आधार-क्षेत्रों को ही खो बैठे और लाल सेना कमजोर हो गई। जनवरी १९३५ में चुनई में केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की विस्तृत मीटिंग में यह भूल सुधार ली गई। दूसरी भूल १९३५-३६ में चाङ क्वो-थाओ के दक्षिणपंथी अवसरवाद[7] के रूप में हुई, जो इतनी ज्यादा बढ़ गई कि पार्टी और लाल सेना के अनुशासन को भंग कर दिया गया और लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति के एक भाग को गम्भीर नुकसान उठाना पड़ा। लेकिन केन्द्रीय कमेटी के सही नेतृत्व और लाल सेना में पार्टी-सदस्यों, कमाण्डरों और योद्धाओं की राजनीतिक चेतना के कारण अन्त में यह भूल भी सुधार ली गई। अवश्य ही ये सब भूलें हमारी पार्टी के लिए, हमारी क्रान्ति और युद्ध के लिए हानिकारक थीं, लेकिन अन्त में ये सभी हमारे द्वारा सुधार ली गईं, और इन भूलों को सुधारने में हमारी पार्टी और हमारी लाल सेना ने अपने को तपाकर फौलादी तथा पहले से और ज्यादा शक्तिशाली बना लिया।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी एक जोरदार, शानदार और विजयी क्रान्तिकारी युद्ध का नेतृत्व करती रही है और कर रही है। यह युद्ध चीन की ही मुक्ति-पताका नहीं है, बल्कि इसका अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी महत्व भी है। समस्त संसार की क्रान्तिकारी जनता की आंखें हमारी ओर लगी हुई हैं। इस युद्ध की नई मंजिल – जापानी-आक्रमण-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध की मंजिल – में हम चीनी क्रान्ति को पूर्णता की ओर ले जाएंगे और पूरब की तथा समस्त संसार की क्रान्ति पर भी गहरा प्रभाव डालेंगे। हमारे क्रान्तिकारी युद्ध ने यह सिद्ध कर दिया है कि हमें न सिर्फ एक सही मार्क्सवादी राजनीतिक कार्यदिशा की जरूरत है, बल्कि एक सही मार्क्सवादी फौजी कार्यदिशा की भी जरूरत है। क्रान्ति और युद्ध के पन्द्रह वर्षों में ऐसी राजनीतिक कार्यदिशा और फौजी कार्यदिशा का निर्माण हो चुका है। हमारा विश्वास है कि अब से युद्ध की नई मंजिल में ये कार्यदिशाएं नई परिस्थितियों में और भी विकसित होंगी और भरी-पूरी व समृद्ध बनेंगी जिससे राष्ट्र के शत्रु को परास्त करने का हमारा लक्ष्य पूरा हो जाए। इतिहास हमें बताता है कि सही राजनीतिक कार्यदिशा और फौजी कार्यदिशा अपने आप ही, शान्ति-पूर्ण ढंग से पैदा व विकसित नहीं हो जाया करतीं बल्कि संघर्षों के दौरान जन्म लेती और विकसित होती हैं। उन्हें एक ओर "वाम-पंथी" अवसरवाद के खिलाफ और दूसरी ओर दक्षिणपंथी अवसर-वाद के खिलाफ संघर्ष करना पड़ता है। क्रान्ति और क्रान्तिकारी युद्धों को संकट में डालने वाली ऐसी हानिकर प्रवृत्तियों के खिलाफ संघर्ष किए बिना और उन्हें पूरी तरह निर्मूल किए बिना सही कार्य-दिशा की स्थापना करना और क्रान्तिकारी युद्ध में विजय प्राप्त करना असम्भव होगा। यही वजह है कि मैंने इस पुस्तिका में कुछ गलत धारणाओं की अक्सर चर्चा की है।

अध्याय ३

चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की विशेषताएं

१. विषय का महत्व

जो लोग यह नहीं मानते, यह नहीं जानते या जानना नहीं चाहते कि चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की अपनी विशेषताएं हैं, वे क्वोमिन्ताङ फौजों के खिलाफ लाल सेना के युद्ध को सामान्य युद्धों के बराबर, या सोवियत संघ के गृहयुद्ध जैसा ही समझते हैं। सोवियत संघ के गृहयुद्ध, जिसका नेतृत्व लेनिन और स्तालिन ने किया था, का अनुभव विश्वव्यापी महत्व रखता है। सभी कम्युनिस्ट पार्टियां, जिनमें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी भी शामिल है, इस अनुभव को तथा लेनिन और स्तालिन द्वारा निकाले गए इस अनुभव के सैद्धान्तिक निचोड़ को अपना मार्गदर्शक मानती हैं। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि हमें अपनी परिस्थितियों में इस अनुभव को यांत्रिक ढंग से लागू करना चाहिए। चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के अनेक पहलुओं की अपनी विशेषताएं हैं जो सोवियत संघ के गृहयुद्ध से भिन्न हैं। इन विशेष-ताओं को न आंकना, या उन्हें अस्वीकार करना अवश्य ही गलत है। यह बात हमारे युद्ध के दस वर्षों में पूरी तरह साबित हो चुकी है।

हमारे शत्रु ने भी ऐसी ही गलतियां की हैं। उसने यह स्वीकार करने से इनकार किया कि दूसरी सेनाओं से भिन्न लाल सेना से लड़ने के

लिए दूसरी ही तरह की रणनीति और कार्यनीति की जरूरत होती है। अनेक पहलुओं में अपनी बरतरी का भरोसा करके उसने हमें कम करके आंका और युद्ध के पुराने तरीकों पर ही चलता रहा। यह १९३३ की शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की चौथी मुहिम के समय और उसके पहले की बात थी। इसके फलस्वरूप उसे अनेक बार हारना पड़ा। क्वोमिन्ताङ सेना में इस सवाल के बारे में नया सुझाव सबसे पहले प्रतिक्रियावादी जनरल ल्यू वेइ-य्वान ने और उसके बाद ताए य्वे ने पेश किया था। अन्त में च्याङ काई-शेक ने उनका सुझाव मान लिया। यही कारण है कि च्याङ काई-शेक ने लूशान में अफसर ट्रेनिंग कोर[८] कायम की और नए प्रतिक्रियावादी फौजी उसूल[९] अपनाए, जिन्हें उसने "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम में लागू किया।

लेकिन जब लाल सेना के खिलाफ युद्ध की परिस्थितियों के अनुकूल शत्रु ने अपने फौजी उसूलों में परिवर्तन किया, तो हमारी पांतों में कुछ लोगों का एक ऐसा ग्रुप पैदा हो गया जो फिर से "पुराने तरीके" अपनाने का पक्षपोषण करने लगा। वे सामान्य परिस्थितियों की ओर लौटने की बात करते थे, किन्हीं विशेष परिस्थितियों को समझने से इनकार करते थे, और लाल सेना की रक्तपातपूर्ण लड़ाइयों के इतिहास के अनुभवों को ठुकराते थे, साम्राज्यवाद तथा क्वोमिन्ताङ और क्वोमिन्ताङ सेना की ताकत को कम करके आंकते थे, और दुश्मन द्वारा अपनाए गए नए प्रतिक्रियावादी उसूलों की ओर से आंख मूंद लेते थे। इसका फल यह हुआ कि शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र को छोड़कर बाकी सभी क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र हाथ से निकल गए, लाल सेना तीन लाख से घटकर चन्द दस हजार

रह गई और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या तीन लाख से घटकर चन्द दस हजार रह गई तथा क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों के पार्टी-संगठन लगभग पूरी तरह नष्ट कर दिए गए। संक्षेप में एक बहुत ही भारी ऐतिहासिक दण्ड मिला। इस ग्रुप के लोग अपने को मार्क्सवादी-लेनिनवादी कहते थे, किन्तु वास्तव में इन्होंने रत्तीभर भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद नहीं सीखा था। लेनिन ने कहा था, ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण मार्क्सवाद की सबसे मूलभूत वस्तु है, मार्क्सवाद की जीती-जागती आत्मा है।[१०] हमारे ये साथी ठीक यही बात भूल गए थे।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की विशेषताओं को समझे बिना उसका निर्देशन करना और उसे विजय तक पहुंचाना असम्भव है।

२. चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की विशेषताएं क्या हैं ?

तब चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की विशेषताएं क्या हैं ?

मेरी समझ में उसकी चार मुख्य विशेषताएं हैं।

पहली यह कि चीन एक विशाल अर्ध-औपनिवेशिक देश है, जिसका राजनीतिक और आर्थिक विकास असमान रूप से हुआ है और जो १९२४-२७ की क्रान्ति से गुजर चुका है।

यह विशेषता बतलाती है कि चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का विकसित होना और विजय तक पहुंचना सम्भव है। हमने इस बात को तभी (हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की पहली पार्टी-कांग्रेस[११] में) बताया था जब १९२७ के जाड़ों और १९२८ के वसन्त में, चीन में

छापामार युद्ध आरम्भ होने के कुछ ही दिन बाद, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में स्थित चिङकाङशान पहाड़ों के कुछ साथियों ने यह सवाल उठाया था कि "हम लाल झण्डे को कब तक फहराते रख सकते हैं ?" क्योंकि यह एक अत्यन्त बुनियादी सवाल था। चीन के क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों और चीनी लाल सेना का अस्तित्व बना रहेगा या नहीं और वे विकसित होंगे या नहीं, इस सवाल का जवाब दिए बिना हम एक भी कदम आगे नहीं बढ़ सकते थे। १९२८ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस सवाल का फिर एक बार जवाब दिया। उसके बाद से चीन के क्रान्तिकारी आन्दोलन के पास एक सही सैद्धान्तिक आधार मौजूद रहा है।

अब हम इस विशेषता का विश्लेषण करते हैं।

चीन का राजनीतिक और आर्थिक विकास असमान रूप से हुआ है – एक कमजोर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के साथ-साथ एक अर्ध-सामन्ती अर्थव्यवस्था की प्रधानता मौजूद है ; थोड़े से आधुनिक औद्योगिक और व्यापारिक नगरों के साथ-साथ विशाल गतिरुद्ध देहाती इलाके मौजूद हैं ; दसियों लाख औद्योगिक मजदूरों के साथ-साथ प्राचीन व्यवस्था के अन्तर्गत दसियों करोड़ किसान और दस्तकार मौजूद हैं ; केन्द्रीय शासन पर अधिकार किए हुए बड़े-बड़े युद्ध-सरदारों के साथ-साथ प्रान्तों पर अधिकार किए हुए छोटे-छोटे युद्ध-सरदार मौजूद हैं ; दो तरह की प्रतिक्रियावादी फौजें – च्याङ काई-शेक की तथाकथित केन्द्रीय सेना और प्रान्तों में युद्ध-सरदारों की "विविध प्रकार की सेनाएं" साथ-साथ मौजूद हैं ; थोड़े से रेल और जहाज के मार्गों तथा मोटर की सड़कों के साथ-साथ बड़ी तादाद में गाड़ी-गड्डुरों की लीकें और केवल पैदल चलने वालों की पगडंडियां मौजूद हैं, जिनमें बहुत सी ऐसी हैं जो पैदल चलने वालों के लिए भी दुर्गम हैं।

चीन एक अर्ध-औपनिवेशिक देश है – साम्राज्यवादी देशों की फूट से चीन के विभिन्न शासक गुटों में भी फूट पड़ गई है। एक अर्ध-औपनिवेशिक राज्य, जिस पर कई देशों का नियंत्रण है, उस उपनिवेश से भिन्न होता है जिस पर एक ही देश का नियंत्रण हो।

चीन एक विशाल देश है – "जब पूरब में अन्धेरा रहता है, तो पश्चिम में प्रकाश विद्यमान रहता है ; जब दक्षिण में अन्धकार होता है, तो उत्तर में उजाला रहता है।" इसलिए इस बात की चिन्ता करने की जरूरत नहीं है कि फौजी दांवपेंच के लिए गुंजाइश है या नहीं।

चीन एक महान क्रान्ति से गुजर चुका है – जिससे लाल सेना के बीज तैयार किए गए हैं, लाल सेना का नेतृत्व करने वाली चीनी कम्युनिस्ट पार्टी तैयार की गई है और वह जन-समुदाय तैयार किया गया है जो एक बार क्रान्ति में हिस्सा लेने का अनुभव प्राप्त कर चुका है।

इसलिए हम कहते हैं कि यह युद्ध चीन जैसे एक विशाल अर्ध-औपनिवेशिक देश में चलाया जा रहा है, जिसका राजनीतिक और आर्थिक विकास असमान रूप से हुआ है और जो एक क्रान्ति से गुजर चुका है ; यह चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की पहली विशेषता है। यह विशेषता न केवल बुनियादी तौर से हमारी राजनीतिक रणनीति और कार्यनीति को निश्चित करती है, बल्कि हमारी फौजी रणनीति और कार्यनीति को भी निश्चित करती है।

दूसरी विशेषता यह है कि हमारा शत्रु बड़ा और शक्तिशाली है।

लाल सेना के दुश्मन, क्वोमिन्ताङ की स्थिति क्या है ? वह एक ऐसी पार्टी है जिसने राजनीतिक सत्ता पर कब्जा जमा लिया है और उसे अपेक्षाकृत स्थिर कर लिया है। उसने सारे संसार के मुख्य प्रतिक्रान्तिकारी राज्यों का समर्थन प्राप्त कर लिया है। उसने अपनी सेना का पुनर्गठन कर लिया है, जिससे वह चीन के इतिहास में किसी भी अन्य सेना से भिन्न हो गई है तथा मोटे तौर पर संसार के आधुनिक राज्यों की सेनाओं के समान हो गई है ; लाल सेना की अपेक्षा उसे हथियार और दूसरी तरह की सामग्री बहुतायत से प्राप्त है, और संख्या में वह चीनी इतिहास की किसी भी सेना से, संसार के किसी भी देश की स्थाई सेना से बड़ी है। सचमुच क्वोमिन्ताङ सेना और लाल सेना में जमीन आसमान का फर्क है। चीन की राजनीतिक, आर्थिक, संचार सम्बन्धी और सांस्कृतिक महत्व की जगहें या मर्म-स्थल उसके अधिकार में हैं ; उसकी राजनीतिक सत्ता का रूप राष्ट्रव्यापी है।

इस प्रकार चीन की लाल सेना का सामना ऐसे ही एक बड़े और ताकतवर दुश्मन से हुआ है। यह चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की दूसरी विशेषता है। इस विशेषता की वजह से लाल सेना की फौजी कार्यवाहियां अनिवार्यतः बहुत सी बातों में सामान्य युद्धों से भिन्न हैं, सोवियत संघ के गृहयुद्ध और उत्तरी अभियान से भिन्न हैं।

तीसरी विशेषता यह है कि लाल सेना एक कमजोर और छोटी सेना है।

चीन की लाल सेना की शुरुआत पहली महान क्रान्ति की असफलता के बाद छापामार दस्तों के रूप में हुई। यह उस समय हुआ जब चीन में प्रतिक्रियावाद का दौर था और संसार के प्रतिक्रियावादी पूंजीवादी

देशों में अपेक्षाकृत राजनीतिक और आर्थिक स्थिरता का दौर था।

हमारी राजनीतिक सत्ता बिखरे हुए और अलगाव में पड़े हुए पहाड़ी इलाकों या दूर-दराज इलाकों में स्थित है और उसे बाहर से कोई मदद नहीं मिलती। आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति की दृष्टि से क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों की तुलना में पिछड़े हुए हैं। क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में केवल गांव और छोटे कस्बे ही हैं। आरम्भ में उनके इलाके बहुत ही छोटे थे और वे तब से ज्यादा बड़े नहीं हुए। इसके अलावा उन्हें अक्सर स्थानान्तरित होना पड़ता है और लाल सेना के पास कोई वास्तविक सुदृढ़ आधार-क्षेत्र नहीं है।

लाल सेना संख्या में कम है, उसके हथियार घटिया हैं और भोजन, बिस्तर, कपड़ा और अन्य सामग्री प्राप्त करना उसके लिए बहुत ही दुष्कर है।

यह विशेषता पिछली विशेषता की एकदम विरोधी है। लाल सेना की रणनीति और कार्यनीति इस तीव्र भिन्नता पर ही आधारित है।

चौथी विशेषता कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व और भूमि-क्रान्ति है।

यह विशेषता पहली विशेषता का अनिवार्य परिणाम है। इससे दो बातें पैदा होती हैं। एक तो यह कि हालांकि चीन का क्रान्तिकारी युद्ध चीन और समूचे पूंजीवादी संसार में प्रतिक्रियावाद के दौर में चल रहा है, फिर भी वह विजयी हो सकता है क्योंकि उसका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी कर रही है और उसे किसानों का समर्थन प्राप्त है। हमने किसानों का समर्थन प्राप्त कर लिया है, इसलिए हमारे आधार-क्षेत्र छोटे होने पर भी राजनीतिक दृष्टि से बड़े शक्ति-

शाली हैं। वे विशाल इलाके में फैले हुए क्वोमिन्ताङ के राजनीतिक शासन का मुकाबला करने के लिए डटकर खड़े हैं, और फौजी दृष्टि से वे क्वोमिन्ताङ के हमले में भारी कठिनाइयां खड़ी कर देते हैं। लाल सेना हालांकि छोटी है, फिर भी उसमें भारी युद्ध-क्षमता मौजूद है, कारण यह कि कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में उसके सैनिक भूमि-क्रान्ति से उत्पन्न हुए हैं, और अपने हितों के लिए लड़ रहे हैं तथा उसके कमाण्डरों और योद्धाओं में राजनीतिक एकता मौजूद है।

दूसरी ओर क्वोमिन्ताङ की स्थिति हमसे एकदम भिन्न है। क्वोमिन्ताङ भूमि-क्रान्ति का विरोध करती है, इसलिए उसे किसानों का समर्थन नहीं मिलता। उसकी सेना विशाल है, लेकिन उसके सिपाहियों को और उन बहुत से छोटे अफसरों को, जो वर्ग-उत्पत्ति की दृष्टि से छोटे उत्पादक थे, स्वेच्छा से क्वोमिन्ताङ के वास्ते अपने जीवन की आहुति देने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता। अफसरों और सिपाहियों में राजनीतिक फूट मौजूद है जिससे उनकी युद्ध-क्षमता कम हो जाती है।

३. इन विशेषताओं से उत्पन्न होने वाली हमारी रणनीति और कार्यनीति

एक विशाल अर्ध-औपनिवेशिक देश, जिसका राजनीतिक और आर्थिक विकास असमान रूप से हुआ है और जो एक महान क्रान्ति से गुजर चुका है; एक बड़ा और शक्तिशाली शत्रु; एक कमजोर और छोटी लाल सेना; और भूमि-क्रान्ति – चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की ये चार मुख्य विशेषताएं हैं। इन विशेषताओं से चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का मार्गदर्शन करने वाली कार्यदिशा तथा उसकी

रणनीति और कार्यनीति के बहुत से उसूल निश्चित होते हैं। उसकी पहली और चौथी विशेषताओं से यह सम्भावना निश्चित होती है कि चीन की लाल सेना बढ़ेगी और अपने शत्रु को परास्त कर देगी। दूसरी और तीसरी विशेषताओं से यह बात असम्भव सिद्ध होती है कि चीन की लाल सेना बहुत जल्दी बढ़ेगी, अथवा अपने शत्रु को जल्दी ही परास्त कर देगी। दूसरे शब्दों में, उनसे यह बात निश्चित हो जाती है कि यह युद्ध दीर्घकाल तक चलेगा और यदि उसे ठीक ढंग से न चलाया गया तो युद्ध का अन्त पराजय में भी हो सकता है।

ये दोनों चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के दो पहलू हैं। ये दोनों साथ-साथ विद्यमान हैं, यानी अनुकूल परिस्थितियां भी मौजूद हैं और कठिनाइयां भी। चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का यह एक बुनियादी नियम है, जिससे अनेक अन्य नियम उत्पन्न होते हैं। हमारे युद्ध के दस वर्षों के इतिहास ने इस नियम का औचित्य सिद्ध कर दिया है। जो व्यक्ति आंखें होते हुए भी इस मूलभूत नियम को नहीं देख पाता, वह चीन के क्रान्तिकारी युद्ध का निर्देशन नहीं कर सकता, और विजय-प्राप्ति के लिए लाल सेना का नेतृत्व नहीं कर सकता।

यह बिलकुल स्पष्ट है कि हमें निम्नलिखित सभी उसूली मामलों को सही ढंग से सुलझाना चाहिए :

अपनी रणनीतिक दिशा को सही ढंग से निर्धारित करो, आक्रमण करते समय दुस्साहसवाद का विरोध करो, रक्षा करते समय रूढ़िवाद का विरोध करो, और सेना का स्थानान्तरण करते समय पलायनवाद का विरोध करो;

लाल सेना में छापामारवाद का विरोध करो, लेकिन उसकी

कार्यवाहियों के छापामार स्वरूप को मान्यता दो ;

मुहिमों में दीर्घकालीन लड़ाई और रणनीतिक दृष्टि से तुरत निर्णय के युद्ध का विरोध करो तथा रणनीतिक दृष्टि से दीर्घकालीन युद्ध और मुहिमों में तुरत निर्णय की लड़ाई का पक्षपोषण करो ;

फौजी कार्यवाही के लिए स्थिर पंक्तियों और मोर्चेबद्ध लड़ाई का विरोध करो और फौजी कार्यवाही के लिए अस्थिर पंक्तियों और चलायमान लड़ाई का पक्षपोषण करो ;

शत्रु को केवल तितर-बितर करने वाली लड़ाई का विरोध करो और उसका विनाश करने वाली लड़ाई का पक्षपोषण करो ;

"दोनों मुक्कों से दोनों दिशाओं में प्रहार करने" की रणनीति का विरोध करो और एक वक्त में एक मुक्के से सिर्फ एक ही दिशा में प्रहार करने के सिद्धान्त का पक्षपोषण करो ;

बड़ी पृष्ठभागीय संस्थाओं की व्यवस्था का विरोध करो और छोटी पृष्ठभागीय संस्थाओं की व्यवस्था का पक्षपोषण करो ;[१२]

निरपेक्ष केन्द्रित कमान का विरोध करो और सापेक्ष केन्द्रित कमान का पक्षपोषण करो ;

विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण और घुमन्तू विद्रोहियों के तौर-तरीकों का विरोध करो,[१३] तथा इस धारणा का पक्षपोषण करो कि लाल सेना चीनी क्रान्ति की प्रचारक और संगठनकर्ता है ;

डाकुओं के तौर-तरीकों[१४] का विरोध करो और गम्भीर राजनीतिक अनुशासन का पक्षपोषण करो ;

युद्ध-सरदारों के तौर-तरीकों का विरोध करो और उचित सीमाओं के अन्दर जनवादी जीवन-प्रणाली और प्रभुतापूर्ण व

अधिकारपूर्ण फौजी अनुशासन का पक्षपोषण करो ;

कार्यकर्ताओं के सम्बन्ध में गलत संकीर्णतावादी नीति का विरोध करो और उनके सम्बन्ध में सही नीति का पक्षपोषण करो ;

अलगाव की नीति का विरोध करो और सभी सम्भव संश्रयकारियों को अपनी ओर करने का पक्षपोषण करो ;

लाल सेना के उसकी पुरानी मंजिल में ठहरे रहने का विरोध करो और उसे नई मंजिल में ले जाने के लिए प्रयत्न करो ;

रणनीति की समस्याओं पर विचार-विमर्श करने का हमारा उद्देश्य है चीनी क्रान्ति के दस वर्षों के रक्तपातपूर्ण युद्ध के इतिहास के अनुभवों के आधार पर इन मामलों की स्पष्ट व्याख्या करना।

अध्याय ४

"घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमें और उनके खिलाफ जवाबी मुहिमें – चीनी गृहयुद्ध का मुख्य रूप

जिस दिन से छापामार युद्ध शुरू हुआ, उस दिन से अब तक यानी पिछले दस वर्षों के दौरान, लाल छापामारों के हर स्वतंत्र दस्ते या लाल सेना के हर दस्ते को, अथवा हर क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र को बराबर दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का सामना करना पड़ा है। लाल सेना दुश्मन को दानव मालूम होती है और उसके दीखते ही दुश्मन उसे पकड़

लेना चाहता है। लाल सेना का वह बराबर पीछा करता रहता है और हमेशा उसे घेर लेने की कोशिश करता रहता है। पिछले दस सालों से युद्ध का यह रूप नहीं बदला। यदि राष्ट्रीय युद्ध गृहयुद्ध की जगह नहीं लेगा तो यही सिलसिला तब तक चलता रहेगा जब तक कि दुश्मन युद्ध में कमजोर और छोटा नहीं पड़ जाता और लाल सेना उससे ज्यादा शक्तिशाली और बड़ी नहीं बन जाती।

लाल सेना की कार्यवाही "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ जवाबी मुहिमों का रूप लेती है। हमारे लिए विजय का अर्थ मुख्यत: दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का मुकाबला करने में विजय प्राप्त करना है, यानी रणनीतिक विजय और मुहिमों की विजय प्राप्त करना है। "घेरा डालने और विनाश करने" की हर मुहिम के खिलाफ चलाई जाने वाली जवाबी लड़ाई एक मुहिम होती है, जिसके अन्तर्गत आम तौर पर अनेक या बीसियों छोटी-बड़ी लड़ाइयां होती हैं। जब तक दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की एक मुहिम को बुनियादी रूप से नष्ट नहीं कर दिया जाता, तब तक उसे रणनीतिक विजय प्राप्त करना या पूरी मुहिम में विजय प्राप्त करना नहीं माना जा सकता, चाहे अनेक लड़ाइयों में विजय क्यों न प्राप्त की गई हो। लाल सेना के दस वर्षों के युद्ध का इतिहास "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ जवाबी मुहिमों का इतिहास है।

शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम और उसके खिलाफ लाल सेना की जवाबी मुहिम में लड़ाई के आक्रमणात्मक और रक्षात्मक ये दोनों रूप इस्तेमाल किए जाते हैं, इसमें और अन्य सभी युद्धों में, चाहे वे प्राचीन हों या आधुनिक, चीन में हों

या अन्यत्र, कोई फर्क नहीं है। फिर भी चीन के गृहयुद्ध की विशेषता यह है कि इसमें एक लम्बी अवधि के दौरान बार-बार लड़ाई के इन दोनों रूपों को अदल-बदल कर इस्तेमाल किया जाता है। "घेरा डालने और विनाश करने" की एक मुहिम में दुश्मन लाल सेना की रक्षात्मक कार्यवाही के खिलाफ आक्रमणात्मक कार्यवाही का इस्तेमाल करता है तथा लाल सेना शत्रु की आक्रमणात्मक कार्यवाही के खिलाफ रक्षात्मक कार्यवाही का इस्तेमाल करती है; "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ जवाबी मुहिम की यह पहली मंजिल है। उसके बाद लाल सेना की आक्रमणात्मक कार्यवाही के खिलाफ दुश्मन रक्षात्मक कार्यवाही का इस्तेमाल करता है और लाल सेना दुश्मन की रक्षात्मक कार्यवाही के खिलाफ आक्रमणात्मक कार्यवाही का इस्तेमाल करती है; यह जवाबी मुहिम की दूसरी मंजिल है। "घेरा डालने और विनाश करने" की हर मुहिम में ये दो मंजिलें होती हैं, जो एक लम्बे समय तक बारी-बारी एक दूसरे के बाद आती हैं।

एक लम्बे समय तक बारी-बारी एक दूसरे के बाद आने से हमारा मतलब यह है कि युद्ध के ये तरीके और लड़ाई के ये रूप बार-बार दोहराए जाते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जो सबके सामने स्पष्ट है। "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम और उसके खिलाफ जवाबी मुहिम—यह है युद्ध के तरीकों का बार-बार दोहराया जाना। पहली मंजिल में शत्रु अपनी आक्रमणात्मक कार्यवाही से हमारी रक्षात्मक कार्यवाही का मुकाबला करता है और हम अपनी रक्षात्मक कार्यवाही से उसकी आक्रमणात्मक कार्यवाही का मुकाबला करते हैं, और दूसरी मंजिल में शत्रु हमारी आक्रमणात्मक कार्यवाही का

मुकाबला अपनी रक्षात्मक कार्यवाही से करता है और हम उसकी रक्षात्मक कार्यवाही का मुकाबला अपनी आक्रमणात्मक कार्यवाही से करते हैं – यह है "घेरा डालने और विनाश करने" की हर मुहिम में लड़ाई के रूपों का एक दूसरे के बाद बारी-बारी आना।

जहां तक किसी युद्ध या लड़ाई की अन्तर्वस्तु का सम्बन्ध है, उसमें केवल एक दूसरे के बाद आने की क्रिया ही नहीं होती, बल्कि हर बार उसमें परिवर्तन भी होता रहता है। यह भी एक ऐसा तथ्य है जो सबके सामने स्पष्ट है। इस सम्बन्ध में यह एक नियम ही बन गया है कि हर बार मुहिम और जवाबी मुहिम का विस्तार बढ़ता जाता है, परिस्थिति और भी पेचीदा होती जाती है तथा लड़ाई और भी तेज होती जाती है।

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि इस प्रक्रिया में कभी उतार-चढ़ाव नहीं आते। "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के बाद लाल सेना बहुत कमजोर हो गई थी, दक्षिण के सभी आधार-क्षेत्र उसके हाथ से निकल गए थे, लाल सेना उत्तर-पश्चिम में चली गई थी और उसके पास उतना महत्वपूर्ण स्थान नहीं रह गया था जितना दक्षिण में था, और जिससे घरेलू शत्रु के लिए खतरा पैदा होता। इसके फलस्वरूप "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का विस्तार भी कुछ कम हो गया, स्थिति सरल हो गई और लड़ाई की तेजी कम हो गई।

लाल सेना के लिए हार किस चीज में होती है? रणनीति की दृष्टि से, जब "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ जवाबी मुहिम पूरी तरह असफल हो जाती है, सिर्फ तभी उसे हार कहा जाएगा; फिर भी इस हार को आंशिक और अस्थाई ही कहा

जाएगा। कारण यह कि गृहयुद्ध की पूर्ण पराजय का अर्थ होगा लाल सेना का पूर्ण विनाश, लेकिन ऐसा कभी हुआ नहीं है। विस्तृत आधार-क्षेत्रों का हाथ से निकल जाना और लाल सेना का स्थानान्तरित होना आंशिक और अस्थाई पराजय ही है, अन्तिम और पूर्ण पराजय नहीं, चाहे आंशिक पराजय में ९० फीसदी पार्टी-सदस्यों, सैनिकों व आधार-क्षेत्रों की क्षति क्यों न उठानी पड़े। हम इस स्थानान्तरण को अपनी रक्षात्मक कार्यवाही का जारी रूप कहते हैं और दुश्मन के पीछा करने को उसकी आक्रमणात्मक कार्यवाही का जारी रूप कहते हैं। दूसरे शब्दों में, दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम तथा उसके खिलाफ हमारी जवाबी मुहिम में हम लड़ाई के रक्षात्मक रूप के बाद उसका आक्रमणात्मक रूप नहीं अपना सके। इसके विपरीत शत्रु ने अपनी आक्रमणात्मक कार्यवाही के जरिए हमारी रक्षात्मक कार्यवाही को भंग कर दिया; इस तरह हमारी रक्षात्मक कार्यवाही पीछे हटने के रूप में बदल गई और दुश्मन की आक्रमणात्मक कार्यवाही हमारा पीछा करने के रूप में बदल गई। लेकिन लाल सेना जब एक नए इलाके में पहुंची, मिसाल के लिए जब हम च्याङशी प्रान्त और विभिन्न अन्य स्थानों को छोड़कर शेनशी प्रान्त में पहुंचे, तो "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का सिलसिला फिर शुरू हो गया। इसलिए हम कहते हैं कि लाल सेना का रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना (लम्बा अभियान) रणनीतिक रक्षात्मक कार्यवाही का ही जारी रूप था और शत्रु द्वारा रणनीति की दृष्टि से हमारा पीछा करना उसकी रणनीतिक आक्रमणात्मक कार्यवाही का ही जारी रूप था।

चीन के गृहयुद्ध में और अन्य सभी युद्धों में, चाहे वे प्राचीन हों या आधुनिक, चीन में हों या अन्यत्र, लड़ाई के दो ही बुनियादी रूप होते हैं – आक्रमणात्मक और रक्षात्मक। चीन के गृहयुद्ध की विशेषता यह है कि "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों और जवाबी मुहिमों का सिलसिला बारी-बारी एक लम्बी अवधि तक जारी रहता है तथा लड़ाई के आक्रमणात्मक और रक्षात्मक दोनों रूप एक लम्बी अवधि तक लगातार एक दूसरे के बाद आते रहते हैं ; इसमें सैन्य-दल का दस हजार किलोमीटर से भी ज्यादा लम्बा महान रणनीतिक स्थानान्तरण (लम्बा अभियान)[१५] भी शामिल है।

शत्रु की पराजय का भी यही अर्थ है। दुश्मन को रणनीतिक पराजय का मुंह उस समय देखना पड़ता है जब हमारे द्वारा उसकी "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को नष्ट कर दिया जाता है और हमारी रक्षात्मक कार्यवाही आक्रमणात्मक कार्यवाही में बदल जाती है, जब दुश्मन रक्षात्मक कार्यवाही का सहारा लेता है तथा "घेरा डालने और विनाश करने" की एक अन्य मुहिम शुरू करने के लिए उसे अपने सैन्य-दल को पुनर्गठित करना पड़ता है। दुश्मन पूरे देश का शासक है और हमसे बहुत ज्यादा शक्तिशाली है, इसलिए उसे दस हजार किलोमीटर से ज्यादा दूरी तक सैन्य-दल का रणनीतिक स्थानान्तरण नहीं करना पड़ा, जैसा कि हमने किया था। लेकिन सैन्य-दल का आंशिक स्थानान्तरण उसे भी करना पड़ा है। कभी-कभी ऐसी घटनाएं हुई कि हमारे कुछ आधार-क्षेत्रों में लाल सेना द्वारा घिरे हुए श्वेत गढ़ों से शत्रु-दल हमारी घेरेबन्दी को तोड़कर निकल भागा और नया आक्रमण संगठित करने के

लिए श्वेत इलाकों में चला गया। अगर गृहयुद्ध खिंचता गया तथा लाल सेना और बड़े पैमाने पर जीतें हासिल करती गई, तो इस तरह की घटनाएं और अधिक होंगी। लेकिन शत्रु-पक्ष वैसे ही नतीजे हासिल नहीं कर सकता जैसे लाल सेना हासिल करती है। कारण यह कि उसे जनता का समर्थन प्राप्त नहीं है और उसके अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता नहीं है। लाल सेना ने लम्बा फासला तय करके जिस तरह का स्थानान्तरण किया है, यदि वैसा ही शत्रु भी करेगा, तो अवश्य ही उसका सफाया कर दिया जाएगा।

१९३० में ली ली-सान की कार्यदिशा के समय कामरेड ली ली-सान इस बात को समझने में असमर्थ थे कि चीनी गृहयुद्ध दीर्घकाल तक चलेगा। यही कारण है कि वे इस नियम को नहीं जान पाए थे कि चीनी गृहयुद्ध के दौरान "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों और उनकी पराजय की पुनरावृत्ति एक लम्बी अवधि तक बार-बार होती रहेगी (उस समय तक ऐसी तीन मुहिमें हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र में और दो मुहिमें फ़ूच्येन में चलाई जा चुकी थीं)। इसलिए क्रान्ति की राष्ट्रव्यापी विजय तुरत प्राप्त करने के लिए उन्होंने लाल सेना को, जो अभी अपनी शैशव अवस्था में ही थी, ऊहान पर हमला करने और राष्ट्रव्यापी सशस्त्र विद्रोह कर देने की आज्ञा दे दी। इस तरह उन्होंने "वामपंथी" अवसरवाद की गलती की।

इसी तरह १९३१-३४ में भी "वामपंथी" अवसरवादियों को इस नियम में विश्वास न था कि "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमें बार-बार छेड़ी जाएंगी। हुपे-हनान-आनह्वेइ सीमान्त क्षेत्र में कुछ जिम्मेदार साथियों ने "सहायक सैन्य-दल" का सिद्धान्त

पेश किया । उनका विचार था कि "घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम में असफल होने के बाद क्वोमिन्ताङ सेना महज एक सहायक सैन्य-दल बन गई है तथा लाल सेना पर और हमले करने के लिए मुख्य सैन्य-दल के रूप में खुद साम्राज्यवादियों को मैदान में आना पड़ेगा । इस अनुमान के आधार पर लाल सेना की रणनीति यह थी कि वह ऊहान पर हमला करे । यह बात सैद्धान्तिक रूप में च्याङशी के उन साथियों के मत से मेल खाती थी जो लाल सेना का आवाहन करते थे कि वह नानछाङ पर हमला करे, जो इस बात का विरोध करते थे कि विभिन्न आधार-क्षेत्रों से एक मिलाजुला प्रदेश बनाया जाए और दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देने की कार्यनीति अपनाई जाए, जो यह समझते थे कि किसी प्रान्त में विजय प्राप्त करने का आधार उसकी राजधानी और अन्य केन्द्रीय नगरों पर अधिकार करना है, और जो इस पर विश्वास करते थे कि "'घेरा डालने और विनाश करने' की पांचवीं मुहिम के खिलाफ लड़ाई क्रान्तिकारी मार्ग और औपनिवेशिक मार्ग के बीच की निर्णायक लड़ाई है", इत्यादि । यह "वामपंथी" अवसरवाद उस गलत कार्यदिशा का स्रोत था जिसे हुपे-हूनान-आनह्वेइ सीमान्त क्षेत्र में "घेरा डालने और विनाश करने" की चौथी मुहिम के खिलाफ संघर्ष में अपनाया गया था तथा च्याङशी के केन्द्रीय क्षेत्र में "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के खिलाफ संघर्ष में अपनाया गया था । इस कार्यदिशा के फलस्वरूप दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की इन जोरदार मुहिमों के सामने लाल सेना असमर्थ स्थिति में पड़ गई और चीनी क्रान्ति को भारी क्षति उठानी पड़ी ।

यह विचार कि लाल सेना को किसी भी हालत में रक्षात्मक उपाय नहीं अपनाने चाहिए, प्रत्यक्ष रूप से उसी "वामपंथी" अवसरवाद से जुड़ा हुआ था जो इस बात से इनकार करता है कि "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमें बार-बार छेड़ी जाएंगी, तथा यह विचार भी बिलकुल गलत था ।

क्रान्ति या क्रान्तिकारी युद्ध आक्रमणात्मक होता है – यह प्रस्थापना निस्सन्देह एक अर्थ में सही है । अपने अभ्युदय और विकास की समूची प्रक्रिया में – छोटे होने से बड़े बनने तक, राजनीतिक सत्ता की अनुपस्थिति से राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करने तक, लाल सेना की अनुपस्थिति से लाल सेना के निर्माण तक, और क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों की अनुपस्थिति से उनकी स्थापना तक – एक क्रान्ति या क्रान्तिकारी युद्ध को हमेशा आक्रमणात्मक बने रहना होता है और वह रूढ़िवादी नहीं हो सकता ; और रूढ़िवादी रुझानों का विरोध किया जाना चाहिए ।

केवल यह प्रस्थापना पूर्णतया सत्य है कि क्रान्ति या क्रान्तिकारी युद्ध आक्रमणात्मक तो होता है लेकिन रक्षा करना और पीछे हटना भी उसमें शामिल होते हैं । आक्रमण करने के लिए रक्षा करना, आगे बढ़ने के लिए पीछे हटना, सामने की तरफ धावा बोलने के लिए बाजू से धावा बोलना और सीधे बढ़ने के लिए टेढ़ेमेढ़े बढ़ना – बहुत सी चीजों के विकास की प्रक्रिया में, और खास तौर पर सेनाओं की गतिविधि में इस तरह की घटनाएं अनिवार्य होती हैं ।

उपर्युक्त दो प्रस्थापनाओं में पहली प्रस्थापना राजनीतिक दृष्टि से सही हो सकती है, लेकिन फौजी क्षेत्र में लागू किए जाने पर वह

गलत हो जाती है। इसके अलावा वह केवल एक परिस्थिति में ही (जब क्रान्ति आगे बढ़ रही हो) राजनीतिक रूप से सही होती है, और दूसरी परिस्थितियों में (जब क्रान्ति पीछे हट रही हो : पूर्ण रूप से पीछे हटना, जैसे कि १९०६ में रूस में हुआ था,[१६] और १९२७ में चीन में हुआ था ; आंशिक रूप से पीछे हटना, जैसे कि १९१८ में ब्रेस्त-लितोव्स्क सन्धि[१७] के समय रूस में हुआ था) वह गलत साबित होगी। केवल दूसरी प्रस्थापना ही पूर्ण रूप से सही और सत्य है। १९३१-३४ का "वामपंथी" अवसरवाद, जिसने रक्षात्मक फौजी उपाय काम में लाने का यांत्रिक ढंग से विरोध किया था, महज एक बहुत ही बचकाना विचार था।

एक के बाद एक "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का सिलसिला कब बन्द होगा? मेरी राय में अगर गृहयुद्ध खिंचता गया, तो यह सिलसिला तभी बन्द होगा जब दुश्मन की और हमारी तुलनात्मक शक्ति में बुनियादी परिवर्तन हो जाएगा। एक बार जहां लाल सेना दुश्मन से ज्यादा शक्तिशाली हुई, तो इन मुहिमों का यह सिलसिला बन्द हो जाएगा। तब हम दुश्मन को घेर लेंगे और उसका विनाश कर देंगे, तथा दुश्मन को जवाबी मुहिमें चलानी पड़ेंगी। लेकिन राजनीतिक और फौजी परिस्थितियों के कारण शत्रु को यह मौका नहीं मिलेगा कि वह अपनी जवाबी मुहिमों में लाल सेना जैसी स्थिति प्राप्त कर ले। हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि उस समय "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों और जवाबी मुहिमों का सिलसिला चाहे पूरी तरह समाप्त न हो, फिर भी आम तौर पर समाप्त हो जाएगा।

अध्याय ५

रणनीतिक रक्षा

इस शीर्षक के अन्तर्गत मैं इन समस्याओं पर विचार करूंगा : (१) सक्रिय रक्षा और निष्क्रिय रक्षा ; (२) "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का मुकाबला करने की तैयारी ; (३) रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना ; (४) रणनीतिक प्रत्याक्रमण ; (५) प्रत्याक्रमण शुरू करने की समस्या ; (६) सैन्य-दल के केन्द्रीकरण की समस्या ; (७) चलायमान लड़ाई; (८) तुरत निर्णय की लड़ाई ; और (९) विनाश की लड़ाई।

१. सक्रिय रक्षा और निष्क्रिय रक्षा

आरम्भ में हम रक्षा की चर्चा क्यों करते हैं? १९२४-२७ के प्रथम राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की असफलता के बाद चीनी क्रान्ति ने अत्यन्त गहरे और निर्मम वर्ग-युद्ध का रूप धारण कर लिया। शत्रु सारे देश का शासक था, जबकि हमारे पास केवल छोटा सा सैन्य-दल था। फलतः आरम्भ से ही हम शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों के खिलाफ लड़ते रहे। हमारे आक्रमणों का घनिष्ठ सम्बन्ध इन मुहिमों को नष्ट करने के प्रयत्न से है। हमारा भविष्य पूरी तरह इस पर निर्भर है कि ऐसा करने में हम सफल होते हैं या नहीं। इन मुहिमों को नष्ट करने की प्रक्रिया आम तौर पर चक्करदार होती है और हमारी इच्छानुसार सीधी नहीं बन जाती। हमारी पहली और सबसे गम्भीर समस्या यह है कि अपनी शक्ति को कैसे सुरक्षित रखें और शत्रु को परास्त करने के मौके

की कैसे ताक में रहें। इस प्रकार लाल सेना की कार्यवाही में रण-नीतिक रक्षा सबसे पेचीदा और सबसे महत्वपूर्ण समस्या है।

हमारे युद्ध के दस वर्षों में रणनीतिक रक्षा के सवाल पर दो भटकाव अक्सर हुए हैं : एक था दुश्मन को कम करके आंकना और दूसरा था दुश्मन से भयभीत होना।

दुश्मन को कम करके आंकने के फलस्वरूप बहुत से छापामार दस्तों को पराजित होना पड़ा और लाल सेना शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की अनेक मुहिमों को नष्ट नहीं कर सकी।

जब पहले-पहल क्रान्तिकारी छापामार दस्ते बने, तब उनके नेता अक्सर शत्रु की और अपनी स्थिति को सही तौर पर नहीं आंक पाते थे। क्योंकि जब वे किसी स्थान में आकस्मिक सशस्त्र विद्रोह कराने अथवा श्वेत सेना के भीतर बगावत कराने में सफल हो जाते थे, तो वे केवल अस्थाई अनुकूल परिस्थितियों को ही देखते थे, अथवा नाजुक परिस्थिति होते हुए भी उसे नहीं पहचान पाते थे ; इसके फलस्वरूप वे अक्सर शत्रु को कम करके आंकते थे। इसके अलावा वे अपनी कमजोरियों (अनुभव की कमी तथा सैन्य-दल का छोटा होना) को नहीं जानते थे। वस्तुगत स्थिति यह थी कि शत्रु मजबूत था और हम कमजोर थे। फिर भी कुछ लोग इस बात पर विचार नहीं करना चाहते थे, रक्षा और पीछे हटने के काम को नजरअन्दाज करके केवल आक्रमण की बात करते थे, और इस तरह रक्षा के मामले में मानसिक रूप से अपने आपको निःशस्त्र कर लेते थे और अपनी कार्यवाही को गलत दिशा में ले जाते थे। इस कारण बहुत से छापामार दस्ते पराजित हुए।

इसी कारण लाल सेना शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों को नष्ट नहीं कर पाई, जिसकी मिसालें ये हैं : क्वाङतुङ के हाएफ़ङ-लूफ़ङ इलाके में लाल सेना १९२८ में पराजित हुई,[१८] और १९३२ में दुश्मन के खिलाफ चौथी जवाबी मुहिम में हुपे-हनान-आनह्वेइ सीमान्त क्षेत्र में लाल सेना इस सिद्धान्त के भुलावे में आकर कि क्वोमिन्ताङ सेना महज एक सहायक सैन्य-दल है, अपनी कार्यवाही की पहलकदमी खो बैठी।

इस बात की भी बहुत सी मिसालें हैं कि दुश्मन से भयभीत होने के कारण हमें क्षति उठानी पड़ी है।

जो लोग शत्रु को कम करके आंकते थे, उनके विपरीत कुछ लोग उसे बहुत बढ़ा-चढ़ा कर आंकते थे और अपने को बहुत कम करके आंकते थे। फलतः वे पीछे हटने की नीति अपनाते थे, जिसकी आवश्यकता नहीं थी, तथा रक्षा के मामले में वे भी अपने को मानसिक रूप से निःशस्त्र कर लेते थे। नतीजा यह होता था कि छापामार दस्तों की हार हो जाती थी या कुछ मुहिमों में लाल सेना की हार हो जाती थी अथवा कोई आधार-क्षेत्र उसके हाथ से निकल जाता था।

आधार-क्षेत्र हाथ से निकलने की सबसे रोशन मिसाल "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ पांचवीं जवाबी मुहिम में च्याङशी के केन्द्रीय आधार-क्षेत्र का हाथ से निकल जाना है। यह गलती दक्षिणपंथी दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप हुई थी। नेता लोग दुश्मन से इतना डरते थे मानो वह बाघ हो। उन्होंने हर जगह अपनी रक्षा का प्रबन्ध कर लिया और एक के बाद एक रक्षात्मक कार्यवाही करते रहे। दुश्मन के पृष्ठभाग पर हमला करने की जुर्रत उन्होंने नहीं की, जिससे हम फायदे में रहते। न उन्होंने साहस के साथ

दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने दिया जिससे हम उन सबको घेरकर नेस्तनाबूद कर देते। नतीजा यह हुआ कि पूरा आधार-क्षेत्र हाथ से निकल गया और लाल सेना को १२,००० से ज्यादा किलोमीटर का लम्बा अभियान शुरू करना पड़ा। लेकिन इस तरह की गलती के पहले अक्सर दुश्मन को कम करके आंकने की "वामपंथी" गलती होती है। १९३२ में केन्द्रीय नगरों पर धावा बोलने की जो फौजी दुस्साहसवादी गलती हुई थी, वही आगे चलकर दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम का मुकाबला करने में निष्क्रिय रक्षा की कार्यदिशा अपनाने का मूल कारण बनी।

दुश्मन से भयभीत होने की सबसे रोशन मिसाल पीछे हटने वाले सिद्धान्त की "चाङ क्वो-थाओ कार्यदिशा" थी। पीली नदी के पश्चिम में लाल सेना की चौथी मोर्चा-सेना के पश्चिमी कालम की पराजय[१६] उस कार्यदिशा के पूरे दिवालियेपन की द्योतक है।

सक्रिय रक्षा को आक्रमणात्मक रक्षा अथवा निर्णायक लड़ाइयों के लिए की जाने वाली रक्षा भी कहते हैं। निष्क्रिय रक्षा को विशुद्ध रक्षात्मक रक्षा या निरी रक्षा भी कहते हैं। निष्क्रिय रक्षा वास्तव में एक नकली रक्षा होती है, तथा सक्रिय रक्षा ही वास्तविक रक्षा होती है, प्रत्याक्रमण करने और आक्रमण करने के लिए की जाने वाली रक्षा होती है। जहां तक मुझे मालूम है, चाहे प्राचीन काल में हो अथवा आधुनिक युग में, चाहे चीन में हो अथवा अन्यत्र, कोई भी महत्वपूर्ण फौजी पुस्तक ऐसी नहीं है, कोई भी समझदार फौजी विशेषज्ञ ऐसा नहीं है, जो रणनीति अथवा कार्यनीति के क्षेत्र में निष्क्रिय रक्षा का विरोधी न हो। कोई बज्रमूर्ख या पागल व्यक्ति

ही निष्क्रिय रक्षा को रामबाण समझता होगा। फिर भी दुनिया में ऐसे लोग मौजूद हैं जो ऐसी बातें करते हैं। यह युद्ध के दौरान की जाने वाली एक गलती है, फौजी मामलों में रूढ़िवाद की अभिव्यक्ति है, जिसका हमें दृढ़ता से विरोध करना चाहिए।

जर्मनी और जापान जैसे नए और तेजी से विकसित होने वाले साम्राज्यवादी देशों के फौजी विशेषज्ञ डंके की चोट पर रणनीतिक आक्रमण के लाभों के गुण गाते हैं और रणनीतिक रक्षा की निन्दा करते हैं। इस तरह का विचार चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के लिए एकदम अनुपयुक्त है। ऐसे फौजी विशेषज्ञों का कहना है कि रक्षात्मक लड़ाई की सबसे बड़ी खामी यह है कि वह लोगों को उत्साहित करने के बदले उन्हें पस्त कर देती है। लेकिन यह बात केवल उन्हीं देशों पर लागू होती है जिनमें वर्ग-अन्तरविरोध तीव्र हो चुके हैं और युद्ध से केवल प्रतिक्रियावादी शासक तबकों अथवा सत्ताधारी प्रतिक्रियावादी गुटों को ही लाभ होता है। हमारी बात दूसरी है। हम लोग उत्पीड़न और आक्रमण के शिकार हैं, इसलिए क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों की रक्षा करने और चीन की रक्षा करने के नारों को लेकर हम जनता के सर्वाधिक बहुसंख्यक भाग को एकदिल होकर लड़ने के लिए गोलबन्द कर सकते हैं। गृहयुद्ध के समय सोवियत संघ की लाल सेना ने भी रक्षात्मक कार्यवाही का रूप अपनाकर अपने दुश्मनों को हराया था। जब साम्राज्यवादी ताकतों ने श्वेत तत्वों को हमले के लिए संगठित किया था, उस समय सोवियत संघ ने सोवियतों की रक्षा का नारा देकर ही युद्ध चलाया; यहां तक कि जब अक्तूबर विद्रोह की तैयारी हो रही थी, उस समय भी राज-धानी की रक्षा का नारा देकर ही फौजी जत्थेबन्दी की गई थी।

हर न्यायपूर्ण युद्ध में रक्षात्मक कार्यवाही न केवल उन लोगों को बेसुध कर देती है जो राजनीतिक रूप से गैर हैं, बल्कि जनता के पिछड़े हुए हिस्सों को भी युद्ध में शामिल होने के लिए गोलबन्द करती है।

मार्क्स ने कहा था कि एक बार सशस्त्र विद्रोह शुरू कर दिया जाए तो अपने आक्रमण को एक क्षण के लिए भी बन्द नहीं करना चाहिए।[२०] इससे उनका तात्पर्य यह था कि जन-समुदाय जब विद्रोह करके शत्रु पर अचानक टूट पड़े, तो उसे प्रतिक्रियावादी शासकों को अपनी राजनीतिक सत्ता बनाए रखने अथवा उसे फिर से प्राप्त करने का जरा भी मौका नहीं देना चाहिए। उसे चाहिए कि वह इस क्षण का फायदा उठाकर राष्ट्र की प्रतिक्रियावादी शासक ताकतों को उनके तैयार होने से पहले ही परास्त कर दे। उसे अपनी जीत से सन्तुष्ट होकर बैठ नहीं जाना चाहिए, दुश्मन को कम करके नहीं आंकना चाहिए, दुश्मन पर हमला करने में ढील नहीं दिखानी चाहिए, या आगे बढ़ने में हिचकिचाना नहीं चाहिए तथा शत्रु के विनाश का अवसर हाथ से निकलने नहीं देना चाहिए और इस प्रकार क्रान्ति को असफल नहीं होने देना चाहिए। यह सही है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि हम क्रान्तिकारियों को उस समय भी रक्षात्मक उपाय नहीं अपनाने चाहिए जब हम शत्रु से जूझ रहे हों और बरतरी शत्रु के हाथ में हो, तथा वह हमें दबाए चला जा रहा हो। जो कोई भी इस तरह सोचता है, वह परले सिरे का मूर्ख है।

कुल मिलाकर हमारा पिछला युद्ध क्वोमिन्ताङ के विरुद्ध एक आक्रमणात्मक युद्ध था, लेकिन फौजी दृष्टि से उसने शत्रु की "घेरा

डालने और विनाश करने" की मुहिमों को नष्ट करने का रूप ले लिया।

फौजी शब्दावली में हमारी लड़ाई बारी-बारी रक्षात्मक और आक्रमणात्मक रूप धारण करती है। हमारे लिए इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि हमारी लड़ाई का आक्रमणात्मक रूप उसके रक्षात्मक रूप के बाद आता है या इसके पहले। कारण, मुख्य बात है "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों को नष्ट करना। लड़ाई का रूप तब तक रक्षात्मक रहता है जब तक "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम नष्ट नहीं हो जाती। "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को नष्ट करते ही वह आक्रमणात्मक रूप धारण कर लेती है। उपर्युक्त दोनों बातें एक ही चीज की दो मंजिलें हैं; और दुश्मन की इस तरह की एक मुहिम के बाद शीघ्र ही दूसरी मुहिम आरम्भ हो जाती है। इन दो मंजिलों में रक्षात्मक मंजिल आक्रमणात्मक मंजिल की अपेक्षा ज्यादा पेचीदा और ज्यादा महत्वपूर्ण होती है। उसके अन्तर्गत "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को नष्ट करने की बहुत सी समस्याएं आती हैं। यहां बुनियादी उसूल है सक्रिय रक्षा का पक्षपोषण करना और निष्क्रिय रक्षा का विरोध करना।

गृहयुद्ध में जब लाल सेना शत्रु से अधिक शक्तिशाली हो जाएगी, तब तो आम तौर पर रणनीतिक रक्षा की कोई उपयोगिता ही नहीं रह जाएगी। तब हमारी एकमात्र नीति होगी, रणनीतिक आक्रमण। इस तरह का परिवर्तन शत्रु की और हमारी तुलनात्मक शक्ति में हुए चौतरफा परिवर्तन पर निर्भर होगा। उस समय जो रक्षात्मक उपाय बाकी रहेंगे, वे केवल आंशिक होंगे।

२. "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों का मुकाबला करने की तैयारी

शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की एक योजनाबद्ध मुहिम के खिलाफ यदि हम आवश्यक और पर्याप्त तैयारी नहीं करेंगे, तो हम अनिवार्य रूप से एक निष्क्रिय स्थिति में ढकेल दिए जाएंगे। तुरत-फुरत और हड़बड़ी में लड़ाई लड़ने से जीत निश्चित नहीं होती। इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि जब दुश्मन अपनी "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम की तैयारी कर रहा हो, तभी हमें उसके खिलाफ जवाबी मुहिम की तैयारी में लग जाना चाहिए। इस तरह की तैयारी का विरोध करना, जैसा कि हमारी पांतों के भीतर मौजूद कुछ लोगों ने एक समय किया, बिलकुल हास्यास्पद और बचकाना है।

यहां एक कठिन समस्या सामने आती है, जिस पर आसानी से वाद-विवाद आरम्भ हो सकता है। समस्या यह है : हमें कब अपना आक्रमण समाप्त करके "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ अपनी जवाबी मुहिम की तैयारी शुरू करनी चाहिए? जब हम जीत हासिल करते हुए आक्रमणात्मक लड़ाई कर रहे होते हैं और शत्रु रक्षात्मक लड़ाई कर रहा होता है, तो वह "घेरा डालने और विनाश करने" की दूसरी मुहिम के लिए गुप्त रूप से तैयारी करता रहता है, जिससे हमारे लिए यह जानना कठिन होता है कि उसका हमला कब शुरू होगा। अगर हम जवाबी मुहिम की तैयारी बहुत जल्द शुरू कर दें, तो हमारे आक्रमण का जो फल प्राप्त होने वाला है, वह निश्चित रूप से कम हो जाएगा, यह भी हो सकता है

कि कभी-कभी लाल सेना और जनता पर उसका कुछ हानिकर प्रभाव पड़े। कारण यह कि तैयारी की मंजिल में मुख्य कदम होता है पीछे हटने के लिए फौजी तैयारी करना और राजनीतिक रूप से सेना और जनता को गोलबन्द करना। कभी-कभी जब हम तैयारी बहुत जल्द शुरू कर देते हैं तो हमें दुश्मन की राह देखनी पड़ती है; काफी समय तक राह देखने के बाद भी जब दुश्मन नजर नहीं आता, तो फिर अपना हमला शुरू करने के अलावा कोई चारा नहीं रह जाता। कभी-कभी जब हमारा नया हमला शुरू ही हुआ हो तभी शत्रु अपना हमला शुरू कर देता है और इस प्रकार हम कठिन स्थिति में पड़ जाते हैं। इसलिए अपनी तैयारी शुरू करने के लिए उचित समय चुनना एक महत्वपूर्ण समस्या है। अपनी और शत्रु दोनों की स्थिति और इन दोनों के आपसी सम्बन्धों के अनुसार उचित समय का निर्णय करना चाहिए। शत्रु की स्थिति को समझने के लिए हमें उसकी राजनीतिक, फौजी और वित्तीय स्थितियों के बारे में तथा उसके प्रदेश में लोकमत की अवस्था के बारे में सामग्री एकत्र करनी चाहिए। इस तरह की सामग्री का विश्लेषण करते समय हमें शत्रु की पूरी शक्ति पर काफी ध्यान देना चाहिए, उसकी पिछली हारों को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर नहीं देखना चाहिए; साथ ही हमें उसके खेमे के अन्तरविरोधों, उसकी वित्तीय कठिनाइयों, उसकी पिछली हारों के असर, आदि पर भी ध्यान देना चाहिए। जहां तक हमारा अपना सम्बन्ध है, हमें अपनी पिछली जीतों को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं देखना चाहिए, लेकिन साथ ही उनके असर को भी पूरी तरह ध्यान में रखना चाहिए।

जहां तक तैयारी शुरू करने के समय का प्रश्न है, आम तौर

पर यह सलाह दी जा सकती है कि बहुत देर करने से कहीं अच्छा यह होगा कि बहुत जल्दी की जाए। कारण यह कि बहुत देर से तैयारी करने की अपेक्षा बहुत जल्द तैयारी करने से हानि कम होती है, और इसका लाभ यह है कि तैयार रहने से दुर्घटनाएं नहीं होतीं और हम दुनियादी तौर से अजेय स्थिति में होते हैं।

तैयारी की मंजिल में मुख्य समस्याएं ये हैं : लाल सेना के पीछे हटने की तैयारी करना, राजनीतिक रूप से सेना और जनता को गोलबन्द करना, नए सैनिक भरती करना, वित्त व खाद्य-सामग्री का इन्तजाम करना और उन लोगों से निपटना जो राजनीतिक रूप से हमसे गैर हैं।

लाल सेना के पीछे हटने की तैयारी से हमारा मतलब है इस बात को ध्यान में रखना कि वह कहीं ऐसी दिशा में न बढ़े जो पीछे हटने के लिए हानिकर हो, वह बहुत आगे न बढ़ जाए अथवा बहुत ज्यादा न थक जाए। शत्रु का जोरदार हमला शुरू होने की पूर्ववेला में नियमित लाल सेना को यह उपाय अवश्य अपनाना चाहिए। ऐसे समय लाल सेना को रणभूमि तैयार करने, सामग्री जमा करने, और अपने सैन्य-दल का प्रसार और प्रशिक्षण करने की योजना पर मुख्य रूप से ध्यान देना चाहिए।

राजनीतिक रूप से सेना और जनता को गोलबन्द करना "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ जवाबी मुहिम में पहली महत्वपूर्ण समस्या है। दूसरे शब्दों में हमें स्पष्ट रूप से, दृढ़ता से और पूर्ण रूप से लाल सेना के सैनिकों को और आधार-क्षेत्र की जनता को बता देना चाहिए कि शत्रु का हमला अनिवार्य रूप से और शीघ्र ही होने वाला है, तथा उससे जनता को गम्भीर हानि होगी। साथ

ही हमें दुश्मन की कमजोरी, लाल सेना की अनुकूल परिस्थितियां, विजय के लिए हमारा अजेय मनोबल, अपने कार्य की दिशा, आदि भी उन्हें बता देना चाहिए। "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ और आधार-क्षेत्र की रक्षा के वास्ते संघर्ष करने के लिए हमें लाल सेना और समूची जनता का आवाहन करना चाहिए। फौजी महत्व की गुप्त बातों के अलावा राजनीतिक रूप से सेना और जनता को गोलबन्द करने का काम न सिर्फ खुलेआम करना चाहिए, बल्कि यथाशक्ति व्यापक रूप से करना चाहिए जिससे कि क्रान्तिकारी कार्य के सभी मुमकिन समर्थकों तक पहुंचा जा सके। यहां मुख्य कड़ी है कार्यकर्ताओं को समझाना।

नए सैनिक भरती करते समय दो बातों पर ध्यान देना चाहिए : पहले, जनता की राजनीतिक चेतना के स्तर और आबादी की स्थिति पर ध्यान देना चाहिए ; दूसरे, लाल सेना की वर्तमान परिस्थितियों पर ध्यान देना चाहिए और यह सोचना चाहिए कि समूची जवाबी मुहिम के दौरान लाल सेना की कितनी क्षति सम्भव है।

कहना न होगा कि वित्त और खाद्यान्न की समस्या जवाबी मुहिम के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। हमें इस सम्भावना को ध्यान में रखना चाहिए कि शत्रु अपनी मुहिम की अवधि बढ़ा सकता है। जवाबी मुहिम के पूरे दौर में मुख्यत: लाल सेना की, तथा क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र की जनता की अल्पतम भौतिक आवश्यकताएं क्या होंगी, इसका अनुमान लगाना भी जरूरी है।

राजनीतिक रूप से जो लोग गैर हैं, उनकी ओर से सतर्क न रहना ठीक नहीं होगा, लेकिन उनके विश्वासघात के प्रति आवश्यकता से ज्यादा आशंका नहीं करनी चाहिए और उनके प्रति आवश्यकता से

ज्यादा सतर्कता वाले उपाय काम में नहीं लाने चाहिए। जमींदारों, व्यापारियों और धनी किसानों के बीच भेद करना चाहिए। मुख्य बात यह है कि उन्हें राजनीतिक तौर पर अपनी नीति समझानी चाहिए, और उन्हें तटस्थ बना लेना चाहिए, तथा आम जनता को संगठित करना चाहिए कि वह उन पर निगाह रखे। जो थोड़े से लोग सबसे खतरनाक हैं, सिर्फ उन्हीं के लिए गिरफ्तारी जैसे कठोर उपाय काम में लाने चाहिए।

"घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम का मुकाबला करने में हमें कितनी सफलता मिलती है, यह घनिष्ठ रूप से इस बात से सम्बन्धित है कि तैयारी की मंजिल में हम कितना काम पूरा कर लेते हैं। शत्रु को कम करके आंकने के कारण तैयारी के काम में ढील डालना और शत्रु के हमले के भय से होश-हवास खो बैठना – ये दोनों ही रुझान हानिकर हैं और उनका दृढ़ता से विरोध करना चाहिए। हमें आवश्यकता है उत्साही किन्तु शान्त चित्त की, पुरजोश किन्तु व्यवस्थित कार्य की।

३. रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना

रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना एक योजनाबद्ध रणनीतिक कदम है। जब कोई कमतर सैन्य-दल अपने से बरतर सेना के आक्रमण को शीघ्र नष्ट नहीं कर पाता, तब वह अपनी शक्ति को सुरक्षित रखने के लिए, और शत्रु को परास्त करने के मौके की राह देखने के लिए यह कदम उठाता है। लेकिन फौजी दुस्साहसवादी इस कदम का कड़ा विरोध करते हैं और इस बात की पैरवी करते हैं कि "शत्रु को देश के बाहर ही रोक दिया जाए।"

हम सब लोग जानते हैं कि जब दो मुक्केबाज लड़ते हैं तो उनमें से अपेक्षाकृत बुद्धिमान मुक्केबाज आम तौर पर शुरू में कुछ पीछे हट जाता है, जबकि उसका मूर्ख प्रतिद्वन्द्वी जोरशोर से आगे बढ़कर एक ही बार सारी शक्ति और कौशल लगा देता है। नतीजा यह होता है कि जो मुक्केबाज कुछ पीछे हटा था, वह अक्सर अपने प्रतिद्वन्द्वी को परास्त कर देता है।

"श्वेइ हू च्वान" नामक उपन्यास में हुङ नाम का ड्रिल-मास्टर छाए चिन के घर में लिन छुङ को लड़ने के लिए ललकारता है। वह बार-बार गुर्राकर कहता है: "आ जा, आ जा, आ जा!" पीछे हटता हुआ लिन छुङ अन्त में हुङ के कमजोर स्थल को पहचान लेता है और एक ही लात से उसे धराशायी कर देता है।[२१]

बसन्त और शरद काल में लू राज्य और छी राज्य[२२] के बीच लड़ाई हो रही थी। लू राज्य का सामन्त च्वाङ यह चाहता था कि छी राज्य की सेनाओं पर उनके थककर चूर होने से पहले ही हमला कर दिया जाए। लेकिन छाओ क्वेइ ने उसे रोक दिया। इसके बदले उसने "दुश्मन थक जाए, तो उस पर धावा बोल दो" की कार्यनीति अपना कर छी राज्य की सेना को परास्त कर दिया। चीन के युद्ध-इतिहास में यह लड़ाई इस बात की मशहूर मिसाल बन गई कि कमजोर सैन्य-दल अपने से शक्तिशाली शत्रु को कैसे परास्त कर सकता है। इतिहासकार च्वोछ्यू मिङ[२३] ने इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है:

> बसन्त में छी राज्य की सेना ने हम पर आक्रमण कर दिया। सामन्त लड़ने ही वाला था। छाओ क्वेइ ने उससे मुलाकात की आज्ञा मांगी। उसके पड़ोसियों ने कहा: "युद्ध

मांसाहारी पदाधिकारियों का काम है, हम उसमें क्यों टांग अड़ाएं?" छाओ ने उत्तर दिया: "मासाहारी पदाधिकारी मूर्ख होते हैं, वे आगे के लिए योजना नहीं बना सकते।" इसलिए वह सामन्त से भेंट करने गया। उसने पूछा, "आप किस चीज के भरोसे लड़ेंगे?" सामन्त ने जवाब दिया, "मैं केवल अपने ही उपभोग के लिए अन्न-वस्त्र संचित करने का साहस कभी नहीं करता बल्कि सदा दूसरों को साझीदार बनाता हूं।" छाओ ने कहा, "इस तरह का क्षुद्र दान सारे संसार को नहीं पहुंच पाता। जनता आपका अनुसरण नहीं करेगी।" सामन्त ने उत्तर दिया, "मैं देवताओं को बलि, जेड या रेशम समर्पित करने में कभी कोई कमी नहीं रखता। इसलिए मेरा विश्वास अटूट है।" छाओ ने कहा, "ऐसे क्षुद्र दान से आस्था नहीं उपजती। देवता तुम पर कृपा नहीं करेंगे।" सामन्त ने कहा, "यद्यपि सभी छोटे-बड़े मुकदमों में मेरे लिए व्यक्तिगत रूप से हर बारीकी पर ध्यान देना सम्भव नहीं है, फिर भी मैं हमेशा तथ्यों की मांग करता हूं।" छाओ ने कहा, "तब तो आपने अपना कर्तव्य निभाया है। आप युद्ध करने में समर्थ हैं। जब आप युद्ध करें तो मेरी प्रार्थना है कि मैं आपके साथ रहूं।" छाओ और सामन्त एक ही रथ पर सवार होकर चले। छाङशाओ में युद्ध हुआ। जब योद्धाओं के धावा बोलने के लिए सामन्त दुन्दुभी बजाने ही वाला था, तो छाओ ने कहा, "अभी नहीं।" जब छी राज्य की सेना तीन बार दुन्दुभी बजा चुकी, तो छाओ ने कहा, "अब हम भी दुन्दुभी बजा सकते हैं।" छी राज्य की सेना परास्त हो गई। सामन्त पीछा करने को

उद्यत था। छाओ ने फिर कहा, "अभी नहीं।" वह रथ से उतर पड़ा और शत्रु के रथ-चिन्हों की परीक्षा करने लगा। इसके बाद रथ के ऊपर खड़े होकर उसने दूर तक नजर डाली। फिर बोला, "हां, अब हम पीछा कर सकते हैं।" तब सामन्त की सेना छी राज्य की सेना का पीछा करने लगी। विजय के बाद सामन्त ने छाओ से पूछा कि उसने इस प्रकार की सलाह क्यों दी। छाओ ने समझाया, "युद्ध साहस पर निर्भर होता है। पहले दुन्दुभी-घोष से साहस बढ़ता है, दूसरे पर घटता है और तीसरे पर समाप्त हो जाता है। जब शत्रु का साहस खत्म होने लगा, तब भी हमारा साहस बना रहा। इसलिए हमारी विजय हो गई। लेकिन बड़े राज्यों की योजनाओं को समझना कठिन होता है। मुझे भय था कि कहीं रास्ते में घात लगाकर हमला करने की योजना न बनाई गई हो। परन्तु जब मैंने देखा कि शत्रु के रथ-चिन्ह उलझे हुए हैं और दूर तक नजर डालने के बाद यह पता लगा लिया कि उसकी पताकाएं झुकी हुई हैं, तब मैंने पीछा करने की सलाह दी।"

उस समय की स्थिति यह थी कि एक कमजोर राज्य एक शक्तिशाली राज्य का मुकाबला कर रहा था। इस विवरण में युद्ध के पहले की राजनीतिक तैयारी – जनता का विश्वास प्राप्त करने – की चर्चा की गई है; इसमें प्रत्याक्रमण करने के लिए अनुकूल युद्ध-भूमि – छाङशाओ – का वर्णन किया गया है; इसमें प्रत्याक्रमण शुरू करने के लिए अनुकूल समय बताया गया है – जब शत्रु का साहस खत्म होने लगे और हमारा अपना साहस बुलन्द हो; इसमें

पीछा करना शुरू करने के अवसर का उल्लेख किया गया है – जब शत्रु के रथ-चिन्ह उलझे हुए हों और उसकी पताकाएं झुकी हुई हों। यद्यपि यह कोई बड़ी मुहिम नहीं थी, फिर भी उसमें रणनीतिक रक्षा के उसूल मिलते हैं। चीन के युद्ध-इतिहास में इन उसूलों के अनुसार प्राप्त विजय के अनेक उदाहरण मौजूद हैं। ऐसी प्रसिद्ध लड़ाइयों में – जैसे छू राज्य और हान राज्य के बीच छङ्काओ की लड़ाई,[२४] शिन राज्य और हान राज्य के बीच खुनयाङ की लड़ाई,[२५] य्वान शाओ और छाओ छाओ के बीच क्वानतू की लड़ाई,[२६] ऊ राज्य और वेइ राज्य के बीच छपी की लड़ाई,[२७] ऊ राज्य और शू राज्य के बीच ईलिङ की लड़ाई[२८] तथा छिन राज्य और चिन राज्य के बीच फ़ेइश्वेइ की लड़ाई[२९] – दोनों पक्षों की शक्ति असमान थी। जिस पक्ष के पास शक्ति कम थी, वह पहले एक कदम पीछे हटा और उसने दुश्मन द्वारा प्रहार किए जाने के बाद ही अपनी कार्यवाही शुरू की। इस प्रकार उसने युद्ध को जीत लिया।

१९२७ के शरद में जब हमारा युद्ध आरम्भ हुआ, तो हमें कुछ भी अनुभव नहीं था। नानछाङ विद्रोह[३०] और क्वाङचओ विद्रोह[३१] दोनों असफल हो गए, शरद-फसल विद्रोह[३२] में भी हुनान-हुपे-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की लाल सेना को कई बार हार का सामना करना पड़ा तथा वह हुनान-च्याङशी सीमान्त पर चिङकाङशान पहाड़ों में चली गई। नानछाङ विद्रोह के असफल होने के बाद जो दस्ते बच रहे थे, वे भी दक्षिणी हुनान होते हुए अगली अप्रैल में चिङकाङशान पहाड़ों में जा पहुंचे। लेकिन मई १९२८ तक छापामार युद्ध के बुनियादी उसूल, जो उस समय की परिस्थितियों के अनुकूल थे और जिनका स्वरूप सीधा-सादा था, सामने आ गए।

ये उसूल सोलह अक्षरों वाला फार्मूला कहलाए : "जब दुश्मन आगे बढ़ता है, तो हम पीछे हट जाते हैं ; जब दुश्मन पड़ाव डालता है, तो हम उसे हैरान-परेशान करते हैं ; जब दुश्मन थक जाता है, तो हम उस पर धावा बोल देते हैं ; जब दुश्मन पीछे हटता है, तो हम उसका पीछा करते हैं।" फौजी उसूलों के बारे में सोलह अक्षरों वाला यह फार्मूला ली ली-सान की कार्यदिशा से पहले की केन्द्रीय कमेटी ने स्वीकार कर लिया था। आगे चलकर फौजी कार्यवाही सम्बन्धी हमारे उसूल एक कदम और विकसित हुए। च्याङशी के आधार-क्षेत्र में "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ जब पहली जवाबी मुहिम चलाई गई, तो "दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देने" का सिद्धान्त पेश किया गया और उसे सफलता के साथ अमल में लाया गया। जब शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम को शिकस्त दी गई, तब तक लाल सेना के लिए फौजी कार्यवाही के उसूलों का एक पूरा सिल-सिला रचा जा चुका था। यह हमारे फौजी उसूलों के विकास की एक नई मंजिल का द्योतक था। उसकी विषय-वस्तु को काफी समृद्ध किया गया और उसके रूप में काफी परिवर्तन किया गया। यह मुख्यतः इस अर्थ में हुआ कि अब वह पहले के अपने सीधे-सादेपन से आगे बढ़ गया था। लेकिन फिर भी बुनियादी उसूल वही सोलह अक्षरों वाला फार्मूला था। उसमें "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम का मुकाबला करने के बुनियादी उसूल मौजूद थे ; उसमें ये दोनों दौर–रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक आक्रमण – मौजूद थे ; और रक्षा करने के दौरान रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना और रणनीतिक प्रत्याक्रमण करना, ये दोनों दौर भी उसमें मौजूद

थे। जो कुछ बाद में सामने आया वह इसी फार्मूले का विकास मात्र था।

लेकिन पार्टी द्वारा स्वीकृत " 'घेरा डालने और विनाश करने' की तीसरी मुहिम को शिकस्त देने के बाद एक या अनेक प्रान्तों में पहले विजय प्राप्त करने का संघर्ष" शीर्षक प्रस्ताव, जिसमें गम्भीर सैद्धान्तिक भूलें थीं, प्रकाशित होने के बाद जनवरी १९३२ से "वामपंथी" अवसरवादियों ने पहले सही उसूलों के इस सिलसिले पर हमला करना शुरू किया और अन्त में उन्हें अमान्य ठहरा दिया। उन्होंने इसके विपरीत तथाकथित "नए उसूलों" अथवा "नियमित उसूलों" का एक पूरा सिलसिला रच डाला। तब से पुराने उसूल नियमित नहीं समझे जाने लगे और उन्हें "छापामारवाद" कहकर ठुकरा दिया गया। पूरे तीन साल तक "छापामारवाद" के विरोध का वातावरण छाया रहा। इस दौर की पहली मंजिल में फौजी दुस्साहसवाद का प्रादुर्भाव हुआ, दूसरी मंजिल में वह फौजी रूढ़िवाद बन गया, तथा अन्त में तीसरी मंजिल में वह पलायनवाद के रूप में प्रकट हुआ। जनवरी १९३५ में, जब क्वेइचग्रो प्रान्त के चुनई में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की विस्तृत मीटिंग बुलाई गई, तभी इस गलत कार्यदिशा को दिवालिया घोषित किया गया और पुरानी कार्यदिशा के सही होने की फिर से पुष्टि की गई। लेकिन इसके लिए कितनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी!

जो साथी "छापामारवाद" का बड़े जोश के साथ विरोध करते थे, वे यह तर्क देते थे: दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देना गलत है, क्योंकि इससे हमें बहुत सा प्रदेश छोड़कर हटना पड़ता है। यद्यपि पहले इस तरह लड़ाइयां जीती गई

थीं, लेकिन क्या वर्तमान परिस्थिति पहले से भिन्न नहीं है? इसके अलावा क्या प्रदेश छोड़े बिना शत्रु को परास्त करना ज्यादा अच्छा नहीं है? और क्या इससे भी अच्छा यह नहीं है कि हम शत्रु को उसी के प्रदेश में अथवा उसके और अपने प्रदेशों के सीमान्त पर परास्त कर दें? पुराने उपायों में नियमितता का अभाव था; वे केवल छापामारों के लिए उपयुक्त थे। अब हमारा अपना राज्य कायम हो गया है और हमारी लाल सेना एक नियमित सेना बन गई है। च्याङ काई-शेक के खिलाफ हमारी लड़ाई दो राज्यों के बीच की लड़ाई, दो बड़ी सेनाओं के बीच की लड़ाई हो गई है। इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए और "छापामारवाद" को पूरी तरह त्याग देना चाहिए। नए उसूल "पूर्णतया मार्क्सवादी" हैं, जबकि पुराने उसूलों को छापामारों ने पहाड़ों में गढ़ा था जहां मार्क्सवाद का अस्तित्व नहीं था। नए उसूल पुराने उसूलों के उल्टे हैं: "दस का एक से मुकाबला कराओ और सौ का दस से मुकाबला कराओ, जमकर और बहादुरी से लड़ो तथा जोरों से दुश्मन का पीछा करके अपनी विजय से अधिकाधिक लाभ उठाओ"; "सभी मोर्चों से हमला करो"; "केन्द्रीय नगरों पर कब्जा कर लो"; और "दोनों मुक्कों से दोनों दिशाओं में प्रहार करो"। जब शत्रु हमला करता था तो उसका मुकाबला करने के उपाय ये थे: "शत्रु को देश के बाहर ही रोक दो", "दुश्मन पर पहले प्रहार करके पहलकदमी प्राप्त करो", "अपने बर्तन-भांडे मत फूटने दो", "एक इंच भी जमीन मत छोड़ो", "अपने सैन्य-दल को छै मार्गों में विभक्त करो"। यह "क्रान्तिकारी मार्ग और औपनिवेशिक मार्ग के बीच की निर्णायक लड़ाई" है। यह तुरत-फुरत प्रहार करने वाली लड़ाई, किलेबन्दियों की लड़ाई, घिसाव-थकाव की लड़ाई, तथा

"दीर्घकालीन युद्ध" है। इसके अलावा बड़ी पृष्ठभागीय संस्थाएं और एकदम केन्द्रित कमान बनाए रखने की नीति अपनाम्रो। और अन्त में बड़े पैमाने पर "गृह-परिवर्तन" करो। जो भी इन सिद्धान्तों को न माने उसे दण्ड दिया जाए और अवसरवादी होने का फतवा दिया जाए, इत्यादि।

निस्सन्देह ये सब सिद्धान्त और व्यवहार गलत हैं। और ये मनोगत-वाद ही हैं। अनुकूल परिस्थितियों में ये निम्न-पूंजीवादी क्रान्तिकारी उन्माद और उतावलेपन के द्योतक हैं। लेकिन प्रतिकूल परिस्थितियों में जब हालत बिगड़ती है, तो ये क्रमश: जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता, रूढ़िवाद और पलायनवाद के रूप में प्रकट होते हैं। ये सिद्धान्त और व्यवहार सिरफिरों और अनभिज्ञों के हैं। इनमें लेशमात्र भी मार्क्सवाद मौजूद नहीं है; निस्सन्देह ये मार्क्सवाद-विरोधी हैं।

यहां हम केवल रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने पर विचार करेंगे। क्याङशी में इसे "दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देना" कहते थे और सछ्वान में "मोर्चे को सिकोड़ना" कहते थे। पहले किसी भी सैनिक सिद्धान्तकार अथवा व्यावहारिक सैनिक ने इस बात से इनकार नहीं किया कि यह नीति युद्ध की शुरु-आत की मंजिल में शक्तिशाली सेना के विरुद्ध कमजोर सेना के लिए आवश्यक है। विदेश के एक फौजी विशेषज्ञ ने इस बात को यों पेश किया है कि "रणनीतिक रक्षात्मक कार्यवाही में आम तौर पर शुरू में प्रतिकूल निर्णायक लड़ाइयों से बचा जाता है और उन्हें तभी लड़ा जाता है जब परिस्थितियां अनुकूल हो गई हों"। यह बिलकुल सही है और हमें इस सिलसिले में कुछ भी और नहीं कहना है।

रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने का उद्देश्य होता है अपनी फौजी शक्ति को सुरक्षित रखना और प्रत्याक्रमण की तैयारी करना। पीछे हटना इसलिए जरूरी होता है क्योंकि शक्तिशाली दुश्मन के धावा बोलने पर एक भी कदम पीछे न हटने का अनिवार्य परिणाम यह होगा कि फौजी शक्ति का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा। लेकिन पिछले दिनों बहुत से लोग पीछे हटने का जी-तोड़ विरोध करते रहे। वे समझते थे कि पीछे हटना "विशुद्ध रक्षा की अवसर-वादी कार्यदिशा" है। हमारे इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि वे बिलकुल गलती पर थे।

प्रत्याक्रमण की तैयारी करने के लिए हमें अपने अनुकूल किन्तु शत्रु के प्रतिकूल कुछ परिस्थितियां चुननी और बनानी चाहिए, जिससे कि अपनी और शत्रु की तुलनात्मक शक्ति में परिवर्तन हो, और तब हम प्रत्याक्रमण के दौर में प्रवेश कर सकें।

अपने पिछले अनुभव के आधार पर, पीछे हटने के दौर में आम तौर पर जब हम निम्नलिखित शर्तों में से कम से कम दो को हासिल कर लें, सिर्फ तभी परिस्थिति हमारे अनुकूल और शत्रु के प्रतिकूल समझी जा सकती है और हम प्रत्याक्रमण कर सकते हैं। ये शर्तें इस प्रकार हैं:

(१) जनता लाल सेना का सक्रियता से समर्थन करे;

(२) धरातल फौजी कार्यवाही के अनुकूल हो;

(३) लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति पूरी तरह केन्द्रित हो;

(४) शत्रु के कमजोर स्थलों को पहचान लिया जाए;

(५) शत्रु को थका दिया जाए और उत्साहहीन बना दिया जाए ; और

(६) शत्रु को भुलावा देकर उससे गलतियां कराई जाएं।

इनमें पहली शर्त, यानी जनता द्वारा सक्रियता से समर्थन, लाल सेना के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है उसके पास एक आधार-क्षेत्र होना चाहिए। यदि यह शर्त पूरी हो गई तो चौथी, पांचवीं और छठी शर्तें आसानी से तैयार की जा सकती हैं या उनका पता लगाया जा सकता है। इसलिए जब भी शत्रु बड़े पैमाने पर आक्रमण शुरू करता है, तो लाल सेना आम तौर पर श्वेत इलाके से पीछे हटकर आधार-क्षेत्र में चली आती है, कारण यह कि आधार-क्षेत्र की जनता श्वेत सेना के खिलाफ लड़ाई में लाल सेना की सबसे सक्रिय समर्थक होती है। जो भाग आधार-क्षेत्र की सीमा के पास हैं और जो उसके केन्द्र में हैं, उनमें भी अन्तर होता है ; सूचनाओं को शत्रु तक न पहुंचने देने, फौजी टोह लेने, सामान की ढुलाई करने, लड़ाई में हिस्सा लेने, आदि में सीमान्त की अपेक्षा केन्द्र की जनता बेहतर होती है। यही कारण है कि च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली, दूसरी और तीसरी मुहिमों का मुकाबला करने के लिए "पीछे हटने के विराम-स्थल" वहां निश्चित किए गए थे जहां पहली शर्त, यानी जनता के समर्थन की स्थिति सबसे अच्छी या अपेक्षाकृत अच्छी थी। आधार-क्षेत्र की इस विशेषता के कारण लाल सेना की फौजी कार्यवाहियों में काफी परिवर्तन हुए, जो सामान्य फौजी कार्यवाहियों से भिन्न थे। यही इस बात का भी मुख्य कारण था कि आगे

चलकर शत्रु को किलेबन्दी-लड़ाई की नीति अपनानी पड़ी।

भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर फौजी कार्यवाही करने में एक खूबी यह है कि पीछे हटती हुई फौज स्वच्छंदता से अनुकूल धरातल चुन सकती है और अपनी इच्छा के अनुसार आक्रमणकारी सेना को कार्यवाही करने पर मजबूर कर सकती है। एक शक्तिशाली सेना को पराजित करने के लिए कमजोर सेना को चाहिए कि वह लड़ाई के लिए अनुकूल धरातल को बड़ी सावधानी से चुने। लेकिन यह शर्त अपने आपमें काफी नहीं है ; इसके साथ कुछ और शर्तें भी पूरी करनी चाहिए। उनमें पहली शर्त है जनता द्वारा समर्थन की स्थिति। उसके बाद दूसरी शर्त है एक ऐसा शत्रु जिस पर प्रहार करने में आसानी से सफलता मिल सके, उदाहरण के लिए एक ऐसा शत्रु जो थककर चूर हो गया हो या जिसने गलतियां की हों अथवा शत्रु का आगे बढ़ता हुआ एक ऐसा कालम जिसकी युद्ध-क्षमता अपेक्षाकृत कम हो। जब तक ये शर्तें पूरी नहीं होतीं, तब तक धरातल चाहे कितना भी उत्तम क्यों न हो, हमें उसकी उपेक्षा करनी चाहिए और अपेक्षित शर्तें पूरी होने तक बराबर पीछे हटते रहना चाहिए। श्वेत इलाकों में अनुकूल धरातल की कमी नहीं है, लेकिन वहां जनता द्वारा सक्रिय समर्थन की अनुकूल स्थिति का अभाव है। जब तक दूसरी अनुकूल स्थितियां पैदा नहीं होतीं या उनका पता नहीं लगाया जाता, तब तक लाल सेना के पास इसके अलावा दूसरा कोई चारा नहीं है कि वह अपने आधार-क्षेत्र में पीछे हट जाए। आधार-क्षेत्र के सीमान्त और केन्द्रीय भागों के बीच भी आम तौर पर ऐसा ही अन्तर होता है।

स्थानीय फौजी यूनिटों और शत्रु को रोके रखने वाले सैन्य-दलों

को छोड़कर, हमें अपनी बाकी सभी आक्रमण करने वाली फौजों के सम्पूर्ण केन्द्रीकरण के उसूल पर अमल करना चाहिए। जब शत्रु रणनीतिक रक्षा कर रहा हो, तब उस पर आक्रमण करने के दौरान लाल सेना अक्सर अपनी शक्ति बिखेर देती है। जब शत्रु बड़े पैमाने में हम पर आक्रमण शुरू कर दे, तो लाल सेना "केन्द्र की ओर पीछे हटने" लगती है। पीछे हटने का विराम-स्थल आम तौर पर आधार-क्षेत्र के केन्द्रीय भाग में होता है, लेकिन कभी-कभी उसके सामने के भाग या पृष्ठभाग में होता है, जैसी भी परिस्थिति की मांग हो। केन्द्र की ओर इस तरह पीछे हटने से लाल सेना के सभी मुख्य सैन्य-दलों को केन्द्रित किया जा सकता है।

शक्तिशाली शत्रु से लड़ने वाली कमजोर सेना के लिए एक और आवश्यक शर्त यह है कि वह आक्रमण के लिए दुश्मन की कमजोर यूनिटों को तलाश करे। लेकिन शत्रु के हमले के आरम्भ में हमें अक्सर इस बात का पता नहीं होता कि शत्रु के आगे बढ़ते हुए कालमों में सबसे ज्यादा शक्तिशाली कौन है और उससे कम शक्तिशाली कौन है, सबसे ज्यादा कमजोर कौन है और उससे कम कमजोर कौन है। इसके लिए फौजी टोह लेने की एक प्रक्रिया आवश्यक होती है। इस उद्देश्य को पूरा करने में अक्सर बहुत समय लग जाता है। यह एक अन्य कारण है जिसकी वजह से रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना आवश्यक हो जाता है।

यदि हमलावर दुश्मन संख्या और शक्ति दोनों में हमसे बहुत ज्यादा बढ़कर हो, तो दोनों की तुलनात्मक शक्ति का अनुपात बदलने का लक्ष्य हम तभी पूरा कर सकते हैं जब शत्रु-सेना हमारे आधार-क्षेत्र में दूर तक घुस आई हो और आधार-क्षेत्र में ठहरने

का पूरा मजा चख चुकी हो—जैसा कि "घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम के दौरान च्याङ काई-शेक की फौज की एक ब्रिगेड के चीफ आफ स्टाफ ने कहा था, "तगड़े लोग थकान से चूर होकर दुबले हो गए हैं और दुबले लोग थकान से चूर होकर मौत के मुंह में जा चुके हैं", अथवा जैसा कि क्वोमिन्ताङ की "घेरा डालने और विनाश करने" वाली पश्चिमी मार्ग सेना के कमाण्डर-इन-चीफ छन मिङ-शू ने कहा था, "राष्ट्रीय सेना हर जगह अन्धेरे में टटोलती है, जबकि लाल सेना दिन-दहाड़े घूमा-फिरा करती है।" ऐसे समय शत्रु शक्तिशाली होते हुए भी बहुत ज्यादा कमजोर पड़ जाता है, उसके सैनिक थक जाते हैं, उसका हौसला पस्त हो जाता है, तथा उसके अनेक नाजुक स्थान उघड़ जाते हैं। लाल सेना कमजोर होते हुए भी विश्राम और शक्ति-संचय कर लेती है और थके हुए शत्रु की राह आराम से देखा करती है। तब तक आम तौर पर या तो दोनों पक्षों की तुलनात्मक शक्ति बराबर हो जाएगी या शत्रु की पूर्ण बरतरी उसकी अपेक्षाकृत बरतरी में बदल जाएगी और हमारी पूर्ण कमतरी हमारी अपेक्षाकृत कमतरी में बदल जाएगी, तथा कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि हम शत्रु से अधिक बरतर बन जाएं। च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम के खिलाफ लड़ते समय लाल सेना चरम सीमा तक पीछे हट गई (आधार-क्षेत्र के पिछले भाग में केन्द्रित हो गई)। इसके बिना वह शत्रु को पराजित नहीं कर सकती थी, क्योंकि "घेरा डालने और विनाश करने" वाली सेना संख्या में लाल सेना की अपेक्षा दस गुने से अधिक थी। जब सुन ऊ चि ने यह कहा था कि "जिस समय शत्रु उत्साह से भरा हो, उस समय उससे बचो; और जिस समय

वह थककर पीछे हट रहा हो, उस समय उस पर प्रहार करो", तो वह शत्रु की बरतरी कम करने के लिए उसे थकाने और उसका हौसला पस्त करने के तरीके की बात कह रहा था।

पीछे हटने का अन्तिम उद्देश्य है दुश्मन को भुलावा देकर उससे गलतियां करवाना या उसकी गलतियों का पता लगाना। हमें यह समझ लेना चाहिए कि शत्रु का कमाण्डर चाहे कितना भी बुद्धिमान क्यों न हो, उसके द्वारा अपेक्षाकृत लम्बी अवधि में कोई न कोई गलती न होना असम्भव है। इसलिए हमारे सामने हमेशा यह सम्भावना बनी रहती है कि हम शत्रु की भूलों से लाभ उठाएं। शत्रु भी गलतियां करता है जैसे कि कभी-कभी हम भी ऐसी गलतियां करते हैं जिनसे वह लाभ उठा सकता है। इसके अलावा हम अपने कौशल से शत्रु को गलती करने के लिए भुलावा दे सकते हैं। मसलन, जैसा कि सुन ऊ चि ने कहा है, "दिखावा करना" (अर्थात पूरब में कार्यवाही का दिखावा करो और पश्चिम में प्रहार करो, या दूसरे शब्दों में पूरब में हल्ला मचाओ और पश्चिम में धावा बोलो)। ऐसा करने में पीछे हटने का विराम-स्थल किसी निश्चित प्रदेश तक सीमित नहीं किया जा सकता। कभी-कभी पूर्व-निश्चित प्रदेश में पहुंच जाने तक शत्रु से ऐसी गलतियां नहीं होतीं जिनसे हम लाभ उठा सकें। ऐसी दशा में हमें और भी पीछे हट जाना चाहिए, जब तक कि शत्रु ऐसी भूलें न करे जिनसे हम लाभ उठा सकें।

पीछे हटते समय जिन अनुकूल स्थितियों को ढूंढ़ना चाहिए, वे आम तौर पर वही हैं जिनका वर्णन ऊपर किया गया है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि जब ये सभी स्थितियां मौजूद हों सिर्फ तभी प्रत्याक्रमण आरम्भ किया जा सकता है। इन सबको एक साथ प्राप्त

करना न तो सम्भव है और न आवश्यक ही। लेकिन शत्रु की वर्तमान परिस्थिति के अनुसार कुछ आवश्यक स्थितियों को प्राप्त करना ऐसी चीज है जिस पर शक्तिशाली शत्रु के खिलाफ भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर फौजी कार्यवाही करने वाली कमजोर सेना को ध्यान देना चाहिए। इसके विरुद्ध अन्य सभी मत गलत हैं।

इस बात का निर्णय सारी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए कि पीछे हटने का विराम-स्थल कहां हो। एक ऐसी जगह विराम-स्थल निश्चित करना गलत होगा जो आंशिक परिस्थिति – न कि पूरी परिस्थिति – की दृष्टि से प्रत्याक्रमण की अवस्था में प्रवेश करने के लिए अनुकूल हो। कारण यह कि अपने प्रत्याक्रमण के आरम्भ में हमें बाद में होने वाली घटनाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए, तथा हमारा प्रत्याक्रमण सदा ही आंशिक पैमाने पर आरम्भ होता है। कभी विराम-स्थल आधार-क्षेत्र के अग्रभाग में निश्चित करना चाहिए – जैसा कि च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ हमारी दूसरी और चौथी जवाबी मुहिमों में और शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र में हमारी तीसरी जवाबी मुहिम में हुआ था। कभी उसे आधार-क्षेत्र के मध्यभाग में निश्चित करना चाहिए – जैसा कि च्याङशी में हमारी पहली जवाबी मुहिम में हुआ था। और कभी आधार-क्षेत्र के पृष्ठभाग में निश्चित करना चाहिए – जैसा कि च्याङशी में हमारी तीसरी जवाबी मुहिम में हुआ था। इन सभी मुहिमों में आंशिक परिस्थिति का सम्पूर्ण परिस्थिति के साथ सम्बन्ध कायम करके ही विराम-स्थल निश्चित किए गए थे। लेकिन च्याङशी में हमारी पांचवीं जवाबी मुहिम में हमारी सेना ने पीछे हटने पर कोई विचार नहीं किया, कारण यह कि

उसने न तो आंशिक परिस्थिति पर ध्यान दिया था और न सम्पूर्ण परिस्थिति पर ही। यह वास्तव में अन्ध-उत्साह और जोखिमबाजी से की गई कार्यवाही है। परिस्थिति अनेक स्थितियों से बनती है; आंशिक परिस्थिति और सम्पूर्ण परिस्थिति के सम्बन्धों पर विचार करते समय हमें अपना निर्णय इस बात पर आधारित करना चाहिए कि शत्रु-पक्ष की स्थितियां और हमारे पक्ष की स्थितियां, जो आंशिक परिस्थिति और सम्पूर्ण परिस्थिति में प्रतिबिम्बित होती हैं, हमारे द्वारा प्रत्याक्रमण आरम्भ किए जाने के लिए किसी हद तक अनुकूल हैं अथवा नहीं।

आधार-क्षेत्र में विराम-स्थल सामान्य रूप से तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं: अग्रभाग वाले, मध्यभाग वाले और पृष्ठभाग वाले। क्या इसका यह अर्थ है कि हम श्वेत इलाकों में लड़ने से एकदम इनकार करते हैं? नहीं। श्वेत इलाकों में लड़ने से हम सिर्फ तभी इनकार करते हैं जब हमें शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की बड़े पैमाने की मुहिम का मुकाबला करना पड़ता है। जब हमारी और शत्रु की शक्ति में बहुत बड़ी असमानता हो, सिर्फ तभी हम अपनी फौजी शक्ति को सुरक्षित रखने, और शत्रु को परास्त करने के मौके की प्रतीक्षा करने के उसूल के आधार पर, इस बात की पैरवी करते हैं कि हम अपने आधार-क्षेत्र में पीछे हटते जाएं और दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने दें। कारण यह कि केवल ऐसा करके ही हम अपने प्रत्याक्रमण के लिए अनुकूल स्थितियां बना सकते हैं या उनका पता लगा सकते हैं। यदि परिस्थिति इतनी गम्भीर न हो, या इतनी गम्भीर हो कि अपने आधार-क्षेत्र में भी लाल सेना प्रत्याक्रमण आरम्भ न कर सके,

अथवा प्रत्याक्रमण ठीक तरह न चल रहा हो और परिस्थिति को बदलने के लिए कुछ और पीछे हटना जरूरी हो, तो उस समय हमें यह स्वीकार करना चाहिए, कम से कम सिद्धान्त के रूप में यह स्वीकार करना चाहिए कि पीछे हटने का विराम-स्थल श्वेत इलाके में निश्चित किया जा सकेगा, यद्यपि अब तक हमें इस तरह का अनुभव बहुत कम हुआ है।

श्वेत इलाकों में पीछे हटने के विराम-स्थल भी सामान्य रूप से तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं: (१) आधार-क्षेत्र के सामने वाले, (२) आधार-क्षेत्र के बाजू वाले, और (३) आधार-क्षेत्र के पीछे वाले। पहली श्रेणी के विराम-स्थल का एक उदाहरण इस प्रकार है:

> च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ पहली जवाबी मुहिम के समय यह सोचा जा सकता था कि हम चीआन, नानफ़ङ और चाङशू के त्रिकोण में अपना सैन्य-दल केन्द्रित करें और प्रत्याक्रमण शुरू कर दें, बशर्ते कि लाल सेना में फूट न होती और स्थानीय पार्टी-संगठन में दरार न होती, यानी ली ली-सान की कार्यदिशा और ए-बी ग्रुप[११] द्वारा पैदा की गई दो कठिन समस्याएं न रही होतीं। कारण यह कि उस समय कानच्याङ और फ़ूश्वेइ नदियों के बीच[१४] जो शत्रु-सेना बढ़ती आ रही थी, उसकी शक्ति लाल सेना से बहुत ज्यादा बढ़-चढ़ कर न थी (४०,००० के विरुद्ध १,००,०००)। हालांकि आधार-क्षेत्र की तुलना में वहां जनता का समर्थन उतना ज्यादा नहीं था, फिर भी धरातल की स्थिति अनुकूल थी। इसके अलावा

शत्रु के सैन्य-दल अलग-अलग कालमों में बढ़ते आ रहे थे, इसलिए उन्हें एक-एक करके नष्ट कर देना सम्भव था।

अब दूसरी श्रेणी के विराम-स्थल का एक उदाहरण लीजिए :

च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ हमारी तीसरी जवाबी मुहिम के समय यदि शत्रु का हमला उतने बड़े पैमाने पर न हुआ होता, शत्रु का एक कालम फ़ूच्येन-च्याङशी सीमान्त पर स्थित च्येननिङ, लीछ्वान और थाएनिङ से बढ़ता आता और उस कालम की शक्ति ऐसी होती कि वह हमारे आक्रमण का योग्य लक्ष्य बन पाता, तो यह सोचा जा सकता था कि लाल सेना श्वेत इलाके के भीतर पश्चिमी फ़ूच्येन में अपना सैन्य-दल केन्द्रित करे, और वह रुइचिन से होकर शिङक्वो तक एक हजार ली का भारी चक्कर काटने के बजाय पहले ही शत्रु के उस कालम का सफाया कर देती।

अन्त में तीसरी श्रेणी के विराम-स्थल का एक उदाहरण लीजिए :

च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ तीसरी जवाबी मुहिम के समय यदि शत्रु का मुख्य सैन्य-दल पश्चिम की तरफ न जाकर दक्षिण की ओर बढ़ा होता, तो यह सम्भव था कि हमें बाध्य होकर ह्वेइछाङ-श्युनऊ-आनयुआन क्षेत्र में (जो श्वेत इलाका था) पीछे हटना पड़ता जिससे कि हम शत्रु को भुलावा देकर और भी दक्षिण की ओर ले जा सकते। तब लाल सेना दक्षिण से उत्तर की ओर आधार-क्षेत्र के भीतर प्रहार कर सकती थी। उस समय तक उत्तर के आधार-क्षेत्र में शत्रु-दल बहुत बड़ा न रह जाता।

ये सभी उदाहरण काल्पनिक हैं। ये वास्तविक अनुभव पर आधारित नहीं हैं ; हम उन्हें अपवाद रूप में ही ले सकते हैं, उन्हें सामान्य उसूलों का रूप नहीं दे सकते। जब दुश्मन "घेरा डालने और विनाश करने" की बड़े पैमाने की मुहिम शुरू करे, तो हमारे लिए सामान्य उसूल यह होगा कि हम उसे भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने दें, आधार-क्षेत्र में पीछे हट जाएं और तब उससे लड़ाई करें। कारण यह कि दुश्मन के आक्रमण को विध्वस्त करने के लिए सबसे पक्का तरीका यही है।

जो लोग इस धारणा का समर्थन करते हैं कि "शत्रु को देश के बाहर ही रोक दिया जाए", वे रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने का विरोध इस आधार पर करते हैं कि पीछे हटने का अर्थ होता है – अपना प्रदेश खो बैठना, जनता को नुकसान पहुंचने देना ("हमारे बर्तन-भांड़े फूटने देना" जैसा कि वे लोग कहते हैं) और बाहर के लोगों में प्रतिकूल प्रभाव पड़ने देना। "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ हमारी पांचवीं जवाबी मुहिम के दौरान उनकी दलील यह थी कि हर बार हमारे एक कदम पीछे हटने पर शत्रु की किलेबन्दियों की पांत एक कदम और आगे बढ़ आएगी ; इस तरह प्रतिदिन आधार-क्षेत्र संकुचित होता जाएगा और अपनी क्षति पूरी करने का कोई भी उपाय हमारे पास नहीं रहेगा। उनका कहना था कि दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देना अतीत काल में भले ही लाभदायी रहा हो, लेकिन "घेरा

डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम में, जब शत्रु किलेबन्दी-लड़ाई की नीति का सहारा ले रहा था, यह तरीका बेकार था। "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम का मुकाबला करने के लिए एकमात्र उपाय यह था कि अपनी सैन्य-शक्ति को अलग-अलग हिस्सों में विभक्त करके दुश्मन का प्रतिरोध किया जाए और तुरत-फुरत प्रहार किया जाए।

इस तरह की धारणाओं का जवाब देना आसान है, और हमारा इतिहास पहले ही उनका जवाब दे चुका है। जहां तक प्रदेश खोने का सम्बन्ध है, अक्सर यह होता है कि क्षति उठाकर ही क्षति से बचा जा सकता है ; यह वही उसूल है कि "पाने के लिए पहले खोना होता है"। जो खोना है यदि वह प्रदेश है और जो पाना है यदि वह शत्रु पर विजय प्राप्त करना तथा साथ ही प्रदेश को फिर से प्राप्त करना और उसका प्रसार करना भी है, तो यह एक लाभदायक व्यापार है। सौदे के मामले में ग्राहक यदि पैसा न "खोए" तो उसे माल नहीं मिलता ; और बेचने वाला अगर अपना माल न "खोए" तो उसे पैसा नहीं मिलता। क्रान्तिकारी आन्दोलन में जो हानि उठाई जाती है वह विध्वंस है, जो उसे प्राप्त होता है वह प्रगतिशील नव-निर्माण है। सोने और आराम करने में समय खर्च होता है, फिर भी कल के काम के लिए उससे शक्ति प्राप्त होती है। यदि कोई मूर्ख यह बात न समझकर सोने से इनकार कर दे, तो दूसरे दिन वह अशक्त हो जाएगा। यह एक हानिकर व्यापार होगा। ठीक इसी कारण शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के खिलाफ अपनी जवाबी मुहिम में हमारा व्यापार हानिकर था। अपने प्रदेश का कुछ भाग खोने में आनाकानी करने से समूचे प्रदेश से हाथ

धोना पड़ा। अबीसीनिया को अपना सारा प्रदेश इसलिए खोना पड़ा कि उसने बिना पीछे हटे सीधी टक्कर लेकर युद्ध किया, हालांकि उसकी पराजय का यही एकमात्र कारण नहीं था।

जनता को हानि पहुंचने देने की समस्या पर भी यही बात लागू होती है। यदि हम कुछ परिवारों के बर्तन-भांड़े कुछ दिनों तक फूटने नहीं देंगे, तो सारी जनता के बर्तन-भांड़े बहुत दिनों तक फूटते रहेंगे। अस्थाई रूप से लोगों में प्रतिकूल राजनीतिक प्रभाव पड़ने देने से डरने का परिणाम यह होगा कि उन पर बहुत दिनों तक प्रतिकूल राजनीतिक प्रभाव पड़ता रहेगा। अक्तूबर क्रान्ति के बाद यदि रूसी बोलशेविकों ने "वामपंथी कम्युनिस्टों" के सुझाव को मान लिया होता और जर्मनों के साथ शान्ति-सन्धि पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया होता, तो उन्होंने नवजात सोवियतों के लिए तात्कालिक सर्वनाश का खतरा मोल ले लिया होता।[१५]

इस तरह के ऊपर से क्रान्तिकारी लगने वाले "वामपंथी" विचारों का स्रोत निम्न-पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों का क्रान्तिकारी उतावलापन तथा किसान छोटे उत्पादकों का संकीर्ण रूढ़िवाद है। इस प्रकार के लोग समस्या के केवल एक अंश को देखते हैं, उसकी सम्पूर्ण स्थिति को देखने में वे असमर्थ होते हैं ; वे आज के हित को कल के हित से, अथवा आंशिक हितों को सम्पूर्ण हितों से जोड़ना नहीं चाहते तथा आंशिक और अस्थाई से दृढ़ता के साथ चिपके रहते हैं। यह सही है कि हमें उन आंशिक और अस्थाई चीजों पर मजबूत गिरफ्त रखनी चाहिए जो उस समय की ठोस परिस्थिति में उस समय की सम्पूर्ण स्थिति व समूचे दौर के लिए लाभदायक हों, और विशेषकर निर्णायक महत्व की हों। वरना हम इस बात की

पैरवी करने लगेंगे कि घटना-क्रम को उसके अपने ही भरोसे छोड़ दिया जाए और इस बारे में कुछ भी न किया जाए। इसी कारण पीछे हटने का एक विराम-स्थल होना चाहिए। लेकिन हमें छोटे उत्पादक की अदूरदर्शिता पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। हमें बोलशेविकों की बुद्धिमत्ता सीखनी चाहिए। खाली आंखें ही काफी नहीं होतीं, हमें दूरबीन और खुर्दबीन की सहायता भी लेनी चाहिए। राजनीतिक और फौजी मामलों में मार्क्सवाद की पद्धति हमारे लिए दूरबीन और खुर्दबीन का काम देती है।

अवश्य ही रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने में कठिनाइयां हैं। पीछे हटने की शुरुआत का समय निर्धारित करना, विराम-स्थल का चुनाव करना, कार्यकर्ताओं और जनता को राजनीतिक रूप से समझाना – ये सभी कठिन समस्याएं हैं जिन्हें हल करना होगा।

पीछे हटने की शुरुआत का समय निर्धारित करने की समस्या बहुत महत्वपूर्ण है। च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ पहली जवाबी मुहिम में यदि हमने ठीक समय पर पीछे हटना आरम्भ न किया होता, यानी उसमें देर हो जाती, तो हमारी जीत कम से कम उस पैमाने पर न हो पाती। समय से पहले पीछे हटना और देर से पीछे हटना, दोनों ही हानिकर हैं। लेकिन देर से पीछे हटना, समय से पहले पीछे हटने की अपेक्षा आम तौर पर ज्यादा हानिकर है। समय पर पीछे हटने से पहलकदमी पूरी तरह हमारे हाथ में रहती है। इस प्रकार विराम-स्थल में पहुंचने के बाद अपनी सैन्य-शक्ति को फिर से व्यवस्थित करने और थके हुए शत्रु की राह आराम से देखने पर, प्रत्याक्रमण की अवस्था में प्रवेश करने में हमें बड़ी मदद मिलती है। च्याङशी में शत्रु की "घेरा डालने और

विनाश करने" की पहली, दूसरी और चौथी मुहिमों को नष्ट करने में हम बड़े आत्मविश्वास के साथ और बिना किसी जल्दबाजी के शत्रु से निपट सके थे। लेकिन तीसरी मुहिम में हम यह आशा नहीं करते थे कि दूसरी मुहिम में इतनी करारी हार खाने के बाद वह इतनी जल्दी अपना नया आक्रमण आरम्भ कर देगा (हमने अपनी दूसरी जवाबी मुहिम २९ मई १९३१ को समाप्त की थी और च्याङ काई-शेक ने "घेरा डालने और विनाश करने" की अपनी तीसरी मुहिम १ जुलाई को शुरू की थी), इसलिए लाल सेना बहुत जल्दी-जल्दी चक्करदार रास्ते तय करके एकत्र होने के कारण बहुत थक गई। पीछे हटने का समय निश्चित करने का तरीका ठीक वैसा ही होता है जैसे उपर्युक्त जवाबी मुहिम की तैयारी के दौर की शुरुआत का समय निश्चित करने का तरीका, अर्थात यह पूरी तरह आवश्यक सामग्री इकट्ठा करने पर निर्भर है, तथा शत्रु-पक्ष और अपने पक्ष की आम स्थिति को देखते हुए फैसले लेने पर निर्भर है।

जब तक कार्यकर्ताओं और जनता को अनुभव नहीं हो जाता और जब तक सेना का नेतृत्व इतना प्रतिष्ठावान और अधिकारपूर्ण नहीं हो जाता कि वह रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने का फैसला करने के अधिकार को थोड़े से व्यक्तियों या एक ही व्यक्ति के हाथ में केन्द्रित कर दे तथा साथ ही कार्यकर्ताओं का विश्वास प्राप्त कर ले, तब तक रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने की आवश्यकता के बारे में कार्यकर्ताओं और जनता को समझाना बहुत ही कठिन होता है। कार्यकर्ताओं में अनुभव की कमी होने और रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने में उनका विश्वास न होने की वजह से पहली और

चौथी जवाबी मुहिमों के आरम्भ में और पांचवीं जवाबी मुहिम के पूरे दौर में इस समस्या को हल करने में भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पहली जवाबी मुहिम में जब तक कार्यकर्ताओं को पीछे हटने की आवश्यकता का विश्वास नहीं दिलाया गया, तब तक ली ली-सान की कार्यदिशा के असर के कारण वे पीछे हटने के पक्ष में नहीं बल्कि आक्रमण के पक्ष में थे। चौथी जवाबी मुहिम में, फौजी दुस्साहसवाद के असर के कारण, कार्यकर्ताओं ने पीछे हटने की तैयारियां करने का विरोध किया। पांचवीं जवाबी मुहिम में कार्यकर्ता पहले फौजी दुस्साहसवाद पर अड़े रहे, वे दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देने के दृष्टिकोण का विरोध करते थे, लेकिन आगे चलकर वे सैनिक रूढ़िवादी बन गए। इसकी एक और ठोस मिसाल यह है कि चाङ क्वो-थाओ की कार्यदिशा पर चलने वाले लोग जब तक दीवार से नहीं टकरा गए, तब तक वे इसे नहीं मानते थे कि तिब्बती लोगों और ह्वेइ लोगों[१६] के प्रदेशों में हमारे आधार-क्षेत्र कायम किया जाना असम्भव है। कार्यकर्ताओं के लिए अनुभव आवश्यक है और सचमुच असफलता ही सफलता की जननी है। लेकिन खुले दिमाग से दूसरों के अनुभव से सीखना भी जरूरी है। हर मामले में केवल खुद अनुभव प्राप्त करने पर अड़े रहना और इसके अभाव में केवल अपनी ही राय पर हठधर्मी के साथ अड़े रहना और दूसरों के अनुभव से सीखने से इनकार करना सरासर "संकीर्ण अनुभववाद" ही है। इससे हमारे युद्ध को कम हानि नहीं हुई है।

अनुभव की कमी के कारण रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने की आवश्यकता पर जनता के अविश्वास की सबसे ज्यादा जीती-जागती मिसाल च्याङशी की पहली जवाबी मुहिम के समय मिलती है। उस समय चीआन, शिङक्वो और युङफ़ङ काउन्टियों के सभी स्थानीय पार्टी-संगठन और समूचा जन-समुदाय लाल सेना के पीछे हटने का विरोध कर रहे थे। लेकिन पहली जवाबी मुहिम में जब एक बार अनुभव प्राप्त हो गया, तो बाद की कई जवाबी मुहिमों में इस तरह की समस्या नहीं उठी। सभी को विश्वास हो गया कि आधार-क्षेत्र का हाथ से निकल जाना और जनता की मुसीबतें अस्थाई हैं और लाल सेना दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों को नष्ट करने में समर्थ है। लेकिन जनता को विश्वास है अथवा नहीं इसका घनिष्ठ सम्बन्ध इस बात से है कि कार्यकर्ताओं को विश्वास है अथवा नहीं। इसलिए पहला और मुख्य काम कार्यकर्ताओं को विश्वास दिलाना है।

रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने का एकमात्र उद्देश्य उलटकर प्रत्याक्रमण करना है तथा रणनीति की दृष्टि से पीछे हटना रण-नीतिक रक्षा का केवल पहला दौर होता है। समूची रणनीति में निर्णायक कड़ी यह है कि आगे आने वाले प्रत्याक्रमण के दौर में विजय प्राप्त होगी या नहीं।

४. रणनीतिक प्रत्याक्रमण

नितान्त बरतर शत्रु के आक्रमण को विफल करने के लिए हम उस परिस्थिति पर निर्भर रहते हैं जो रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने के दौर में पैदा होती है, एक ऐसी परिस्थिति जो हमारे अनुकूल और शत्रु के प्रतिकूल होती है तथा शत्रु के आक्रमण के आरम्भिक

दौर के मुकाबले बदली हुई होती है। यह अनेक तत्वों से मिलकर बनती है। उन सबका उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं।

लेकिन अपने लिए अनुकूल और शत्रु के लिए प्रतिकूल स्थितियों और परिस्थिति के होने से अभी यह साबित नहीं हो जाता कि हम शत्रु को परास्त कर चुके हैं। इस तरह की स्थितियों और परिस्थिति में हमारी विजय या शत्रु की पराजय की सम्भावनाएं निहित होती हैं, लेकिन विजय और पराजय अभी वास्तविकता नहीं बन पाईं; दोनों सेनाओं के लिए विजय या पराजय ने अभी वास्तविकता का रूप नहीं लिया। विजय या पराजय की सम्भावना को वास्तविकता का रूप देने के वास्ते दोनों सेनाओं के बीच एक निर्णायक लड़ाई की आवश्यकता है। निर्णायक लड़ाई से ही इस प्रश्न का समाधान होगा कि कौन सी सेना विजयी है और कौन सी पराजित। रणनीतिक प्रत्याक्रमण के दौर में यही एकमात्र कार्य है। प्रत्याक्रमण एक लम्बा सिलसिला है; वह रक्षात्मक मुहिम का एक सबसे आकर्षक, सबसे गतिशील दौर है और उसका अन्तिम दौर भी है। जिसे सक्रिय रक्षा कहते हैं, वह मुख्यतया यही रणनीतिक प्रत्याक्रमण है, जो स्वरूप में निर्णायक लड़ाई जैसा होता है।

स्थितियां और परिस्थिति केवल रणनीति की दृष्टि से पीछे हटने के दौर में ही नहीं रची जातीं; प्रत्याक्रमण के दौर में भी उनकी रचना जारी रहती है। इस दूसरे दौर में स्थितियां और परिस्थिति अपने रूप और स्वरूप में बिलकुल वैसी ही नहीं होतीं जैसी पहले दौर में थीं।

रूप और स्वरूप में जो चीज एक जैसी रह सकती है, वह मिसाल के लिए यह है कि शत्रु की सेना और भी थकी होगी तथा संख्या में

और भी कम हो जाएगी। पहले दौर में जो थकने और संख्या में कम होने का सिलसिला शुरू हुआ था, यह उसी का जारी रूप है।

लेकिन यह निश्चित है कि बिलकुल नई स्थितियां और बिलकुल नई परिस्थिति अवश्य पैदा होंगी। मिसाल के लिए, जब एक या अधिक बार शत्रु हार चुकेगा, तब हमारे लिए अनुकूल और शत्रु के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों में न केवल शत्रु का थकना आदि शामिल होगा, बल्कि इसके अलावा शत्रु के हार जाने का एक नया तत्व भी जुड़ गया होगा। परिस्थिति में नई तब्दीलियां भी पैदा हो जाएंगी। शत्रु-सेना जब अव्यवस्थित रूप से फौजी दांवपेंच खेलती है और गलत सैन्य-संचालन कर बैठती है तो स्वभावतः दोनों पक्षों की तुलनात्मक शक्ति भी पहले से भिन्न हो जाती है।

लेकिन शत्रु के बदले यदि हम ही एक या अधिक बार हारें, तो स्थितियां और परिस्थिति विपरीत दिशा में बदल जाती हैं। इसका अर्थ यह है कि शत्रु के लिए प्रतिकूल बातें कम हो जाती हैं और हमारे लिए प्रतिकूल बातें पैदा हो जाती हैं और बढ़ भी जाती हैं। यह फिर एक बिलकुल नई और पहले से भिन्न वस्तु होगी।

हार चाहे किसी भी पक्ष की हो, हारने वाला पक्ष सीधे और तुरत एक नया प्रयत्न करेगा ही, ताकि वह विनाशकारी स्थिति से बच सके, नई पैदा होने वाली स्थितियों और परिस्थिति से, जो कि उसके लिए प्रतिकूल और शत्रु के लिए अनुकूल हैं, अपने को उबार सके और विपक्षी पर दबाव डालने के लिए ऐसी स्थितियों और परिस्थिति का पुनर्निर्माण कर सके जो उसके लिए अनुकूल और शत्रु के लिए प्रतिकूल हों।

जीतने वाले पक्ष का प्रयत्न इससे ठीक उल्टा होगा। वह प्रयत्न

करेगा कि अपनी विजय का विस्तार करे तथा शत्रु को और अधिक क्षति पहुंचाए, अपनी अनुकूल स्थितियों को बढ़ाए और अपनी अनुकूल परिस्थिति को और ज्यादा सुधारे ; वह प्रयत्न करेगा कि शत्रु को उसकी प्रतिकूल परिस्थिति से उबरने और विनाशकारी स्थिति से बचने से रोके।

इस तरह निर्णायक लड़ाई की मंजिल का संघर्ष दोनों ही पक्षों के लिए समूचे युद्ध अथवा समूची मुहिम में सबसे तीव्र, सबसे पेचीदा और सबसे परिवर्तनशील होता है, साथ ही यह सबसे कठिन और सबसे दुष्कर भी होता है ; कमान की दृष्टि से वह समूचे युद्ध या मुहिम का सबसे कठिन समय होता है।

प्रत्याक्रमण के दौर में बहुत सी समस्याएं मौजूद रहती हैं, जिनमें मुख्य ये हैं : प्रत्याक्रमण शुरू करना, सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण, चलायमान लड़ाई, तुरत निर्णय की लड़ाई और विनाश की लड़ाई।

प्रत्याक्रमण हो या आक्रमण, दोनों में ही इन समस्याओं से सम्बन्धित उसूल बुनियादी स्वरूप में एक ही होते हैं। इस अर्थ में हम यह कह सकते हैं कि प्रत्याक्रमण भी एक प्रकार का आक्रमण ही होता है।

फिर भी प्रत्याक्रमण ठीक आक्रमण जैसा ही नहीं होता। प्रत्याक्रमण के उसूल तब लागू किए जाते हैं जब शत्रु आक्रमण कर रहा होता है। आक्रमण के उसूल तब लागू किए जाते हैं जब शत्रु रक्षात्मक स्थिति में होता है। इस अर्थ में प्रत्याक्रमण और आक्रमण में थोड़ा बहुत अन्तर है।

इस कारण यद्यपि फौजी कार्यवाही से सम्बन्धित अनेक समस्याएं प्रत्याक्रमण की चर्चा करते समय रणनीतिक रक्षा के अध्याय के

अन्तर्गत शामिल कर ली गई हैं, और यद्यपि पुनरावृत्ति से बचने के लिए रणनीतिक आक्रमण के अध्याय के अन्तर्गत केवल दूसरी समस्याओं की ही चर्चा की गई है, फिर भी उन्हें लागू करते समय हमें न तो उनकी समानताओं को और न उनके अन्तर को ही नजर-अन्दाज करना चाहिए।

५. प्रत्याक्रमण शुरू करने की समस्या

प्रत्याक्रमण शुरू करने की समस्या "प्रारम्भिक लड़ाई" अथवा "प्रस्तावना" की समस्या है।

पूंजीपति वर्ग के बहुत से फौजी विशेषज्ञों ने प्रारम्भिक लड़ाई में, चाहे वह रणनीतिक रक्षा की हो अथवा रणनीतिक आक्रमण की, खास तौर से जब वह रक्षात्मक हो, सावधानी बरतने की सलाह दी है। पिछले दिनों हमने भी इस समस्या को गम्भीरता से उठाया था। च्याङशी में शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांच मुहिमों के खिलाफ हमने जो फौजी कार्यवाही की उससे हमें समृद्ध अनुभव प्राप्त हुआ है, जिसका अध्ययन बेकार न होगा।

पहली मुहिम में शत्रु के लगभग १,००,००० सैनिक आठ कालमों में बंटे हुए थे और उन्होंने चीआन-च्येननिङ लाइन से होकर उत्तर से दक्षिण की ओर लाल सेना के आधार-क्षेत्र पर आक्रमण किया। उस समय लाल सेना में लगभग ४०,००० सैनिक थे जो च्याङशी प्रान्त की निङतू काउन्टी के ह्वाङफी और श्याओपू इलाके में केन्द्रित थे।

उस समय परिस्थिति इस प्रकार थी :

(१) "दमन करने" वाली सेना १,००,००० से अधिक नहीं थी। उसमें च्याङ काई-शेक की निजी सेना की एक भी टुकड़ी नहीं थी। सामान्य परिस्थिति बहुत गम्भीर नहीं थी।

(२) लो लिन की कमान में शत्रु की एक डिवीजन, जो चीग्रान की रक्षा कर रही थी, कानच्याङ नदी के पार पश्चिम में तैनात थी।

(३) कुङ पिङ-फ़ान, चाङ ह्वेइ-चान और थान ताओ-य्वान की कमान में शत्रु की तीन डिवीजनों ने चीग्रान के दक्षिण-पूर्व और निङतू के उत्तर-पश्चिम में फ़ूथ्येन-तुङकू-लुङकाङ-य्वानथओ क्षेत्र पर आक्रमण करके उस पर कब्जा कर लिया था। चाङ ह्वेइ-चान की डिवीजन का मुख्य सैन्य-दल लुङकाङ में तैनात था और थान ताओ-य्वान की डिवीजन का मुख्य सैन्य-दल य्वानथओ में था। फ़ूथ्येन और तुङकू को रणभूमि बनाना उचित नहीं था, क्योंकि ए-बी ग्रुप ने वहां के लोगों को भ्रम में डाल रखा था, उन्हें अभी लाल सेना में विश्वास न था और वे उसका विरोध भी करते थे।

(४) ल्यू हो-तिङ की कमान में शत्रु की डिवीजन दूर फ़ूच्येन के श्वेत इलाके में च्येननिङ नामक स्थान में थी और वह शायद ही च्याङशी में प्रवेश करती।

(५) माओ पिङ-वन और श्वी ख-श्याङ की कमान में शत्रु की दो डिवीजनें क्वाङछाङ और निङतू के बीच थओफी-लोखओ-तुङशाओ क्षेत्र में पहुंच गई थीं। थओफी श्वेत इलाका था और लोखओ छापामार इलाका; तुङशाओ में ए-बी ग्रुप के तत्व मौजूद थे, इसलिए वह एक ऐसी जगह थी जहां से भेद की बात आसानी से बाहर पहुंच सकती थी। इसके अलावा अगर हम माओ पिङ-वन और श्वी ख-श्याङ को पछाड़ने के बाद पश्चिम की तरफ बढ़ते, तो यह सम्भव था कि पश्चिम में चाङ ह्वेइ-चान, थान ताओ-य्वान और कुङ पिङ-फ़ान की कमान में शत्रु की जो तीन डिवीजनें थीं, वे एक दूसरे से मिल जातीं; इससे हमारे लिए विजय पाना कठिन हो जाता और मसले को अन्तिम रूप से हल करना असम्भव हो जाता।

(६) चाङ ह्वेइ-चान और थान ताओ-य्वान की कमान में शत्रु की दो डिवीजनें, जो दुश्मन की फौज की मुख्य सैन्य-शक्ति थीं, लू ती-फिङ के निजी सैन्य-दल का अंग थीं। लू ती-फिङ "घेरा डालने और विनाश करने" की सेना का कमाण्डर-इन-चीफ और च्याङशी प्रान्त का गवर्नर था, और चाङ ह्वेइ-चान फील्ड कमाण्डर था। इन दो डिवीजनों का सफाया कर देना "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को बुनियादी तौर पर नष्ट कर देना ही होता। इनमें से हर डिवीजन में लगभग चौदह हजार आदमी थे और चाङ ह्वेइ-चान की डिवीजन दो स्थानों में बंटी हुई थी। इसलिए एक समय एक डिवीजन पर हमला करने में बरतरी बिलकुल हमारे पक्ष में ही रहती।

(७) लुङकाङ-य्वानथओ क्षेत्र, जहां चाङ और थान की डिवीजनों की मुख्य सैन्य-शक्ति तैनात थी, उस स्थान के पास था जहां हमारी सेना केन्द्रित थी तथा छिपकर वहां पहुंचने में हमें जनता का पर्याप्त समर्थन प्राप्त था।

(८) लुङकाङ का धरातल अनुकूल था। य्वानथओ पर हमला करना आसान नहीं था। लेकिन यदि शत्रु श्याओपू पर

हमला करने हमारे नजदीक आ जाता, तो वहां का धरातल भी अच्छा रहता।

(६) लुङकाङ की दिशा में हम सबसे अधिक सैन्य-शक्ति केन्द्रित कर सकते थे। लुङकाङ के दक्षिण-पश्चिम में १०० ली से कम फासले पर शिङक्वो में एक हजार से ऊपर सैनिकों वाली हमारी स्वतंत्र डिवीजन मौजूद थी, जो शत्रु से कतराकर उसके पृष्ठभाग में कार्यवाही कर सकती थी।

(१०) यदि हमारी सेना शत्रु के मोर्चे को बीच से तोड़ती हुई बाहर निकल पाती, तो पूरब और पश्चिम में शत्रु के कालम एक दूसरे से बहुत दूर दो अलग-अलग टुकड़ों में बंट जाते।

उक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए हमने तय किया कि हम अपनी पहली लड़ाई चाङ ह्वेइ-चान के मुख्य सैन्य-दल, उसकी दो ब्रिगेडों और डिवीजन हेडक्वार्टर के खिलाफ करेंगे और दरअसल हमने सफलतापूर्वक उस पर चोट भी की तथा नौ हजार सैनिकों के पूरे दल को, डिवीजनल कमाण्डर समेत पकड़ लिया। एक भी आदमी या एक भी घोड़ा बचकर नहीं जा सका। इस विजय से थान की डिवीजन इतनी डर गई कि वह तुङशाओ की तरफ भाग खड़ी हुई और श्वी की डिवीजन इतनी डर गई कि वह थओफी की तरफ भाग खड़ी हुई। इसके बाद हमारी सेना ने थान की डिवीजन का पीछा किया और उसके आधे भाग का सफाया कर दिया। पांच दिन के अन्दर (२७ दिसम्बर १९३० से १ जनवरी १९३१ तक) हमने दो लड़ाइयां लड़ीं, जिससे फ़ूथ्येन, तुङकू और थओफी में स्थित शत्रु-सेना हारने के डर से वहां से बेतहाशा भाग निकली। इस

तरह "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली मुहिम समाप्त हुई।

"घेरा डालने और विनाश करने" की दूसरी मुहिम में परिस्थिति इस प्रकार थी :

(१) "दमन करने" वाली सेना में २,००,००० सैनिक थे। हो इङ-छिन उसका कमाण्डर-इन-चीफ था, जिसका हेडक्वार्टर नानछाङ में था।

(२) शत्रु की पहली मुहिम की ही भांति इसमें भी च्याङ काई-शेक की निजी सेना की एक भी टुकड़ी नहीं थी। इसमें छाए थिङ-खाए की कमान में १९वीं राह सेना, सुन ल्येन-चुङ की कमान में २६वीं राह सेना और चू शाओ-ल्याङ की कमान में ८वीं राह सेना सबसे मजबूत अथवा अपेक्षाकृत मजबूत थीं तथा बाकी सब जरा निर्बल थीं।

(३) ए-बी ग्रुप का सफाया किया जा चुका था और आधार-क्षेत्र की तमाम जनता लाल सेना का समर्थन करती थी।

(४) वाङ चिन-य्वी की कमान में पांचवीं राह सेना उत्तर से नई-नई आई थी। वह हमसे डरती थी और उसके बाएं पार्श्व में क्वो ह्वा-चुङ और हाओ मङ-लिङ की कमान में जो दो डिवीजनें थीं, वे भी आम तौर पर हमसे डरती थीं।

(५) यदि हमारी सेना पहले फ़ूथ्येन पर हमला करती और उसके बाद पूरब की ओर तूफानी वेग से कूच करती, तो हम फ़ूच्येन-च्याङशी सीमा पर च्येननिङ-लीछ्वान-थाएनिङ क्षेत्र तक आधार-क्षेत्र का विस्तार कर लेते तथा "घेरा डालने और विनाश करने" की अगली मुहिम को नष्ट करने के लिए

साधन-स्रोत एकत्र कर लेते। इसके बदले यदि हम पूर्व से पश्चिम की ओर हमला करते, तो हमारे सामने कानच्याङ नदी आती और वहां लड़ाई खत्म होने के बाद विस्तार के लिए कोई गुंजाइश न रहती। लड़ाई खत्म करने के बाद फिर पूरब की ओर चलने से हमारी सेना थक जाती और समय व्यर्थ चला जाता।

(६) यद्यपि हमारी सेना पहली मुहिम के मुकाबले संख्या में कुछ घट गई थी (३०,००० से कुछ ऊपर रह गई थी), तथापि उसे विश्राम और शक्ति-संचय करते हुए चार महीने हो गए थे।

उक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए हमने फैसला किया कि हम फ़ूच्येन क्षेत्र के वाङ चिन-य्वी और कुङ पिङ-फ़ान की सेना (कुल मिलाकर ग्यारह रेजीमेन्टें) से पहली लड़ाई करेंगे। लड़ाई जीतने के बाद हमने क्वो ह्वा-चुङ, सुन ल्येन-चुङ, चू शाओ-ल्याङ और ल्यू हो-तिङ की सेनाओं पर एक के बाद एक हमला किया। पन्द्रह दिन में (१६ मई से ३० मई १९३१ तक) हमने पैदल सात सौ ली का फासला तय किया, पांच लड़ाइयां लड़ीं, बीस हजार से ऊपर राइफलों को जब्त कर लिया, और "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को खूब जोरखरोश के साथ चकनाचूर कर दिया। वाङ चिन-य्वी से लड़ते समय हम छाए थिङ-खाए और क्वो ह्वा-चुङ की कमान वाले दो शत्रु सैन्य-दलों के बीच में – क्वो से दस से ज्यादा ली और छाए से चालीस से ज्यादा ली के फासले पर – थे। तब कुछ लोगों ने यह कहा था कि हम "एक अन्धी गली में फंसने जा रहे हैं", लेकिन फिर भी हम इससे गुजरकर निकल ही गए। इसका मुख्य

कारण था आधार-क्षेत्र की अनुकूल स्थिति और शत्रु के दस्तों के बीच तालमेल की कमी। क्वो की डिवीजन के हारने पर हाओ मङ-लिङ की डिवीजन रातोंरात भागकर युङफ़ङ लौट गई और इस तरह उसने अपने को विनाश से बचा लिया।

"घेरा डालने और विनाश करने" की तीसरी मुहिम में परिस्थिति इस प्रकार थी :

(१) च्याङ काई-शेक ने कमाण्डर-इन-चीफ की हैसियत से स्वयं मैदान सम्भाला। उसके मातहत तीन कमाण्डर थे, जिनमें से हर कमाण्डर बाएं, दाएं और बीच के एक-एक कालम का इनचार्ज था। बिचले कालम का कमाण्डर हो इङ-छिन था जिसका हेडक्वार्टर च्याङ की तरह नानछाङ में था। दाएं कालम का कमाण्डर छन मिङ-शू था जिसका हेडक्वार्टर चीआन में था। बाएं कालम का कमाण्डर चू शाओ-ल्याङ था जिसका हेडक्वार्टर नानफ़ङ में था।

(२) "दमन करने" वाली सेना में ३,००,००० सैनिक थे। मुख्य सैन्य-शक्ति में पहला स्थान लगभग १,००,००० सैनिकों वाली च्याङ की निजी सेना का था। इसमें पांच डिवीजनें थीं, जिनके कमाण्डर क्रमशः छन छङ, लो च्वो-इङ, चाओ क्वान-थाओ, वेइ ली-ह्वाङ और च्याङ तिङ-वन थे; हर डिवीजन में नौ रेजीमेन्टें थीं। दूसरा स्थान च्याङ क्वाङ-नाए, छाए थिङ-खाए और हान त-छिन की कमान में तीन डिवीजनों का था जिनमें कुल मिलाकर ४०,००० सैनिक थे। तीसरा स्थान सुन ल्येन-चुङ की सेना का था जिसमें २०,०००

सैनिक थे। बाकी सब सैन्य-शक्ति अपेक्षाकृत निर्बल थी जिसमें च्याङ के निजी सैनिक नहीं थे।

(३) इस "दमन करने" वाली मुहिम में शत्रु की रणनीति थी "तूफ़ानी वेग से अन्दर बढ़ जाना", जो दूसरी मुहिम में उसके द्वारा अपनाई गई "हर कदम पर मोर्चेबन्दी कर लेने" की रणनीति से बहुत भिन्न थी। उसका उद्देश्य यह था कि लाल सेना को कानच्याङ नदी तक खदेड़कर ले जाए और वहां उसका सफाया कर दे।

(४) दूसरी मुहिम के अन्त और तीसरी मुहिम के आरम्भ के बीच सिर्फ एक महीने का अन्तर था। लाल सेना को बहुत कठिन लड़ाई के बाद न तो आराम मिला था और न ही उसने सैनिकों की कमी की पूर्ति की थी (उस समय लाल सेना में लगभग ३०,००० सैनिक थे)। इसके अलावा दक्षिणी च्याङशी में आधार-क्षेत्र के पश्चिमी भाग में शिङक्वो नामक स्थान पर लौटकर एकत्र होने के लिए लाल सेना ने फिर एक हजार ली का चक्कर काटा था, जबकि शत्रु कई दिशाओं से जोरों से उसके समीप बढ़ा आ रहा था।

ऐसी स्थिति में हमने पहले यह योजना बनाई कि शिङक्वो से वान-आन होते हुए फ़ूच्येन से घेरा तोड़कर बाहर निकल जाएं तथा उसके बाद पश्चिम से पूरब की तरफ बढ़ते हुए, शत्रु के पृष्ठभाग में उसकी संचार-लाइनों पर धावा बोल दें और इस प्रकार दक्षिणी च्याङशी में शत्रु की मुख्य सैन्य-शक्ति को दूर तक हमारे आधार-क्षेत्र में प्रवेश करने दें और वहां उसे बिलकुल बेकार बना दें। हमारी फौजी

कार्यवाही का पहला दौर यह होता। इसके बाद जब दुश्मन उत्तर की ओर लौटता, तो वह अवश्य ही बहुत थक जाता और हम मौका पाकर उसकी दुर्बल यूनिटों पर प्रहार करते। यह हमारी फौजी कार्यवाही का दूसरा दौर होता। इस योजना का सार यह था कि शत्रु की मुख्य सैन्य-शक्ति से बचते रहें और उसकी दुर्बल यूनिटों पर प्रहार करें। लेकिन जब हमारी सेना फ़ूच्येन की ओर बढ़ रही थी, तो शत्रु को हमारा पता लग गया तथा छन छङ और लो च्वो-इङ की कमान में उसकी दो डिवीजनें तेजी से वहां पहुंच गई। हमें अपनी योजना बदलनी पड़ी और शिङक्वो काउन्टी के पश्चिमी भाग में काओशिङश्वी की ओर लौटना पड़ा। उस समय हमारे सैनिकों के केन्द्रित होने के लिए सिर्फ यही एक स्थान और इसके साथ का दसियों वर्ग-ली का प्रदेश रह गया था। वहां केन्द्रित होने के एक दिन बाद हमने यह फैसला किया कि शिङक्वो काउन्टी के पूर्वी भाग में स्थित ल्येनथाङ की तरफ, युङफ़ङ काउन्टी के दक्षिणी भाग में स्थित ल्याङछुन की तरफ और निङतू काउन्टी के उत्तरी भाग में स्थित ह्वाङफी की तरफ पूरब की ओर जल्दी ही कूच करें। उसी दिन रात के अन्धेरे में हम च्याङ तिङ-वन की डिवीजन तथा च्याङ क्वाङ-नाए, छाए थिङ-खाए और हान त-छिन के सैन्य-दलों के बीच चालीस ली की दरार से गुजरकर निकल गए और मुड़कर ल्येनथाङ पहुंचे। दूसरे दिन हम शाङक्वान युन-श्याङ (जो अपनी और हाओ मङ-लिङ की डिवीजनों का कमाण्डर था) की सेना के अग्रिम सैन्य-दल से टकराए। पहली लड़ाई तीसरे दिन शाङक्वान की डिवीजन से और दूसरी लड़ाई चौथे दिन हाओ मङ-लिङ की डिवीजन से हुई। फिर तीन दिनों तक चलने के बाद हम ह्वाङफी

पहुंचे और वहां हमारी तीसरी लड़ाई माओ पिङ-वन की डिवीजन से हुई। हमने तीनों लड़ाइयों में जीत हासिल की और दस हजार से ज्यादा राइफलों पर कब्जा किया। तब शत्रु के वे सभी मुख्य सैन्य-दल, जो पश्चिम और दक्षिण की ओर बढ़ते आ रहे थे, पूरब की ओर मुड़ गए। ह्वाङफी पर आंखें गड़ाकर वे हमारे खिलाफ लड़ने के लिए प्रचण्ड वेग से एक साथ दौड़े और हमारे चारों ओर एक विशाल और सुदृढ़ घेरा डालने के लिए आ धमके। च्याङ क्वाङ-नाए, छाए थिङ-खाए और हान त-छिन के सैन्य-दलों तथा छन छङ और लो च्वो-इङ के सैन्य-दलों के बीच जो बीस ली की दरार थी वहां के बड़े पहाड़ों के बीच से होकर हम चुपके से निकल आए; इस तरह हम पूरब से पश्चिम की ओर लौटकर शिङक्वो काउन्टी की सीमा के अन्दर फिर एकत्र हो गए। जब दुश्मन को इसका पता लगा और वह पश्चिम की ओर बढ़ा, तब हमारी सेना एक पखवाड़े तक आराम कर चुकी थी, जबकि दुश्मन की सेना भूखी, थकी-हारी और मनोबल में पस्त हो चुकी थी, उसमें अब और लड़ने की क्षमता नहीं रह गई थी तथा उसने पीछे हटने का फैसला कर लिया था। उसके पीछे हटने से लाभ उठाकर हमने च्याङ क्वाङ-नाए, छाए थिङ-खाए, च्याङ तिङ-वन और हान त-छिन के सैन्य-दलों पर हमला कर दिया तथा च्याङ तिङ-वन की एक ब्रिगेड का और हान त-छिन की एक समूची डिवीजन का सफाया कर दिया। च्याङ क्वाङ-नाए और छाए थिङ-खाए की कमान में दो डिवीजनों से हमारी टक्कर के दौरान गतिरोध पैदा हो गया और वे बचकर निकल गईं।

"घेरा डालने और विनाश करने" की चौथी मुहिम में परिस्थिति

इस प्रकार थी : शत्रु-सेना तीन कालमों में बंटकर क्वाङछाङ की ओर बढ़ रही थी। मुख्य सैन्य-शक्ति पूरब में थी। उसके पश्चिमी कालम में जो दो डिवीजनें थीं, वे हमारे सामने खुले रूप से मौजूद थीं और हमारे उस स्थल के बहुत करीब थीं जहां हमारी सेना केन्द्रित थी। इस तरह पहले हमें ईह्वाङ काउन्टी के दक्षिणी भाग में दुश्मन की फौज के पश्चिमी कालम पर हमला करने का अवसर मिला और एक ही बार में हमने ली मिङ और छन श-ची की दो डिवीजनों का सफाया कर दिया। जब दुश्मन ने अपने मध्यवर्ती कालम को सम्बल देने के वास्ते पूर्वी कालम से दो डिवीजनें भेजीं और वह आगे बढ़ा, तो हमें ईह्वाङ काउन्टी के दक्षिणी भाग में उसकी एक डिवीजन का सफाया करने का फिर मौका मिल गया। इन दो लड़ाइयों में हमने दस हजार से ज्यादा राइफलों पर अधिकार किया तथा "घेरा डालने और विनाश करने" की इस मुहिम को बुनियादी तौर पर चकनाचूर कर दिया।

"घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम में शत्रु किलेबन्दियां बनाने की एक नई रणनीति अपनाकर आगे बढ़ा और उसने सबसे पहले लीछ्वान पर कब्जा किया। लेकिन उस पर फिर से कब्जा करने और शत्रु को आधार-क्षेत्र के बाहर ही रोक देने की कोशिश में हमने लीछ्वान के उत्तर में श्याओशि पर हमला कर दिया, जो शत्रु का एक मजबूत गढ़ और श्वेत इलाका भी था। उस लड़ाई को जीतने में असफल होने के बाद हमने उसके बदले श्याओशि के दक्षिण-पूर्व में चिशीछ्याओ पर हमला कर दिया। यह भी दुश्मन का एक मजबूत गढ़ था और श्वेत इलाका भी था। यहां भी हमें कामयाबी हासिल न हुई। उसके बाद शत्रु से लड़ने की

कोशिश में उसकी मुख्य सैन्य-शक्ति और उसकी किलेबन्दियों के बीच हम चक्कर काटते रहे और हमारी अवस्था बिलकुल निष्क्रियता की हो गई। "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ सालभर तक चलने वाली समूची पांचवीं जवाबी मुहिम के दौरान हमने जरा भी पहलकदमी या ओजस्विता नहीं दिखलाई। अन्त में च्याङशी के अपने आधार-क्षेत्र से हटने के अलावा हमारे सामने और कोई चारा नहीं रह गया।

"घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ उपरोक्त पहली से पांचवीं जवाबी मुहिमों तक हमारी सेना ने जो अनुभव प्राप्त किए, उनसे यह साबित होता है कि लाल सेना के लिए, जब वह रक्षात्मक स्थिति में रहती है, शत्रु की "दमन करने" वाली, बड़ी और शक्तिशाली सेना को तहस-नहस कर देने के लिए प्रत्याक्रमण करते समय पहली लड़ाई अत्यन्त महत्व की होती है। उसकी विजय या पराजय का अत्यन्त बड़ा असर समूची स्थिति पर पड़ता है और यहां तक कि उसका प्रभाव अन्तिम टक्कर पर भी पड़ता है। इसलिए हम इन निष्कर्षों पर पहुंचते हैं :

पहला, जैसे भी हो पहली लड़ाई अवश्य जीत लेनी चाहिए। हमें तभी प्रहार करना चाहिए जब इस बात का पक्का विश्वास हो जाए कि शत्रु की परिस्थिति, धरातल और जनता का रुख सभी हमारे अनुकूल और शत्रु के प्रतिकूल हैं। वरना हमें पीछे हट जाना ही ज्यादा उचित समझना चाहिए और सावधानी से अवसर की ताक में रहना चाहिए। अवसर हमेशा मिलते रहेंगे ; हमें जल्दबाजी से लड़ाई में नहीं कूद पड़ना चाहिए। "घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ पहली जवाबी मुहिम में हमने पहले यह

सोचा था कि थान ताओ-य्वान की सेना पर हमला करें ; हमारी सेना दो बार आगे बढ़ी, लेकिन दोनों ही बार अपने को संयत करके उसे पीछे लौटना पड़ा क्योंकि दुश्मन की सेना य्वानथओ की ऊंची अनुकूल भूमि से अलग ही नहीं हुई। कुछ दिन बाद हमने चाङ ह्वेइ-चान की सेना को ढूंढ़ लिया, जो हमारे प्रहार के लिए अधिक अनुकूल थी। दूसरी जवाबी मुहिम में हमारी सेना तुङकू पहुंची, जहां इस बात का इन्तजार करने के एकमात्र उद्देश्य से कि वाङ चिन-य्वी की सेना फ़ूथ्येन का अपना मजबूत गढ़ छोड़ दे, हमने शत्रु को सूचना मिलने का खतरा मोल लेकर भी कोई पच्चीस दिन तक शत्रु के बिलकुल करीब पड़ाव डाले रखा ; तुरत हमला करने के लिए जो भी सुझाव बेसब्री से दिए गए, उन सबको हमने ठुकरा दिया और अन्त में अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया। तीसरी जवाबी मुहिम में यद्यपि स्थिति तूफानी थी और हमारी सेना एक हजार ली का चक्कर काट कर लौटी थी, और यद्यपि दुश्मन को, उसके बाजू और पृष्ठभाग की ओर बढ़कर फौजी कार्यवाही करने की हमारी योजना का पता चल गया था, फिर भी हमने सब्र से काम लिया और पीछे लौट आए तथा अपनी कार्यनीति को बीच से घेरा तोड़कर बाहर निकलने में बदल लिया और अन्त में ल्येनथाङ में सफलता से पहली लड़ाई की। चौथी जवाबी मुहिम में नानफ़ङ पर हमला करके उसे लेने में असफल होने के बाद, हमने दृढ़ता से पीछे हटने की कार्यनीति अपनाई। अन्त में शत्रु के दाएं बाजू की ओर मुड़कर हमने तुङशाओ क्षेत्र में अपना सैन्य-दल केन्द्रित किया और ईह्वाङ के दक्षिणी भाग में अपनी महान और विजयी लड़ाई आरम्भ कर दी। केवल पांचवीं जवाबी मुहिम में प्रारम्भिक लड़ाई का महत्व बिलकुल

नहीं समझा गया। केवल एक काउन्टी-केन्द्र लीछ्वान के हाथ से निकल जाने की बात से लोग बहुत चिन्तित हो उठे और उसे फिर से पाने की कोशिश में शत्रु से मुठभेड़ करने के लिए उत्तर की ओर बढ़े। श्युनखओ में शत्रु से हुई अप्रत्याशित मुठभेड़ में जीतने के बाद (जिसमें शत्रु की एक डिवीजन का सफाया किया गया) उसे पहली लड़ाई के रूप में स्वीकार नहीं किया गया और न उन सब परिवर्तनों का पूर्वानुमान ही लगाया गया जो अवश्य ही उससे पैदा होते, बल्कि विजय की कोई निश्चित सम्भावना न रहते हुए भी जल्दबाजी से श्याओशि पर धावा बोल दिया गया। इस प्रकार पहली ही चाल में पहलकदमी खो दी गई। अवश्य ही लड़ने का यह सबसे मूर्खतापूर्ण और सबसे निकम्मा तरीका था।

दूसरा, प्रारम्भिक लड़ाई की योजना को समूची मुहिम की योजना की सुसम्बद्ध प्रस्तावना होनी चाहिए। पूरी मुहिम के लिए अच्छी योजना के न होने पर वास्तविक सफलता के साथ पहली लड़ाई लड़ना एकदम असम्भव है। दूसरे शब्दों में यह कि प्रारम्भिक लड़ाई में जीत भले ही हो जाए, लेकिन उससे समूची मुहिम को यदि लाभ के बदले हानि होती है, तो ऐसी जीत को हार ही समझा जा सकता है (उदाहरण के लिए "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम में श्युनखओ की लड़ाई)। इसलिए यह आवश्यक है कि पहली लड़ाई लड़ने के पहले इस बात पर भी सामान्य रूप से विचार कर लिया जाए कि दूसरी, तीसरी, चौथी . . . और अन्तिम लड़ाइयां कैसे लड़ी जाएंगी। यह सोचना जरूरी है कि यदि हम उपरोक्त हर लड़ाई में जीतेंगे, तो शत्रु की समूची स्थिति में क्या तब्दीली होगी ; यदि हम हारेंगे, तो समूची स्थिति में क्या तब्दीली होगी। जैसा हम

पहले से सोचते हैं, नतीजा चाहे बिलकुल वैसा ही न निकले – और यह निश्चित है कि वह बिलकुल वैसा ही नहीं निकलेगा – फिर भी अपने और शत्रु के सामने की समूची स्थिति को देखते हुए हमें सावधानी से और यथार्थ ढंग से सोचना चाहिए। पूरी स्थिति को हृदयंगम किए बिना कोई अच्छी चाल चलना दरअसल असम्भव है।

तीसरा, युद्ध के अगले रणनीतिक दौर की योजना पर भी ध्यान देना चाहिए। यदि हम केवल प्रत्याक्रमण में ही व्यस्त रहे और हमने इस पर ध्यान न दिया कि अगर उसमें जीत गए या शायद हार ही गए, तो बाद में क्या उपाय करने होंगे, तो हम रणनीति के निर्देशकों के रूप में अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह नहीं निभा पाएंगे। रणनीति का निर्देशक जब एक रणनीतिक दौर में हो, तो उसे बाद के कई दौरों पर, या कम से कम अगले दौर पर, अवश्य ध्यान देना चाहिए। हालांकि भावी परिवर्तनों को पहले से ही देखना कठिन है, और आगे की बात जितनी दूर होती है उतनी ही धुंधली लगती है, फिर भी उसका साधारण अनुमान लगाना सम्भव है और दूर की बातों को आंकना आवश्यक है। निर्देशन का वह तरीका जिससे निर्देशक जो कदम उठाने जा रहा हो केवल उसी पर ध्यान देता हो, राजनीति में ही नहीं युद्ध में भी हानिकर होता है। हर बार जब वह कोई कदम उठाए तो उसे देखना चाहिए कि उससे कौन सी ठोस तब्दीलियां होंगी, तथा उनके अनुसार उसे अपनी रणनीति और मुहिम सम्बन्धी योजनाओं को सुधार लेना चाहिए या विकसित कर लेना चाहिए। अन्यथा वह खतरे की परवाह किए बिना अन्धाधुन्ध कार्यवाही की गलती सहज रूप से कर बैठेगा। फिर भी यह अनिवार्य रूप से

आवश्यक है कि लम्बी अवधि के लिए सामान्य रूप से सोची हुई ऐसी योजना बनाई जाए जो एक समूचे रणनीतिक दौर पर और कई रणनीतिक दौरों पर भी लागू हो। इस तरह की योजना न बनाने से यह गलती हो जाएगी कि हम आगा-पीछा सोचते-सोचते उलझनों में पड़ जाएंगे और इस तरह दरअसल शत्रु की रणनीतिक आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी और हम खुद निष्क्रिय अवस्था में पड़ जाएंगे। यह बात याद रखनी चाहिए कि शत्रु की सर्वोच्च कमान के पास किसी हद तक रणनीतिक सूझबूझ मौजूद है। जब हम खुद ट्रेनिंग लेकर शत्रु से ज्यादा ऊंचे स्तर पर पहुंच जाएंगे, तभी रणनीतिक सफलताएं सम्भव होंगी। शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के दौरान "वामपंथी" अवसरवादी कार्यदिशा, तथा चाङ क्वो-थाओ की कार्यदिशा के रणनीतिक निर्देशन की त्रुटि का कारण मुख्यतः यही था कि ऐसा नहीं किया गया। सारांश यह कि जब हम पीछे हटने के दौर में हों तो प्रत्याक्रमण के दौर पर ध्यान देना चाहिए और जब हम प्रत्याक्रमण के दौर में हों तो आक्रमण के दौर पर ध्यान देना चाहिए, तथा जब हम आक्रमण के दौर में हों तो पीछे हटने के दौर पर ध्यान देना चाहिए। यह सब न करके केवल सामयिक हानि-लाभ के विचार से चिपके रहना पराजय ही मोल लेना है।

पहली लड़ाई अवश्य जीतनी चाहिए; समूची मुहिम की योजना को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए; और अगले रणनीतिक दौर पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। ये तीन ऐसे उसूल हैं जिन्हें प्रत्याक्रमण आरम्भ करते समय, यानी पहली लड़ाई लड़ते समय हमें हरगिज नहीं भूलना चाहिए।

६. सैन्य-शक्तियों के केन्द्रीकरण की समस्या

सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण देखने में आसान मालूम होता है, लेकिन अमल में यह एक बहुत कठिन काम है। हर कोई जानता है कि सबसे अच्छा तरीका है एक छोटी फौज को परास्त करने के लिए एक बड़ी फौज का इस्तेमाल करना। फिर भी बहुत से लोग ऐसा नहीं कर पाते और इसके विपरीत अक्सर अपनी सैन्य-शक्ति को बिखेर देते हैं। इसका कारण यह है कि ऐसे युद्ध-निर्देशकों के पास रणनीतिक सूझबूझ की कमी होती है और पेचीदा परिस्थितियों में वे उलझन में पड़ जाते हैं; इस प्रकार वे परिस्थितियों के दास बन जाते हैं, अपनी पहलकदमी खो बैठते हैं और निष्क्रियता का रुख अपनाते हैं।

परिस्थितियां चाहे कितनी भी पेचीदा, नाजुक और कठिन क्यों न हों, एक सैन्य-निर्देशक के लिए सबसे पहले इस बात की जरूरत होती है कि वह अपने सैन्य-दल को स्वतंत्रता से संगठित करने और उसे काम में लगाने की क्षमता रखता हो। यद्यपि अक्सर यह होता है कि शत्रु उसे निष्क्रिय अवस्था में डाल देता है, फिर भी उसके लिए महत्वपूर्ण बात यह है कि वह शीघ्र ही फिर से पहलकदमी अपने हाथ में ले ले। यदि वह इसमें असफल रहा, तो पराजय ही हाथ लगेगी।

पहलकदमी कोई मरीचिका नहीं बल्कि एक ठोस और भौतिक वस्तु होती है। यहां सबसे महत्वपूर्ण बात है एक अत्यन्त बड़ी और जुझारू भावना से ओतप्रोत सैन्य-शक्ति को सुरक्षित रखना और उसे इकट्ठा करना।

वास्तव में रक्षात्मक लड़ाई में निष्क्रिय अवस्था में पहुंच जाना बड़ा आसान है। आक्रमणात्मक लड़ाई की तुलना में इसमें पहलकदमी के पूर्ण विकास के लिए बहुत कम गुंजाइश रहती है। फिर भी रक्षात्मक लड़ाई, जिसका वाह्य रूप निष्क्रिय होता है, अन्तर्वस्तु की दृष्टि से सक्रिय हो सकती है। वह वाह्य रूप की दृष्टि से निष्क्रियता के दौर से बदलकर वाह्य रूप और अन्तर्वस्तु दोनों की दृष्टि से सक्रियता के दौर में पहुंच सकती है। जब हम पूरी तरह योजना बनाकर रणनीति की दृष्टि से पीछे हटते हैं, तो बाहर से देखने में ऐसा लगता है मानो यह कार्य हमें दबाव के कारण करना पड़ रहा हो, लेकिन वास्तव में इसका उद्देश्य यह होता है कि हम अपनी फौजी शक्ति को सुरक्षित रखें और शत्रु को परास्त करने के मौके की राह देखते रहें, उसे भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक ले आएं और प्रत्याक्रमण की तैयारी करें। दूसरी ओर, पीछे हटने से इनकार करना और जल्दबाजी में लड़ाई स्वीकार करना (जैसे क्याओशि की लड़ाई) देखने में पहलकदमी हाथ में लेने के लिए किया गया गम्भीर प्रयत्न भले ही मालूम हो, लेकिन वास्तव में वह एक निष्क्रिय चाल है। रणनीतिक प्रत्याक्रमण न सिर्फ अन्तर्वस्तु की दृष्टि से सक्रिय होता है बल्कि वाह्य रूप की दृष्टि से भी यह पीछे हटने के काल की निष्क्रियता को छोड़ देता है। जहां तक शत्रु का सम्बन्ध है, हमारा प्रत्याक्रमण हमारी तरफ से इस बात का प्रयत्न है कि शत्रु को पहलकदमी छोड़ देने के लिए मजबूर किया जाए और उसे निष्क्रिय अवस्था में डाल दिया जाए।

इस लक्ष्य को पूरी तरह हासिल करने के लिए सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण, चलायमान लड़ाई, तुरत निर्णय की लड़ाई और विनाश

की लड़ाई – ये सभी शर्तें जरूरी हैं। इनमें सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख शर्त है।

शत्रु और अपने बीच की परिस्थिति को पलटने के लिए सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण आवश्यक है। पहले तो यह कि इसका उद्देश्य आगे बढ़ने और पीछे हटने की परिस्थिति को पलट देना है। पहले शत्रु आगे बढ़ता था और हम पीछे हटते थे; अब हम एक ऐसी परिस्थिति लाना चाहते हैं जबकि हम आगे बढ़ते जाएं और शत्रु पीछे हटता जाए। जब हम लड़ाई में अपनी सैन्य-शक्तियों को केन्द्रित करके विजय प्राप्त करते हैं, तो हम उस लड़ाई में उक्त लक्ष्य प्राप्त कर लेते हैं, और इसका समूची मुहिम पर असर पड़ता है।

दूसरे यह कि इसका उद्देश्य आक्रमण और रक्षा की परिस्थिति को पलट देना है। निर्धारित विराम-स्थल तक पीछे हटना रक्षात्मक लड़ाई में बुनियादी तौर से निष्क्रिय दौर की बात है अर्थात "रक्षा" के दौर की बात है। प्रत्याक्रमण सक्रिय दौर की बात है अर्थात "आक्रमण" के दौर की बात है। हालांकि रणनीतिक रक्षा के पूरे दौर में उसका रक्षात्मक स्वरूप बना रहता है, फिर भी पीछे हटने की तुलना में प्रत्याक्रमण का स्वरूप वाह्य रूप की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि अन्तर्वस्तु की दृष्टि से भी बदल जाता है। प्रत्याक्रमण रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक आक्रमण के बीच की एक संक्रमणात्मक चीज है तथा स्वरूप की दृष्टि से रणनीतिक आक्रमण की प्रस्तावना है; प्रत्याक्रमण के उद्देश्य से ही सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण किया जाता है।

तीसरे यह कि इसका उद्देश्य भीतरी और बाहरी सैन्य-पंक्तियों की परिस्थिति को पलट देना है। रणनीति की दृष्टि से जो सैन्य-

दल भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर फौजी कार्यवाही करता है उसे अनेक प्रतिकूल तत्वों को सहन करना पड़ता है, और यह बात खास तौर से लाल सेना पर लागू होती है जिसे शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम का सामना करना पड़ता है। लेकिन मुहिमों या लड़ाइयों में हम इस स्थिति को पलट सकते हैं और इसे हर सूरत में पलट देना चाहिए। शत्रु द्वारा हमारे खिलाफ चलाई गई "घेरा डालने और विनाश करने" की एक बड़ी मुहिम को हम शत्रु के खिलाफ घेरा डालने और विनाश करने की अनेक छोटी और अलग-अलग मुहिमों में बदल सकते हैं। शत्रु द्वारा रणनीति की दृष्टि से अलग-अलग कालमों से हम पर किए गए केन्द्राभिमुख आक्रमण को हम अनेक ऐसे केन्द्राभिमुख आक्रमणों में बदल सकते हैं जिन्हें मुहिमों और लड़ाइयों की दृष्टि से हमारी सेना शत्रु के खिलाफ चलाए। शत्रु की रणनीतिक बरतरी को हम मुहिमों और लड़ाइयों में अपनी बरतरी में बदल सकते हैं। रणनीति की दृष्टि से सुदृढ़ स्थिति वाले शत्रु को हम मुहिमों और लड़ाइयों की दृष्टि से कमजोर स्थिति में डाल सकते हैं। साथ ही रणनीति की दृष्टि से अपनी कमजोर स्थिति को हम मुहिमों और लड़ाइयों की दृष्टि से एक सुदृढ़ स्थिति में बदल सकते हैं। इसी को हम कहते हैं, भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करना, "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के भीतर घेरा डालना और विनाश करना, नाकेबन्दी के भीतर नाकेबन्दी करना, रक्षा के भीतर आक्रमण करना, कमतरी के भीतर बरतरी पैदा करना, निर्बलता के भीतर सबलता पैदा करना, प्रतिकूल स्थिति में अनुकूल स्थिति पैदा करना और निष्क्रियता की स्थिति में

पहलकदमी की स्थिति पैदा करना। रणनीतिक रक्षा में विजय प्राप्त करना बुनियादी तौर पर इसी एक उपाय पर – यानी सैन्य-शक्तियों के केन्द्रीकरण पर – निर्भर है।

चीन की लाल सेना के युद्ध-इतिहास में इस प्रश्न पर अक्सर महत्वपूर्ण वाद-विवाद उठ खड़े हुए हैं। ४ अक्तूबर १९३० को चीआन की लड़ाई में हम अपने सैन्य-दल के पूरी तरह केन्द्रित होने के पहले ही आगे बढ़ गए और हमला शुरू कर दिया। लेकिन सौभाग्य से शत्रु-सेना (तङ इङ की डिवीजन) अपने आप भाग खड़ी हुई; हमारा आक्रमण अपने आपमें व्यर्थ साबित हुआ।

१९३२ से "सभी मोर्चों से हमला करो" का नारा सामने आया, जिसकी यह मांग थी कि हम आधार-क्षेत्र से उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम, सभी दिशाओं में हमला करें। ऐसा करना रणनीतिक रक्षा की दृष्टि से ही नहीं बल्कि रणनीतिक आक्रमण की दृष्टि से भी गलत है। जब तक हमारी और शत्रु की कुल तुलनात्मक शक्ति में बुनियादी परिवर्तन नहीं होता, तब तक रक्षा और आक्रमण तथा शत्रु को रोके रखना और धावा बोलना दोनों ही रणनीतिक या कार्यनीतिक दृष्टि से साथ-साथ चलते हैं। वास्तव में ऐसा बहुत कम होता है कि "सभी मोर्चों से हमला किया जाए"। इस नारे से फौजी दुस्साहसवाद के साथ आने वाला सैनिक समानतावाद जाहिर होता है।

१९३३ में सैनिक समानतावाद के समर्थकों ने "दोनों मुक्कों से दोनों दिशाओं में प्रहार करने" का सिद्धान्त निकाला और लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति को दो भागों में बांटकर दो रणनीतिक दिशाओं में एक साथ विजय प्राप्त करने की कोशिश की। नतीजा

यह हुआ कि एक मुक्का निष्क्रिय बना रहा जबकि दूसरा लड़ाई में थककर चूर हो गया, तथा हम लोग उस समय की सबसे बड़ी सम्भावित विजय प्राप्त करने में असमर्थ रहे। मेरी राय में जब तक शक्तिशाली शत्रु-दल मौजूद रहता है, हमें अपनी सेना का उपयोग, चाहे उसकी संख्या कितनी ही क्यों न हो, एक समय पर एक ही मुख्य दिशा में करना चाहिए, न कि दो दिशाओं में। मुझे दो या अधिक दिशाओं में कार्यवाही करने के बारे में आपत्ति नहीं है, लेकिन एक समय पर एक ही मुख्य दिशा होनी चाहिए। चीनी लाल सेना ने, जो गृहयुद्ध के मैदान में एक छोटे और कमजोर सैन्य-दल के रूप में उतरी, शक्तिशाली शत्रु को बार-बार परास्त किया है और ऐसी जीतें हासिल की हैं जिनसे संसार चकित रह गया है ; वह मुख्य रूप से केन्द्रित सैन्य-शक्तियों के प्रयोग पर निर्भर रहकर ही ऐसा कर सकी है। उसकी कोई भी बड़ी जीत इस बात को साबित कर सकती है। जब हम यह कहते हैं कि "दस का एक से मुकाबला कराएंगे और सौ का दस से मुकाबला कराएंगे", तो हम रणनीति की, समूचे युद्ध की, तथा शत्रु के और अपने बीच की कुल तुलनात्मक शक्ति की बात कर रहे होते हैं। और रणनीति की दृष्टि से हम दरअसल ऐसा करते रहे हैं। लेकिन मुहिमों या कार्यनीति के बारे में हम यह नहीं कहते और उस क्षेत्र में हमें ऐसा कभी नहीं करना चाहिए। चाहे प्रत्याक्रमण हो या आक्रमण, हमने शत्रु-दल के एक अंग पर चोट करने के लिए हमेशा बड़ी सैन्य-शक्ति एकत्र की है। सैन्य-शक्तियों को केन्द्रित न करके हमने अनेक लड़ाइयों में क्षति उठाई है, जैसे जनवरी १९३१ में च्याङशी प्रान्त की निङतू काउन्टी के तुङशाओ क्षेत्र में थान ताओ-य्वान के खिलाफ लड़ाई, अगस्त १९३१ में च्याङशी प्रान्त की शिङक्वो काउन्टी के काओशिङश्वी क्षेत्र में १९वीं राह सेना के खिलाफ लड़ाई, जुलाई १९३२ में क्वाङतुङ प्रान्त की नानश्युङ काउन्टी के श्वेइखओश्वी क्षेत्र में छन ची-थाङ के खिलाफ लड़ाई, और मार्च १९३४ में च्याङशी प्रान्त की लीछ्वान काउन्टी के थ्वानछुन क्षेत्र में छन छङ के खिलाफ लड़ाई। वैसे तो श्वेइखओश्वी और थ्वानछुन की जैसी लड़ाइयों को आम तौर पर जीतों, और यहां तक कि बड़ी जीतों में भी गिना जाता था (पहली लड़ाई में हमने छन ची-थाङ की बीस रेजीमेन्टों को तितर-बितर कर दिया और दूसरी में छन छङ की बारह रेजीमेन्टों को)। लेकिन हमने इस तरह की जीतों का कभी स्वागत नहीं किया और यहां तक कि किसी अर्थ में हमने उन्हें हार भी समझा है। कारण यह कि हमारी राय में जब तक किसी लड़ाई की जीत में हमें सामग्री न मिले, या वह सामग्री हमारी हानि से बढ़कर न हो, तब तक यह लड़ाई कम महत्व की होती है। हमारी रणनीति है "दस का एक से मुकाबला कराओ", लेकिन हमारी कार्यनीति है "एक का दस से मुकाबला कराओ"। यह हमारे उन बुनियादी उसूलों में से एक है जिनके द्वारा हम शत्रु को परास्त करते हैं।

१९३४ में "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ हमारी पांचवीं जवाबी मुहिम में सैनिक समानतावाद पराकाष्ठा पर पहुंच गया। सोचा यह गया था कि "अपने सैन्य-दल को छै मार्गों में विभक्त करने" से और "सभी मोर्चों पर मुकाबला करने" से हम शत्रु पर हावी हो जाएंगे, लेकिन हुआ यह कि शत्रु हम पर हावी हो गया, कारण था प्रदेश खोने का डर। जब हम अपने मुख्य सैन्य-दल को एक ही दिशा में केन्द्रित कर देते हैं और अन्य दिशाओं में

केवल शत्रु को रोके रखने भर के लिए सैन्य-दल छोड़ देते हैं, तो यह स्वाभाविक है कि अपने प्रदेश को हानि से बचाना हमारे लिए मुश्किल हो जाता है। लेकिन इस प्रकार की हानि सिर्फ अस्थाई और आंशिक होती है और उसकी पूर्ति धावा बोलने के क्षेत्र में हमारी विजय से हो जाती है। इस प्रकार की विजय प्राप्त होने के बाद, शत्रु को रोके रखने वाले क्षेत्र में खोए गए प्रदेश को पुन: प्राप्त किया जा सकता है। शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी मुहिमों में हमें प्रदेश खोना पड़ा ; और खास तौर से तीसरी मुहिम में, च्याङशी में लाल सेना का आधार-क्षेत्र प्राय: पूरा का पूरा हाथ से निकल गया था। लेकिन अन्त में, हमने न सिर्फ अपना प्रदेश पुन: प्राप्त कर लिया बल्कि उसका प्रसार भी किया।

आधार-क्षेत्र में जनता की शक्ति को ठीक से न आंकने के कारण अक्सर यह निराधार डर पैदा होता है कि लाल सेना कहीं आधार-क्षेत्र से बहुत दूर न चली जाए। यह उस समय हुआ था जब १९३२ में च्याङशी में लाल सेना ने फ़ूच्येन प्रान्त के चाङचओ पर हमला करने के लिए लम्बी यात्रा की, और यह तब भी हुआ था जब १९३३ में "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ चौथी जवाबी मुहिम में जीतने के बाद लाल सेना फ़ूच्येन पर हमला करने के लिए मुड़ी। पहले उदाहरण में यह डर पैदा हुआ था कि शत्रु समूचे आधार-क्षेत्र पर कब्जा कर लेगा ; और दूसरे में यह डर पैदा हुआ था कि शत्रु आधार-क्षेत्र के एक हिस्से पर कब्जा कर लेगा। इसलिए सैन्य-शक्ति के केन्द्रीकरण का विरोध किया गया और रक्षा के लिए सैन्य-शक्ति को विभक्त करने की हिमायत की गई।

लेकिन अन्त में यह सब गलत साबित हुआ। जहां तक शत्रु का ताल्लुक है, वह हमारे आधार-क्षेत्र में आगे बढ़ने में झिझकता है, लेकिन उसकी नजरों में मुख्य खतरा वह लाल सेना है जो श्वेत इलाके में घुस गई है। शत्रु-सेना का ध्यान हमेशा उन जगहों पर केन्द्रित रहता है जहां नियमित लाल सेना रहती है। ऐसी स्थिति बहुत कम दिखाई देती है कि वह अपना ध्यान हमारी नियमित सेना से हटाकर हमारे आधार-क्षेत्र पर केन्द्रित करे। जब लाल सेना रक्षात्मक स्थिति में रहती है, तब भी वह शत्रु के ध्यान का केन्द्र-बिन्दु बनी रहती है। हमारे आधार-क्षेत्र का साइज कम करना शत्रु की समूची योजना का एक भाग है। लेकिन अगर लाल सेना ने अपनी मुख्य सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करके शत्रु के एक कालम का विनाश किया, तो शत्रु की सर्वोच्च कमान को लाल सेना की ओर ज्यादा ध्यान देने के लिए मजबूर होना पड़ेगा और उसके खिलाफ ज्यादा सैन्य-शक्ति लगानी पड़ेगी। इसलिए हमारे आधार-क्षेत्र का साइज कम करने की दुश्मन की योजना को चौपट करना सम्भव है।

यह कथन भी गलत है कि "किलेबन्दी-लड़ाई की नीति पर आधारित शत्रु की 'घेरा डालने और विनाश करने' की पांचवीं मुहिम के समय अपनी फौजी कार्यवाही में सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करना हमारे लिए असम्भव है और हम केवल यह कर सकते हैं कि रक्षा के लिए और तुरत-फुरत प्रहार करने के लिए अपनी सैन्य-शक्ति को विभक्त करें"। एक बार में तीन, पांच, आठ या दस ली तक चलने और आगे बढ़ आने तथा हर कदम पर किलेबन्दियां बनाकर लड़ने की शत्रु की कार्यनीति पूर्ण रूप से लाल सेना द्वारा हर कदम पर रक्षात्मक कार्यवाही करने का नतीजा थी। यदि भीतरी सैन्य-

पंक्तियों पर हमने इस कार्यनीति को तिलांजलि दे दी होती और जब भी आवश्यक और सम्भव होता, हमने मुड़कर शत्रु की भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर हमला कर दिया होता, तो निश्चय ही स्थिति भिन्न होती। सैन्य-शक्ति के केन्द्रीकरण का उसूल ही वास्तव में वह साधन है जिससे शत्रु की किलेबन्दी-लड़ाई की नीति को परास्त किया जा सकता है।

जिस सैन्य-शक्ति के केन्द्रीकरण की हम पैरवी करते हैं, उसका अर्थ यह नहीं कि जनता के छापामार युद्ध का त्याग कर दिया जाए। ली ली-सान की कार्यदिशा, जो यह कहती थी कि छोटे पैमाने के छापामार युद्ध का त्याग कर दिया जाए और "एक-एक राइफल लाल सेना में केन्द्रित कर दी जाए", बहुत पहले ही गलत साबित हो चुकी है। समूचे क्रान्तिकारी युद्ध की दृष्टि से तो जनता का छापामार युद्ध और नियमित लाल सेना आदमी के दाएं-बाएं हाथों की तरह एक दूसरे के पूरक हैं, तथा अगर हमारे पास केवल नियमित लाल सेना ही होती और जनता का छापामार युद्ध न होता, तो हम एक ऐसे योद्धा बन जाते जिसका केवल एक ही हाथ हो। ठोस शब्दों में और खास तौर पर फौजी कार्यवाही के सिलसिले में, जब हम आधार-क्षेत्रों की जनता की एक तत्व के रूप में चर्चा करते हैं तो हमारा तात्पर्य यह होता है कि हमारे पास एक सशस्त्र जनता है। यही इस बात का मुख्य कारण है कि दुश्मन हमारे आधार-क्षेत्र में आने से क्यों डरता है।

यह भी आवश्यक है कि गौण दिशाओं में कार्यवाहियां करने के लिए लाल सेना का एक भाग काम में लाया जाए ; यह नहीं कि लाल सेना की सभी शक्तियों को केन्द्रित करना चाहिए। जिस तरह

के सैन्य-शक्ति के केन्द्रीकरण की हम पैरवी करते हैं, वह इस उसूल पर आधारित है कि रणभूमि में फौजी कार्यवाही के लिए बिलकुल बरतर अथवा अपेक्षाकृत बरतर सैन्य-शक्ति की गारन्टी हो जाए। शक्तिशाली दुश्मन का मुकाबला करने के लिए या अत्यन्त महत्व के मोर्चे पर फौजी कार्यवाही करने के लिए हमारे पास नितान्त बरतर सैन्य-शक्ति होनी चाहिए। उदाहरण के लिए शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली मुहिम के खिलाफ हमारी जवाबी मुहिम में ३० दिसम्बर १६३० को हुई पहली लड़ाई के दौरान चाङ ह्वेइ-चान के ६,००० सैनिकों को हराने के लिए ४०,००० सैनिकों को केन्द्रित किया गया था। कमजोर शत्रु से निपटने के लिए या ऐसे मोर्चे पर फौजी कार्यवाही करने के लिए जो बहुत महत्व का नहीं है, अपेक्षाकृत बरतर सैन्य-शक्ति ही काफी होती है। उदाहरण के लिए हमारी दूसरी जवाबी मुहिम की २६ मई १६३१ की आखिरी लड़ाई में च्येननिङ में ल्यू हो-तिङ की ७,००० सैनिकों वाली डिवीजन को हराने के लिए लाल सेना के केवल १०,००० से कुछ ज्यादा सैनिक काम में लगाए गए थे।

हम यह नहीं कहते कि हर मौके पर सैन्य-शक्ति की बरतरी होनी ही चाहिए। किन्हीं विशेष परिस्थितियों में हम अपेक्षाकृत कमतर अथवा बिलकुल कमतर सैन्य-शक्ति के साथ भी रणभूमि में उतर सकते हैं। अपेक्षाकृत कमतर सैन्य-शक्ति को काम में लाने का एक उदाहरण लीजिए। जब किसी विशेष क्षेत्र में हमारे पास लाल सेना का केवल एक छोटा दस्ता ही हो (इसका यह अर्थ नहीं है कि हमारे पास ज्यादा सेना तो हो, किन्तु हमने उसे केन्द्रित नहीं किया हो), और जब जनता, धरातल, और मौसम आदि की

परिस्थितियां हमारे लिए बहुत अनुकूल हों, तो शत्रु की किसी बरतर सैन्य-शक्ति के हमले को विफल करने के लिए अवश्य ही यह आवश्यक है कि उसकी सैन्य-शक्ति के मध्यवर्ती कालम और एक बाजू को छापामार दस्तों या अपनी सैन्य-शक्ति के एक छोटे भाग द्वारा रोके रखा जाए और उसके दूसरे बाजू के एक भाग पर अचानक हमला करने के लिए लाल सेना की समस्त सैन्य-शक्ति केन्द्रित की जाए। इस तरह विजय प्राप्त की जा सकती है। जब हम दुश्मन के एक बाजू के एक भाग पर अचानक हमला करते हैं, तो कमतर सैन्य-शक्ति के मुकाबले में बरतर सैन्य-शक्ति इस्तेमाल करने और बहुतों से थोड़ों को परास्त करने का उसूल फिर भी लागू होता है। जब हम बिलकुल कमतर सैन्य-शक्ति द्वारा शत्रु से निपटते हैं, मिसाल के लिए जब कोई छापामार दस्ता श्वेत सेना के शक्तिशाली सैन्य-दल पर अचानक हमला तो करता है, लेकिन केवल शत्रु के एक छोटे भाग पर ही हमला करता है, तब भी यही उसूल लागू होता है।

जहां तक इस धारणा का ताल्लुक है कि फौजी कार्यवाही के लिए एक ही रणभूमि में एक विशाल सेना का केन्द्रीकरण धरातल, सड़कों, रसद-सप्लाई और ठिकाने की सुविधाओं की सीमाओं के अधीन होता है, उस पर हमें विभिन्न परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विचार करना चाहिए। ये सीमाएं जिस हद तक श्वेत सेना पर असर डालती हैं, उस हद तक लाल सेना पर नहीं, क्योंकि श्वेत सेना के मुकाबले लाल सेना ज्यादा कठिनाइयां झेल सकती है।

हम थोड़ों से बहुतों को परास्त करते हैं – यह हम चीन के सभी शासकों से कहते हैं। हम बहुतों से थोड़ों को परास्त करते हैं – यह हम रणभूमि में लड़ने वाले शत्रु के अलग-अलग सैन्य-दलों से कहते हैं। यह अब भेद की बात नहीं रह गई और शत्रु अब साधारणतया हमारे तौर-तरीकों से भली-भांति परिचित हो गया है। लेकिन वह न तो हमें विजय से वंचित कर सकता है और न ही अपनी हानि से बच सकता है, कारण यह कि उसे यह नहीं मालूम कि हम उस पर कब और कहां कार्यवाही करेंगे। इसे हम गुप्त रखते हैं। लाल सेना साधारणतया अपनी फौजी कार्यवाही आकस्मिक हमलों के जरिए करती है।

७. चलायमान लड़ाई

चलायमान लड़ाई चलाई जाए या मोर्चेबद्ध लड़ाई? हमारा उत्तर है: चलायमान लड़ाई चलाई जाए। जब तक हमारे पास बड़ी फौज न हो, जब तक हमारे पास गोला-बारूद का भण्डार न हो, और जब तक हर आधार-क्षेत्र में लाल सेना का एक ही दस्ता पूरी लड़ाई चलाने में लगा हो, तब तक मोर्चेबद्ध लड़ाई हमारे लिए बुनियादी तौर पर व्यर्थ है। रक्षा या आक्रमण दोनों में मोर्चेबद्ध लड़ाई हमारे लिए बुनियादी तौर पर चलाने योग्य नहीं है।

लाल सेना की फौजी कार्यवाही का एक विशिष्ट लक्षण यह है कि उसकी फौजी कार्यवाही की कोई स्थिर पंक्ति नहीं होती, जो इस बात का परिणाम है कि शत्रु शक्तिशाली है और लाल सेना तकनीकी साज-सामान में कमजोर है।

लाल सेना की फौजी कार्यवाही की पंक्तियां उसकी फौजी कार्यवाही की दिशा के आधार पर ही निर्धारित की जाती हैं। चूंकि उसकी फौजी कार्यवाही की दिशा अस्थिर है, इसलिए उसकी फौजी

कार्यवाही की पंक्तियां भी अस्थिर हैं। यद्यपि काल विशेष में मुख्य दिशा नहीं बदलती, फिर भी उसके अन्दर की कुछ गौण दिशाएं किसी भी क्षण बदल सकती हैं; जब हमें एक दिशा में रोक दिया जाए, तो हमें दूसरी दिशा में बढ़ना चाहिए। यदि एक निश्चित अरसे के बाद हमें मुख्य दिशा में भी रोक दिया जाए, तो हमें इस मुख्य दिशा को भी बदल देना चाहिए।

क्रान्तिकारी गृहयुद्ध में फौजी कार्यवाही की पंक्तियां स्थिर नहीं हो सकतीं। यही बात सोवियत संघ में भी हुई थी। सोवियत सेना और हमारी सेना में अन्तर यह है कि सोवियत सेना की फौजी कार्यवाही की पंक्तियां उतनी ज्यादा अस्थिर नहीं थीं जितनी हमारी। किसी भी युद्ध में फौजी कार्यवाही की पंक्तियां बिलकुल स्थिर नहीं हो सकतीं क्योंकि विजय और पराजय, आगे बढ़ने और पीछे हटने जैसे परिवर्तन ऐसा होने नहीं देते। लेकिन फौजी कार्यवाही की अपेक्षाकृत स्थिर पंक्तियां अक्सर सामान्य युद्धों में देखने में आती हैं। अपवाद केवल वह युद्ध है जिसमें कोई कमजोर सेना काफी शक्तिशाली शत्रु का सामना करती है, जैसे वह युद्ध जिसे मौजूदा मंजिल में चीनी लाल सेना चला रही है।

फौजी कार्यवाही की पंक्तियों की परिवर्तनशीलता से हमारे आधार-क्षेत्रों का साइज भी बदलता रहता है। हमारे आधार-क्षेत्रों का लगातार प्रसार और संकुचन होता रहता है, और अक्सर यह भी होता है कि जब एक आधार-क्षेत्र का उदय होता है तो दूसरे का पतन हो जाता है। हमारे प्रदेश की यह परिवर्तनशीलता पूरी तरह युद्ध की परिवर्तनशीलता के कारण ही पैदा होती है।

युद्ध और हमारे प्रदेश की परिवर्तनशीलता के प्रभाव से हमारे

आधार-क्षेत्र में तरह-तरह का निर्माण-कार्य भी परिवर्तनशील हो जाता है। ऐसी निर्माण-योजनाओं के बारे में, जो कई वर्षों तक चलें, सोचा भी नहीं जा सकता। योजनाओं को अक्सर बदलना हमारे लिए आम बात है।

यहां इस विशेषता को मान लेना हमारे लिए लाभदायक होगा। इस विशेषता के आधार पर ही हमें अपनी योजनाएं बनानी चाहिए। हमें इस तरह के भ्रमजाल के चक्कर में नहीं आना चाहिए कि युद्ध में हम लगातार बढ़ते रहेंगे और पीछे नहीं हटेंगे; न तो हमें अपने प्रदेश और सेना के पृष्ठभाग की अस्थाई परिवर्तनशीलता से घबराना चाहिए और न लम्बी अवधि के लिए ब्योरेवार योजनाएं बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। हमें अपने विचारों और कार्यों को परिस्थितियों के अनुकूल ढालना चाहिए; हम बैठने के लिए भी तैयार रहें और चलने के लिए भी, तथा अपने राशन के झोले को हमेशा अपने साथ रखें। आज के परिवर्तनशील जीवन में उद्यम करके ही हम कल के लिए अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व वाला जीवन और अन्त में पूर्ण स्थायित्व वाला जीवन प्राप्त कर सकेंगे।

"घेरा डालने और विनाश करने" के खिलाफ पांचवीं जवाबी मुहिम में जिस "नियमित युद्ध" की रणनीति का बोलबाला था, वह इस परिवर्तनशीलता को अस्वीकार करती थी और उस चीज का भी विरोध करती थी जिसे उसने "छापामारवाद" की संज्ञा दी थी। जो साथी परिवर्तनशीलता का विरोध करते थे, वे किसी बड़े राज्य के शासक होने का ढोंग रचकर सारा कामकाज चलाते थे। इसका परिणाम निकला – परिवर्तनशीलता का एक असाधारण और विराट रूप – २५,००० ली का लम्बा अभियान।

मजदूर-किसानों का हमारा जनवादी गणराज्य एक राज्य है, लेकिन अभी तक वह एक पूर्ण राज्य नहीं बना। गृहयुद्ध में हम अब भी रणनीतिक रक्षा के दौर में हैं, हमारी राजनीतिक सत्ता का रूप अब भी एक पूर्ण राज्य से दूर है, हमारी सेना संख्या और तकनीकी साज-सामान दोनों की दृष्टि से अब भी शत्रु-सेना के मुकाबले बहुत कमजोर है, हमारा प्रदेश अब भी बहुत छोटा है और हमारा शत्रु जब तक हमारा नाश न कर ले तब तक एक घड़ी के लिए भी चैन से नहीं बैठेगा। इन तथ्यों के आधार पर हमें अपनी नीति निर्धारित करते समय छापामारवाद का सामान्य रूप से विरोध करने के बदले ईमानदारी से लाल सेना के छापामार स्वरूप को स्वीकार करना चाहिए। इस विषय में लज्जित होना व्यर्थ है। इसके विपरीत, यह छापामार स्वरूप वस्तुतः हमारी विशेषता है, हमारा गुण है, शत्रु को हराने का हमारा साधन है। इसे छोड़ देने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए, लेकिन इसे हम अभी छोड़ नहीं सकते। भविष्य में यह स्वरूप अवश्य एक लज्जित होने वाली बात बन जाएगा और हमें उसे जरूर छोड़ देना होगा। लेकिन आज यह एक अमूल्य वस्तु है और इसे दृढ़ता से बनाए रखना चाहिए।

"हम तभी लड़ते हैं जब हम जीत सकते हों, तथा जहां जीतने की सम्भावना न हो वहां से चले जाते हैं" – आज हमारी चलायमान लड़ाई की लोकप्रिय व्याख्या इस प्रकार की जाती है। संसार में कहीं कोई भी ऐसा फौजी विशेषज्ञ नहीं है जो केवल लड़ते रहने का समर्थन करता हो और चलने की बात को अस्वीकार करता हो, यद्यपि जितना ज्यादा हम लोग चलते हैं उतना ज्यादा दूसरी सेना नहीं चलती। आम तौर पर हम चलने में ज्यादा समय खर्च करते

हैं और लड़ने में कम। महीने में एक बड़ी लड़ाई की औसत हमारे लिए काफी अच्छी है। हमारा सभी तरह का "चलना" "लड़ने" के लिए होता है। हमारी समूची रणनीति और मुहिम सम्बन्धी नीति "लड़ने" के आधार पर ही बनाई जाती है। फिर भी कुछ परिस्थितियां ऐसी होती हैं जिनमें हमारे लिए लड़ना कठिन होता है। पहले तो उस समय लड़ना कठिन होता है जब हमारे सामने मौजूद शत्रु-दल हमसे बड़ा हो। दूसरे, कभी-कभी उस समय भी लड़ना कठिन होता है जब हमारे सामने मौजूद शत्रु-दल बड़ा न होने पर भी समीप के दूसरे शत्रु-दलों के बहुत निकट हो। तीसरे, साधारणतः उस समय लड़ना कठिन होता है जब शत्रु-दल अकेला न पड़ा हो और उसने मजबूती से मोर्चेबन्दी कर रखी हो। चौथे, उस लड़ाई को जारी रखना कठिन होता है जिसमें विजय निकट न दिखाई दे। इनमें से किसी भी परिस्थिति में हम चलने के लिए तैयार रहते हैं। इस तरह से चलना उचित है और आवश्यक भी। क्योंकि चलने की आवश्यकता की हमारी स्वीकृति लड़ने की आवश्यकता को स्वीकार कर लेने की बात पर आधारित होती है। लाल सेना की चलायमान लड़ाई की मूल विशेषता यही है।

चलायमान लड़ाई को प्रधान मानते हुए भी हम मोर्चेबद्ध लड़ाई को, जहां वह आवश्यक और सम्भव हो, अमान्य नहीं ठहराते। यह मान लेना चाहिए कि रणनीतिक रक्षा के दौरान जब शत्रु को रोके रखने की किसी कार्यवाही में हम दृढ़ता से किन्हीं महत्वपूर्ण स्थलों की रक्षा कर रहे हों, और रणनीतिक आक्रमण के दौरान जब हमारा मुकाबला अकेले पड़े हुए समर्थनहीन शत्रु से हो, तब हमें मोर्चेबद्ध लड़ाई करनी चाहिए। इस तरह की मोर्चेबद्ध लड़ाई करके

शत्रु को हराने में हमें काफी अनुभव प्राप्त हुआ है। हमने शत्रु के बहुत से नगर, किलेबन्दियां और दुर्ग तोड़े हैं तथा रणभूमि में शत्रु की अपेक्षाकृत मजबूत मोर्चेबन्दियों को ध्वस्त करके हम निकल आए हैं। भविष्य में हम इस विषय में और प्रयत्न करेंगे और अपनी खामियों को दूर करेंगे। हमें इस बात का पूरा समर्थन करना चाहिए कि परिस्थितियों की आवश्यकता और अनुकूलता के अनुसार ही मोर्चेबद्ध हमले किए जाएं या मोर्चेबद्ध रक्षा की जाए। इस समय हम केवल सामान्य रूप से मोर्चेबद्ध लड़ाई को स्वीकार करने या उसे चलायमान लड़ाई के समकक्ष रखने का विरोध करते हैं; इसकी इजाजत हरगिज नहीं दी जा सकती।

क्या दस साल के गृहयुद्ध के दौरान लाल सेना के छापामार स्वरूप में, उसकी फौजी कार्यवाही की स्थिर पंक्तियों के अभाव में, उसके आधार-क्षेत्रों की परिवर्तनशीलता में या आधार-क्षेत्रों के अन्दर निर्माण-कार्य की परिवर्तनशीलता में कभी रंचमात्र भी तब्दीली नहीं हुई? हां, तब्दीली हुई है। चिङकाङशान पहाड़ों के दिनों से च्याङशी में "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ हमारी पहली जवाबी मुहिम की पूर्ववेला तक पहला दौर था, जब छापामार स्वरूप और परिवर्तनशीलता बहुत उभरी हुई थी, लाल सेना अपनी शैशव अवस्था में थी और आधार-क्षेत्र अभी छापामार इलाके ही थे। "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ पहली से तीसरी जवाबी मुहिमों तक दूसरा दौर था, जब छापामार स्वरूप और परिवर्तनशीलता काफी कम हो गई थी, मोर्चा-सेनाएं कायम की गई थीं और दसियों लाख की आबादी वाले आधार-क्षेत्र कायम किए जा चुके थे। "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ तीसरी जवाबी मुहिम के बाद से पांचवीं जवाबी मुहिम तक तीसरा दौर था, जब छापामार स्वरूप और परिवर्तनशीलता और भी कम हो गई थी, तथा केन्द्रीय सरकार और क्रान्तिकारी फौजी कमीशन की स्थापना हो गई थी। लम्बा अभियान उसका चौथा दौर था। छोटे पैमाने की छापामार लड़ाई और छोटे पैमाने की परिवर्तनशीलता को गलती से ठुकराने की वजह से बड़े पैमाने की छापामार लड़ाई और बड़े पैमाने की परिवर्तनशीलता का जन्म हो गया। अब हम पांचवें दौर में हैं। "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम को नष्ट करने में असफल रहने और बड़े पैमाने की परिवर्तनशीलता के परिणामस्वरूप लाल सेना और आधार-क्षेत्रों में काफी कमी हो गई है, मगर फिर भी हमने उत्तर-पश्चिम में अपने पैर जमा लिए हैं और वहां अपने आधार-क्षेत्र शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र को सुदृढ़ और विकसित कर लिया है। तीनों मोर्चा-सेनाएं, जो लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति हैं, एकीकृत कमान में आ गई हैं, जो एक अभूतपूर्व घटना है।

हमारे द्वारा जो रणनीति अपनाई गई, उसके स्वरूप के अनुसार यह भी कहा जा सकता है कि चिङकाङशान पहाड़ों के दिनों से लेकर "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ चौथी जवाबी मुहिम तक का काल पहला दौर था, पांचवीं जवाबी मुहिम का काल दूसरा दौर था और लम्बे अभियान से लेकर अब तक का काल तीसरा दौर है। पांचवीं जवाबी मुहिम में लोगों ने पिछले दिनों की सही नीति को गलती से ठुकरा दिया था। आज हमने भी पांचवीं जवाबी मुहिम के समय स्वीकृत गलत नीति को

सही तौर पर ठुकरा दिया है और पहले की सही नीति की फिर से स्थापना कर दी है। फिर भी न तो हमने पांचवीं जवाबी मुहिम के समय की हर चीज को ठुकरा दिया है और न उससे पहले की हर चीज की पुनर्स्थापना की है। हमने केवल पिछले दिनों की अच्छी चीजों की ही पुनर्स्थापना की है और पांचवीं जवाबी मुहिम में जो गलतियां हुई थीं उन्हें त्याग दिया है।

छापामारवाद के दो पहलू हैं। एक है उसकी अनियमितता, यानी विकेन्द्रीकरण, अनेकीकरण, कठोर अनुशासन का अभाव, काम के तरीकों की सरलता। ये सब बातें लाल सेना के शैशव काल में ही पैदा हो गई थीं और इनमें से कुछ ऐसी हैं जो उस समय की मांग के बिलकुल अनुकूल थीं। लेकिन जैसे-जैसे लाल सेना एक ऊंची मंजिल पर पहुंचती जाती है, वैसे-वैसे हमें कदम-ब-कदम और सचेत रूप से इन बातों को दूर करते जाना चाहिए, जिससे लाल सेना का और ज्यादा केन्द्रीकरण और एकीकरण हो जाए, वह और ज्यादा अनुशासित हो जाए और अपने काम में चौतरफा रूप से और ज्यादा माहिर हो जाए – कहने का तात्पर्य यह कि वह स्वरूप में और नियमित हो जाए। फौजी कार्यवाही के निर्देशन में भी हमें कदम-ब-कदम और सचेत रूप से छापामार स्वरूप को कम करना चाहिए जिसकी अब ऊंची मंजिल में जरूरत नहीं रह गई है। इस ओर प्रगति करने से इनकार करने और हठपूर्वक पुरानी मंजिल से चिपके रहने की इजाजत नहीं दी जा सकती ; यह सब हानिकर है, और इससे बड़े पैमाने की फौजी कार्यवाहियों को हानि पहुंचेगी।

छापामारवाद का अन्य पहलू यह है – चलायमान लड़ाई का उसूल, रणनीति और मुहिम दोनों से सम्बन्धित फौजी कार्यवाहियों

का छापामार स्वरूप जो अब भी आवश्यक है, हमारे आधार-क्षेत्रों की अनिवार्य परिवर्तनशीलता, आधार-क्षेत्रों के निर्माण-कार्यों की हमारी योजनाओं का लचीलापन, और लाल सेना के निर्माण में असामयिक नियमितता की अस्वीकृति। इस सिलसिले में ऐतिहासिक तथ्यों को न मानना, जो उपयोगी है उसे बनाए रखने का विरोध करना, उतावलेपन के साथ मौजूदा मंजिल को छोड़ देना और उस "नई मंजिल" की ओर अन्धाधुन्ध दौड़ पड़ना जो लुभावनी होने पर भी अभी दुर्गम है और जिसका अभी कोई वास्तविक महत्व नहीं है, इन तमाम बातों की भी हरगिज इजाजत नहीं दी जा सकती और ये तमाम बातें हानिकर हैं तथा हमारी वर्तमान फौजी कार्यवाही के लिए अहितकर साबित होंगी।

लाल सेना के तकनीकी साज-सामान और संगठन की दृष्टि से अब हम एक नई मंजिल के आविर्भाव की पूर्ववेला में पहुंच गए हैं। हमें इस नई मंजिल में पदार्पण करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इस तरह तैयार न रहना गलत होगा तथा हमारे भावी युद्ध-कार्य के लिए हानिकर होगा। भविष्य में जब लाल सेना के तकनीकी साज-सामान और संगठन की अवस्था बदल जाएगी और लाल सेना का निर्माण-कार्य एक नई मंजिल में प्रवेश करेगा, तब उसकी फौजी कार्यवाही की दिशा अपेक्षाकृत निश्चित हो जाएगी तथा उसकी फौजी कार्यवाही की पंक्तियां अपेक्षाकृत स्थिर हो जाएंगी ; मोर्चेबद्ध लड़ाई अधिक होगी ; युद्ध की परिवर्तनशीलता, हमारे प्रदेश और हमारे निर्माण-कार्य की परिवर्तनशीलता बहुत कम हो जाएगी और अन्त में बिलकुल समाप्त हो जाएगी ; तथा ऐसी हालत में हमारी वर्तमान बाधाएं, जैसे शत्रु की बरतरी और उसके द्वारा

कायम रखी गई मजबूत मोर्चेबन्दियां, हमारा रास्ता नहीं रोक सकेंगी।

इस समय एक ओर हम "वामपंथी" अवसरवाद के प्रभुत्व के समय के गलत उपायों का विरोध करते हैं, तथा दूसरी ओर लाल सेना के शैशव काल की बहुत सी अनियमित बातों को, जिनकी अब जरूरत नहीं है, पुनर्जीवित करने का विरोध करते हैं। लेकिन हमें सेना-निर्माण, रणनीति और कार्यनीति के उन बहुत से मूल्यवान उसूलों की दृढ़ता से पुनर्स्थापना करनी चाहिए जिनके द्वारा लाल सेना सदा विजय प्राप्त करती आई है। हमें चाहिए कि पिछले काल में जो कुछ श्रेष्ठ था, उसका सार निकालें, उसको एक व्यवस्थित, अधिक समुन्नत और अधिक समृद्ध फौजी कार्यदिशा में संचित करें जिससे कि हम आज अपने दुश्मन को परास्त कर सकें और भविष्य में नई मंजिल की ओर बढ़ने की तैयारी कर सकें।

चलायमान लड़ाई करने के साथ बहुत सी समस्याएं जुड़ी हुई हैं, जैसे फौजी टोह लेना, सही अन्दाजा लगाना, निर्णय करना, लड़ाई का सैन्य-विन्यास, कमान, छिपाव, केन्द्रीकरण, आगे बढ़ना, फैलाव, हमला करना, पीछा करना, आकस्मिक हमला, मोर्चेबद्ध हमला, मोर्चेबद्ध रक्षा, अप्रत्याशित मुठभेड़ की कार्यवाही, पीछे हटना, रात की लड़ाई, विशेष फौजी कार्यवाही, शहजोर से बचना और कमजोर पर हमला करना, दुश्मन की कुमक पर हमला करने के लिए उसके दुर्ग पर घेरा डालना, झूठा हमला करना, हवाई हमले से बचाव करना, शत्रु की अनेक फौजों के बीच रहने पर कार्यवाही करना, शत्रु के सामने से बचकर फौजी कार्यवाही करना, एक के बाद एक लगातार कार्यवाही करते जाना, पृष्ठभाग के बिना कार्यवाही करना, विश्राम और शक्ति-संचय की आवश्यकता इत्यादि। लाल सेना के युद्ध-इतिहास में इन समस्याओं की बहुत सी अपनी विशेषताएं जाहिर हुई हैं। इन विशेषताओं का मुहिम-विज्ञान में व्यवस्थित रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए और उनका सारांश निकाला जाना चाहिए। यहां मैं उनकी चर्चा नहीं करूंगा।

८. तुरत निर्णय की लड़ाई

रणनीति की दृष्टि से दीर्घकालीन युद्ध और मुहिम या लड़ाई में तुरत निर्णय की लड़ाई एक ही वस्तु के दो पहलू हैं, और ये दो उसूल हैं जिन पर गृहयुद्ध में समान रूप से एक साथ जोर दिया जाना चाहिए और जो साम्राज्यवाद-विरोधी युद्ध में भी लागू होते हैं।

चूंकि प्रतिक्रियावादी शक्तियां बहुत मजबूत हैं, इसलिए क्रान्तिकारी शक्तियां धीरे-धीरे ही बढ़ती हैं, और इसी से हमारे युद्ध का दीर्घकालीन स्वरूप निश्चित होता है। इस बारे में बेसब्री दिखाना हानिकर है और "तुरत निर्णय" की पैरवी करना गलत है। दस साल तक हम जिस क्रान्तिकारी युद्ध में लड़ते रहे हैं, वह दूसरे देशों में आश्चर्य की बात भले ही हो, हमारे लिए तो वह महज "अष्टपदी निबन्ध" के प्रारम्भिक अंश जैसा है – उसकी "प्रस्तावना, परिवर्धन और प्रारम्भिक व्याख्या" मात्र है[१७] – और बहुत से रोचक अंशों का आना अभी बाकी है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि घरेलू और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितियों के प्रभाव से इसके भावी विकास की गति पहले से बहुत तेज हो जाएगी। चूंकि अन्तरराष्ट्रीय और घरेलू परिस्थिति में अब परिवर्तन हो चुका है और भविष्य में और भी

बड़े परिवर्तन होंगे, इसलिए यह कहा जा सकता है कि धीमे विकास और अकेले लड़ने की पिछली अवस्था से हम बाहर निकल आए हैं। फिर भी हमें रातोंरात सफलता पाने की आशा नहीं करनी चाहिए। "सवेरे नाश्ता करने से पहले ही शत्रु का सफाया करने" की आकांक्षा रखना सराहनीय है, लेकिन ऐसा करने की ठोस योजना बनाना अनुचित है। चूंकि चीन की प्रतिक्रियावादी ताकतों के पीछे अनेक साम्राज्यवादी शक्तियां हैं, इसलिए हमारा क्रान्तिकारी युद्ध तब तक दीर्घकालीन युद्ध बना रहेगा, जब तक कि देश-विदेश के शत्रुओं के मुख्य मोर्चों को तोड़ने के लिए चीन की क्रान्तिकारी शक्तियां पर्याप्त शक्ति नहीं जुटा लेंगी, तथा जब तक अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी शक्तियां अधिकांश अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रियावादी शक्तियों को तहस-नहस नहीं कर देंगी या उन्हें रोक नहीं लेंगी। दीर्घकालीन युद्ध चलाने की अपनी रणनीति निर्धारित करने में इस बिन्दु से प्रस्थान करना हमारी रणनीति का मार्गदर्शन करने वाले महत्वपूर्ण उसूलों में से एक है।

मुहिमों और लड़ाइयों पर इससे उल्टी बात लागू होती है — उन पर दीर्घकालीनता का नहीं, बल्कि तुरत निर्णय का उसूल लागू होता है। मुहिम और लड़ाई में तुरत निर्णय की चेष्टा की जाती है, और यह बात सभी कालों और सभी देशों में सच है। समूचे युद्ध में भी सभी कालों और सभी देशों में तुरत निर्णय की मांग की जाती है तथा देर तक खिचने वाले युद्ध को हानिकर समझा जाता है। लेकिन चीन के युद्ध को बहुत ही धीरज के साथ चलाना पड़ रहा है और उसे दीर्घकालीन युद्ध के रूप में चलाना पड़ रहा है। जिन दिनों ली ली-सान की कार्यदिशा का बोलबाला था, उन दिनों कुछ

लोग हमारे काम करने के ढंग को "शैडो-बाक्सिंग के दांवपेंच" कहकर उसका मजाक उड़ाते थे (जिसका अर्थ था बड़े शहरों पर अधिकार करने से पहले, आगे और पीछे बहुत सी लड़ाइयों के दांव-पेंच अपनाना)। और हम पर ऐसी फबतियां कसते थे कि जब तक हमारे बाल सफेद नहीं हो जाएंगे, तब तक हमें क्रान्ति की विजय के दर्शन नहीं हो पाएंगे। इस तरह की बेसब्री बहुत पहले ही गलत साबित हो चुकी है। लेकिन इन लोगों ने यदि यह आलोचना रण-नीति के बदले मुहिमों और लड़ाइयों के बारे में की होती, तो वह बिलकुल सही होती। इसके कारण ये हैं : पहला यह कि लाल सेना के पास अपने हथियारों और खासकर गोला-बारूद की कमी को पूरा करने का कोई स्रोत नहीं है; दूसरा यह कि श्वेत सेना में बहुत सी फौजें होती हैं जबकि लाल सेना के पास सिर्फ एक ही फौज है, इसलिए दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की हरेक मुहिम को तोड़ने के लिए हमारी सेना को तेजी से लगातार एक के बाद एक फौजी कार्यवाही में भाग लेने के लिए तैयार रहना पड़ता है; तीसरा यह कि यद्यपि श्वेत सेना की विभिन्न फौजें अलग-अलग कालमों में आगे बढ़ती हैं, फिर भी उनमें से अधिकांश बहुत कुछ एक दूसरे के निकट बनी रहती हैं, तथा अगर हम उनमें से किसी एक के खिलाफ तुरत निर्णय की लड़ाई नहीं जीतेंगे, तो बाकी सब हम पर टूट पड़ेंगी। इन कारणों से हमें तुरत निर्णय की लड़ाइयां करनी पड़ती हैं। कुछ घण्टों में या एक-दो दिन में एक लड़ाई खत्म करना हमारे लिए आम बात है। घेरा डालने की अपनी फौजी कार्यवाही में हम इस उसूल के मातहत ही काफी हद तक दीर्घकालीनता के लिए तैयार रहते हैं कि "दुश्मन की कुमक पर हमला करने के लिए

उसके दुर्ग पर घेरा डाला जाए", जिसका उद्देश्य घेरे के अन्दर पड़े हुए शत्रु पर नहीं बल्कि उसकी कुमक पर प्रहार करना होता है ; लेकिन तब भी हम उसकी कुमक से तुरत निपटने की ही कोशिश करते हैं। दीर्घकालीन कार्यवाही की योजना अक्सर उन मुहिमों या लड़ाइयों में लागू होती है जब हम रणनीतिक रक्षा के दौरान शत्रु को रोके रखने की कार्यवाही में किसी किले की डटकर रक्षा कर रहे हों, अथवा जब हम रणनीतिक आक्रमण के दौरान शत्रु के अकेले पड़े हुए, सहायताहीन सैन्य-दल पर हमला कर रहे हों या अपने आधार-क्षेत्र में श्वेत गढ़ों को खत्म कर रहे हों। लेकिन इस तरह की दीर्घकालीन कार्यवाहियां तुरत निर्णय की लड़ाइयां चलाने में बाधा डालने के बदले लाल सेना की मुख्य शक्ति की मदद ही करती हैं।

केवल चाहने भर से तुरत निर्णय में सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती। उसके लिए अनेक विशेष शर्तों की जरूरत होती है। मुख्य शर्तें ये हैं : भरपूर तैयारियां, ऐन मौके का फायदा उठाना, बरतर सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण, घेरेबन्दी करने और बगल से कतरा कर निकल जाने की कार्यनीतियां, अनुकूल धरातल, और शत्रु पर उस समय प्रहार करना जब वह कूच कर रहा हो अथवा जब उसने पड़ाव तो डाल लिया हो लेकिन अपनी मोर्चेबन्दियों को अभी मजबूत न बना पाया हो। जब तक ये शर्तें पूरी नहीं होतीं, तब तक किसी मुहिम अथवा लड़ाई में तुरत निर्णय करना असम्भव है।

दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को नष्ट करना अपने आपमें एक बड़ी मुहिम है, और उस पर भी दीर्घ-कालीनता के उसूल के बदले तुरत निर्णय का उसूल ही लागू होता है। कारण यह कि आधार-क्षेत्र का जन-बल, वित्तीय साधन और फौजी शक्ति आदि स्थितियां दीर्घकालीनता की अनुमति नहीं देतीं।

तुरत निर्णय को सामान्य उसूल मानते हुए हमें अनुचित बेसब्री का विरोध करना चाहिए। यह बिलकुल आवश्यक है कि एक क्रान्ति-कारी आधार-क्षेत्र की सर्वोच्च फौजी और राजनीतिक नेतृत्वकारी संस्था अपने इलाके की इन स्थितियों तथा शत्रु की स्थिति पर विचार करने के बाद दुश्मन की उद्दण्डता से आतंकित न हो, जो कठिनाइयां सही जा सकती हैं उनका सामना होने पर निरुत्साहित न हो, या असफलताओं से पस्त न हो, बल्कि आवश्यक धैर्य और स्थिरता से काम ले। च्याङशी प्रान्त में दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पहली मुहिम को तहस-नहस कर देने में, प्रारम्भिक लड़ाई से अन्तिम लड़ाई तक, सिर्फ एक हफ्ते का समय ही लगा था ; दूसरी मुहिम एक पखवारे के भीतर ही नष्ट कर दी गई थी ; तीसरी मुहिम तीन महीने तक खिंची ; चौथी में तीन हफ्ते लगे और पांचवीं ने साल भर तक हमारे धैर्य की परीक्षा ली। फिर भी जब हम पांचवीं मुहिम को नष्ट नहीं कर पाए और घेरा तोड़कर निकलने पर मजबूर हुए, उस समय हममें एक तरह की अनुचित जल्दबाजी दिखाई दी। उस समय की परिस्थिति में यह सम्भव था कि अपने सैनिकों को विश्राम करने और पुनर्गठित होने का मौका देने के लिए हम दो-तीन महीने और डटे रहते। यदि यह किया जाता और घेरा तोड़कर निकलने के बाद अगर नेतृत्व थोड़ी और बुद्धिमानी से काम लेता, तो स्थिति बहुत भिन्न होती।

इस सबके बावजूद हर उपाय से मुहिम की अवधि को कम करने

का उसूल अब भी मान्य बना हुआ है। मुहिमों और लड़ाइयों की योजनाओं का यह तकाजा है कि सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण, चलायमान लड़ाई वगैरह के लिए भरसक प्रयत्न किया जाए, जिससे कि भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर (अर्थात, आधार-क्षेत्र के अन्दर) शत्रु की प्रभावकारी शक्ति को नष्ट करने और उसकी "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को तुरत परास्त करने की गारन्टी हो जाए। लेकिन जब यह स्पष्ट हो जाए कि हमारी भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम को खत्म नहीं किया जा सकता, तब हमें शत्रु का घेरा तोड़कर निकलने के लिए लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति को काम में लाना चाहिए और अपनी बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर, यानी शत्रु की भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर बढ़कर शत्रु को परास्त कर देना चाहिए। आज जब कि शत्रु ने किलेबन्दी-लड़ाई की कार्यनीति को एक ऊंचे दर्जे तक विकसित कर लिया है, तब यह हमारी फौजी कार्यवाही की एक सामान्य पद्धति बन जाएगा। शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिम के खिलाफ हमारी पांचवीं जवाबी मुहिम शुरू होने के दो महीने बाद जब फ़ूच्येन घटना हुई, तब निस्सन्देह लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्ति को शीघ्रता से च्याङसू-चच्याङ-आनह्वेइ-च्याङशी क्षेत्र में – जिसका केन्द्र चच्याङ था – बढ़ना चाहिए था। और उसे हाङचओ, सूचओ, नानकिङ, ऊहू, नानछाङ और फ़ूचओ के बीच के प्रदेश में कूच करके सर्वत्र छा जाना चाहिए था, जिससे वह हमारी रणनीतिक रक्षा को रणनीतिक आक्रमण में बदल देती, शत्रु के मर्म-स्थलों के लिए खतरा बन जाती और उन विशाल प्रदेशों में शत्रु को लड़ाई के लिए ललकारती जिनमें किलेबन्दियां नहीं थीं।

इस तरह हम दक्षिणी च्याङशी और पश्चिमी फ़ूच्येन पर हमला करने वाली शत्रु-सेना को मजबूर कर सकते थे कि वह लौटकर अपने मर्म-स्थलों की रक्षा करे, च्याङशी के आधार-क्षेत्र पर उसका आक्रमण विध्वस्त कर देते और फ़ूच्येन की जन-सरकार की सहायता करते – इस तरह के उपायों से हम अवश्य ही उसकी सहायता कर सकते थे। चूंकि यह योजना अस्वीकार कर दी गई थी, इसलिए दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम को तहस-नहस नहीं किया जा सका और फ़ूच्येन की जन-सरकार ढहे बिना नहीं रही। सालभर लड़ने के बाद हालांकि चच्याङ में बढ़ चलने का उचित मौका नहीं रह गया था, फिर भी हम दूसरी दिशा में मुड़कर रणनीतिक आक्रमण कर सकते थे, यानी अपनी मुख्य सैन्य-शक्ति को हुनान की तरफ भेज सकते थे, हुनान से क्वेइचओ की तरफ नहीं, बल्कि हुनान के मध्य भाग में कूच करा सकते थे और इस तरह शत्रु को भुलावा देकर च्याङशी से हुनान ला सकते थे और वहां उसका ध्वंस कर सकते थे। चूंकि यह योजना भी ठुकरा दी गई, इसलिए शत्रु की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम को नष्ट करने की समस्त आशाओं पर अन्त में पानी फिर गया और लम्बे अभियान के सिवाय और कोई चारा नहीं रह गया।

६. विनाश की लड़ाई

"घिसाऊ-थकाऊ संग्राम" की पैरवी करना इस समय चीन की लाल सेना के लिए अनुचित है। "सम्पदा के लिए संग्राम" दो ड्रैगन-नरेशों के बीच न होकर ड्रैगन-नरेश और भिखारी के बीच हो, यह

हास्यास्पद है। लाल सेना के लिए, जो प्राय: अपनी सभी सामग्री शत्रु से प्राप्त करती है, विनाश की लड़ाई बुनियादी नीति है। शत्रु की प्रभावकारी शक्ति को नष्ट करके ही हम उसकी "घेरा डालने और विनाश करने" की मुहिमों को नष्ट कर सकते हैं और अपने क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का विस्तार कर सकते हैं। शत्रु के सैनिकों को हताहत करना शत्रु का विनाश करने का एक साधन है, अन्यथा वह निरर्थक है। हम शत्रु के सैनिकों को हताहत करने में स्वयं भी क्षति उठाते हैं, लेकिन फिर भी उसकी यूनिटों को नष्ट करके अपनी क्षतिपूर्ति कर लेते हैं और इस प्रकार न सिर्फ अपना नुकसान पूरा कर लेते हैं बल्कि अपनी सेना की शक्ति को और भी ज्यादा बढ़ा लेते हैं। अधिक शक्ति वाले शत्रु के लिए तितर-बितर करने वाली लड़ाई एक ऐसी लड़ाई नहीं होती जिसमें हार-जीत का बुनियादी तौर से निर्णय किया जा सके। इसके विपरीत विनाश की लड़ाई हर तरह के शत्रु पर भारी और तात्कालिक प्रभाव डालती है। किसी की दस उंगलियां घायल करना उतना कारगर नहीं होता जितना उनमें से एक को काट देना, तथा शत्रु की दस डिवीजनों को तितर-बितर कर देना उतना कारगर नहीं होता जितना उनमें से एक का सफाया कर देना।

"घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी मुहिमों से निपटने के लिए हमारी नीति विनाश की लड़ाई की थी। हर मुहिम में जितनी शत्रु-सेना का विनाश होता था, वह शत्रु की सम्पूर्ण शक्ति का एक अंश ही होती थी, फिर भी "घेरा डालने और विनाश करने" की ये सभी मुहिमें नष्ट कर दी गई। लेकिन "घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की पांचवीं मुहिम के खिलाफ जवाबी मुहिम में इससे उल्टी नीति अपनाई गई जिससे दरअसल शत्रु को अपना मकसद हासिल करने में सहायता मिली।

विनाश की लड़ाई का अर्थ तथा बरतर सैन्य-शक्तियों का केन्द्रीकरण करने और घेरेबन्दी करने और बगल से कतराकर निकल जाने की कार्यनीति अपनाने का अर्थ एक ही होता है। दूसरी बात के बिना पहली बात हो नहीं सकती। विनाश करने के लिए इस तरह की सभी परिस्थितियां अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं – जैसे जनता का समर्थन, अनुकूल धरातल, प्रहार योग्य शत्रु-सेना और आकस्मिक कार्यवाही।

शत्रु-सेना को तितर-बितर करना या उसे बचकर निकल जाने देना भी सिर्फ तभी अर्थसूचक होता है जब समूची लड़ाई या मुहिम में हमारी मुख्य सैन्य-शक्ति शत्रु के निर्दिष्ट सैन्य-दल के खिलाफ विनाश की कार्यवाही में लगी हो, अन्यथा वह अर्थहीन होता है। और यहां लाभ के आधार पर ही हानि को उचित ठहराया जाता है।

अपने युद्ध-उद्योग की स्थापना करते समय हमें केवल उसी पर निर्भर रहने की बात नहीं सोचनी चाहिए। हमारी बुनियादी नीति यह है कि साम्राज्यवादी देशों तथा अपने घरेलू शत्रु के युद्ध-उद्योग पर निर्भर रहें। लन्दन और हानयाङ के शस्त्रागारों के उत्पादनों पर हमारा अधिकार है। इससे भी बढ़कर बात तो यह है कि खुद शत्रु की ही परिवहन कोर इस सामग्री को हम तक पहुंचाती है। यह एक सच्चाई है, मजाक नहीं।

नोट

१ चीनी भाषा में "यथार्थ" शब्द के दो अर्थ होते हैं : असली हालत और मनुष्य की कार्यवाही (अर्थात व्यवहार)। कामरेड माओ त्सेतुङ अपनी रचनाओं में अक्सर इस शब्द का दोनों अर्थों में प्रयोग करते हैं।

२ सुन ऊ चि अथवा सुन ऊ ईसापूर्व पांचवीं शताब्दी का एक प्रसिद्ध चीनी सैनिक विशेषज्ञ था। उसने युद्ध के बारे में "सुन चि" नामक ग्रन्थ लिखा, जिसमें तेरह अध्याय थे। यह उद्धरण उसके तीसरे अध्याय में से लिया गया है जिसका शीर्षक है "आक्रमण की रणनीति"।

३ १९३६ में कामरेड माओ त्सेतुङ ने जब यह लेख लिखा, उस समय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना को जुलाई १९२१ से ठीक पन्द्रह वर्ष हुए थे।

४ छन तू-श्यू पहले पेकिङ विश्वविद्यालय का एक प्रोफेसर था और "नव-युवक" नामक पत्रिका के सम्पादक के रूप में मशहूर हो गया था। वह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में से एक था। ४ मई आन्दोलन के समय मशहूर हो जाने के कारण और पार्टी के प्रारम्भिक काल में उसकी अपरिपक्वता के कारण, छन तू-श्यू पार्टी का महासचिव बन गया। १९२४-२७ की क्रान्ति के अन्तिम काल में, पार्टी के भीतर दक्षिणपंथी विचारों ने, जिनका प्रतिनिधित्व छन तू-श्यू करता था, आत्मसमर्पणवादी कार्यदिशा का रूप धारण कर लिया। "वर्तमान परिस्थिति और हमारे कार्य" ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ ४) में कामरेड माओ त्सेतुङ ने बताया है कि उस समय "आत्मसमर्पणवादियों ने किसान जनता, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और मध्यम-पूंजीपति वर्ग में तथा खास तौर पर सैन्य-शक्तियों में पार्टी के नेतृत्व को खुद ही त्याग दिया। इस वजह से वह क्रान्ति असफल रही।" १९२७ में क्रान्ति की हार के बाद, छन तू-श्यू और मुट्ठीभर दूसरे आत्मसमर्पणवादी क्रान्ति के भविष्य के बारे में अपना विश्वास खो बैठे और विघटनवादी बन गए। उन्होंने प्रतिक्रियावादी त्रात्सकीवादी दृष्टिबिन्दु अपनाया और त्रात्सकीवादियों के साथ मिलकर एक छोटा सा पार्टी-विरोधी गुट कायम किया। परिणामस्वरूप नवम्बर १९२९ में छन तू-श्यू को पार्टी से निकाल दिया गया। १९४२ में उसकी मृत्यु हो गई। छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी

अवसरवाद के बारे में देखिए : "चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण" और "हुनान के किसान आन्दोलन की जांच-पड़ताल की रिपोर्ट" दोनों लेखों के शीर्षक-नोट और " 'कम्युनिस्ट' का परिचय" ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ २)।

५ यहां जिस ली ली-सान "वामपंथी" अवसरवाद का उल्लेख किया गया है वह साधारणतः "ली ली-सान की कार्यदिशा" के रूप में मशहूर है जो जून १९३० से लेकर लगभग चार महीने तक पार्टी में मौजूद रही और जिसका प्रतिनिधित्व चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की उस समय की केन्द्रीय कमेटी के प्रमुख नेता कामरेड ली ली-सान करते थे। ली ली-सान की कार्यदिशा की निम्नलिखित विशेषताएं थीं : वह पार्टी की छठी राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा स्वीकृत नीति के विरुद्ध थी ; वह इस बात को मानने से इनकार करती थी कि क्रान्ति में जन-समुदाय की शक्ति का निर्माण आवश्यक है और वह इस बात को मानने से इनकार करती थी कि क्रान्ति का विकास असमान रूप से होता है ; कामरेड माओ त्सेतुङ की इस धारणा को कि एक लम्बी अवधि तक हमें मुख्य रूप से अपना ध्यान देहातों में आधार-क्षेत्र कायम करने पर लगाना चाहिए जिससे कि देहातों से शहरों को घेरा जा सके और इन आधार-क्षेत्रों से देशभर में क्रान्तिकारी उभार को तेज किया जा सके, ली ली-सान की कार्यदिशा "अत्यन्त गलत...और किसान मनोवृत्ति पर आधारित स्थानीयतावादी और रूढ़िवादी धारणा" समझती थी और उसका मत यह था कि सारे देश में तुरन्त विद्रोह की तैयारी की जाए। इस गलत कार्यदिशा के आधार पर कामरेड ली ली-सान ने सारे देश के मुख्य शहरों में तुरन्त सशस्त्र विद्रोह संगठित करने की अपनी दुस्साहसवादी योजना बनाई। साथ ही ली ली-सान की कार्यदिशा इस बात को भी नहीं मानती थी कि विश्व-क्रान्ति का विकास असमान रूप से होता है और उसका मत था कि चीनी क्रान्ति के सामान्य विस्फोट से विश्व-क्रान्ति का सामान्य विस्फोट होकर रहेगा और विश्व-क्रान्ति के सामान्य विस्फोट के बिना चीनी क्रान्ति कभी सफल नहीं हो सकेगी ; वह चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के दीर्घकालीनता वाले स्वरूप को नहीं मानती थी और उसका मत था कि एक या कुछ प्रान्तों में पहले विजय प्राप्त करना आरम्भ होने का अर्थ होगा समाजवादी क्रान्ति की ओर संक्रमण करना आरम्भ होना। इस तरह अनेक अनुपयुक्त "वामपंथी" दुस्साहसवादी नीतियां निर्धारित की गईं।

कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस गलत कार्यदिशा का विरोध किया। समूची पार्टी के व्यापक कार्यकर्ताओं व सदस्यों ने भी इस कार्यदिशा को दुरुस्त करने की मांग की। सितम्बर १९३० में पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन में कामरेड ली ली-सान ने दूसरों द्वारा बताई गई अपनी गलतियां मान लीं और इसके बाद उन्हें पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के नेतृत्वकारी पद से अलग कर दिया गया। चूंकि लम्बे अरसे के दौरान कामरेड ली ली-सान ने अपने गलत दृष्टिकोणों को सुधार लिया, इसलिए पार्टी की सातवी राष्ट्रीय कांग्रेस में उन्हें फिर से केन्द्रीय कमेटी का सदस्य चुन लिया गया।

६ पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के सितम्बर १९३० में आयोजित तीसरे पूर्ण अधिवेशन और इस अधिवेशन के बाद कुछ समय तक केन्द्रीय कमेटी ने ली ली-सान की कार्यदिशा का अन्त करने के लिए बहुत से सकारात्मक कदम उठाए। लेकिन इस अधिवेशन के बाद कुछ पार्टी-कामरेडों ने, जो व्यावहारिक क्रान्तिकारी संघर्ष में अनुभवहीन थे और जिनमें छन शाओ-य्वी (वाङ मिङ) और छिन पाङ-श्येन (पो कू) प्रमुख थे, केन्द्रीय कमेटी द्वारा उठाए गए कदमों का विरोध किया। "दो कार्यदिशाएं" अथवा "चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का और अधिक बोलशेविकीकरण करने के लिए संघर्ष करो" नामक पुस्तिका में उन लोगों ने अत्यन्त जोरदार शब्दों में यह ऐलान किया कि उस समय पार्टी के अन्दर मुख्य खतरा "वामपंथी" अवसरवाद नहीं बल्कि "दक्षिणपंथी अवसरवाद" था, तथा अपनी खुद की गतिविधियों को सही साबित करने के लिए उन्होंने ली ली-सान की कार्यदिशा को "दक्षिणपंथी" कहकर उसकी "आलोचना" की। उन्होंने एक नया राजनीतिक प्रोग्राम पेश किया जिसमें ली ली-सान की कार्यदिशा को और अन्य "वामपंथी" विचारों व नीतियों को एक नए रूप में जारी रखा गया, पुनर्स्थापित किया गया अथवा विकसित किया गया तथा उन्होंने अपने आपको कामरेड माओ त्सेतुङ की सही कार्यदिशा के विरुद्ध खड़ा कर लिया। मुख्यत: इस नई "वामपंथी" अवसरवादी कार्यदिशा की फौजी गलतियों का खण्डन करने के लिए ही कामरेड माओ त्सेतुङ ने "चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं" नामक यह रचना लिखी। इस गलत कार्यदिशा का प्रभुत्व पार्टी के भीतर छठी केन्द्रीय कमेटी के जनवरी १९३१ में आयोजित चौथे पूर्ण अधिवेशन से लेकर

जनवरी १९३५ में क्वेइचओ प्रान्त के चुनई में आयोजित की गई केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की मीटिंग तक बना रहा। चुनई मीटिंग में इस गलत कार्यदिशा का प्रभुत्व समाप्त हो गया और कामरेड माओ त्सेतुङ की अगुवाई में नए केन्द्रीय नेतृत्व की स्थापना की गई। इस गलत "वामपंथी" कार्यदिशा का प्रभुत्व पार्टी के भीतर खास तौर पर लम्बे समय तक (चार वर्ष तक) बना रहा तथा इससे पार्टी और क्रान्ति को बेहद भारी नुकसान उठाना पड़ा और इन भीषण परिणामों का सामना करना पड़ा : चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, चीनी लाल सेना और उसके आधार-क्षेत्रों में करीब ९० प्रतिशत क्षति उठानी पड़ी, क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में करोड़ों लोगों को क्वोमिन्ताङ के क्रूर उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा तथा चीनी क्रान्ति की प्रगति में बाधा उपस्थित हो गई। उस समय गलतियां करने वाले साथियों की भारी बहुसंख्या ने अपने अनुभव से सीखने की लम्बी प्रक्रिया के जरिए अपनी गलतियों को समझ लिया है और उन्हें सुधार लिया है तथा पार्टी और जनता के लिए बहुत सा अच्छा काम किया है। कामरेड माओ त्सेतुङ के नेतृत्व में वे लोग अब पार्टी के अन्य साथियों के समुदाय के साथ मुश्तरका राजनीतिक समझ के आधार पर एकताबद्ध हो गए हैं।

७ देखिए : "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में", नोट २१ और २२।

८ लूशान स्थित अफसर ट्रेनिंग कोर एक ऐसा संगठन था जिसे जुलाई १९३३ में च्याङशी प्रान्त की च्योच्याङ काउन्टी में स्थित लूशान पर्वत में च्याङ काई-शेक द्वारा कायम किया गया था। इसका उद्देश्य कम्युनिस्ट-विरोधी सैनिक कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना था। च्याङ काई-शेक की सेना के अफसर जर्मन, इटालवी तथा अमरीकी सैनिक शिक्षकों से फासिस्ट फौजी व राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए बारी-बारी वहां भेजे जाते थे।

९ इन नए फौजी उसूलों में मुख्य रूप से च्याङ काई-शेक डाकू-गुट की "किलेबन्दी-लड़ाई की नीति" शामिल थी, जिसके अनुसार वह कदम-ब-कदम आगे बढ़ता जाता था और हर कदम पर मोर्चेबन्दी कर लेता था।

१० देखिए : वी० आई० लेनिन की रचना "कम्युनिज्म" (१२ जून १९२०), जिसमें उन्होंने हंगेरियन कम्युनिस्ट बेला कुन की आलोचना करते हुए कहा था

कि वह "मार्क्सवाद की सबसे मूलभूत वस्तु को, उसकी जीती-जागती आत्मा को, यानी ठोस परिस्थितियों के ठोस विश्लेषण को तिलांजलि दे चुका है।"

११ हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की पहली पार्टी-कांग्रेस २० मई १९२८ को निङकाङ काउन्टी के माओफिङ नामक स्थान में हुई थी।

१२ बड़ी पृष्ठभागीय संस्थाओं की व्यवस्था का तात्पर्य उन बड़ी-बड़ी और ढीली-ढाली पृष्ठभागीय संस्थाओं को कायम करने से है जो उस समय के युद्ध की परिस्थितियां के अनुकूल नहीं थीं। छोटी पृष्ठभागीय संस्थाओं की व्यवस्था का तात्पर्य चुनिन्दा, जुझारू और छोटी-छोटी पृष्ठभागीय संस्थाओं को कायम करने से है। –अनु०

१३ देखिए: "पार्टी के भीतर गलत विचारों को सुधारने के बारे में", नोट ३ और ४।

१४ डाकुओं के तौर-तरीकों का तात्पर्य अनुशासन, संगठन और स्पष्ट राजनीतिक लक्ष्य के अभाव से उत्पन्न होने वाली लूट-मार की हरकतों से है।

१५ यहां उस लम्बे अभियान का हवाला दिया गया है जिसे लाल सेना ने च्याङशी से उत्तरी शेनशी तक २५,००० ली (१२,५०० किलोमीटर) का रास्ता तय कर पूरा किया था। देखिए: "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में", नोट २०।

१६ १९०५ के दिसम्बर विद्रोह की पराजय के बाद का काल, जबकि रूस में क्रान्तिकारी ज्वार कदम-ब-कदम कम हो चुकी थी। देखिए: "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ३, परिच्छेद ५ और ६।

१७ यह एक शान्ति-सन्धि थी जो सोवियत रूस और जर्मनी के बीच मार्च १९१८ में हुई थी। अपने से बहुत बड़ी शत्रु-सेना का मुकाबला होने पर क्रान्तिकारी शक्तियों को अस्थाई रूप से पीछे हटना पड़ा, जिससे जर्मन साम्राज्यवादियों को नवजात सोवियत लोकतंत्र पर – जिसके पास अभी अपनी सेना नहीं थी – हमला करने से रोका जा सके। इस सन्धि से सोवियत लोकतंत्र को इस बात के लिए समय मिल गया कि वह सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक सत्ता को सुदृढ़ बनाए, अपनी अर्थव्यवस्था को पुनर्गठित करे और अपनी लाल सेना का निर्माण करे। इस सन्धि से सर्वहारा वर्ग किसानों पर अपना नेतृत्व कायम रखने में समर्थ हो सका तथा वह शक्ति का संचय कर सका, जिससे १९१८ से १९२० तक श्वेत रक्षकों को और ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, जापान और पोलैण्ड आदि देशों के सशस्त्र हस्तक्षेप को परास्त कर दिया गया।

१८ ३० अक्तूबर १९२७ को क्वाङतुङ प्रान्त के हाएफ़ङ-लूफ़ङ क्षेत्र के किसानों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में तीसरा विद्रोह किया। उन्होंने हाएफ़ङ-लूफ़ङ तथा उसके आसपास के क्षेत्र पर कब्जा कर लिया, लाल सेना का संगठन किया और मजदूर-किसानों की जनवादी राजनीतिक सत्ता कायम की। बाद में उन्हें परास्त कर दिया गया क्योंकि उन्होंने दुश्मन की ताकत को कम करके आंकने की गलती की थी।

१९ लाल सेना की चौथी मोर्चा-सेना और दूसरी मोर्चा-सेना १९३६ के शरद में एक दूसरे से मिल गई तथा शीखाङ के उत्तर-पूर्वी भाग से उत्तर की ओर बढ़ीं। चाङ क्वो-थाओ उस समय भी अपने पार्टी-विरोधी रुख तथा पीछे हटने के सिद्धान्त और विघटनवाद पर बराबर अड़ा हुआ था। उसी वर्ष अक्तूबर में जब दूसरी मोर्चा-सेना और चौथी मोर्चा-सेना कानसू पहुंचीं, तो उसने चौथी मोर्चा-सेना की अग्रिम यूनिटों को, जिनमें २०,००० से ऊपर सैनिक थे, आदेश दिया कि वे पीली नदी को पार कर पश्चिम में छिङहाए की ओर बढ़ने के लिए पश्चिमी कालम के रूप में संगठित हो जाएं। दिसम्बर १९३६ में हुई लड़ाइयों में मार खाने के बाद यह कालम बुनियादी तौर पर परास्त हो गया और मार्च १९३७ में पूरी तरह परास्त हो गया।

२० देखिए: पेरिस कम्यून के बारे में एल० कुगेलमान के नाम कार्ल मार्क्स का पत्र।

२१ "श्वेइ हू च्वान" (कछार के वीर) एक क्लासिकी चीनी उपन्यास है जिसमें किसान युद्ध का वर्णन किया गया है। कहा जाता है कि इसे श नाए-आन ने लिखा था, जिसका जीवन-काल य्वान वंश के अन्त और मिङ वंश के प्रारम्भ (ईसा की १४वीं शताब्दी) में था। लिन छुङ और छाए चिन इसी उपन्यास के दो वीर हैं। हुङ नामक व्यक्ति छाए चिन के परिवार में ड्रिल-मास्टर है।

२२ लू और छी चीन के बसन्त व शरद काल (७२२-४८१ ई० पू०) के दो

सामन्ती राज्य थे। छी वर्तमान शानतुङ प्रान्त के मध्य भाग में स्थित एक बड़ा राज्य था और लू उस प्रान्त के दक्षिणी भाग में स्थित एक अपेक्षाकृत छोटा राज्य था। सामन्त च्वाङ ने लू राज्य पर ईसापूर्व ६९३ से ईसापूर्व ६६२ तक शासन किया।

२१ च्वोछ्यू मिङ ने "च्वो च्वान" की रचना की थी, जो चओ वंश का क्लासिकी वृत्तलेख है। यहां दिए गए उद्धरण के लिए देखिए: "च्वो च्वान" में "सामन्त च्वाङ का दसवां वर्ष" शीर्षक प्रकरण।

२४ हनान प्रान्त की वर्तमान छङकाओ काउन्टी के उत्तर-पश्चिम में स्थित प्राचीन नगर छङकाओ का भारी फौजी महत्व था। यही वह स्थान था जहां ईसापूर्व २०३ में हान राजा ल्यू पाङ और छू राजा श्याङ य्वी के बीच लड़ाइयां हुई थीं। पहले श्याङ य्वी ने क्रमशः शिङयाङ और छङकाओ पर कब्जा कर लिया तथा ल्यू पाङ की फौजों को लगभग पूरी तरह खदेड़ दिया। लेकिन ल्यू पाङ अपने प्रत्याक्रमण के लिए तब तक रुका रहा जब तक श्याङ य्वी की सेना सश्वेइ नदी पार करती हुई मंझधार में नहीं पहुंच गई। श्याङ य्वी को करारी हार का सामना करना पड़ा और ल्यू पाङ ने छङकाओ पर फिर कब्जा कर लिया।

२५ प्राचीन नगर खुनयाङ वर्तमान हनान प्रान्त की येश्येन काउन्टी में था। यहां २३ ईसवी में पूर्वी हान वंश के संस्थापक ल्यू श्यू ने शिन वंश के सम्राट वाङ माङ को परास्त किया था। दोनों सेनाओं की शक्ति में भारी असमानता थी। ल्यू श्यू की सेना केवल ८,००० से ९,००० तक थी जबकि वाङ माङ की सेना ४,००,००० से ज्यादा थी। वाङ माङ के सेनापतियों, वाङ श्युन और वाङ ई, की लापरवाही का फायदा उठाकर, जिन्होंने दुश्मन को कम करके आंका, ल्यू श्यू ने सिर्फ ३,००० चुनिन्दा सैनिकों से ही वाङ माङ के मुख्य सैन्य-दल को तितर-बितर कर दिया। इस विजय का विस्तार करते हुए ल्यू श्यू ने तुरत वाङ माङ की बची हुई सेना को भी तहस-नहस कर दिया।

२६ क्वानतू हनान प्रान्त की वर्तमान चुङमओ काउन्टी के उत्तर-पूर्व में था। २०० ईसवी में यहां छाओ छाओ और य्वान शाओ की सेनाओं के बीच युद्ध हुआ था। य्वान शाओ के पास १,००,००० सेना थी जबकि छाओ छाओ के पास बहुत थोड़ी सेना थी और उसके पास रसद की भी कमी थी। य्वान शाओ की

सेना की सतर्कता की कमी से लाभ उठाकर, जिसने दुश्मन को कम करके आंका, छाओ छाओ ने उस पर अपने फुरतीले सैनिकों से अचानक हमला करा दिया और उसकी रसद में आग लगा दी। य्वान शाओ की सेना में खलबली मच गई और उसके मुख्य सैन्य-दल का सफाया कर दिया गया।

२७ ऊ राज्य पर सुन छ्वेन और वेइ राज्य पर छाओ छाओ का शासन था। छपी हुपे प्रान्त में च्याय्वी काउन्टी के उत्तर-पूर्व में याङत्सी नदी के दक्षिणी किनारे पर है। २०८ ईसवी में छाओ छाओ ने ५,००,००० से अधिक सैनिकों की एक विशाल सेना लेकर – जिसे वह ८,००,००० सैनिकों वाली सेना कहता था – सुन छ्वेन पर हमला कर लिया। सुन छ्वेन ने छाओ छाओ के विरोधी ल्यू पेइ के साथ संश्रय कायम करके ३०,००० सेना एकत्र कर ली। यह जानते हुए कि छाओ छाओ की सेना में महामारी फैली हुई है और वह जल-युद्ध की आदी नहीं है, सुन छ्वेन और ल्यू पेइ की संश्रयबद्ध सेनाओं ने छाओ छाओ के बेड़े में आग लगा दी और उसकी सेना को नष्ट कर दिया।

२८ ईलिङ हुपे प्रान्त में वर्तमान ईछाङ काउन्टी के पूर्व में था। यहां २२२ ईसवी में ऊ राज्य के एक सेनापति लू श्युन ने शू राज्य के शासक ल्यू पेइ की सेना को परास्त कर दिया। युद्ध के आरम्भ में ल्यू पेइ की सेना लगातार विजय प्राप्त करती रही तथा ऊ राज्य के भीतर पांच-छै सौ ली आगे ईलिङ तक घुस गई। लू श्युन, जो ईलिङ की रक्षा कर रहा था, सात महीने से ज्यादा समय तक लड़ाई बचाता रहा। अन्त में ल्यू पेइ की "अक्ल ने जवाब दे दिया तथा उसकी सेना थकान से चूर और पस्त हो गई"। तब उसने अनुकूल हवा से लाभ उठाकर ल्यू पेइ की सेना के तम्बुओं में आग लगा दी और उसे बुरी तरह परास्त कर दिया।

२९ पूर्वी चिन वंश के एक सेनापति श्ये श्वेन ने ३८३ ईसवी में आनह्वेइ प्रान्त की फ़ेइश्वेइ नदी पर छिन राज्य के शासक फू चेन को परास्त कर दिया। फू चेन के पास ६,००,००० से ज्यादा पैदल सेना थी, २,७०,००० घुड़सवार सेना और ३०,००० से ज्यादा रक्षक कोर थी, जबकि पूर्वी चिन की जल और थल सेना केवल ८०,००० थी। जब दो विरोधी सेनाएं फ़ेइश्वेइ नदी के दोनों किनारों पर आमने-सामने खड़ी थीं, तो फू चेन के अत्यधिक आत्मविश्वास और अहंकार से लाभ उठाकर श्ये श्वेन ने उससे प्रार्थना की कि वह अपनी सेना

जरा पीछे हटा ले जिससे पूर्वी चिन की सेना नदी पार कर सके और निर्णायक लड़ाई लड़ सके। फू चेन राजी हो गया, लेकिन जब उसने पीछे हटने का आदेश दिया, तो उसकी फौज में भगदड़ मच गई और उससे रुकते न बना। इस मौके का फायदा उठाकर पूर्वी चिन की सेना ने नदी पार की, धावा बोल दिया और छिन की सेना को कुचल डाला।

१० १ अगस्त १९२७ को च्याङशी प्रान्त की राजधानी नानछाङ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने इस प्रसिद्ध विद्रोह का नेतृत्व किया था। इसका उद्देश्य च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ द्वारा की गई प्रतिक्रान्ति का विरोध करना और १९२४-२७ के क्रान्तिकारी कार्य को जारी रखना था। चओ ऐन-लाइ, चू तेह, हो लुङ और ये थिङ आदि कामरेडों के नेतृत्व में ३०,००० से ऊपर सेना ने इस विद्रोह में भाग लिया। मूल योजना के अनुसार विद्रोही सेना नानछाङ से तो ५ अगस्त को हट गई, लेकिन क्वाङतुङ प्रान्त में छाऊचओ और शानथओ पहुंचते समय परास्त हो गई। चू तेह, छन ई और लिन प्याओ आदि कामरेडों के नेतृत्व में विद्रोही सेना का एक भाग बाद में लड़ते हुए चिङकाङशान पहाड़ों में पहुंच गया और वहां मजदूर-किसानों की क्रान्तिकारी सेना की पहली फौजी कोर की पहली डिवीजन से मिल गया जिसके सेनानायक कामरेड माओ त्सेतुङ थे।

११ देखिए: "चीन में लाल राजनीतिक सत्ता क्यों कायम रह सकती है?", नोट ८।

१२ सुप्रसिद्ध शरद-फसल विद्रोह, जिसका नेतृत्व कामरेड माओ त्सेतुङ ने किया, हुनान-च्याङशी सीमान्त क्षेत्र की श्यूश्वेइ, फिङश्याङ, फिङच्याङ और ल्यूयाङ काउन्टियों की जनता की सशस्त्र शक्तियों ने सितम्बर १९२७ में किया था। उन्होंने मजदूर-किसानों की क्रान्तिकारी सेना की पहली फौजी कोर की पहली डिवीजन की स्थापना की। कामरेड माओ त्सेतुङ इस सेना का नेतृत्व करके उसे चिङकाङशान पहाड़ों में ले गए, और वहां उन्होंने हुनान-च्याङशी सीमान्त क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र की स्थापना की।

१३ ए-बी (एण्टी-बोलशेविक) ग्रुप लाल क्षेत्रों में गुप्त क्वोमिन्ताङ एजेन्टों का प्रतिक्रान्तिकारी संगठन था।

१४ यहां तात्पर्य च्याङशी प्रान्त के मध्य भाग की कानच्याङ नदी और पूर्वी

भाग की फ़ूश्वेइ नदी के बीच के इलाके से है।

१५ देखिए: वी० आई० लेनिन, "अलग से की जाने वाली और प्रदेश सम्मिलित करने वाली शान्ति-सन्धि को तुरत करने के सवाल के बारे में स्थापनाएं", "अजीबोगरीब और बेहूदा", "एक गम्भीर सबक और एक गहरी जिम्मेदारी" और "युद्ध और शान्ति के बारे में रिपोर्ट", आदि रचनाएं तथा "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ७, परिच्छेद ७।

१६ यहां तिब्बती लोगों का तात्पर्य शीखाङ प्रान्त में रहने वाली तिब्बती जाति से है और ह्वेइ लोगों का तात्पर्य कानसू, छिङहाए व सिनच्याङ आदि प्रान्तों में रहने वाली ह्वेइ जाति से है।

१७ "अष्टपदी निबन्ध" १५वीं सदी से १९वीं सदी तक चीन के सामन्ती राजवंशों के शासन-काल में होने वाली राजकीय परीक्षाओं के लिए निर्धारित निबन्ध का एक विशेष रूप था। रचना की दृष्टि से, इस प्रकार के निबन्ध के आठ भाग होते थे: प्रस्तावना, परिवर्धन, प्रारम्भिक व्याख्या, प्रारम्भिक तर्क, प्रारम्भिक पैरा, मध्यवर्ती पैरा, उत्तरवर्ती पैरा और अन्तिम पैरा। "प्रस्तावना" में दो वाक्यों से शीर्षक का मुख्य अर्थ बताया जाता था। "परिवर्धन" में तीन या चार वाक्यों से प्रस्तावना में बताए गए मुख्य अर्थ की व्याख्या की जाती थी। "प्रारम्भिक व्याख्या" में पूरे निबन्ध की संक्षिप्त व्याख्या की जाती थी और यह व्याख्या की शुरुआत थी। "प्रारम्भिक तर्क" में प्रारम्भिक व्याख्या के बाद प्रारम्भिक तर्क पेश किया जाता था। प्रारम्भिक पैरा, मध्यवर्ती पैरा, उत्तरवर्ती पैरा और अन्तिम पैरा इन चार भागों में विषय की सांगोपांग व्याख्या की जाती थी। इनमें मध्यवर्ती पैरा पूरे निबन्ध का केन्द्र होता था। पांचवें से आठवें भाग तक प्रत्येक के दो हिस्से अर्थात विपरीत भाव वाले दो हिस्से अवश्य होते थे। इसलिए इसका नाम "अष्टपदी निबन्ध" पड़ गया। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस प्रकार के निबन्धों में किए जाने वाले विषय-प्रतिपादन को एक उपमा के रूप में इस्तेमाल करके क्रान्ति की विभिन्न मंजिलों के विकास पर प्रकाश डाला है। लेकिन कामरेड माओ त्सेतुङ आम तौर पर "अष्टपदी निबन्ध" को कठमुल्लावाद का चित्रण करने और उस पर व्यंग्य करने के लिए उपमा के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

च्याङ काई-शेक के वक्तव्य के बारे में वक्तव्य

२८ दिसम्बर १९३६

शीआन में च्याङ काई-शेक ने जनरल चाङ श्वे-ल्याङ और जनरल याङ हू-छङ तथा उत्तर-पश्चिम की जनता की यह मांग मान ली है कि जापान का प्रतिरोध किया जाए। इस दिशा में पहले कदम के रूप में उसने गृहयुद्ध में लगी हुई अपनी सेनाओं को शेनशी और कानसू प्रान्तों से हट आने का आदेश दे दिया है। पिछली एक दशाब्दी से चली आई च्याङ काई-शेक की गलत नीति के बदलने की यह शुरुआत है।[१] इससे जापानी साम्राज्यवादियों और चीनी "दण्ड-अभियान" ग्रुप[२] की साजिशों को धक्का लगा है, जो उन्होंने गृहयुद्ध का संचालन करने, फूट डालने और शीआन घटना के समय च्याङ काई-शेक को मौत के घाट उतारने के लिए रची थीं। जापानी साम्राज्यवादियों और चीनी "दण्ड-अभियान" ग्रुप की निराशा अब स्पष्ट हो गई है। च्याङ काई-शेक में जागृति पैदा होने के जो आसार नजर आ रहे हैं, उन्हें देखते हुए ऐसा माना जा सकता है कि क्वोमिन्ताङ अपनी दस साल की गलत नीति का अन्त करने के लिए राजी है।

२६ दिसम्बर को च्याङ काई-शेक ने लोयाङ में तथाकथित "चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ को उपदेश" शीर्षक से एक वक्तव्य जारी किया। अपने गोलमोलपन व पेचीदापन के कारण यह वक्तव्य

सचमुच चीन के राजनीतिक दस्तावेजों में एक दिलचस्प नमूना है। यदि च्याङ काई-शेक की सचमुच यह इच्छा थी कि वह इस घटना से गम्भीर सबक ले, क्वोमिन्ताङ में नई जान डालने के लिए प्रयत्न करे, तथा अपनी लगातार चली आई इस गलत नीति को – वैदेशिक मामलों में सुलह-समझौता करना, तथा देश में गृहयुद्ध चलाना और जनता का उत्पीड़न करना – समाप्त कर दे, ताकि क्वोमिन्ताङ जनता की इच्छाओं के खिलाफ खड़ी न रहे, तो उसे अपनी ईमानदारी प्रकट करने के लिए इससे कुछ अच्छा लेख पेश करना चाहिए था, जिसमें वह अपने अतीत की राजनीति पर पश्चात्ताप प्रकट करता और अपने भविष्य के लिए एक नया रास्ता खोल देता। २६ दिसम्बर का वक्तव्य आम चीनी जनता की मांगें पूरी नहीं कर सकता।

लेकिन, च्याङ काई-शेक के वक्तव्य में एक प्रशंसनीय पैराग्राफ भी मौजूद है जिसमें उसने दावा किया है कि "सभी वादे पूरे किए जाएंगे और दृढ़ता से कार्यवाही की जाएगी"। इसका अर्थ यह है कि यद्यपि शीआन में उसने चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ की शर्तों पर हस्ताक्षर नहीं किए, फिर भी वह उन मांगों को मानने के लिए तैयार है जो राज्य व राष्ट्र के लिए लाभदायक हैं, तथा हस्ताक्षर न करने के बावजूद वह अपने वादे नहीं तोड़ेगा। हमें देखना है कि अपनी सेना वापस बुलाने के बाद च्याङ काई-शेक वफादारी से काम करेगा या नहीं, और जो शर्तें उसने मंजूर की हैं उन्हें पूरा करेगा या नहीं। वे शर्तें इस प्रकार हैं :

(१) क्वोमिन्ताङ व राष्ट्रीय सरकार का पुनर्गठन करना, जापान-परस्त गुट को बाहर निकाल देना तथा जापान-विरोधी तत्वों को शामिल करना ;

(२) शांघाई के देशभक्त नेताओं[1] व देश के अन्य सभी राजनीतिक बन्दियों को रिहा करना तथा जनता के आजादी के अधिकारों की गारन्टी करना ;

(३) "कम्युनिस्टों का विनाश करने" की नीति को खत्म करना तथा जापान का प्रतिरोध करने के लिए लाल सेना के साथ संश्रय कायम करना ;

(४) सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों और सभी सैन्य-शक्तियों का एक राष्ट्रीय पुनरुद्धार सम्मेलन बुलाना, जो जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए नीति निर्धारित करे ;

(५) चीन द्वारा जापान का प्रतिरोध किए जाने के प्रति जिन देशों की सहानुभूति है, उनसे सहयोगपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना ; और

(६) राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिए अन्य ठोस उपायों व साधनों को काम में लाना।

इन शर्तों को पूरा करने के लिए सबसे पहले वफादारी की जरूरत है, और कुछ साहस की जरूरत है। हम च्याङ काई-शेक को उसके भावी कारनामों से परखेंगे।

लेकिन च्याङ काई-शेक के वक्तव्य में यह कथन भी है कि शीआन घटना "प्रतिक्रियावादियों" के दबाव से हुई थी। खेद की बात है कि च्याङ काई-शेक ने इस बात का स्पष्टीकरण नहीं किया कि

"प्रतिक्रियावादियों" से दरअसल उसका तात्पर्य किन लोगों से है ; न हमें यही मालूम है कि च्याङ काई-शेक के शब्दकोश में "प्रतिक्रियावादी" शब्द की कौन सी परिभाषा दी गई है। परन्तु, यह निश्चित है कि शीआन घटना इन शक्तियों के प्रभाव से हुई थी :

(१) जनरल चाङ श्वे-ल्याङ और जनरल याङ हू-छङ की सेनाओं में तथा उत्तर-पश्चिम की क्रान्तिकारी जनता में जापान-विरोधी रोष का उभार ;

(२) समूचे देश की जनता में जापान-विरोधी रोष का उभार ;

(३) क्वोमिन्ताङ में वामपक्षी शक्तियों की बढ़ती ;

(४) विभिन्न प्रान्तों में जिन ग्रुपों का सिक्का जमा हुआ है उनके द्वारा जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने की मांग ;

(५) कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने का प्रस्ताव ; और

(६) विश्व के शान्ति मोर्चे का विकास।

ये सब अकाट्य तथ्य हैं। च्याङ काई-शेक ने जिन्हें "प्रतिक्रियावादी" कहा है, वे और कुछ न होकर यही शक्तियां हैं ; बात सिर्फ इतनी है कि अन्य लोग उन्हें क्रान्तिकारी कहते हैं, जबकि च्याङ काई-शेक उन्हें "प्रतिक्रियावादी" कहता है। च्याङ काई-शेक ने शीआन में ऐलान किया था कि वह ईमानदारी से जापान का प्रतिरोध करेगा, इसलिए यह कल्पना की जा सकती है कि शीआन से बिदा होने के बाद तुरन्त ही वह क्रान्तिकारी शक्तियों पर उद्दण्डतापूर्वक हमला

नहीं करेगा ; कारण यह कि च्याङ काई-शेक का अपना और उसके गुट का राजनीतिक जीवन न सिर्फ उसकी वफादारी पर निर्भर है, बल्कि उनके असली राजनीतिक रास्ते में तथा च्याङ काई-शेक व उसके गुट के सम्मुख एक ऐसी ताकत आ खड़ी हुई है जो इतनी बढ़ गई है कि उसने च्याङ व उसके गुट के लिए एक अनिष्टकारी शक्ति का रूप ले लिया है – यह है तथाकथित "दण्ड-अभियान" ग्रुप जिसने शीआन घटना के समय च्याङ काई-शेक को मौत के घाट उतारने की कोशिश की थी। इसलिए हम च्याङ काई-शेक को सलाह देते हैं कि वह अपने राजनीतिक शब्दकोश में संशोधन करे और "प्रतिक्रियावादी" शब्द की जगह "क्रान्तिकारी" शब्द रख दे, क्योंकि जैसी चीज हो वैसा ही नाम रखना ज्यादा बेहतर होता है।

च्याङ काई-शेक को याद रखना चाहिए कि वह शीआन घटना के नेता जनरल चाङ श्वे-ल्याङ और जनरल याङ हू-छङ के प्रयत्नों के अलावा कम्युनिस्ट पार्टी की मध्यस्थता की बदौलत ही शीआन से सही-सलामत लौट सका था। केवल राष्ट्र की जीवन-रक्षा के विचार से ही शीआन घटना के समय कम्युनिस्ट पार्टी ने शान्तिपूर्ण ढंग से मामला तय करने का रुख अपनाया और इसके लिए तरह-तरह की कोशिशें भी कीं। यदि गृहयुद्ध और फैल जाता तथा चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ लम्बे समय तक च्याङ काई-शेक को नजरबन्द रखते, तो घटना का विकास स्पष्टतः जापानी साम्राज्यवादियों व चीनी "दण्ड-अभियान" ग्रुप के हित में हो जाता। यही वे परिस्थितियां थीं जिनमें कम्युनिस्ट पार्टी ने जापानी साम्राज्यवादियों और चीनी "दण्ड-अभियान" ग्रुप के वाङ चिङ-वेइ,[४] हो इङ-छिन[५] व अन्य सदस्यों की साजिशों का दृढ़ता से पर्दाफाश

किया और इस घटना को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने की दृढ़ता से पैरवी की। यह विचार संयोग से जनरल चाङ श्वे-ल्याङ और जनरल याङ हू-छङ तथा क्वोमिन्ताङ के टी० वी० सुङ[2] जैसे सदस्यों के मत से मिलता था। सारे देश की जनता यही आवाज उठाती है, क्योंकि वह वर्तमान गृहयुद्ध से तीव्र घृणा करती है।

शीआन की शर्तें मंजूर करने पर च्याङ काई-शेक को रिहा कर दिया गया। अब प्रश्न यह है कि वह अपने इस वचन का कि "सभी वादे पूरे किए जाएंगे और दृढ़ता से कार्यवाही की जाएगी" अक्षरश: पालन करेगा अथवा नहीं, तथा राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिए सभी शर्तें कड़ाई के साथ पूरी करेगा अथवा नहीं। सारे देश की जनता च्याङ काई-शेक को इस दिशा में किसी भी किस्म की टाल-मटोल करने या पीछे हटने की हरगिज इजाजत नहीं देगी। यदि च्याङ जापान का प्रतिरोध करने में ढुलमुलपन दिखाएगा और अपने वचन पूरे करने में देर लगाएगा, तो यह निश्चित है कि समूचे देश की जनता की क्रान्तिकारी ज्वार उसे बहा ले जाएगी। पुरानी कहावत है, "जो आदमी अपना वचन नहीं निभाता, वह किसी काम का नहीं।" च्याङ काई-शेक और उसके गुट को इस बात पर अच्छी तरह गौर करना चाहिए।

यदि च्याङ काई-शेक क्वोमिन्ताङ की दस साल से चली आई प्रतिक्रियावादी नीति की गन्दगी को पूरी तरह साफ कर दे तथा वैदेशिक मामलों में रियायतें देने, देश में गृहयुद्ध चलाने और जनता का उत्पीड़न करने की अपनी बुनियादी गलतियों को मुकम्मिल तौर पर दुरुस्त कर ले, यदि वह एक ऐसे जापान-विरोधी मोर्चे में तुरन्त शामिल हो जाए जिसमें सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों

के बीच एकता कायम की गई हो, तथा राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिए सचमुच सैनिक और राजनीतिक कदम उठाए, तो कम्युनिस्ट पार्टी अवश्य ही उसका समर्थन करेगी। क्वोमिन्ताङ के नाम अपने २५ अगस्त के पत्र में कम्युनिस्ट पार्टी पहले ही च्याङ और क्वोमिन्ताङ को ऐसे समर्थन का वचन दे चुकी है।[3] कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा "सभी वादे पूरे करना और दृढ़ता से कार्यवाही करना" एक ऐसी हकीकत है जिसे सारे देश की जनता पन्द्रह साल पहले से ही मानती आई है। समूचे देश की जनता को, निस्सन्देह, कम्युनिस्ट पार्टी की कथनी और करनी पर देश की किसी अन्य राजनीतिक पार्टी या ग्रुप की कथनी और करनी के मुकाबले अधिक विश्वास है।

नोट

१ चाङ श्वे-ल्याङ की कमान में क्वोमिन्ताङ की उत्तर-पूर्वी सेना तथा याङ हू-छङ की कमान में क्वोमिन्ताङ की १७वीं राह सेना ने चीनी लाल सेना और जापान-विरोधी जन-आन्दोलन के असर में आकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तावित जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने की बात मान ली और च्याङ काई-शेक से मांग की कि वह जापान का प्रतिरोध करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करे। च्याङ ने इनकार कर दिया, और इससे भी आगे बढ़कर उसने "कम्युनिस्टों का विनाश करने" के लिए सक्रिय रूप से फौजी तैयारी की और शीआन में जापान-विरोधी नवयुवकों का संहार किया। ऐसी हालत में चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ ने संयुक्त रूप से कार्यवाही करके च्याङ काई-शेक को गिरफ्तार कर लिया। यही १२ दिसम्बर १९३६ की प्रसिद्ध शीआन घटना थी। च्याङ काई-शेक को मजबूर होकर कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करने और जापान का प्रतिरोध करने की शर्तें मंजूर करनी पड़ीं, तब कहीं उसे नानकिङ लौटने के लिए रिहा किया गया।

२ चीनी "दण्ड-अभियान" ग्रुप नानकिङ की क्वोमिन्ताङ सरकार में एक जापान-परस्त गुट था, जो वाङ चिङ-वेइ और हो इङ-छिन की अगुवाई में शीआन घटना के समय चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ के खिलाफ एक "दण्ड-अभियान" करने की वकालत और च्याङ काई-शेक से सत्ता छीनने की कोशिश कर रहा था। इस घटना से लाभ उठाकर इस ग्रुप ने बड़े पैमाने पर गृहयुद्ध छेड़ने की तैयारी की, ताकि जापानी हमलावरों के लिए रास्ता साफ हो सके और च्याङ काई-शेक के हाथ से राजनीतिक सत्ता छीनी जा सके।

३ शांघाई के जापान-विरोधी देशभक्तिपूर्ण आन्दोलन के सात नेता ये लोग थे : शन च्युन-रू, चाङ नाए-छी, चओ थाओ-फ़न, ली कुङ-फू, शा छ्येन-ली, श ल्याङ और वाङ चाओ-श। उन्हें नवम्बर १९३६ में च्याङ काई-शेक सरकार ने गिरफ्तार किया और जुलाई १९३७ में रिहा कर दिया।

४ वाङ चिङ-वेइ क्वोमिन्ताङ के जापान-परस्त गुट का सरगना था। १९३१ से वाङ चिङ-वेइ जापानी साम्राज्यवादियों के आक्रमण के प्रति सुलह-समझौते का रुख अपनाता आ रहा था। दिसम्बर १९३८ में उसने छुङकिङ छोड़ दिया, खुलेआम जापानी हमलावरों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया तथा नानकिङ में एक कठपुतली सरकार कायम की।

५ हो इङ-छिन एक क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार था और क्वोमिन्ताङ के जापान-परस्त गुट का दूसरा सरगना था। शीआन घटना के समय उसने गृहयुद्ध छेड़ने के लिए बड़ी सक्रियता से एक षड्यंत्र रचा। लुङहाए रेलवे से होकर शेनशी पर हमला करने के लिए उसने क्वोमिन्ताङ सेना को बटोरा। च्याङ काई-शेक की जगह लेने की इच्छा से उसने शीआन पर बमबारी करके च्याङ को वहां मार डालने की योजना भी बनाई थी।

६ टी० वी० सुङ क्वोमिन्ताङ का एक अमरीका-परस्त सदस्य था। उसने भी, अमरीका के हित में, शीआन घटना को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने का पक्षपोषण किया। इसका कारण था सुदूरपूर्व में उस समय अपने-अपने प्रभुत्व के लिए संघर्ष करने वाले जापानी साम्राज्यवाद और अमरीकी साम्राज्यवाद के बीच का अन्तरविरोध।

७ इस पत्र में क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादी शासन और उसकी केन्द्रीय

कार्यकारिणी कमेटी के दूसरे पूर्ण अधिवेशन का जोरदार और सही खण्डन किया गया था। साथ ही इसमें जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने और क्वोमिन्ताङ के साथ फिर से सहयोग कायम करने की चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की नीति का उल्लेख भी किया गया था। पत्र का मुख्य भाग इस प्रकार है :

आपकी पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के दूसरे पूर्ण अधिवेशन ने "केन्द्रीकरण और एकीकरण" की चर्चा करते हुए दरअसल चीजों को उलट-पलट कर पेश किया है। यह समझ लेना चाहिए कि दस साल के गृह-युद्ध और फूट का एकमात्र कारण साम्राज्यवाद पर निर्भर रहने की वह नीति ही है जिसे आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार अपनाती रही हैं और जो देश को रसातल में पहुंचाने वाली नीति है ; खास तौर से १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद से जापान का प्रतिरोध न करने की आपकी बराबर चली आई नीति ही गृहयुद्ध और फूट का कारण रही है। इस नारे के अन्तर्गत कि "विदेशी हमले का विरोध करने के पहले आन्तरिक शान्ति कायम की जाए", आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार ने वर्षों तक अनवरत गृहयुद्ध चलाया है और लाल सेना के खिलाफ घेराव करने की अनगिनत मुहिमें चलाई हैं तथा सारे देश के अन्दर जनता के देशभक्तिपूर्ण व जनवादी आन्दोलनों को कुचलने के लिए कुछ भी उठा नहीं रखा। पिछले कुछ महीनों में भी, इस बात को भूलकर कि जापानी साम्राज्यवाद चीन का सबसे कट्टर शत्रु है, आपने उत्तर-पूर्वी और उत्तरी चीन को दुश्मन के हवाले करने में जरा भी ग्लानि अनुभव नहीं की ; आपने लाल सेना से लड़ने और अपनी ही पार्टी के अन्दर गुटबन्दी के झगड़े चलाने में सारी ताकत खर्च की है ; आपने जापानी हमलावरों के खिलाफ लड़ने जाने वाली लाल सेना का रास्ता रोकने में और उसके पृष्ठभाग को हैरान-परेशान करने में पूरी शक्ति लगा दी है ; आपने सारे देश की जनता की इस मांग को नजरअन्दाज किया है कि जापान का प्रतिरोध किया जाए तथा आपने सारे देश की जनता की आजादी के अधिकारों को खत्म कर दिया है। देशभक्ति अपराध बन गई है, और सारे देश में निर्दोष व्यक्तियों को जेलों में ठूंस दिया गया है। वतनफरोशी पर इनाम मिलता है, और गद्दार अपने नए पदों और नए खिताबों की प्राप्ति

पर एक दूसरे को बधाई दे रहे हैं। इस गलत नीति के जरिए केन्द्रीकरण और एकीकरण के लिए प्रयत्न करना दरअसल "मछलियां पकड़ने के लिए पेड़ पर चढ़ने" के समान है ; इसका नतीजा ठीक उल्टा होगा। अब हम आप महानुभावों को गम्भीरता से यह सलाह देते हैं : अगर आप अपनी इस गलत नीति को बुनियादी तौर से नहीं बदलेंगे और अगर आप जापानी साम्राज्यवादियों के बदले अपने ही देश-बन्धुओं से द्वेष करते रहेंगे, तो अपनी मौजूदा हालत बनाए रखना भी आपके लिए असम्भव हो जाएगा। ऐसी सूरत में केन्द्रीकरण, एकीकरण और तथाकथित "आधुनिक राज्य" की सारी बातें कोरी बकवास साबित होंगी। सारे देश की जनता इस समय जिस चीज की मांग कर रही है, वह है जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए केन्द्रीकरण और एकीकरण करना, न कि विदेशियों के तलवे चाटने और जनता का उत्पीड़न करने के लिए केन्द्रीकरण और एकीकरण करना। सारे देश की जनता इस समय बड़ी उत्सुकता से एक ऐसी सरकार की मांग कर रही है जो देश और जनता को सचमुच बचा सके, वह एक वास्तविक जनवादी गणराज्य की मांग कर रही है। सारे देश की जनता एक ऐसी जनवादी गणतंत्री सरकार की मांग कर रही है जो उसके हित में काम करती हो। इस सरकार के कार्यक्रम में मुख्यतया ये बातें होनी चाहिए : पहले, विदेशी आक्रमण का विरोध करना ; दूसरे, जनता को जनवादी अधिकार देना; और तीसरे, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का विकास करना और जनता की कठिनाइयों को कम करना या खत्म कर देना। "आधुनिक राज्य" के मामले में इस तरह का कार्यक्रम ही वर्तमान युग में औपनिवेशिक और अर्ध-औपनिवेशिक चीन की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुकूल बैठता है। सारे देश की जनता उत्साहपूर्ण अभिलाषा व दृढ़ संकल्प से इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए संघर्ष कर रही है। लेकिन आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार की नीति सारे देश की जनता की इन आशाओं के प्रतिकूल बैठती है। इस तरह का काम करके आप कभी उसका विश्वास अर्जित नहीं कर सकेंगे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी लाल सेना गम्भीरता के साथ घोषणा करती हैं : हम सारे देश के लिए एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना का पक्षपोषण करते

हैं। हम बालिग मताधिकार द्वारा चुनी गई संसद बुलाने का पक्षपोषण करते हैं। हम सारे देश की जनता के और जापान-विरोधी सैन्य-शक्तियों के प्रतिनिधियों की जापान-विरोधी राष्ट्रीय पुनरुद्धार कांग्रेस बुलाने का समर्थन करते हैं। हम सारे देश में एकीकृत राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार बनाने का समर्थन करते हैं। हम ऐलान करते हैं कि जैसे ही समूचे चीन के लिए एकीकृत जनवादी गणराज्य स्थापित हो जाएगा, वैसे ही लाल इलाके उसके अंग बन जाएंगे, लाल इलाकों की जनता के प्रतिनिधि अखिल चीन संसद में बैठेंगे और लाल इलाकों में वैसी ही जनवादी व्यवस्था कायम की जाएगी जैसी चीन के अन्य भागों में। हमारा विचार है कि आपकी पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के दूसरे पूर्ण अधिवेशन ने जो राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद बनाने का फैसला किया है और आपकी पार्टी तथा आपकी पार्टी की सरकार जो राष्ट्रीय एसेम्बली बुला रही है, उनसे जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के लिए केन्द्रीकरण और एकीकरण के काम पूरे नहीं हो सकते। आपकी पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के दूसरे पूर्ण अधिवेशन में राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद के बारे में जो नियम मंजूर किए गए हैं, उनके अनुसार परिषद का संगठन आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार के थोड़े से सत्ताधारी अफसरों तक ही सीमित रहेगा ; यह परिषद आपकी पार्टी की सरकार को सलाह देने वाली संस्था मात्र बनकर रह जाएगी। यह एकदम स्पष्ट है कि इस तरह की परिषद को कोई भी सफलता नहीं मिल सकती, और न वह जनता का विश्वास ही प्राप्त कर सकती है। आपकी पार्टी की सरकार ने जो "चीन गणराज्य के संविधान का मसौदा" और "राष्ट्रीय एसेम्बली के संगठन सम्बन्धी नियम और निर्वाचन सम्बन्धी नियम" स्वीकार किए हैं, उन्हें देखकर यह मालूम हो जाता है कि आप महानुभाव जो राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाना चाहते हैं, वह भी सफलतापूर्वक काम नहीं कर सकेगी और जनता का विश्वास प्राप्त नहीं कर सकेगी। कारण यह कि इस तरह की राष्ट्रीय एसेम्बली आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार के मुट्ठीभर पदाधिकारियों के हाथ की कठपुतली मात्र बन जाएगी, उन्हीं का दुमछल्ला और अलंकार बन जाएगी। इस तरह की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद व राष्ट्रीय

एसेम्बली में तथा हमारी पार्टी द्वारा प्रस्तावित जापान-विरोधी राष्ट्रीय पुनरुद्धार कांग्रेस (अर्थात राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद) और चीन जनवादी गणराज्य व उसकी संसद में थोड़ी भी समानता नहीं है। हमारा मत है कि जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए जो राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद बने, उसमें सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों और सभी सैन्य-शक्तियों के प्रतिनिधि होने चाहिए। उसे वास्तविक सत्ताधिकार से सम्पन्न एक ऐसी संस्था होना चाहिए जो जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के सम्बन्ध में मुख्य नीतियां निर्धारित कर सके। इस परिषद से एक एकीकृत राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार बनाई जानी चाहिए। राष्ट्रीय एसेम्बली को एक ऐसी संसद होना चाहिए जिसे देशव्यापी बालिग मताधिकार से चुना गया हो। उसे चीन जनवादी गणराज्य की सर्वोच्च सत्ताधिकारी संस्था होना चाहिए। सारे देश की जनता ऐसी ही राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद और ऐसी ही अखिल चीन संसद का स्वागत करेगी, उनका समर्थन करेगी और उनमें शामिल होगी। केवल ऐसी परिषद और संसद से ही देश और जनता के पुनरुद्धार के महान कार्य को सुदृढ़ और अविचल आधार प्राप्त होगा। सिर्फ लच्छेदार बातें करना बिलकुल बेकार साबित होगा और उन्हें सारे देश की जनता का समर्थन कभी प्राप्त नहीं होगा। आपकी पार्टी और आपकी पार्टी की सरकार ने जो अनेक सम्मेलन अब तक बुलाए हैं, उनकी विफलता इस बात का सबसे अच्छा प्रमाण है। आपकी पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के दूसरे पूर्ण अधिवेशन की घोषणा में यह भी कहा गया है : "खतरों और अड़चनों का सामना तो करना ही होगा, लेकिन राष्ट्र के सामने आने वाली बाधाओं और कठिनाइयों के कारण हम अपने कर्तव्य-पालन में कभी ढील नहीं आने देंगे।" और इसमें यह भी कहा गया है : "जहां तक देश की जीवन-रक्षा का सवाल है, उसके लिए हमारी पार्टी अवश्य ही अपनी सारी बुद्धिमत्ता और क्षमता का उपयोग करके शुरू से अन्त तक प्रयत्न करेगी।" यह ठीक है कि आपकी पार्टी चीन के अधिकांश भाग में शासक पार्टी है और पिछले सभी कामों की राजनीतिक जिम्मेदारी आपकी पार्टी पर पड़े बिना नहीं रह सकती। क्वोमिन्ताङ सरकार सिर्फ एक ही पार्टी का अधि-

नायकत्व है, इसलिए क्वोमिन्ताङ इस जिम्मेदारी से कभी बरी नहीं हो सकती। खास तौर से १८ सितम्बर की घटना के बाद से आपकी पार्टी सारे देश की जनता की इच्छाओं के विरुद्ध और सारे राष्ट्र के हितों के विरुद्ध एकदम गलत नीति पर चलती रही है, जिससे लगभग आधा चीन हाथ से निकल गया है। इसकी जिम्मेदारी दूसरों पर कभी नहीं डाली जा सकती। हमारा और सारे देश की जनता का खयाल है कि आपकी पार्टी ने आधे चीन को हाथ से निकल जाने दिया है, इसलिए हम आपकी पार्टी पर यह जिम्मेदारी डाले बिना नहीं रह सकते कि वह चीन का खोया हुआ प्रदेश फिर से प्राप्त करे और वहां चीन की प्रभुसत्ता फिर से स्थापित करे। साथ ही आपकी पार्टी के अन्दर भी बहुत से ईमानदार लोग यह समझने लगे हैं कि पराधीनता की यंत्रणा क्या होती है और जनता का अविचल संकल्प क्या होता है; वे नई दिशा की ओर मुड़ने लगे हैं और अपने उन सदस्य साथियों से क्षुब्ध और असन्तुष्ट हो गए हैं जिन्होंने उनकी पार्टी और देश पर तबाही बरपा कर दी है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी इस नए मोड़ के प्रति पूर्ण सहानुभूति रखती है। वह क्वोमिन्ताङ के इन देशभक्त और ईमानदार सदस्यों की उदात्त भावना और जागृति का हृदय से अभिनन्दन करती है, और राष्ट्र की तबाही की घड़ी में बलिदान की परवाह न करके संघर्ष करने की उनकी तत्परता और सुधार लागू करने के उनके साहस का अभिनन्दन करती है। हम जानते हैं कि आपकी पार्टी के केन्द्रीय और प्रान्तीय सदर-मुकामों में, आपकी केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों में, शिक्षा, विज्ञान, कला, पत्रकारिता व उद्योग के क्षेत्रों में, महिलाओं में, धर्म, चिकित्सा और पुलिस के क्षेत्रों में, सभी तरह के जन-संगठनों में, तथा खास तौर से सेना की व्यापक पांतों में, क्वोमिन्ताङ के नए-पुराने सदस्यों में और उसके अन्दर सभी स्तरों के नेताओं में दरअसल बहुत से जागृत और देशभक्त लोग मौजूद हैं, और उनकी संख्या बराबर बढ़ती जा रही है। यह बेहद खुशी की बात है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्ताङ के इन सदस्यों से सहयोग करने और सुदृढ़ राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए हर समय तैयार है, ताकि राष्ट्र के सबसे क्रूर शत्रु – जापानी साम्राज्यवाद – का प्रतिरोध किया जा सके। हम आशा करते हैं कि इस तरह के सदस्य शीघ्र ही क्वो-

मिन्ताङ के अन्दर मुख्य शक्ति बन जाएंगे और उन अत्यन्त दुष्ट और बेशर्म सदस्यों पर हावी हो जाएंगे, जो राष्ट्र के हितों को ठुकराकर दरअसल जापानी साम्राज्यवादियों के दलाल और जापान-परस्त गद्दार बन गए हैं, जो डा० सुन यात-सेन की स्मृति के लिए कलंक हैं। और हम यह भी आशा करते हैं कि इस तरह वे लोग डा० सुन यात-सेन के क्रान्तिकारी "तीन जन-सिद्धान्तों" की भावना को पुनर्जीवित करेंगे; रूस से संश्रय, कम्युनिस्टों से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता की डा० सुन यात-सेन की तीन महान नीतियों की फिर एक बार पुष्टि करेंगे; क्रान्तिकारी "तीन जन-सिद्धान्तों" और तीन महान नीतियों को कार्यान्वित करने के लिए और डा० सुन यात-सेन की क्रान्तिकारी वसीयत को कार्यान्वित करने के लिए "अपनी सारी बुद्धिमत्ता और क्षमता का उपयोग करके शुरू से अन्त तक प्रयत्न करेंगे"। हम आशा करते हैं कि वे लोग देश की सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों और सभी व्यवसायों के देशभक्त नेताओं व देशभक्त जनता के साथ मिलकर डा० सुन यात-सेन के क्रान्तिकारी कार्य को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी को दृढ़ता से निभाएंगे। हम आशा करते हैं कि जापानी साम्राज्यवादियों को खदेड़ने और चीन को विनाश से बचाने के लिए, सारे देश में जनता के जनवादी अधिकारों को प्राप्त करने के लिए, भारी बहुसंख्यक जनता की मुसीबतें दूर करने के उद्देश्य से चीन की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को विकसित करने के लिए, और चीन जनवादी गणराज्य और उसकी जनवादी संसद व जनवादी सरकार की स्थापना करने के लिए, वे लोग दृढ़ता से संघर्ष करेंगे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्ताङ के सभी सदस्यों के सामने ऐलान करती है: अगर आप वास्तव में ऐसा करेंगे तो हम दृढ़ता से आपका समर्थन करेंगे, और आपके साथ एक सुदृढ़ क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चा बनाने को तैयार हो जाएंगे, जैसा कि १९२४-२७ में चीन के महान क्रान्तिकारी काल में दोनों पार्टियों ने विदेशी और सामन्ती उत्पीड़न के खिलाफ एक महान संयुक्त मोर्चा कायम किया था, कारण, आज देश को विनाश से बचाने और उसकी जीवन-रक्षा करने के लिए यही एकमात्र सही रास्ता है।

जापानी-आक्रमण-विरोधी काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य*

३ मई १९३७

चीन के बाह्य और आन्तरिक अन्तरविरोधों के विकास की मौजूदा मंजिल

१. चूंकि चीन और जापान के बीच का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध बन गया है और चीन के आन्तरिक अन्तरविरोध को गौणता व अधीनता का स्थान प्राप्त हो गया है, इसलिए अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों और चीन के आन्तरिक वर्ग-सम्बन्धों में भी परिवर्तन हो गए हैं, और इस प्रकार वर्तमान परिस्थिति के विकास की एक नई मंजिल शुरू हो गई है।

२. बहुत लम्बे समय से चीन दो तीव्र और बुनियादी अन्तरविरोधों से जकड़ा हुआ है – साम्राज्यवाद और चीन के बीच का अन्तरविरोध तथा सामन्ती व्यवस्था और व्यापक जन-समुदाय के बीच का अन्तरविरोध। १९२७ में पूंजीपति वर्ग ने, जिसका प्रतिनिधित्व क्वोमिन्ताङ करती थी, क्रान्ति के प्रति विश्वासघात कर दिया और

* यह रिपोर्ट कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा मई १९३७ में येनान में आयोजित चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के राष्ट्रीय प्रतिनिधि-सम्मेलन में प्रस्तुत की गई थी।

राष्ट्रीय हितों को साम्राज्यवाद के हाथ बेच दिया। नतीजे के तौर पर एक ऐसी परिस्थिति पैदा हो गई जिसमें मजदूर-किसानों की राजनीतिक सत्ता क्वोमिन्ताङ की राजनीतिक सत्ता के तीव्र विरोध में खड़ी हो गई, तथा राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति को पूरा करने का भार अकेले चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कन्धों पर ही आ पड़ा।

३. १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद और खास तौर से १९३५ में उत्तरी चीन के घटना-क्रम[1] के बाद इन अन्तरविरोधों में ये परिवर्तन हुए हैं :

(क) चीन और सामान्य साम्राज्यवाद के बीच के अन्तर-विरोध के स्थान पर चीन और जापानी साम्राज्यवाद के बीच का विशेष रूप से उभरा हुआ और तीव्र अन्तरविरोध सामने आ गया है। जापानी साम्राज्यवाद चीन पर पूर्ण आधिपत्य जमाने की नीति पर अमल कर रहा है। फलतः चीन और कुछ अन्य साम्राज्यवादी ताकतों के बीच का अन्तरविरोध गौण अवस्था में पड़ गया है तथा जापान और इन साम्राज्यवादी ताकतों के बीच की दरार और अधिक चौड़ी हो गई है। इसलिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता के सामने यह कार्य मौजूद है कि वे चीन के जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को विश्व के शान्ति मोर्चे के साथ जोड़ दें। दूसरे शब्दों में चीन को न सिर्फ सोवियत संघ से, जो अविचल रूप से चीनी जनता का अच्छा मित्र रहा है, एकता कायम करनी चाहिए बल्कि जहां तक हो सके, जापानी साम्राज्यवाद का मुश्तरका विरोध करने के लिए चीन को उन साम्राज्यवादी देशों के साथ भी अपने सम्बन्ध स्थापित करने चाहिए जो इस समय शान्ति कायम रखना चाहते हैं और नए आक्रमणकारी युद्धों का विरोध करते हैं।

हमारे संयुक्त मोर्चे का लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह जापान का प्रतिरोध करे, न कि एकबारगी सभी साम्राज्यवादी ताकतों का विरोध करे।

(ख) चीन और जापान के बीच के अन्तरविरोध ने चीन के भीतर वर्ग-सम्बन्धों में परिवर्तन ला दिया है तथा पूंजीपति वर्ग और यहां तक कि युद्ध-सरदारों के सामने भी जीवन-रक्षा का प्रश्न खड़ा कर दिया है तथा इससे उनके और उनकी पार्टियों के राज-नीतिक रुख में भी धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा है। इस तरह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता के सामने यह कार्य मौजूद है कि वे जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाएं। अपने संयुक्त मोर्चे में पूंजीपति वर्ग को तथा उन सभी लोगों को शामिल करना चाहिए जो मातृभूमि की रक्षा करने के लिए राजी हों। संयुक्त मोर्चे में विदेशी दुश्मन के खिलाफ राष्ट्रीय एकजुटता निहित होनी चाहिए। यह कार्य न सिर्फ पूरा किया जाना चाहिए, बल्कि पूरा भी किया जा सकता है।

(ग) चीन और जापान के बीच के अन्तरविरोध ने समूचे देश के व्यापक जन-समुदाय (सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग) और कम्युनिस्ट पार्टी की स्थिति और नीति को बदल डाला है। देश को विनाश से बचाने के लिए अधिकाधिक जनता लड़ने को उठ खड़ी हुई है। १८ सितम्बर की घटना के बाद, कम्युनिस्ट पार्टी ने यह नीति पेश की कि तीन शर्तें (क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों पर हमला बन्द करना, जनता के आजादी के अधिकारों की गारन्टी करना, तथा जनता को हथियारबन्द करना) पूरी होने पर, वह क्वोमिन्ताङ के भीतर उन ग्रुपों से, जो जापान

का प्रतिरोध करने के लिए हमारे साथ सहयोग करने को राजी हों, जापान का प्रतिरोध करने के लिए समझौता करने को तैयार है। यह नीति समूचे राष्ट्र का जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा कायम करने की नीति के रूप में विकसित हुई है। यही कारण है कि हमारी पार्टी ने एक के बाद एक कई कदम उठाए हैं जिनमें १९३५ में अगस्त घोषणा[२] करना और दिसम्बर प्रस्ताव[३] पास करना, १९३६ में, मई में "च्याङ काई-शेक का विरोध करने" के नारे को छोड़ देना,[४] अगस्त में क्वोमिन्ताङ के नाम पत्र[५] भेजना, सितम्बर में जनवादी गणराज्य के बारे में प्रस्ताव[६] पास करना, दिसम्बर में शीआन घटना को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने पर जोर देना और फरवरी १९३७ में क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन के नाम तार[७] भेजना भी शामिल हैं।

(घ) चीन और जापान के बीच के अन्तरविरोध के कारण चीन के युद्ध-सरदारों की पृथक शासन-व्यवस्थाओं और उनके पारस्परिक गृहयुद्धों में भी परिवर्तन हुआ है; ये पृथक शासन-व्यवस्थाएं और गृहयुद्ध साम्राज्यवाद की प्रभाव-क्षेत्र बनाने की नीति और चीन की अर्ध-औपनिवेशिक आर्थिक परिस्थितियों की ही उपज हैं। जापानी साम्राज्यवाद इस तरह की पृथक शासन-व्यवस्थाओं और ऐसे गृहयुद्धों को बढ़ावा देता है, ताकि उसे चीन पर अपना एकाधिपत्य कायम करने में सुविधा हो सके। कुछ अन्य साम्राज्यवादी ताकतें अपने खुद के हित में ही अस्थाई रूप से चीन के एकीकरण और आन्तरिक शान्ति का समर्थन करती हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी व चीनी जनता गृहयुद्ध और फूट का विरोध करने तथा शान्ति और एकीकरण के लिए लड़ने की भरसक कोशिश कर रही हैं।

(ङ) चीन और जापान के बीच का राष्ट्रीय अन्तरविरोध बढ़ने की वजह से, देश के भीतर वर्गों के बीच और राजनीतिक ग्रुपों के बीच के अन्तरविरोधों को, सापेक्ष राजनीतिक महत्व की दृष्टि से गौणता और अधीनता का स्थान प्राप्त हो गया है। लेकिन ये अन्तरविरोध अब भी बने हुए हैं; ये क्षीण या विलुप्त हरगिज नहीं हुए हैं। जापान को छोड़कर दूसरी साम्राज्यवादी ताकतों और चीन के बीच के अन्तरविरोधों की स्थिति भी ऐसी ही है। इसलिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता के सामने यह कार्य मौजूद है: उन आन्तरिक और बाह्य अन्तरविरोधों को समुचित रूप से पुनर्व्यवस्थित करना जिन्हें इस समय पुनर्व्यवस्थित किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, ताकि वे जापान का प्रतिरोध करने के लिए एक होने के सामान्य कार्य से मेल खा सकें। इसीलिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने शान्ति और एकीकरण की नीति, लोकशाही की नीति, जनता के रहन-सहन में सुधार करने की नीति और जापान का विरोध करने वाले अन्य देशों से बातचीत चलाने की नीति अपनाई है।

४. चीनी क्रान्ति के नए काल की पहली मंजिल ९ दिसम्बर १९३५ को शुरू हुई और फरवरी १९३७ में उस समय समाप्त हो गई जब क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण अधिवेशन हुआ। इस मंजिल की मुख्य घटनाएं इस प्रकार थीं: देश को विनाश से बचाने के लिए विद्यार्थियों में, सांस्कृतिक जगत में और पत्रकार जगत में आन्दोलन, उत्तर-पश्चिम में लाल सेना का प्रवेश, जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति के लिए कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रचार-कार्य और संगठन-कार्य, शांघाई

ग्रौर छिङताग्रो में जापान-विरोधी हड़तालें,[८] कुछ हद तक जापान के प्रति ब्रिटेन की नीति का कड़ा होना,[९] क्वाङतुङ-क्वाङशी घटना,[१०] स्वेय्वान में युद्ध ग्रौर उसका समर्थन करने वाला ग्रान्दोलन,[११] चीन-जापान वार्ता में नानकिङ का ग्रपेक्षाकृत कड़ा रुख,[१२] शीग्रान घटना, ग्रौर ग्रन्त में नानकिङ में क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण ग्रधिवेशन[१३]। ये सभी घटनाएं उस बुनियादी ग्रन्तरविरोध, यानी चीन ग्रौर जापान की पारस्परिक शत्रुता, के चारों ग्रोर केन्द्रित थीं; ये घटनाएं जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने की ऐतिहासिक ग्रावश्यकता के चारों ग्रोर प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रित थीं। इस मंजिल में क्रान्ति का बुनियादी कार्य था ग्रान्तरिक शान्ति के लिए संघर्ष करना ग्रौर तमाम ग्रान्तरिक सशस्त्र मुठभेड़ों को बन्द कर देना, ताकि जापान का मुश्तरका प्रतिरोध करने के लिए एकता कायम की जा सके। इस मंजिल में कम्युनिस्ट पार्टी ने "गृहयुद्ध बन्द करने ग्रौर जापान के विरुद्ध एकताबद्ध हो जाने" का ग्रावाहन किया था। यह ग्रावाहन मुख्य रूप से कार्यान्वित हो गया है। इससे वह पहली शर्त पूरी हो गई जो ग्रमल में जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए ग्रावश्यक थी।

५. ग्रपने ग्रन्दर जापान-परस्त गुट की मौजूदगी के कारण क्वोमिन्ताङ ने ग्रपनी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण ग्रधिवेशन में न तो ग्रपनी नीति में निश्चित ग्रौर पूर्ण परिवर्तन किया, ग्रौर न कोई समस्या ठोस तरीके से हल ही की। फिर भी क्वोमिन्ताङ को जनता के दबाव ग्रौर ग्रपनी पांतों के ग्रन्दर हुए परिवर्तन के कारण पिछले दस साल की ग्रपनी गलत नीति को बदलना ग्रारम्भ करना पड़ा। दूसरे शब्दों में, उसे गृहयुद्ध, तानाशाही ग्रौर

प्रतिरोध-हीनता की नीति से हटकर शान्ति, जनवाद ग्रौर जापान-प्रतिरोध की दिशा में चलना पड़ा तथा जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति को स्वीकार करना शुरू करना पड़ा। इस तरह का ग्रारम्भिक परिवर्तन क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण ग्रधिवेशन में दिखाई पड़ा। ग्रब से हमारी मांग यह है कि क्वोमिन्ताङ ग्रपनी नीति में पूर्ण परिवर्तन करे। यह उद्देश्य प्राप्त करने के लिए हमें ग्रौर सारे देश की जनता को जापान-प्रतिरोध व जनवाद के ग्रान्दोलन का ग्रौर ग्रधिक व्यापक रूप से विकास करना चाहिए, क्वोमिन्ताङ की ग्रालोचना करने, उसे ग्रमल के मैदान में ढकेलने ग्रौर उस पर दबाव डालने में ग्रौर ग्रागे कदम बढ़ाना चाहिए, क्वोमिन्ताङ के जो सदस्य शान्ति, जनवाद ग्रौर जापान-प्रतिरोध का पक्षपोषण करते हैं, उनके साथ एकता कायम करनी चाहिए, ढुलमुलपन ग्रौर हिचकिचाहट दिखाने वाले सदस्यों को ग्रागे बढ़ने में मदद देनी चाहिए ग्रौर जापान-परस्त सदस्यों को निकाल बाहर करना चाहिए।

६. मौजूदा मंजिल नए काल की दूसरी मंजिल है। पहली मंजिल ग्रौर मौजूदा मंजिल, ये दोनों ही जापान के खिलाफ देशव्यापी सशस्त्र प्रतिरोध की ग्रोर संक्रमण करने की मंजिलें हैं। पहली मंजिल में यदि प्रधान कार्य शान्ति के लिए संघर्ष करना था तो इस मंजिल में प्रधान कार्य जनवाद के लिए संघर्ष करना है। हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि एक वास्तविक ग्रौर सुदृढ़ जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा जिस तरह ग्रान्तरिक शान्ति के ग्रभाव में कायम नहीं किया जा सकता उसी तरह देश में जनवाद के ग्रभाव में भी कायम नहीं किया जा सकता। इसलिए विकास की वर्तमान मंजिल में

जनवाद के लिए संघर्ष क्रान्तिकारी कार्य की केन्द्रीय कड़ी है। यदि हम जनवाद के कार्य के महत्व को स्पष्ट रूप से न देख पाए और यदि हमने जनवाद के लिए अपने संघर्ष को शिथिल कर दिया, तो हम एक वास्तविक और सुदृढ़ जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम नहीं कर पाएंगे।

जनवाद और आजादी के लिए संघर्ष

७. जापानी साम्राज्यवाद चीन की भूमि पर लम्बी दीवार के दक्षिण में हमला करने के लिए अपनी तैयारियां बढ़ा रहा है। हिटलर और मुसोलिनी पश्चिम में जिन आततायी युद्धों के लिए जोरों से तैयारी कर रहे हैं उन्हीं के साथ तालमेल कायम करके जापान पूर्व में एक निश्चित योजना के अनुसार चीन को एक ही बार में पराधीन बनाने की परिस्थितियां पैदा करने की भरपूर कोशिश कर रहा है – वह घरेलू क्षेत्र में फौजी, राजनीतिक, आर्थिक व विचारधारात्मक परिस्थितियां और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में राजनयिक परिस्थितियां तैयार कर रहा है, तथा चीन में जापान-परस्त शक्तियों का पालन-पोषण कर रहा है। जापान द्वारा तथाकथित "चीन-जापान सहयोग" के बारे में किया गया प्रचार और उसके द्वारा उठाए गए राजनयिक कदमों में कुछ नरमी के रुख का कारण युद्ध की पूर्ववेला में उसकी आक्रमणकारी नीति की दांवपेंच सम्बन्धी आवश्यकता ही है। चीन अब जीवन-रक्षा या विनाश की नाजुक घड़ी में पहुंचता जा रहा है। चीन को चाहिए कि वह जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के लिए अपनी

तैयारियों की रफ्तार बढ़ा दे। हम तैयारी करने का विरोध नहीं करते। लेकिन हम लम्बी अवधि तक तैयारी करने के सिद्धान्त का विरोध करते हैं और फौजी अफसरों और प्रशासनिक पदाधिकारियों के आमोद-प्रमोद, आलसीपन और आत्मसन्तोष का विरोध करते हैं, जिनसे देश खतरे में पड़ जाता है। इस तरह की बातों से दरअसल शत्रु को मदद मिलती है, और इनको तुरन्त दूर किया जाना चाहिए।

८. राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की राजनीतिक, फौजी, आर्थिक और शैक्षणिक तैयारियां देश को बचाने के उद्देश्य से सशस्त्र प्रतिरोध करने के लिए आवश्यक शर्तें हैं। इनमें से किसी भी तरह की तैयारी में एक क्षण की भी ढील नहीं डालनी चाहिए। राजनीतिक जनवाद और आजादी प्राप्त करना सशस्त्र प्रतिरोध में जीत की गारन्टी करने के लिए केन्द्रीय कड़ी है। सशस्त्र प्रतिरोध के लिए देशव्यापी शान्ति और एकता की जरूरत होती है, लेकिन जनवाद और आजादी के बिना, प्राप्त की गई शान्ति को सुदृढ़ नहीं बनाया जा सकता और आन्तरिक एकता को मजबूत नहीं किया जा सकता। सशस्त्र प्रतिरोध के लिए जनता को गोलबन्द करने की जरूरत होती है, लेकिन जनवाद और आजादी के बिना उसे गोलबन्द करना असम्भव है। सुदृढ़ शान्ति और एकता कायम किए बिना, जनता को गोलबन्द किए बिना, हमारे सशस्त्र प्रतिरोध की ठीक वैसी ही हालत होगी जैसे अबीसीनिया की हुई थी। अबीसीनिया मुख्यत: इसलिए असफल रहा क्योंकि वह अपनी सामन्ती राज्य-व्यवस्था के कारण अपनी आन्तरिक एकता को सुदृढ़ नहीं बना सका और अपनी जनता की पहलकदमी को जागृत नहीं कर सका। जनवाद

के बिना चीन में वास्तविक और सुदृढ़ जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम नहीं किया जा सकता और वह अपने कार्य को पूरा नहीं कर सकता।

६. चीन के अन्दर निम्न दो तरह के जनवादी परिवर्तन तुरन्त आरम्भ कर देने चाहिए। पहले, राजनीतिक व्यवस्था के क्षेत्र में, क्वोमिन्ताङ की एक पार्टी और एक वर्ग की प्रतिक्रियावादी तानाशाही के शासन-तंत्र को एक ऐसे जनवादी शासन-तंत्र में बदल देना चाहिए जिसे सभी पार्टियों और वर्गों का सहयोग प्राप्त हो। इस दिशा में हमें सबसे पहले राष्ट्रीय एसेम्बली का चुनाव करने और उसे बुलाने के गैर-जनवादी तरीके को बदलना चाहिए तथा जनवादी तरीके से एसेम्बली का चुनाव करना चाहिए और अपने अधिवेशन करने में उसके स्वतंत्र होने की गारन्टी करनी चाहिए; इसके बाद यह आवश्यक हो जाता है कि एक सच्चा जनवादी संविधान बनाया जाए, सच्ची जनवादी संसद बुलाई जाए, एक सच्ची जनवादी सरकार चुनी जाए और सच्ची जनवादी नीति को अमल में लाया जाए। यह सब करके ही वास्तव में आन्तरिक शान्ति को सुदृढ़ बनाया जा सकता है, आन्तरिक सशस्त्र प्रतिद्वन्द्विता को समाप्त किया जा सकता है और आन्तरिक एकता को मजबूत बनाया जा सकता है, ताकि पूरा देश विदेशी हमले का प्रतिरोध करने के लिए एक हो जाए। हो सकता है कि हमारे उक्त परिवर्तन पूरे होने के पहले ही जापानी साम्राज्यवादी अपना आक्रमण आरम्भ कर दें। इसलिए किसी भी क्षण जापानी आक्रमण का मुकाबला करने और उसे पूरी तरह ध्वस्त करने के लिए हमें शीघ्र ही उक्त सुधार कर लेने चाहिए और इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि सशस्त्र प्रतिरोध के दौर में पूर्ण रूप से सुधार कर लिया जाए। समूचे देश की जनता और सभी पार्टियों के देशभक्तों को राष्ट्रीय एसेम्बली और संविधान बनाने के सवाल के प्रति अपनी पहले की उदासीनता छोड़ देनी चाहिए। उन्हें राष्ट्रीय एसेम्बली और संविधान के लिए चलाए जाने वाले इस ठोस आन्दोलन पर, जिसका राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए बड़ा महत्व है, अपनी शक्ति केन्द्रित कर देनी चाहिए। उन्हें सत्ताधारी क्वोमिन्ताङ का तीव्र खण्डन करना चाहिए, उसे इस बात के लिए बाध्य और प्रेरित करना चाहिए कि वह एक पार्टी और एक वर्ग की अपनी तानाशाही को खत्म कर दे और जनमत के अनुसार चले। इस साल के अगले कई महीनों में पूरे देश में एक विशाल जनवादी आन्दोलन शुरू कर देना चाहिए, जिसका फौरी उद्देश्य होगा राष्ट्रीय एसेम्बली और संविधान के जनवादीकरण का कार्य पूरा करना। दूसरी तरह का परिवर्तन जनता की भाषण देने की आजादी, सभा करने की आजादी और संगठन बनाने की आजादी के बारे में है। इस तरह की आजादी के बिना राजनीतिक व्यवस्था का जनवादी पुनर्निर्माण करना, प्रतिरोध-युद्ध के लिए जनता को गोलबन्द करना, तथा मातृभूमि की विजयपूर्वक रक्षा करना और खोई हुई भूमि को सफलतापूर्वक पुनः प्राप्त करना असम्भव है। अगले कुछ महीनों में सारे देश की जनता के जनवादी आन्दोलन को चाहिए कि वह कम से कम इस कार्य की निम्नतम पूर्ति के लिए प्रयत्न करे, जिसमें राजनीतिक कैदियों को रिहा करना और राजनीतिक पार्टियों पर से प्रतिबन्ध हटाना आदि शामिल हैं। राजनीतिक व्यवस्था का जनवादी पुनर्निर्माण करना और जनता को आजादी के अधिकार प्रदान करना—ये जापान-

विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के कार्यक्रम के महत्वपूर्ण अंग हैं। साथ ही ये एक वास्तविक और सुदृढ़ जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने के लिए भी आवश्यक शर्तें हैं।

१०. हमारे दुश्मन – जापानी साम्राज्यवादी, चीनी गद्दार, जापान-परस्त तत्व और त्रात्सकीवादी ग्रुप – पूरी ताकत लगाकर इस बात की कोशिश करते रहे हैं कि चीन में शान्ति और एकीकरण के लिए, जनवाद और आजादी के लिए तथा जापान का सशस्त्र प्रतिरोध करने के लिए उठाए जाने वाले हर कदम को नाकाम कर दिया जाए। अतीत काल में जब हम शान्ति और एकीकरण के लिए घोर संघर्ष कर रहे थे, तब उन्होंने गृहयुद्ध भड़काने और फूट डालने की भरसक कोशिश की। इस समय और निकट भविष्य में जब हम जनवाद और आजादी के लिए तीव्र संघर्ष करेंगे, तब वे निस्सन्देह फिर हमारे प्रयत्नों को नाकाम करने की कोशिश करेंगे। उनका सामान्य उद्देश्य यह है कि मातृभूमि की रक्षा के सिलसिले में हमारे सशस्त्र प्रतिरोध के कार्य को विफल कर दिया जाए और चीन को पराधीन बनाने की अपनी आक्रमणकारी योजना को सफल बनाया जाए। अब से हमें जनवाद और आजादी के लिए अपने संघर्ष में न सिर्फ क्वोमिन्ताङ के कट्टरतावादियों और जनता के पिछड़े तबकों में प्रचार, आन्दोलन और आलोचना के कार्यों में जुट जाना चाहिए, बल्कि जापानी साम्राज्यवाद की ओर चीन पर हमला करने में जापानी साम्राज्यवाद के पालतू कुत्तों – जापान-परस्त तत्वों और त्रात्सकीवादी ग्रुप – की साजिशों का पूरी तरह पर्दाफाश कर देना चाहिए तथा उनके विरुद्ध दृढ़ता से संघर्ष करना चाहिए।

११. शान्ति, जनवाद और सशस्त्र प्रतिरोध के लिए और जापान-

विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने के लिए, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन के नाम अपने तार में निम्नलिखित चार बातों का वादा किया है :

(१) कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में काम करने वाली शेनशी-कानसू-निङश्या क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र की सरकार को चीन गणराज्य के विशेष प्रदेश की सरकार का नया नाम दिया जाएगा और लाल सेना राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना का एक हिस्सा कहलाएगी। ये दोनों क्रमशः नानकिङ की केन्द्रीय सरकार और उसकी फौजी परिषद का निर्देशन स्वीकार करेंगी ;

(२) विशेष प्रदेश की सरकार के अधीन इलाकों में पूरी तरह जनवादी व्यवस्था लागू की जाएगी ;

(३) क्वोमिन्ताङ का तख्ता सशस्त्र शक्ति के जरिए उलट देने की नीति को लागू करना बन्द कर दिया जाएगा ; और

(४) जमींदारों की जमीन जब्त करना बन्द कर दिया जाएगा।

ये वादे आवश्यक हैं और इनकी इजाजत दी जा सकती है। हम केवल इसी तरह चीन के आन्तरिक और वाह्य अन्तरविरोधों के सापेक्ष राजनीतिक महत्व में हुए परिवर्तनों के अनुसार, देश की दोनों राजनीतिक सत्ताओं की आपसी शत्रुता की स्थिति को बदल सकते हैं और शत्रु का मुश्तरका प्रतिरोध करने के लिए एकता कायम कर सकते हैं। ये एक तरह की रियायतें हैं, जो उसूलों के आधार पर और कुछ शर्तों के अनुसार दी गई हैं। इनका उद्देश्य है बदले

में शान्ति, जनवाद और सशस्त्र प्रतिरोध की परिस्थिति प्राप्त करना, जो सारे राष्ट्र के लिए आवश्यक है। लेकिन इन रियायतों की भी सीमाएं हैं। ये सीमाएं हैं : विशेष प्रदेश और लाल सेना में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व को बनाए रखना तथा क्वोमिन्ताङ के साथ सम्बन्ध रखने के दौर में कम्युनिस्ट पार्टी की स्वतंत्रता को और आलोचना करने की उसकी आजादी को बनाए रखना। इन सीमाओं को पार करने की इजाजत नहीं दी जा सकती। रियायतें दोनों पार्टियों को देनी हैं : क्वोमिन्ताङ गृहयुद्ध व तानाशाही की और विदेशी आक्रमण का प्रतिरोध न करने की नीति को छोड़ दे और कम्युनिस्ट पार्टी दो राजनीतिक सत्ताओं के बीच शत्रुता कायम रखने की नीति को छोड़ दे। हम दूसरी चीज से पहली चीज का विनिमय करते हैं और देश को विनाश से बचाने के लिए संघर्ष करने के उद्देश्य से क्वोमिन्ताङ के साथ पुनः सहयोग कायम करते हैं। इसे कम्युनिस्ट पार्टी का आत्मसमर्पण बताना महज आहक्यू-वाद[१४] या द्वेषपूर्वक लांछन लगाना है।

१२. क्या कम्युनिस्ट पार्टी "तीन जन-सिद्धान्तों" से सहमत है? हमारा उत्तर है : हां, सहमत है।[१५] "तीन जन-सिद्धान्तों" में उनके इतिहास के दौरान परिवर्तन हुए हैं। चूंकि डा० सुन यात-सेन ने कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करके अपने क्रान्तिकारी "तीन जन-सिद्धान्तों" पर दृढ़ता के साथ अमल किया था, इसलिए इन "तीन जन-सिद्धान्तों" ने जनता का विश्वास अर्जित किया और वे १९२४-२७ के काल का विजयी और क्रान्तिकारी फरहरा बन गए। लेकिन १९२७ में क्वोमिन्ताङ ने (पार्टी-शुद्धि आन्दोलन[१६] और कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध द्वारा) कम्युनिस्ट पार्टी का बहिष्कार

किया और एक उल्टी नीति पर अमल किया। इससे क्रान्ति को पराजय का मुंह देखना पड़ा और राष्ट्र संकट में पड़ गया। फलतः "तीन जन-सिद्धान्तों" पर से जनता का विश्वास उठ गया। इस समय राष्ट्रीय संकट अत्यन्त गम्भीर है। क्वोमिन्ताङ कोई परिवर्तन लाए बिना ही पुराने ढंग से शासन नहीं चला सकती। फलतः समूचे देश की जनता और क्वोमिन्ताङ के देशभक्त दोनों पार्टियों के बीच सहयोग कायम करने की फिर एक बार जोरदार मांग कर रहे हैं। इसलिए जो बात चीनी क्रान्ति की ऐतिहासिक आवश्यकता से पूरी तरह मेल खाती है और जिसे कम्युनिस्ट पार्टी के हर सदस्य को साफ-साफ समझ लेना चाहिए, वह यह है कि "तीन जन-सिद्धान्तों" की भावना को पुनर्जीवित करते हुए दोनों पार्टियां फिर से परस्पर सहयोग कायम करें – यह सहयोग अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में "राष्ट्रवाद के सिद्धान्त" पर आधारित हो जिसका लक्ष्य चीन की स्वाधीनता और मुक्ति प्राप्त करना है, तथा घरेलू क्षेत्र में "जनवाद के सिद्धान्त" पर, जिसका लक्ष्य जनवाद और आजादी हासिल करना है, और "जन-जीविका के सिद्धान्त" पर, जिसका लक्ष्य जनता की खुशहाली बढ़ाना है, आधारित हो – और इन सिद्धान्तों को दृढ़ता से अमल में लाने के लिए जनता का नेतृत्व करें। कम्युनिस्ट लोग समाजवाद और कम्युनिज्म का अपना आदर्श कभी नहीं छोड़ेंगे। वे पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की मंजिल पार करके समाजवाद और कम्युनिज्म की मंजिल तक पहुंचेंगे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अपना राजनीतिक और आर्थिक कार्यक्रम है। उसका सर्वोच्च कार्यक्रम है समाजवाद और कम्युनिज्म की स्थापना करना, जो "तीन जन-सिद्धान्तों" से भिन्न है। जनवादी क्रान्ति के काल में भी उसका कार्यक्रम देश

की अन्य किसी पार्टी के कार्यक्रम से ज्यादा पूर्ण होता है। लेकिन जनवादी क्रान्ति के लिए कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम और क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा घोषित "तीन जन-सिद्धान्तों" का कार्यक्रम मूलतः एक दूसरे के विरुद्ध नहीं हैं। इसलिए हम न सिर्फ "तीन जन-सिद्धान्तों" को स्वीकार करने से इनकार नहीं करते, बल्कि उन पर दृढ़ता से अमल करने को भी तैयार हैं। इसके अलावा हम क्वोमिन्ताङ से मांग करते हैं कि "तीन जन-सिद्धान्तों" पर हमारे साथ वह भी अमल करे, तथा हम समूची जनता का आवाहन करते हैं कि "तीन जन-सिद्धान्तों" पर वह भी अमल करे। हम समझते हैं कि राष्ट्रीय स्वाधीनता, जनवाद व आजादी और जनता की खुशहाली के तीन महान उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कम्युनिस्ट पार्टी, क्वोमिन्ताङ और सारे देश की जनता को मिलकर संघर्ष करना चाहिए।

१३. क्या मजदूर-किसानों के जनवादी गणराज्य का हमारा पुराना नारा गलत था? नहीं, वह गलत नहीं था। चूंकि पूंजीपति वर्ग, विशेषकर बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, क्रान्ति से हट गया था, साम्राज्यवाद और सामन्ती ताकतों के पक्ष में चला गया था और जनता का शत्रु बन गया था, इसलिए क्रान्ति की बची हुई प्रेरक शक्तियों के रूप में केवल सर्वहारा वर्ग, किसान और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग ही रह गए थे; एकमात्र क्रान्तिकारी पार्टी केवल कम्युनिस्ट पार्टी ही रह गई थी; तथा क्रान्ति का संगठन करने की जिम्मेदारी कम्युनिस्ट पार्टी के कन्धों पर, जो एकमात्र क्रान्तिकारी पार्टी थी, पड़े बिना नहीं रही। अकेली कम्युनिस्ट पार्टी ने ही क्रान्ति का झण्डा ऊंचा उठाए रखा, क्रान्तिकारी परम्परा की

रक्षा की, मजदूर-किसानों के जनवादी गणराज्य का नारा प्रस्तुत किया और अनेक वर्षों तक इस नारे के लिए कठोर संघर्ष किया। मजदूर-किसानों के जनवादी गणराज्य का नारा पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के कार्य के विरुद्ध नहीं था, बल्कि उसका लक्ष्य था उस क्रान्ति के कार्य को दृढ़ता से पूरा करना। हमने अपने अमली संघर्ष में जितनी भी नीतियां अपनाईं उनमें से कोई भी इस कार्य के प्रतिकूल नहीं थी। हमारी नीति, जिसमें जमींदारों की जमीन जब्त करना और आठ घण्टे का श्रम-दिन लागू करना भी शामिल था, कभी पूंजीवाद की निजी मिलकियत वाली व्यवस्था की हद से आगे नहीं गई; तब हमारी नीति समाजवाद को अमल में लाने की नहीं थी। नए जनवादी गणराज्य में कौन से तत्व शामिल होंगे? उसमें सर्वहारा वर्ग, किसान, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग, पूंजीपति वर्ग और देश के वे तमाम लोग शामिल होंगे जो राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति के पक्ष में हैं। यह गणराज्य राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति के लिए इन सभी वर्गों का संश्रय होगा। इस संश्रय की विशेषता होगी पूंजीपति वर्ग को शामिल करना। इसका कारण यह है कि वर्तमान परिस्थिति में पूंजीपति वर्ग द्वारा जापान का प्रतिरोध करने के कार्य में फिर से हिस्सा लेने की सम्भावना पैदा हो गई है। सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी को उसे ठुकराना नहीं चाहिए, बल्कि अपनी राह पर ले आना चाहिए और समान संघर्ष के लिए उसके साथ फिर से संश्रय कायम करना चाहिए, जिससे कि चीनी क्रान्ति को आगे बढ़ने में मदद मिल सके। देश में सशस्त्र मुठभेड़ बन्द करने के हेतु कम्युनिस्ट पार्टी इस बात के लिए तैयार है कि वह जमींदारों की जमीन को बलपूर्वक जब्त करने की नीति लागू करना बन्द कर देगी; वह

इस बात के लिए भी तैयार है कि नए जनवादी गणराज्य के निर्माण के दौरान कानूनी और अन्य उपयुक्त उपायों से भूमि-समस्या हल की जाएगी। चीन की धरती जापानियों को मिले या चीनियों के पास रहे – सबसे पहले यह तै करना है। चूंकि चीन की रक्षा करने की बड़ी शर्त पर ही किसानों की भूमि-समस्या हल करनी है, इसलिए हमारे लिए यह बिलकुल आवश्यक है कि हम जमीन को बलपूर्वक जब्त करने के तरीके को बदलकर नए उपयुक्त उपाय अपनाएं।

अतीत काल में मजदूर-किसानों के जनवादी गणराज्य का नारा देना और इस समय उसे छोड़ देना, दोनों ही बातें सही हैं।

१४. शत्रु का संयुक्त रूप से प्रतिरोध करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए कुछ आन्तरिक अन्तरविरोधों को समुचित रूप से हल करना होगा। यहां पर सिद्धान्त यह है कि इस हल से जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा सुदृढ़ और व्यापक हो, न कि निर्बल या संकुचित। जनवादी क्रान्ति की इस मंजिल में देश के अन्दर वर्गों के बीच, पार्टियों के बीच और राजनीतिक ग्रुपों के बीच अन्तरविरोधों और संघर्षों का होना अनिवार्य है। लेकिन यह सम्भव और आवश्यक है कि उन संघर्षों को बन्द कर दिया जाए जो एकता के लिए और जापान का प्रतिरोध करने के लिए हानिकर हैं (जैसे गृहयुद्ध, राजनीतिक पार्टियों के बीच प्रतिद्वन्द्विता, स्थानीय पृथकतावाद, एक तरफ सामन्ती राजनीतिक व आर्थिक उत्पीड़न तथा दूसरी तरफ विद्रोह की नीति और ऐसी बहुत बढ़ी-चढ़ी आर्थिक मांगें जो जापान का प्रतिरोध करने के लिए हानिकर हैं, वगैरह-वगैरह), तथा उन संघर्षों को जारी रखा जाए जिनसे एकता को और प्रतिरोध-युद्ध को लाभ होता है (जैसे आलोचना की आजादी के लिए संघर्ष, राजनीतिक पार्टियों की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, जनता की राजनीतिक व आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए संघर्ष इत्यादि)।

१५. जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे और एकीकृत जनवादी गणराज्य के लिए लड़ने के सामान्य कार्य के अधीन लाल सेना और जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों के कार्य इस प्रकार हैं :

(१) अपने आपको जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की परिस्थिति के अनुकूल ढालने के लिए लाल सेना को तुरन्त ही राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना के रूप में पुनर्गठित हो जाना चाहिए और अपनी फौजी, राजनीतिक व सांस्कृतिक शिक्षा का स्तर उन्नत करके जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में उसे एक आदर्श सैन्य-दल बन जाना चाहिए ;

(२) हमें अपने आधार-क्षेत्र को देश का एक अंग बना लेना चाहिए, अपनी जनवादी व्यवस्था को नई परिस्थितियों के अनुकूल लागू करना चाहिए, अपनी सुरक्षा कोर को पुनर्गठित करना चाहिए और चीनी गद्दारों और तोड़फोड़ करने वालों का सफाया कर देना चाहिए, ताकि यह क्षेत्र जापान का प्रतिरोध करने और जनवाद पर अमल करने वाला आदर्श प्रदेश बन सके ;

(३) इस प्रदेश में आवश्यक आर्थिक निर्माण का काम करना चाहिए और जनता की जीवन-स्थिति को सुधारना चाहिए ; तथा

(४) आवश्यक सांस्कृतिक निर्माण का कार्य करना चाहिए।

नेतृत्व करने के लिए हमारा उत्तरदायित्व

१६. चीनी पूंजीपति वर्ग, जो कुछ विशेष ऐतिहासिक परिस्थितियों में साम्राज्यवाद और सामन्ती व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष में भाग ले सकता है, अपनी आर्थिक और राजनीतिक कमजोरी के कारण अन्य ऐतिहासिक परिस्थितियों में ढुलमुलपन दिखा सकता है और गद्दार भी बन सकता है; यह एक ऐसा नियम है जिसे चीन के इतिहास ने साबित कर दिया है। इसलिए यह इतिहास का फैसला है कि चीन की साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का कार्य पूंजीपति वर्ग के नेतृत्व में नहीं, बल्कि सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में ही पूरा किया जा सकता है। इसके अलावा, जनवादी क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग की धैर्यशीलता और पूर्णता का पर्याप्त रूप से विकास करके ही पूंजीपति वर्ग के अन्दर निहित ढुलमुलपन और अपूर्णता को दूर किया जा सकता है। केवल इसी प्रकार क्रान्ति को अधूरा रह जाने से बचाया जा सकता है। सर्वहारा वर्ग पूंजीपति वर्ग का अनुसरण करे या पूंजीपति वर्ग सर्वहारा वर्ग का? चीनी क्रान्ति में नेतृत्व की जिम्मेदारी की यह समस्या एक ऐसी धुरी है जिस पर क्रान्ति की सफलता या असफलता निर्भर है। १९२४-२७ का अनुभव हमें बतलाता है कि जब पूंजीपति वर्ग ने सर्वहारा वर्ग के राजनीतिक नेतृत्व का अनुसरण किया तो क्रान्ति कैसे आगे बढ़ी और जब सर्वहारा वर्ग राजनीतिक रूप से पूंजीपति वर्ग का दुमछल्ला बन गया[१*] (जिसके लिए कम्युनिस्ट पार्टी उत्तरदायी थी), तो क्रान्ति किस तरह पराजित हुई। इतिहास के इस घटना-क्रम की पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए।

वर्तमान परिस्थिति में सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के राजनीतिक नेतृत्व के बिना जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम नहीं किया जा सकता, शान्ति, जनवाद व सशस्त्र प्रतिरोध के लक्ष्य हासिल नहीं किए जा सकते, मातृभूमि की रक्षा नहीं की जा सकती और एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना नहीं की जा सकती। पूंजीपति वर्ग, जिसका प्रतिनिधित्व क्वोमिन्ताङ करती है, आज भी बहुत निष्क्रिय और रूढ़िबद्ध है, और यह बात इससे सिद्ध होती है कि कम्युनिस्ट पार्टी ने जिस जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का प्रस्ताव रखा था, उसे स्वीकार करने का साहस पूंजीपति वर्ग ने बहुत दिनों तक नहीं किया। ऐसी हालत में सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी की राजनीतिक नेतृत्व की जिम्मेदारी और भी ज्यादा बढ़ जाती है। जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के कार्य में फौज के जनरल स्टाफ जैसी भूमिका अदा करना एक ऐसी जिम्मेदारी है जिसे कम्युनिस्ट पार्टी दूसरों पर नहीं डाल सकती और जिसे निभाने से वह हरगिज इनकार नहीं कर सकती।

१७. सर्वहारा वर्ग अपनी पार्टी के द्वारा देश के सभी क्रान्तिकारी वर्गों का राजनीतिक नेतृत्व किस प्रकार करता है? पहले, इतिहास के विकास-क्रम के अनुकूल वह बुनियादी राजनीतिक नारे देता है, और इन नारों को अमल में लाने के लिए वह विकास की हर मंजिल और हर बड़ी घटना से सम्बन्धित कार्यवाही के नारे देता है। उदाहरण के लिए हमने "जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा" और "एकीकृत जनवादी गणराज्य" जैसे बुनियादी नारे दिए हैं। साथ ही समूचे देश में जनता की संयुक्त कार्यवाही के ठोस लक्ष्यों के रूप में हमने ऐसे नारे भी पेश किए हैं: "गृहयुद्ध बन्द करो",

"जनवाद के लिए संघर्ष करो", और "प्रतिरोध-युद्ध को चलाओ"। इस तरह के ठोस लक्ष्यों के बिना कोई भी उल्लेखनीय राजनीतिक नेतृत्व कायम नहीं हो सकता। दूसरे, जब इन ठोस लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सारा देश काम में जुट जाए, तो सर्वहारा वर्ग को, विशेषकर उसके हिरावल दस्ते—कम्युनिस्ट पार्टी को अपनी असीम सक्रियता और वफादारी प्रदर्शित करनी चाहिए जिससे कि वह इन ठोस लक्ष्यों को प्राप्त करने वाला एक आदर्श बन जाए। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे और जनवादी गणराज्य के सभी कार्यों को पूरा करने के लिए संघर्ष करते समय कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को चाहिए कि वे सबसे ज्यादा दूरदर्शी बनें, आत्म-बलिदान के लिए सबसे ज्यादा तत्पर रहें, सबसे ज्यादा दृढ़ बनें, तथा स्थिति को आंकने में पूर्वधारणाओं से तनिक भी काम न लें, और बहुसंख्यक आम जनता पर भरोसा रखें और उसका समर्थन प्राप्त करें। तीसरे, सर्वहारा वर्ग को अपने निश्चित राजनीतिक लक्ष्यों को न छोड़ने के उसूल के आधार पर अपने संश्रयकारियों से समुचित सम्बन्ध कायम करने चाहिए और इस संश्रय को विकसित व सुदृढ़ करना चाहिए। चौथे, कम्युनिस्ट पार्टी की पांतों का विस्तार करना चाहिए और उनमें विचारधारात्मक एकता और कड़ा अनुशासन कायम रखना चाहिए। ठीक उपरोक्त आवश्यक शर्तों पर अमल करके ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी सारे देश की जनता पर अपना राजनीतिक नेतृत्व कायम करती है। इन शर्तों से हमारे राजनीतिक नेतृत्व की गारन्टी करने का आधार बन जाता है और इस बात की गारन्टी करने का आधार बन जाता है कि क्रान्ति की पूर्ण विजय होगी तथा हमारे संश्रयकारियों के ढुलमुलपन से उसे कोई आंच नहीं आएगी।

१८. जब आन्तरिक शान्ति कायम हो जाए और दोनों पार्टियों के बीच सहयोग स्थापित हो जाए, तो हमें संघर्ष, संगठन और काम के उन पुराने तरीकों को बदल देना होगा जिन्हें हम दो शत्रुतापूर्ण राजनीतिक सत्ताओं के समय की अपनी कार्यदिशा के अन्तर्गत इस्तेमाल करते थे। इस तरह के परिवर्तन में मुख्यत: फौजी ढंग के बदले शान्तिपूर्ण ढंग को और गैर-कानूनी ढंग के बदले कानूनी ढंग को अपनाना होगा। इस तरह का परिवर्तन करना कोई आसान बात नहीं है, और हमें नए सिरे से सीखना होगा। इस प्रकार कार्यकर्ताओं का पुनर्शिक्षण एक प्रधान कड़ी बन जाता है।

१९. बहुत से साथियों ने जनवादी गणराज्य के स्वरूप और भविष्य के बारे में सवाल उठाए हैं। हमारा उत्तर है : जहां तक इसके वर्ग-स्वरूप का ताल्लुक है, यह सभी क्रान्तिकारी वर्गों का संश्रय है और जहां तक इसके भविष्य का ताल्लुक है, यह समाजवाद की ओर बढ़ सकता है। हमारा जनवादी गणराज्य राष्ट्रीय सशस्त्र प्रतिरोध के दौर में स्थापित होने वाला है। वह सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में स्थापित होने वाला है। वह नई अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितियों में (सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के बाद और विश्व-क्रान्ति के नए काल की पूर्ववेला में) स्थापित होने वाला है। इसलिए हालांकि सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार वह अपने स्वरूप में पूंजीवादी-जनवादी राज्य ही होगा, फिर भी वह साधारण पूंजीवादी गणराज्यों से भिन्न होगा, क्योंकि ठोस राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार उसे ऐसा राज्य होना चाहिए जो मजदूर वर्ग, किसान वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग और पूंजीपति वर्ग के संश्रय पर आधारित हो। जहां तक उसके भविष्य का प्रश्न है, यद्यपि वह

पूंजीवाद की ओर उन्मुख हो सकता है, लेकिन साथ ही यह सम्भावना भी है कि वह समाजवाद की ओर मुड़ जाए। चीनी सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी को इसी दूसरी सम्भावना के लिए भरपूर कोशिश करनी चाहिए।

२०. रुद्धद्वारवाद और दुस्साहसवाद के खिलाफ, तथा साथ ही दुमछल्लावाद के खिलाफ संघर्ष करना पार्टी के कार्यों को पूरा करने के लिए एक आवश्यक शर्त है। जन-आन्दोलनों में हमारी पार्टी के काम में गम्भीर रुद्धद्वारवाद, गर्वपूर्ण संकीर्णतावाद और दुस्साहसवाद का परम्परागत रुझान मौजूद रहा है। यह एक बुरा रुझान है जो पार्टी को जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने और बहुसंख्यक जन-समुदाय को अपने पक्ष में करने से रोकता है। यह निहायत जरूरी है कि हर ठोस काम में इस रुझान को दूर कर दिया जाए। हम जिस बात की मांग करते हैं वह यह है कि बहुसंख्यक जन-समुदाय पर भरोसा किया जाए और समूची स्थिति पर ध्यान दिया जाए। हम छन तू-श्यू के उस दुमछल्लावाद को पुनर्जीवित नहीं होने देंगे जो सर्वहारा वर्ग की पांतों में पूंजीवादी सुधारवाद का प्रतिबिम्ब है। यदि पार्टी के वर्ग-दृष्टिबिन्दु को कमजोर बना दिया जाए, उसकी विशेषताओं को धुंधला बना दिया जाए, या पूंजीवादी सुधारवादियों की मांगें पूरी करने के लिए मजदूरों व किसानों के हितों को बलिदान कर दिया जाए, तो क्रान्ति अनिवार्य रूप से पराजित हो जाएगी। हम जिस बात की मांग करते हैं वह यह है कि सुदृढ़ क्रान्तिकारी नीति अमल में लाई जाए और पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति में पूर्ण विजय प्राप्त करने के लिए संघर्ष किया जाए। उपरोक्त बुरे रुझानों को दूर करने के लिए यह निहायत जरूरी है कि समूची पार्टी का मार्क्सवादी-लेनिनवादी सैद्धान्तिक स्तर ऊंचा उठाया जाए, क्योंकि मार्क्सवाद-लेनिनवाद ही वह कुतुबनुमा है जो चीनी क्रान्ति का विजय की ओर मार्गदर्शन कर सकता है।

नोट

१ "उत्तरी चीन के घटना-क्रम" में वे तमाम घटनाएं शामिल हैं जिनके द्वारा जापानी हमलावरों ने १९३५ में उत्तरी चीन पर अपना आक्रमण कर दिया और क्वोमिन्ताङ सरकार ने, जिसका सरगना च्याङ काई-शेक था, उत्तरी चीन की प्रभुसत्ता शत्रु को सौंप दी और सारे देश को अपमानित होने दिया। मई १९३५ में जापानी हमलावरों ने क्वोमिन्ताङ सरकार के सामने यह मांग पेश की कि उत्तरी चीन की प्रभुसत्ता जापान को सौंप दी जाए। जून में उत्तरी चीन में नियुक्त क्वोमिन्ताङ सरकार के प्रतिनिधि हो इङ-छिन और उत्तरी चीन में तैनात जापानी आक्रमणकारी सेना के कमाण्डर योशीजीरो उमेजू के बीच एक समझौता हुआ जिसमें क्वोमिन्ताङ सरकार ने जापान द्वारा प्रस्तुत मांग स्वीकार कर ली। तथाकथित "हो-उमेजू समझौता" यही है। इस समझौते के अनुसार हपे और छाहाड़ में चीन की अधिकतर प्रभुसत्ता जापान को सौंप दी गई। अक्तूबर में जापानी हमलावरों के निर्देशन में चीनी गद्दारों ने हपे प्रान्त की श्याङहो काउन्टी में विद्रोह कर दिया और काउन्टी-केन्द्र पर अधिकार कर लिया। नवम्बर में जापानी हमलावरों की शह पर चीनी गद्दारों ने "उत्तरी चीन के पांच प्रान्तों में स्वायत्त-शासन के लिए आन्दोलन" चलाया, और पूर्वी हपे में कठपुतली "कम्युनिस्ट-विरोधी स्वायत्त-शासन" की स्थापना कर दी। क्वोमिन्ताङ सरकार ने सुङ चे-य्वान आदि व्यक्तियों को नियुक्त किया कि वे "हपे और छाहाड़ के राजनीतिक मामलों के लिए कमीशन" कायम करें, ताकि "उत्तरी चीन में विशेष राजनीतिक सत्ता" के बारे में जापानी हमलावरों की मांग पूरी की जा सके।

२ यहां १ अगस्त १९३५ को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रकाशित की

गई घोषणा का हवाला दिया गया है। उसके मुख्य अंश इस प्रकार हैं :

"इस समय जबकि हमारे देश और जनता के सामने विनाश का संकट मुंह बाए खड़ा है, कम्युनिस्ट पार्टी एक बार फिर सभी देशवासियों से अपील करती है : विभिन्न पार्टियों के राजनीतिक विचारों और हितों में पहले जो भी भेद रहे हों अथवा अब जो भी भेद मौजूद हों, विभिन्न व्यवसायों वाले देशवासियों के विचारों और हितों में पहले जो भी भेद रहे हों, और विभिन्न सेनाओं ने एक दूसरे के विरुद्ध पहले जो भी कार्यवाहियां की हों अथवा अब जो भी कार्यवाहियां कर रही हों, सभी को सचेत होकर यह समझ लेना चाहिए कि 'घर में भाई-भाई लड़ते हैं, मगर बाहरी हमलों का वे मिलकर मुकाबला करते हैं', और सबसे पहले सभी को गृहयुद्ध बन्द कर देना चाहिए जिससे देश की पूरी शक्ति (जन-शक्ति, भौतिक व आर्थिक साधन-स्रोत तथा सैन्य-शक्ति) जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के पवित्र उद्देश्य के लिए संघर्ष करने के हेतु जुटाई जा सके। कम्युनिस्ट पार्टी एक बार फिर गम्भीरतापूर्वक ऐलान करती है : यदि क्वोमिन्ताङ सेना लाल सेना पर हमला करना बन्द कर दे या कोई भी सैन्य-दल जापान का प्रतिरोध करने के कार्य में जुट जाए, तो उनके और लाल सेना के बीच नए-पुराने झगड़ों के बावजूद और घरेलू समस्याओं के प्रति भिन्न राय होने के बावजूद लाल सेना न केवल तुरन्त उनके विरुद्ध कार्यवाही बन्द कर देगी, बल्कि देश को बचाने के लिए उनके कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ने को भी तैयार रहेगी।"

"इस तरह की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार की स्थापना के विषय में कम्युनिस्ट पार्टी पहल करने को तैयार है। उन सभी राजनीतिक पार्टियों, उन सभी संगठनों (मजदूर संघ, किसान सभा, विद्यार्थी संघ, व्यापारी संघ, शैक्षणिक संघ, पत्रकार संघ, शिक्षक व स्कूल-कर्मचारी संघ, सह-जन्मस्थानीय सभा, च कुङ थाङ, राष्ट्रीय सशस्त्र आत्मरक्षा सभा, जापान-विरोधी सभा, देशोद्धार संघ आदि), उन सभी प्रसिद्ध व्यक्तियों व विद्वानों, राजनीतिमर्मज्ञों, तथा स्थानीय फौजी व सरकारी संस्थाओं के साथ, जो जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के कार्य में भाग लेना चाहती हैं, मिलकर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार बनाने के बारे में कम्युनिस्ट पार्टी फौरन बातचीत चलाने को तैयार है। बातचीत के फलस्वरूप स्थापित होने वाली राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार देश को विनाश से बचाने और उसकी जीवन-रक्षा करने की गारन्टी करने के लिए एक अस्थाई नेतृत्वकारी संस्था बन जानी चाहिए। जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने की सभी समस्याओं पर ठोस रूप से विचार करने के लिए इस तरह की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार को चाहिए कि वह सभी देशवासियों के सच्चे प्रतिनिधियों (मजदूरों, किसानों, सैनिकों, सरकारी पदाधिकारियों व कर्मचारियों, व्यापारियों और बुद्धिजीवियों के विभिन्न क्षेत्र, सभी पार्टियां व संगठन जो जापान का प्रतिरोध करना और देश को बचाना चाहते हों, और विदेशों में रहने वाले सभी प्रवासी चीनी व चीन के अन्दर रहने वाली सभी जातियों के लोग इन प्रतिनिधियों को जनवादी तरीके से चुनेंगे) की एसेम्बली बुलाने के लिए कदम उठाए। कम्युनिस्ट पार्टी प्रतिज्ञा करती है कि वह सभी देशवासियों के प्रतिनिधियों की ऐसी एसेम्बली बुलाने का समर्थन करने में और उसके सभी फैसलों को अमल में लाने के लिए भरपूर प्रयत्न करेगी।"

"जापान का प्रतिरोध करने के इच्छुक सभी सैन्य-दलों की एक संयुक्त जापान-विरोधी सेना बनाई जानी चाहिए। उसका एकमात्र हेडक्वार्टर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार के नेतृत्व में ही कायम किया जाना चाहिए। इस हेडक्वार्टर को विभिन्न सैन्य-दलों के जापान-विरोधी सेनानायकों और सैनिकों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों से बनाया जाए अथवा किसी अन्य आधार पर, यह प्रश्न सभी तबकों के प्रतिनिधियों और तमाम जनता की राय से हल होना चाहिए। जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने का अपना कर्तव्य पूरा करने के लिए लाल सेना प्रतिज्ञा करती है कि वह इस संयुक्त सेना में सबसे पहले शामिल होगी। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार कारगर तरीके से राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की भारी जिम्मेदारी निभा सके और संयुक्त जापान-विरोधी सेना कारगर तरीके से जापान का प्रतिरोध करने की भारी जिम्मेदारी निभा सके, इसके लिए कम्युनिस्ट पार्टी सभी देशवासियों से अपील करती है : जिनके पास धन है वे धन दें, जिनके पास बन्दूकें हैं वे बन्दूकें दें, जिनके पास अनाज है वे अनाज दें, जिनके पास श्रमशक्ति है वे श्रमशक्ति दें, और

जिनके पास विशेष कौशल है वे विशेष कौशल दें, ताकि हमारे सभी देशवासी गोलबन्द हो सकें और कोटि-कोटि जनता को हथियारबन्द करने के लिए सभी प्राचीन और नवीन अस्त्र-शस्त्रों का उपयोग किया जा सके।"

⁵ यहां "वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति और पार्टी के कार्यों के बारे में प्रस्ताव" का उल्लेख किया गया है, जिसे उत्तरी शेनशी में वायाओपाओ नामक स्थान पर २५ दिसम्बर १९३५ को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो ने अपनी मीटिंग में स्वीकार किया था। इस प्रस्ताव में उस समय की अन्तरराष्ट्रीय और घरेलू परिस्थिति का तथा चीन के वर्ग-सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तनों का मुकम्मिल तौर पर विश्लेषण तथा पार्टी की नीति का प्रतिपादन किया गया था। प्रस्ताव का एक अंश इस प्रकार है :

वर्तमान परिस्थिति ने यह बात स्पष्ट कर दी है कि जापानी साम्राज्यवाद द्वारा चीन को हड़पने के लिए की गई कार्यवाही से सारे चीन और सारे संसार को धक्का लगा है। चीन के राजनीतिक जीवन में सभी वर्गों, तबकों, राजनीतिक पार्टियों और सशस्त्र शक्तियों के आपसी सम्बन्धों में परिवर्तन हो चुके हैं और हो रहे हैं। राष्ट्रीय क्रान्तिकारी मोर्चा और राष्ट्रीय प्रति-क्रान्तिकारी मोर्चा, इन दोनों को ही फिर से संगठित किया जा रहा है। इसलिए पार्टी की कार्यनीति सम्बन्धी कार्यदिशा यह है : समूचे चीन और सभी जातियों की तमाम क्रान्तिकारी शक्तियों को जगाओ, उन्हें एकताबद्ध और संगठित करो, ताकि हमारे सामने मौजूद मुख्य शत्रु का—जापानी साम्राज्यवाद और वतनफरोशों के सरगना च्याङ काई-शेक का—विरोध किया जा सके। जापानी साम्राज्यवाद व वतनफरोश च्याङ काई-शेक के विरोधी सभी लोगों, सभी पार्टियों, सभी सैन्य-दलों और सभी वर्गों को एक होकर पवित्र राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध चलाना चाहिए ताकि जापानी साम्राज्यवादियों को चीन से बाहर खदेड़ा जा सके, चीन में उनके पालतू कुत्तों का शासन खत्म किया जा सके, चीनी राष्ट्र की पूर्ण मुक्ति प्राप्त की जा सके और चीन की स्वाधीनता व प्रादेशिक अखण्डता की रक्षा की जा सके। व्यापकतम जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा (निम्न तबकों और उच्च तबकों दोनों में) कायम करके ही जापानी साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्ते च्याङ काई-शेक को

परास्त किया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि विभिन्न व्यक्ति, विभिन्न संगठन, विभिन्न सामाजिक वर्ग व तबके तथा विभिन्न सैन्य-दल जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्ति में विभिन्न उद्देश्यों से प्रेरित होकर और विभिन्न वर्ग-दृष्टिबिन्दु लेकर शामिल होते हैं। उनमें से कुछ लोग अपनी वर्तमान स्थिति बनाए रखने के लिए शामिल होते हैं ; कुछ लोग आन्दोलन पर अपना नेतृत्व कायम करने की कोशिश में शामिल होते हैं, ताकि आन्दोलन उस सीमा से बाहर न चला जाए जहां तक वे उसे जाने की इजाजत देते हैं ; तथा कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो चीनी राष्ट्र की पूर्ण मुक्ति के लिए ईमानदारी से काम करना चाहते हैं। उनके उद्देश्य और वर्ग-दृष्टिबिन्दु अलग-अलग हैं, ठीक यही वजह है कि कुछ लोग संघर्ष छिड़ते ही ढुलमुलपन दिखाएंगे या गद्दारी करेंगे ; कुछ अन्य लोग आधे रास्ते में ही निष्क्रिय बन जाएंगे या मोर्चे से बाहर निकल जाएंगे ; और कुछ लोग ऐसे भी होंगे जो दृढ़ता के साथ अन्त तक लड़ेंगे। लेकिन हमारा कार्य न सिर्फ सभी सम्भावित जापान-विरोधी बुनियादी ताकतों को एकताबद्ध करना है, बल्कि सभी सम्भावित जापान-विरोधी संश्रयकारियों को भी एकताबद्ध करना है ; इतना ही नहीं, देश की समूची जनता में, जिन लोगों के पास श्रमशक्ति है उनसे श्रमशक्ति दिलानी चाहिए, जिनके पास धन है उनसे धन दिलाना चाहिए, जिनके पास बन्दूकें हैं उनसे बन्दूकें दिलानी चाहिए और जिनके पास ज्ञान है उनसे ज्ञान दिलाना चाहिए, तथा हर चीनी देशभक्त को जापान-विरोधी मोर्चे में शामिल करना चाहिए। व्यापकतम राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति के बारे में पार्टी की आम कार्यदिशा यही है। इस तरह की कार्यदिशा पर चलकर ही हम समूचे देश की जनता के मुश्तरका शत्रु—जापानी साम्राज्यवाद और वतन-फरोश च्याङ काई-शेक—का मुकाबला करने के लिए सारे देश की जनता की शक्तियों को बटोर सकते हैं। चीनी मजदूर वर्ग और किसान अब भी चीनी क्रान्ति की बुनियादी प्रेरक शक्ति हैं। निम्न-पूंजीपति वर्ग का व्यापक जन-समुदाय और क्रान्तिकारी बुद्धिजीवी राष्ट्रीय क्रान्ति में सबसे विश्वसनीय संश्रयकारी हैं। मजदूरों, किसानों व निम्न-पूंजीपति वर्ग का सुदृढ़ संश्रय जापानी साम्राज्यवाद और चीनी गद्दारों व वतनफरोशों को परास्त करने वाली

बुनियादी शक्ति है। राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग व युद्ध-सरदारों का एक हिस्सा भूमि-क्रान्ति और लाल राजनीतिक सत्ता पर चाहे कितनी ही आपत्ति क्यों न करे, जापान और चीनी गद्दारों व वतनफरोशों के खिलाफ संघर्ष में सहानुभूति दिखाते समय या हितैषियों की सी तटस्थता बनाए रखते समय अथवा संघर्ष में प्रत्यक्ष भाग लेते समय उसका रुख जापान-विरोधी मोर्चे के प्रसार के लिए लाभदायक है। कारण यह कि इस तरह वह समग्र प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों से अलग हो जाएगा और इससे समग्र क्रान्तिकारी शक्तियों में बढ़ोतरी होगी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पार्टी को सभी उपयुक्त उपाय और तरीके अपनाने चाहिए, ताकि इन शक्तियों को जापान-विरोधी मोर्चे के पक्ष में किया जा सके। इसके अलावा जमींदार वर्ग और दलाल-पूंजीपति वर्ग के शिविर में भी पूर्ण एकता का होना हरगिज मुमकिन नहीं है। चूंकि अभी तक चीन पर अधिकार करने के लिए बहुत सी साम्राज्यवादी ताकतों के बीच प्रतिद्वन्द्विता रही है और इससे उनकी सेवा करने के बारे में वतनफरोशों के विभिन्न गुट पैदा हो गए हैं, जो आपसी अन्तरविरोधों व संघर्षों में उलझे हुए हैं, इसलिए पार्टी को हर सम्भव उपाय अपनाकर इस बात की गारन्टी कर देनी चाहिए कि कुछ प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियां अस्थाई तौर पर जापान-विरोधी मोर्चे का सक्रिय रूप से विरोध न कर सकेंगी। जापानी साम्राज्यवाद को छोड़कर दूसरी साम्राज्यवादी ताकतों के बारे में भी यही कार्यनीति अपनानी चाहिए। चीनी जनता के मुश्तरका दुश्मन से लड़ने के उद्देश्य से सारे चीन की जनता की शक्तियों को जगाने, एकताबद्ध करने और संगठित करने के लिए पार्टी को जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के अन्दर ढुलमुलपन, सुलह-समझौते, आत्मसमर्पण और विश्वासघात के सभी रुझानों के विरुद्ध दृढ़ता से और अविचल रूप से संघर्ष करना चाहिए। जो लोग चीनी जनता के जापान-विरोधी आन्दोलन में फूट डालते हैं, वे गद्दार या वतनफरोश हैं और हम सभी को उनके खिलाफ लड़ना चाहिए। जापानी साम्राज्यवाद और चीनी गद्दारों व वतनफरोशों के खिलाफ अपनी कथनी और करनी की दृढ़ता और उसके औचित्य के जरिए, कम्युनिस्ट पार्टी को जापान-विरोधी मोर्चे का नेतृत्व अपने हाथ में लेने की कोशिश करनी

चाहिए। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में ही जापान-विरोधी आन्दोलन में पूर्ण विजय प्राप्त की जा सकती है। जहां तक प्रतिरोध-युद्ध में व्यापक जन-समुदाय का ताल्लुक है, इस सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि बुनियादी हितों से सम्बन्धित उनकी मांगें (किसानों की भूमि की मांग और मजदूरों, सैनिकों, शहरी गरीब लोगों और बुद्धिजीवियों की जीवन-स्थिति सुधारने की मांग) पूरी की जाएं। उनकी मांगें पूरी होने पर ही हम जन-समुदाय के और विशाल हिस्सों को जापान-विरोधी मोर्चे में शामिल होने के लिए गोलबन्द कर सकते हैं, जापान-विरोधी आन्दोलन को जारी रख सकते हैं और इस आन्दोलन को पूर्ण विजय तक ले जा सकते हैं। और केवल इसी तरह हमारी पार्टी प्रतिरोध-युद्ध का नेतृत्व अपने हाथ में ले सकती है।

देखिए: "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में" शीर्षक लेख।

⁵ लाल सेना ने ५ मई १६३६ को एक खुला तार भेजा जिसमें यह मांग की गई कि जापान के विरुद्ध एकता कायम करने के लिए नानकिङ सरकार गृहयुद्ध बन्द कर दे और कम्युनिस्टों से शान्ति-वार्ता शुरू करे। तार का पूरा मजमून इस प्रकार है :

नानकिङ की राष्ट्रीय सरकार की फौजी परिषद, नौसेना, स्थलसेना और वायुसेना की सभी फौजों, सभी पार्टियों, राजनीतिक ग्रुपों, संगठनों और समाचारपत्रों, तथा विदेशी राष्ट्र के गुलाम बनने से इनकार करने वाले सभी देशवासियों के नाम :

चीनी लाल सेना के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन द्वारा संगठित चीनी जनता की लाल सेना के जापान-विरोधी अग्रिम दस्ते ने जब से पूर्व की ओर अभियान करने के लिए पीली नदी पार की, तब से वह जहां भी गया है वहां उसने विजय प्राप्त की है और उसने राष्ट्रव्यापी समर्थन प्राप्त किया है। लेकिन जैसे ही उसने ताथुङ-फूचओ रेलवे पर कब्जा किया और जापानी साम्राज्यवादियों से प्रत्यक्ष युद्ध करने के लिए पूर्व की ओर हपे में अभियान करने की जोरदार तैयारी की, वैसे ही च्याङ काई-शेक ने दस से ज्यादा डिवीजनों को शानशी भेज दिया और जापानी हमलावरों से लड़ने के लिए जाने वाले अग्रिम दस्ते को रास्ते में ही रोकने के लिए येन शी-शान की सहायता की।

उसने चाङ श्वे-ल्याङ और याङ हू-छङ की सेनाओं तथा उत्तरी शेनशी की सेना को आज्ञा दी कि वे हमारे जापान-विरोधी पृष्ठभाग को हैरान-परेशान करने के लिए शेनशी-कानसू लाल क्षेत्र की ओर बढ़ें। जापानी हमलावरों से प्रत्यक्ष युद्ध करने के उद्देश्य में सफल होने के लिए चीनी जनता की लाल सेना के जापान-विरोधी अग्रिम दस्ते को चाहिए था कि वह च्याङ की सेना को, जो लाल सेना के रास्ते में बाधा डालने के लिए खड़ी थी, नष्ट कर देने के लिए सारी ताकत लगा देता। लेकिन बहुत सोच-विचार के बाद लाल सेना के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन ने समझा कि वर्तमान राष्ट्रीय संकट में यदि दोनों पक्षों में निर्णयात्मक युद्ध होगा, तो चाहे कोई भी जीते, इससे राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए चीन की शक्ति कम हो जाएगी और जापानी साम्राज्यवादी खूब प्रसन्न होंगे। और यह भी सच है कि च्याङ काई-शेक और येन शी-शान की सेनाओं में काफी देशभक्त सेनानायक और सैनिक मौजूद हैं जो गृहयुद्ध बन्द करना चाहते हैं और जापान के विरुद्ध एकता कायम करना चाहते हैं। जापानी हमलावरों से लड़ने के लिए जाने वाली लाल सेना की राह रोकने में च्याङ और येन की आज्ञा मानकर दरअसल वे अपनी आत्मा के विरुद्ध काम कर रहे हैं। इसलिए राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के हेतु चीन की शक्ति बरकरार रखने के लिए और इस प्रकार शीघ्र ही जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध चलाने के लिए, गृहयुद्ध बन्द करने और जापान के खिलाफ एकता कायम करने के बारे में हमने राष्ट्र के सामने बार-बार जो घोषणाएं की हैं उन्हें दृढ़तापूर्वक अमल में लाने के लिए, तथा च्याङ काई-शेक और उसके मातहत देशभक्त सेनानायकों व सैनिकों को अन्ततः जागृत होने की प्रेरणा देने के लिए, लाल सेना के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन ने शानशी में बहुत सी जीतों के बावजूद, जनता के जापान-विरोधी अग्रिम दस्ते को पीली नदी के पश्चिम में हटा लिया। अपनी इस कार्यवाही के जरिए हमने नानकिङ सरकार, देश की समस्त नौसेना, स्थलसेना और वायुसेना तथा सारे देश की जनता के सामने अपनी ईमानदारी का सबूत दिया है। हम महीनेभर के अन्दर जापान-विरोधी लाल सेना पर हमला करने वाले तमाम सशस्त्र दस्तों से लड़ना बन्द कर देने के लिए और उनसे सुलह की बातचीत चलाने के लिए तैयार

हैं, ताकि गृहयुद्ध बन्द कर दिया जाए और जापान का प्रतिरोध किया जाए। लाल सेना का क्रान्तिकारी फौजी कमीशन नानकिङ सरकार के महानुभावों को गम्भीरता से यह सलाह देता है कि इस नाजुक घड़ी में, जबकि देश और जनता के लिए तात्कालिक विनाश का संकट उपस्थित है, बुद्धिमानी की बात यही होगी कि आप अवश्य ही अपने दुष्कर्मों का पश्चात्ताप करें और इस कहावत की भावना के अनुसार कि "घर में भाई-भाई लड़ते हैं, मगर बाहरी हमलों का वे मिलकर मुकाबला करते हैं", सारे देश में, और सबसे पहले शेनशी, कानसू और शानशी में, गृहयुद्ध बन्द कर दें, जिससे कि दोनों पक्ष जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के ठोस उपायों पर बातचीत करने के लिए अपने प्रतिनिधि भेज सकें। यह न सिर्फ आपके भले के लिए होगा, बल्कि राष्ट्र और देश के लिए भी यह बड़े सौभाग्य की बात होगी। लेकिन यदि आप हठपूर्वक युक्तिसंगत बात नहीं मानेंगे और गद्दार व वतनफरोश बने रहना चाहेंगे, तो अन्त में आपका शासन अवश्य ढह जाएगा और निश्चय ही सारे देश की जनता आपको ठुकरा देगी और आपका तख्ता उलट देगी। पुरानी कहावत है, "अगर किसी पर हजार उंगलियां उठ जाएं, तो वह बिना किसी रोग के ही चल बसेगा।" एक और कहावत है, "छुरा फेंकते ही कसाई भगवान बुद्ध बन जाता है।" महानुभावो, आप इन शब्दों पर विचार कीजिए और इन्हें आत्मसात कीजिए। इसके अलावा, लाल सेना का क्रान्तिकारी फौजी कमीशन विदेशी राष्ट्र का गुलाम बनने से इनकार करने वाले सभी संगठनों, सभी पार्टियों और समस्त जनता का आवाहन करता है कि वे गृहयुद्ध बन्द कराने, शान्ति-वार्ता चलाने और जापान के खिलाफ एकता कायम करने के हमारे प्रस्ताव का समर्थन करें और गृहयुद्ध बन्द करने के लिए प्रेरित करने वाली कमेटियां बनाएं जो अपने प्रतिनिधियों को मोर्चे पर भेजकर दोनों पक्षों के बीच की लड़ाई बन्द कराएं और इस बात की निगरानी रखें कि यह प्रस्ताव पूरी तरह अमल में लाया जाता है अथवा नहीं।

५ देखिए : "च्याङ काई-शेक के वक्तव्य के बारे में वक्तव्य", नोट ७।

६ दिसम्बर १९३५ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की मीटिंग में स्वीकृत "वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति और पार्टी के

कार्यों के बारे में प्रस्ताव" में और कामरेड माओ त्सेतुङ की "जापानी-साम्राज्य-वाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में" शीर्षक रिपोर्ट में "लोक गणराज्य" का नारा पेश किया गया था। बाद में परिस्थिति की आवश्यकता के अनुसार पार्टी ने च्याङ काई-शेक को जापान का प्रतिरोध करने के लिए मजबूर करने की नीति अपनाई। यह अनुमान किया गया था कि च्याङ काई-शेक गुट को "लोक गणराज्य" का नारा मंजूर नहीं होगा, इसलिए पार्टी ने क्वोमिन्ताङ के नाम अपने अगस्त १९३६ के पत्र में उसे बदलकर "जनवादी गणराज्य" के नारे का रूप दे दिया। इसके बाद उसी साल सितम्बर में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने "जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के आन्दोलन की नई स्थिति और जनवादी गणराज्य के बारे में प्रस्ताव" में "जनवादी गणराज्य" के नारे की ठोस रूप में व्याख्या की। शब्दों का भेद होते हुए भी दोनों नारों का सारतत्व एक ही था। नीचे पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सितम्बर १९३६ के प्रस्ताव से जनवादी गणराज्य की समस्या से सम्बन्धित दो अंश दिए जा रहे हैं:

"केन्द्रीय कमेटी का विचार है कि वर्तमान परिस्थिति में जनवादी गणराज्य कायम करने का नारा देना आवश्यक है, क्योंकि चीन की प्रादेशिक अखण्डता को बनाए रखने और चीनी जनता को राष्ट्रीय विनाश और जन-संहार की मुसीबत से बचाने के लिए सभी जापान-विरोधी ताकतों को एकताबद्ध करने का यही सबसे अच्छा तरीका है और व्यापक जनता की जनवादी मांगों पर आधारित संयुक्त मोर्चे के लिए यही सबसे उपयुक्त नारा भी है। जनवादी गणराज्य एक ऐसी लोकशाही है जो चीन की धरती के एक हिस्से में स्थापित मजदूर-किसानों के जनवादी अधिनायकत्व की तुलना में भौगोलिक रूप से ज्यादा विस्तृत है। वह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जो चीन के मुख्य इलाकों में स्थापित क्वोमिन्ताङ के एक ही पार्टी के अधिनायकत्व से कहीं ज्यादा प्रगतिशील है। इसलिए उसके द्वारा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के विस्तृत विकास और उसकी पूर्ण विजय की ज्यादा अच्छी तरह गारन्टी हो जाएगी। साथ ही जनवादी गणराज्य से न सिर्फ चीनी जनता का व्यापकतम हिस्सा देश के राजनीतिक जीवन में शामिल हो सकेगा जिससे उसकी राज-नीतिक चेतना और संगठित शक्ति बढ़ेगी, बल्कि समाजवाद की भावी विजय के लिए संघर्ष में चीनी सर्वहारा वर्ग और उसकी नेता कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा बेरोकटोक कार्यवाही किए जाने के लिए जमीन भी तैयार हो जाएगी। इसलिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ऐलान करती है कि वह जनवादी गणराज्य के आन्दोलन का सक्रियता से समर्थन करती है। वह यह भी ऐलान करती है कि जब देशव्यापी जनवादी गणराज्य स्थापित हो जाएगा और बालिग मता-धिकार द्वारा निर्वाचित संसद बुलाई जाएगी, तो लाल इलाके तुरन्त जनवादी गणराज्य का अभिन्न अंग बन जाएंगे, लाल इलाकों की जनता संसद के लिए अपने प्रतिनिधि चुनेगी और लाल इलाकों में भी उसी प्रकार की जनवादी व्यवस्था कायम हो जाएगी।"

"केन्द्रीय कमेटी इस बात पर जोर देती है कि जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के राष्ट्रव्यापी जन-आन्दोलन का निरन्तर प्रसार करके, सभी पार्टियों, राजनीतिक ग्रुपों, व्यवसायों और सैन्य-दलों के जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का विस्तार करके, जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका को सुदृढ़ बनाकर, भरपूर कोशिशों के जरिए लाल राजनीतिक सत्ता और लाल सेना को मजबूत बनाकर और उन सभी कथनियों व करनियों के खिलाफ दृढ़ता से संघर्ष करके, जो हमारी प्रभुसत्ता की जड़ काटती हैं और देश को अपमानित करती हैं या राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को कमजोर बनाती हैं—यह सब करके ही हम क्वोमिन्ताङ की नानकिङ सरकार को जापान का प्रतिरोध करने के लिए मजबूर कर सकते हैं और जनवादी गणराज्य की स्थापना के लिए पूर्वशर्तें तैयार कर सकते हैं। निरन्तर कठोर संघर्ष किए बिना, समूची चीनी जनता को जागृत किए बिना और क्रान्तिकारी उभार पैदा किए बिना जनवादी गणराज्य कायम नहीं किया जा सकता। जनवादी गणराज्य के लिए संघर्ष के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को इस बात पर डटे रहना चाहिए कि जनवादी गणराज्य हमारी पार्टी द्वारा जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए निर्धारित दससूत्री कार्यक्रम को कार्यान्वित करने से आरम्भ होकर तब तक जारी रहेगा जब तक चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के बुनियादी कार्य अन्तिम रूप से पूरे नहीं हो जाते।"

७ यह तार १० फरवरी १९३७ को भेजा गया था। इसका पूरा मजमून इस प्रकार है :

क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन के नाम।

महानुभावो :

शीआन घटना के शान्तिपूर्ण हल पर सारे देश में हर्ष प्रकट किया गया है। वास्तव में यह हमारे देश और राष्ट्र के लिए सौभाग्य की बात है कि अब से शान्ति और एकीकरण की तथा विदेशी आक्रमण का मिलकर विरोध करने की नीति अमल में लाई जाएगी। इस समय जबकि जापानी हमलावर पागल हो रहे हैं और चीनी राष्ट्र का जीवन संकट में है, हमारी पार्टी यह हार्दिक आशा करती है कि इस नीति के अनुसार आपकी पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण अधिवेशन निम्नलिखित बातों को राष्ट्रीय नीति के रूप में निर्धारित करे :

(१) सभी गृहयुद्धों को बन्द करना और विदेशी आक्रमण का मिलकर मुकाबला करने के लिए देश की शक्तियों को एकजुट करना ;

(२) भाषण, सभा और संगठन की आजादी की गारन्टी करना और सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा कर देना ;

(३) सभी पार्टियों, राजनीतिक ग्रुपों, व्यवसायों और सैन्य-दलों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बुलाना और एक होकर देश को बचाने के लिए राष्ट्र की प्रतिभा को एकजुट करना ;

(४) जापान का प्रतिरोध करने के लिए सभी तैयारियां शीघ्र पूरी करना ; और

(५) जनता की जीवन-स्थिति को सुधारना।

यदि आपकी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण अधिवेशन निश्चित रूप से और दृढ़ता से उपरोक्त बातों को राष्ट्रीय नीति के रूप में निर्धारित करता है, तो विदेशी आक्रमण का विरोध करने के लिए एकजुटता के पक्ष में अपनी ईमानदारी के सबूत के तौर पर हमारी पार्टी निम्नलिखित वचन देती है :

(१) राष्ट्रीय सरकार को उलटने के लिए सशस्त्र विद्रोह की नीति पर अमल करना सारे देश में बन्द कर दिया जाएगा ;

(२) मजदूर-किसानों की जनवादी सरकार का नाम बदलकर चीन गणराज्य के विशेष प्रदेश की सरकार रख दिया जाएगा और लाल सेना राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना का एक हिस्सा कहलाएगी, तथा ये दोनों क्रमशः नानकिङ की केन्द्रीय सरकार और उसकी फौजी परिषद के सीधे निर्देशन में काम करेंगी ;

(३) विशेष प्रदेश की सरकार के मातहत इलाकों में बालिग मताधिकार पर आधारित पूर्ण जनवादी व्यवस्था लागू की जाएगी ; तथा

(४) जमींदारों की जमीन जब्त करने की नीति पर अमल करना बन्द कर दिया जाएगा और जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के मुश्तरका प्रोग्राम पर दृढ़ता से अमल किया जाएगा।

८ नवम्बर और दिसम्बर १९३६ में शांघाई की २६ जापानी और चीनी सूती-कपड़ा मिलों के ४५ हजार से अधिक मजदूरों ने बड़ी भारी हड़ताल कर दी। दिसम्बर में छिङताओ की जापानी सूती-कपड़ा मिलों के सभी मजदूरों ने भी उनकी हमदर्दी में हड़ताल कर दी। शांघाई के मजदूरों की हड़ताल कामयाब रही और उन्हें नवम्बर से पांच फीसदी वेतन-वृद्धि मिल गई ; मिल-मालिकों को इस बात के लिए राजी कर लिया गया कि वे मनमाने ढंग से मजदूरों को नहीं निकालेंगे, और न उन्हें मारेंगे या गाली देंगे। लेकिन छिङताओ में जापानी मैरीन-सैनिकों ने मजदूरों की हड़ताल का दमन किया।

९ १९३३ में जापानी हमलावरों द्वारा शानहाएक्वान पर अधिकार कर लेने और उत्तरी चीन में प्रवेश कर लेने के बाद, और विशेषकर १९३५ के "हो-उमेजू समझौते" के बाद उत्तरी और मध्य चीन में बरतानवी और अमरीकी साम्राज्यवाद के हितों को प्रत्यक्ष रूप से नुकसान पहुंचा। इसलिए वे जापान के प्रति अपना रुख बदलने लगे तथा उन्होंने जापान के प्रति च्याङ काई-शेक सरकार द्वारा अपनाई जाने वाली नीति पर भी प्रभाव डाला। १९३६ में जब शीआन घटना हुई, तो बरतानिया ने सुझाव रखा कि जो जापानी मांगें चीन में बरतानवी हितों के विरुद्ध पड़ती हों, उन्हें ठुकरा दिया जाए। उसने यह भी

सूचित किया कि यदि च्याङ काई-शेक सरकार चीनी जनता पर अपना शासन बनाए रख सके, तो यह अनुचित न होगा कि च्याङ काई-शेक सरकार "कम्युनिस्ट पार्टी से किसी किस्म का संश्रय" कायम कर ले ताकि जापान की आक्रमणकारी नीति को धक्का पहुंचाया जा सके।

१० जून १९३६ में "जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने" के बहाने क्वाङशी के ली चुङ-रन और पाए छुङ-शी नामक युद्ध-सरदारों ने तथा क्वाङतुङ के छन ची-थाङ आदि युद्ध-सरदारों ने संयुक्त रूप से च्याङ काई-शेक के प्रति अपने विरोध का ऐलान किया। अगस्त में च्याङ काई-शेक ने फूट डालने और लोभ देने के दांवपेंच खेलकर इस विरोध को दबा दिया।

११ अगस्त १९३६ में जापानी सेना तथा चीनी कठपुतली सेना ने स्वेय्वान पर हमला शुरू कर दिया। नवम्बर में उस प्रान्त की चीनी फौज ने प्रतिरोध-युद्ध किया और सारे देश की जनता ने उसके समर्थन में आन्दोलन छेड़ दिया।

१२ १९३५ के "हो-उमेजू समझौते" के बाद, चीनी जनता के जापान-विरोधी आन्दोलन की लहरों के दबाव के कारण तथा जापान के प्रति बरतानवी और अमरीकी साम्राज्यवादियों की अपेक्षाकृत सख्त नीति के असर के कारण नानकिङ की क्वोमिन्ताङ सरकार ने जापान के प्रति अपना रुख कुछ कड़ा कर लिया। उसने जापान के साथ सितम्बर से दिसम्बर १९३६ तक की अपनी समझौता-वार्ता में जानबूझकर विलम्ब करने का तरीका अपनाया जिससे यह समझौता-वार्ता विफल रही।

१३ यहां उस अधिवेशन का हवाला दिया गया है जिसे शीआन घटना के शान्तिपूर्वक हल हो जाने के बाद, १५ फरवरी १९३७ को क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी द्वारा नानकिङ में आयोजित किया गया था।

१४ महान चीनी लेखक लू शुन के प्रसिद्ध उपन्यास "आहक्यू की सच्ची कहानी" में आहक्यू प्रमुख पात्र है। लू शुन ने उसे उन सब लोगों का प्रतिनिधि बताया है जो अपनी जिन्दगी की पराजय और असफलताओं को नैतिक या मानसिक विजय कहकर अपने को तसल्ली दे लेते हैं।

१५ यहां "तीन जन-सिद्धान्तों" का तात्पर्य राष्ट्रवाद, जनवाद और जन-जीविका की तीन समस्याओं के बारे में सुन यात-सेन द्वारा पेश किए गए उसूलों और कार्यक्रम से है, न कि उनके विश्व-दृष्टिकोण अथवा उनकी सैद्धान्तिक व्यवस्था से। चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की मंजिल में कम्युनिस्ट लोग सुन यात-सेन के कार्यक्रम की मूल बातों से सहमत थे और उनसे सहयोग करते थे। लेकिन वे उस पूंजीवादी व निम्न-पूंजीवादी विश्व-दृष्टिकोण अथवा सैद्धान्तिक व्यवस्था से सहमत नहीं थे जिसका प्रतिनिधित्व सुन यात-सेन करते थे। चीनी सर्वहारा वर्ग के हिरावल दस्ते के रूप में चीनी कम्युनिस्ट लोग सुन यात-सेन से बिलकुल भिन्न विश्व-दृष्टिकोण अथवा सैद्धान्तिक व्यवस्था पर आस्था रखते थे, तथा राष्ट्रीय समस्याओं और अन्य समस्याओं पर उनसे बिलकुल भिन्न सैद्धान्तिक दृष्टिकोण रखते थे। देखिए : कामरेड माओ त्सेतुङ की रचना "नई लोकशाही के बारे में"।

१६ १९२४ में सुन यात-सेन द्वारा पुनर्गठित क्वोमिन्ताङ ने विभिन्न वर्गों के क्रान्तिकारी संश्रय का रूप धारण कर लिया जिसमें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ सदस्य व्यक्तिगत रूप से शामिल हुए थे। १९२७ में क्रान्ति के प्रति गद्दारी करने के बाद क्वोमिन्ताङ ने कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों और क्वोमिन्ताङ के बहुत से उन वामपंथियों का देशव्यापी कत्लेआम किया जो सुन यात-सेन की तीन महान नीतियों के सच्चे समर्थक थे। क्वोमिन्ताङ ने इसे "पार्टी-शुद्धि आन्दोलन" का नाम दिया। तब से क्वोमिन्ताङ बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग की एक प्रतिक्रान्तिकारी राजनीतिक पार्टी बन गई।

१७ यहां उस स्थिति का उल्लेख किया गया है जो १९२७ के पूर्वार्ध में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के अवसरवादी नेतृत्व के कारण पैदा हो गई थी।

कोटि-कोटि जनता को जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के पक्ष में करने का प्रयत्न करो*

७ मई १९३७

साथियो! पिछले कुछ दिनों की बहस के बाद, चन्द साथियों को छोड़कर जिन्होंने मतभेद प्रकट किया है, सभी ने मेरी रिपोर्ट "जापानी-ग्राक्रमण-विरोधी काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य" को मंजूर कर लिया है। इन चन्द साथियों ने जो भिन्न मत प्रकट किए हैं वे काफी महत्वपूर्ण हैं, इसलिए मैं ग्रपने इस समापन भाषण में पहले उनकी चर्चा करूंगा, ग्रौर उसके बाद दूसरी समस्याग्रों को लूंगा।

शान्ति का सवाल

हमारी पार्टी ने लगभग दो साल तक ग्रान्तरिक शान्ति के लिए संघर्ष किया है। क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण ग्रधिवेशन के बाद हमने कहा था कि शान्ति प्राप्त हो

* यह समापन भाषण कामरेड माग्रो त्सेतुङ ने मई १९३७ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के राष्ट्रीय प्रतिनिधि-सम्मेलन में दिया था।

चुकी है, "शान्ति के लिए संघर्ष करने" की मंजिल समाप्त हो गई है और हमारा नया कार्य है "शान्ति को सुदृढ़ बनाना"। हमने यह भी बताया था कि यह कार्य "जनवाद के लिए संघर्ष करने" के साथ जुड़ा हुआ है, यानी जनवाद के लिए संघर्ष करने के जरिए शान्ति को सुदृढ़ बनाना है। लेकिन चन्द साथी तर्क करते हैं कि हमारा यह मत टिक नहीं सकता। वे जो नतीजा निकालते हैं, वह लाजमी तौर से या तो इस मत का उल्टा होता है या बीच में डोलता रहता है। कारण यह कि वे कहते हैं "जापान पीछे हट रहा है,[१] नानकिङ और भी ढुलमुलपन दिखा रहा है; दो राष्ट्रों के बीच का अन्तरविरोध कम हो रहा है और घरेलू अन्तरविरोध बढ़ रहा है।" इस मूल्यांकन के अनुसार, स्वभावतः न तो कोई नई मंजिल है और न कोई नया कार्य ही हमारे सामने मौजूद है, तथा स्थिति पुरानी मंजिल में लौट गई है या उससे भी बदतर हो गई है। मैं इस मत को गलत समझता हूं।

जब हम यह कहते हैं कि शान्ति प्राप्त हो गई है, तब हमारा मतलब यह नहीं होता कि वह सुदृढ़ हो गई है। इसके विपरीत हमने यह कहा है कि वह सुदृढ़ नहीं हुई है। शान्ति कायम करना और उसे सुदृढ़ बनाना, दो अलग-अलग बातें हैं। यह सम्भव है कि इतिहास कुछ समय के लिए अपनी गति को उल्टी दिशा में मोड़ दे और शान्ति में बाधाएं पड़ें, क्योंकि जापानी साम्राज्यवादी, चीनी गद्दार और जापान-परस्त गुट मौजूद हैं। लेकिन यह एक हकीकत है कि शीआन घटना के बाद शान्ति कायम हुई है, और यह स्थिति अनेक तत्वों की उपज है (जापान की बुनियादी हमलावर नीति, सोवियत संघ द्वारा और साथ ही ब्रिटेन, अमरीका और फ्रांस द्वारा चीन की

शान्ति का समर्थन, चीनी जनता का दबाव, शीआन घटना के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की शान्ति नीति और दो राजनीतिक सत्ताओं के बीच शत्रुता खतम करने की उसकी नीति, पूंजीपति वर्ग में भेद उत्पन्न होना, क्वोमिन्ताङ के अन्दर भेद पैदा होना, इत्यादि); अकेला च्याङ काई-शेक शान्ति को बना-बिगाड़ नहीं सकता। शान्ति को बिगाड़ने के लिए उसे बहुत सी शक्तियों से लड़ना पड़ेगा और जापानी साम्राज्यवादियों और जापान-परस्त गुट के और ज्यादा नजदीक जाना होगा। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि जापानी साम्राज्यवादी और जापान-परस्त गुट अब भी यह कोशिश कर रहे हैं कि चीन में गृहयुद्ध जारी रहे। ठीक इसी कारण शान्ति अभी सुदृढ़ नहीं हुई। इस परिस्थिति में हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि बजाय इसके कि "गृहयुद्ध बन्द करो" या "शान्ति के लिए संघर्ष करो" के पुराने नारे दोहराए जाएं, हमें इससे एक कदम और आगे बढ़ना चाहिए और "जनवाद के लिए संघर्ष करो" का नया नारा पेश करना चाहिए। केवल इस प्रकार ही हम आन्तरिक शान्ति को सुदृढ़ बना सकते हैं और प्रतिरोध-युद्ध को चला सकते हैं। आखिर हम "शान्ति को सुदृढ़ बनाओ", "जनवाद के लिए संघर्ष करो" और "प्रतिरोध-युद्ध को चलाओ" के ये तीन घनिष्ठ रूप से एक दूसरे से जुड़े हुए नारे क्यों देते हैं? इसलिए कि हम अपनी क्रान्ति के रथचक्र को आगे बढ़ाना चाहते हैं, और इसलिए कि परिस्थितियां हमें ऐसा करने की अनुमति देती हैं। जो लोग नई मंजिल को और नए कार्य को अस्वीकार करते हैं और इस बात को अस्वीकार करते हैं कि क्वोमिन्ताङ "बदलने लगी है", तथा इसके तर्कसंगत निष्कर्ष के रूप में, उन उपलब्धियों को भी अस्वीकार करते हैं जिन्हें

पिछले डेढ़ साल में शान्ति के लिए संघर्ष करने वाली सभी शक्तियों ने हासिल किया है, वे एक भी कदम आगे बढ़े बिना जहां के तहां पुरानी जगह बने रहेंगे।

ये साथी ऐसा गलत मूल्यांकन क्यों करते हैं? कारण यह है कि वर्तमान परिस्थिति को परखते समय वे बुनियादी बातों से नहीं, बल्कि अनेक आंशिक और अस्थाई घटनाओं (सातो की कूटनीति, सूचओ मुकदमा,[२] हड़तालों का दमन, उत्तर-पूर्वी सेना को पूर्व की ओर भेजना,[३] जनरल याङ हू-छङ का विदेश चले जाना,[४] इत्यादि) से आरम्भ करते हैं और इससे उनके दिमाग में एक निराशा-भरी तस्वीर बैठ जाती है। हम कहते हैं कि क्वोमिन्ताङ ने बदलना शुरू कर दिया है और हम यह भी कहते हैं कि वह पूरी तरह बदली नहीं है। यह बात कल्पनातीत है कि क्वोमिन्ताङ की दस साल की प्रतिक्रियावादी नीति हमारे और जनता के नए प्रयत्नों के बिना – पहले से ज्यादा और बड़े प्रयत्नों के बिना – पूरी तरह बदल जाए। काफी लोग, जो तथाकथित "वामपंथी" कहलाते हैं, प्रायः क्वोमिन्ताङ की तीव्र निन्दा करते हैं, और शीआन घटना के समय उन्होंने इस बात का अनुमोदन किया कि च्याङ को मार डालना चाहिए और "लड़ते-लड़ते थुङक्वान दर्रे से निकल जाना चाहिए"[५]। लेकिन शान्ति कायम होने के फौरन बाद सूचओ मुकदमे जैसी घटनाएं हुईं, तो वे ताज्जुब से पूछने लगे, "च्याङ काई-शेक अब भी ऐसी चीजें क्यों करता है?" उन्हें यह समझ जाना चाहिए कि न कम्युनिस्ट देवता हैं और न च्याङ काई-शेक, और न ही वे अलग-अलग व्यक्ति हैं, बल्कि अपनी-अपनी पार्टी और अपने-अपने वर्ग के सदस्य हैं। कम्युनिस्ट पार्टी क्रान्ति को कदम-ब-कदम आगे बढ़ाने में समर्थ है, लेकिन एक ही

रात में देश की सभी बुरी चीजों का सफाया करने में समर्थ नहीं है। च्याङ काई-शेक और क्वोमिन्ताङ बदलने लगे हैं, लेकिन यह निश्चित है कि तमाम जनता की और बड़ी कोशिशों के बिना उनकी दस साल की जमी मैल शीघ्रता से नहीं धोई जा सकती। हम कहते हैं कि आन्दोलन शान्ति, जनवाद और प्रतिरोध-युद्ध की ओर बढ़ रहा है, लेकिन इससे हमारा मतलब यह नहीं कि गृहयुद्ध, तानाशाही और प्रतिरोध-हीनता जैसी पुरानी सड़ियल चीजें बिना कोशिश के ही साफ हो जाएंगी। संघर्ष और कड़ी मेहनत के जरिए ही, और एक लम्बे अर्से के संघर्ष व मेहनत के बाद ही, पुरानी सड़ियल चीजों और मैल को साफ किया जा सकता है तथा क्रान्ति में असफलताओं को या उसकी गति के उलट जाने की सम्भावनाओं को दूर किया जा सकता है।

"वे हमारा नाश करने पर तुले हुए हैं।" हां, वे सदा हमारा नाश करने का प्रयत्न करते हैं। मैं पूरी तरह मानता हूं कि यह मूल्यांकन सही है, और जो इस बात पर ध्यान नहीं देता, उसे भरी नींद में सोया हुआ समझना चाहिए। लेकिन सवाल यह है कि उनके नाश करने के तरीके में कोई तब्दीली हुई है या नहीं। मेरी समझ में हुई है। युद्ध और नर-संहार की नीति के बदले सुधार और धोखेबाजी की नीति, कठोर नीति के बदले नरम नीति, और फौजी नीति के बदले राजनीतिक नीति – यह परिवर्तन हुआ है। ऐसा परिवर्तन क्यों हुआ है? जापानी साम्राज्यवाद का सामना होने पर पूंजीपति वर्ग और क्वोमिन्ताङ अस्थाई रूप से सर्वहारा वर्ग में अपना संश्रय-कारी ढूंढ़े बिना नहीं रह सकते – ठीक उसी प्रकार जैसे कि पूंजीपति वर्ग में हमें अपना संश्रयकारी तलाशना है। किसी प्रश्न पर विचार

करते समय हमें इस बात को एक प्रस्थान-बिन्दु मानना चाहिए। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में इसी कारण फ्रांस सरकार सोवियत संघ की शत्रु बनने के बदले उसकी संश्रयकारी बन गई है।[६] हमारा घरेलू कार्य भी फौजी से बदलकर राजनीतिक बन गया है। हमारे लिए षड़यंत्र और चालबाजी अनावश्यक हैं। हमारा उद्देश्य है पूंजीपति वर्ग और क्वोमिन्ताङ के उन तमाम तत्वों से एकता कायम करके, जो जापान का प्रतिरोध करने के कार्य का समर्थन करते हैं, मुश्तरका प्रयत्न के जरिए जापानी साम्राज्यवाद को परास्त कर देना।

जनवाद का सवाल

"जनवाद पर जोर देना गलत है, हमें केवल जापान का प्रतिरोध करने पर ही जोर देना चाहिए। जापान के खिलाफ प्रत्यक्ष कार्यवाही के बिना कोई जनवादी आन्दोलन नहीं हो सकता। अधिकांश जनता केवल जापान का प्रतिरोध करना चाहती है, न कि जनवाद चाहती है; ९ दिसम्बर आन्दोलन जैसा एक आन्दोलन और हो जाए तो बस काम बन जाएगा।"

पहले मैं कुछ सवाल कर लूं। क्या यह कहा जा सकता है कि पिछली मंजिल में (१९३५ के ९ दिसम्बर आन्दोलन से फरवरी १९३७ में क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन तक) अधिकांश जनता केवल जापान का प्रतिरोध करना चाहती थी, आन्तरिक शान्ति नहीं चाहती थी? क्या पिछले दिनों आन्तरिक शान्ति पर जोर देना गलत था? क्या जापान के खिलाफ प्रत्यक्ष कार्यवाही के बिना शान्ति आन्दोलन नहीं हो सकता था

(शीआन घटना और क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण अधिवेशन ठीक तभी हुए जब स्वेय्वान में प्रतिरोध-युद्ध समाप्त हो गया था; इस समय भी हमारे सामने स्वेय्वान में प्रतिरोध-युद्ध या ९ दिसम्बर आन्दोलन जैसी कोई चीज नहीं है)? कौन नहीं जानता कि जापान का प्रतिरोध करने के लिए आन्तरिक शान्ति चाहिए, आन्तरिक शान्ति के बिना जापान का प्रतिरोध नहीं किया जा सकता और आन्तरिक शान्ति जापान का प्रतिरोध करने की एक शर्त है। पिछली मंजिल में जापान का प्रतिरोध करने की सभी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कार्यवाहियां (९ दिसम्बर आन्दोलन से लेकर क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन तक), आन्तरिक शान्ति के लिए किए जाने वाले संघर्ष के इर्द-गिर्द घूमती थीं। पिछली मंजिल में आन्तरिक शान्ति केन्द्रीय कड़ी थी और जापान-विरोधी आन्दोलन की सबसे मूलभूत वस्तु थी।

उसी तरह आज की नई मंजिल में जापान का प्रतिरोध करने के कार्य के लिए जनवाद भी सबसे मूलभूत वस्तु है, और जनवाद के लिए काम करने का अर्थ है जापान का प्रतिरोध करने के लिए काम करना। जापान-प्रतिरोध और जनवाद एक दूसरे के लिए आवश्यक शर्तें हैं -- ठीक उसी तरह जैसे कि जापान-प्रतिरोध और आन्तरिक शान्ति, जनवाद और आन्तरिक शान्ति एक दूसरे के लिए आवश्यक शर्तें हैं। जनवाद जापान का प्रतिरोध करने की गारन्टी है और जापान का प्रतिरोध करने से जनवादी आन्दोलन के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा हो सकती हैं।

हम आशा करते हैं कि नई मंजिल में जापान के खिलाफ अनेक

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संघर्ष होंगे, और वे जरूर होंगे। इनसे प्रतिरोध-युद्ध को वेग प्राप्त होगा और जनवादी आन्दोलन को बड़ी सहायता मिलेगी। लेकिन इतिहास ने जो क्रान्तिकारी कार्य हमें सौंपा है, उसकी केन्द्रीय और मूलभूत वस्तु जनवाद की प्राप्ति है। तो क्या जनवाद पर जोर देते रहना गलत है? मेरी समझ में यह गलत नहीं है।

"जापान पीछे हट रहा है, ब्रिटेन और जापान संतुलन पैदा करने की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं तथा नानकिङ और भी ज्यादा ढुलमुल हो रहा है।" यह एक अनावश्यक चिन्ता है जो ऐतिहासिक विकास के नियमों को न जानने से पैदा हुई है। यदि अपने देश में क्रान्ति के कारण जापान वास्तव में पीछे हट जाए, तो उससे चीनी क्रान्ति को सहायता मिलेगी। यह एक ऐसी बात होगी जिसकी हम आशा करते हैं और यह आक्रमणकारी विश्व-मोर्चे के ध्वंस की शुरुआत होगी। हम आखिर क्यों परेशान हों? लेकिन दरअसल बात ऐसी नहीं है। सातो की कूटनीतिक चालें एक बड़े युद्ध की तैयारी हैं और एक बड़ा युद्ध हमारे सामने है। ब्रिटेन की ढुलमुल नीति अवश्य ही निष्फल साबित होगी। ब्रिटेन और जापान के हितों में जो टकराव है, उससे यह बात निश्चित हो जाती है। यदि नानकिङ लम्बे समय तक ढुलमुल बना रहेगा, तो वह सारे देश की जनता का शत्रु बन जाएगा, और स्वयं उसका हित इसके लिए उसे अनुमति नहीं देता। पीछे हटने की कोई अस्थाई घटना इतिहास के आम नियम को नहीं बदल सकती। इसलिए न तो नई मंजिल के अस्तित्व को और न जनवाद की प्राप्ति का कार्य प्रस्तुत करने की आवश्यकता को अस्वीकार किया जा सकता है। इतना ही नहीं, जनवाद का नारा हर हालत में उचित है क्योंकि हर कोई जानता है कि चीनी जनता में जनवाद बहुत कम है, ज्यादा नहीं। वास्तविक परिस्थितियों से यह भी स्पष्ट रूप से जाहिर हो गया है कि नई मंजिल की ओर संकेत करने और जनवाद की प्राप्ति के कार्य को प्रस्तुत करने का मतलब प्रतिरोध-युद्ध की दिशा में एक कदम और आगे बढ़ाने से है। घटना-क्रम आगे निकल गया है; हमें उसे पीछे घसीटने की कोशिश नहीं करनी चाहिए।

"राष्ट्रीय एसेम्बली पर हम इतना जोर क्यों देते हैं?" इसलिए कि वह एक ऐसी वस्तु है जिसका प्रभाव हमारे समूचे जीवन पर पड़ सकता है, इसलिए कि वह प्रतिक्रियावादी तानाशाही से जनवाद तक पहुंचने के लिए एक सेतु है, इसलिए कि वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा से जुड़ी हुई है, और इसलिए कि वह एक कानूनी संस्था है। पूर्वी हपे और उत्तरी छाहाड़ पर फिर अधिकार करने, चुंगीचोरी का विरोध करने, "आर्थिक सहयोग"[७] का विरोध करने आदि के जो प्रस्ताव अनेक साथियों ने रखे हैं, वे सब बिलकुल सही हैं; लेकिन वे जनवाद के लिए लड़ने या राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाने के कार्य से कतई नहीं टकराते। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, लेकिन केन्द्रीय वस्तु है राष्ट्रीय एसेम्बली और जनता की आजादी।

यह बिलकुल सही और निर्विवाद है कि जापान के खिलाफ रोजमर्रा के संघर्ष को और जीविका के लिए जनता के संघर्ष को जनवादी आन्दोलन से सम्बद्ध करना चाहिए। लेकिन मौजूदा मंजिल में केन्द्रीय और मूलभूत वस्तु जनवाद और आजादी ही है।

क्रान्ति के भविष्य का सवाल

चन्द साथियों ने यह सवाल उठाया है और मेरा उत्तर संक्षिप्त ही हो सकता है।

एक लेख लिखते समय उसका उत्तरार्ध सिर्फ तभी लिखा जा सकता है जबकि उसका पूर्वार्ध लिखा जा चुका हो। जनवादी क्रान्ति का दृढ़ता के साथ नेतृत्व करना समाजवाद की विजय के लिए एक पूर्वशर्त है। हम समाजवाद के लिए लड़ रहे हैं और इस कारण हम उन लोगों से भिन्न हैं जो क्रान्तिकारी "तीन जन-सिद्धान्तों" के अनुयायी हैं। हमारा वर्तमान प्रयत्न भविष्य के महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही है और यदि हम इस उद्देश्य को अपनी दृष्टि से ओझल कर देंगे, तो हम कम्युनिस्ट नहीं रहेंगे। लेकिन यदि हम अपने वर्तमान प्रयत्नों में ढील आने देंगे, तो भी हम कम्युनिस्ट नहीं रहेंगे।

हम क्रान्ति के संक्रमण के सिद्धान्त[८] के अनुयायी हैं और हम जनवादी क्रान्ति के समाजवाद की ओर संक्रमण करने का पक्षपोषण करते हैं। जनवादी क्रान्ति जनवादी गणराज्य के नारे के मातहत अपने विकास की कई मंजिलों से गुजरेगी। पूंजीपति वर्ग की प्रधानता की स्थिति को सर्वहारा वर्ग की प्रधानता की स्थिति में बदलना संघर्ष की एक लम्बी प्रक्रिया है, नेतृत्व हासिल करने के संघर्ष की प्रक्रिया है। इस संघर्ष में विजय प्राप्त करना इस शर्त पर निर्भर है कि कम्युनिस्ट पार्टी सर्वहारा वर्ग की चेतना और संगठन के स्तर को तथा किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग की चेतना और संगठन के स्तर को ऊंचा उठाए।

सर्वहारा वर्ग के सुदृढ़ संश्रयकारी किसान हैं। उनके बाद शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग आता है। नेतृत्व हासिल करने के लिए पूंजीपति वर्ग ही हमसे प्रतिद्वन्द्विता करेगा।

पूंजीपति वर्ग के ढुलमुलपन और क्रान्ति में उसकी अपूर्णता पर काबू पाने के लिए हमें जन-समुदाय की शक्ति और अपनी सही नीति पर निर्भर रहना चाहिए। अन्यथा पूंजीपति वर्ग सर्वहारा वर्ग पर हावी हो जाएगा।

हम ऐसा संक्रमण अवश्य चाहते हैं जिसमें रक्तपात न हो। इसके लिए हमें भरपूर कोशिश करनी चाहिए। लेकिन परिणाम जन-समुदाय की शक्ति पर ही निर्भर होगा।

हम क्रान्ति के संक्रमण के सिद्धान्त का पक्षपोषण करते हैं, "स्थाई क्रान्ति" के त्रात्सकीवादी सिद्धान्त[९] का नहीं। हम जनवादी गणराज्य की सभी आवश्यक मंजिलों को पार कर समाजवाद की स्थापना करने का पक्षपोषण करते हैं। हम दुमछल्लावाद के विरोधी हैं, लेकिन साथ ही दुस्साहसवाद और उतावलेपन के भी विरोधी हैं।

इस आधार पर कि पूंजीपति वर्ग क्रान्ति में केवल अस्थाई रूप से ही भाग लेगा, उसे ठुकरा देना और पूंजीपति वर्ग के जापान-विरोधी हिस्से के साथ संश्रय को (एक अर्ध-औपनिवेशिक देश में) आत्मसमर्पणवाद कहना त्रात्सकीवादी रवैया है, जिससे हम सहमत नहीं हो सकते। आज यह संश्रय ही वह सेतु है जिसे समाजवाद तक पहुंचने के लिए पार करना हमारे लिए आवश्यक है।

कार्यकर्ताओं का सवाल

एक महान क्रान्ति का मार्गदर्शन करने के लिए एक महान पार्टी और बहुत से बेहतरीन कार्यकर्ता होने चाहिए। ४५ करोड़ आबादी

वाले चीन में यदि नेतृत्व एक संकुचित छोटे गुट के हाथ में हो, यदि पार्टी के नेता और कार्यकर्ता संकुचित दिमाग वाले हों तथा अदूरदर्शी और असमर्थ हों, तो एक महान क्रान्ति को, जो इतिहास में अभूतपूर्व है, पूरा करना असम्भव हो जाएगा। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी बहुत दिनों से एक बड़ी राजनीतिक पार्टी रही है ; और प्रतिक्रियावाद के दौर में हुए नुकसान के बावजूद वह आज भी एक बड़ी राजनीतिक पार्टी है। उसके पास बहुत से अच्छे नेता और कार्यकर्ता हैं, लेकिन उनकी संख्या अब भी काफी नहीं है। हमारे पार्टी-संगठनों को पूरे देश में फैला दिया जाना चाहिए, तथा हमें जागरूक होकर दसियों हजार कार्यकर्ताओं और सैकड़ों बेहतरीन नेताओं को प्रशिक्षित करना चाहिए। इन कार्यकर्ताओं और नेताओं में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की समझ होनी चाहिए, राजनीतिक दूरदर्शिता होनी चाहिए, काम करने की योग्यता होनी चाहिए, आत्म-त्याग की भावना होनी चाहिए, समस्याओं को स्वतंत्र रूप से हल करने की क्षमता होनी चाहिए, तथा उन्हें कठिनाइयों में अडिग रहने और राष्ट्र, वर्ग और पार्टी की सेवा तन-मन से और वफादारी से करने वाला होना चाहिए। इन कार्यकर्ताओं व नेताओं के भरोसे ही पार्टी अपने सदस्यों और आम जनता के साथ सम्बन्ध स्थापित करती है, तथा आम जनता पर उनके सुदृढ़ नेतृत्व के भरोसे ही पार्टी अपने दुश्मन को परास्त कर सकती है। ऐसे कार्यकर्ताओं और नेताओं को स्वार्थपरता, व्यक्तिगत पराक्रमवाद, व्यक्तिगत प्रसिद्धि की अभिलाषा, आलसीपन, निष्क्रियता और गर्वपूर्ण संकीर्णतावाद से दूर रहना चाहिए तथा उन्हें निस्वार्थ राष्ट्रीय वीर और वर्ग-वीर बन जाना चाहिए ; हमारी पार्टी के सदस्यों, कार्यकर्ताओं और नेताओं से ऐसे ही गुणों

और इसी प्रकार की कार्यशैली की मांग की जाती है। यही वह मानसिक विरासत है जिसे हमारे दसियों हजार पार्टी-सदस्य, हजारों कार्यकर्ता और दसियों बेहतरीन नेता, जिन्होंने अपने प्राणों की बलि दे दी है, हमारे लिए छोड़ गए हैं। निस्सन्देह हमें ऐसे गुणों और कार्यशैली को अपना लेना चाहिए जिससे कि हम और अच्छी तरह अपना पुनःसंस्कार कर सकें और अपने को और ऊंचे क्रान्तिकारी स्तर तक उठा सकें। लेकिन इतना ही काफी नहीं है। हमारा कर्तव्य यह भी है कि हम पूरी पार्टी और सारे देश में बहुत से नए कार्यकर्ताओं और नेताओं को खोज लें। हमारी क्रान्ति कार्यकर्ताओं पर ही निर्भर है — जैसा कि स्तालिन ने कहा है, "सब कुछ कार्यकर्ताओं पर निर्भर है।"[१०]

पार्टी के अन्दर जनवाद का सवाल

इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पार्टी के अन्दर जनवाद का होना जरूरी है। अगर हम पार्टी को शक्तिशाली बनाना चाहते हैं, तो हमें सभी पार्टी-सदस्यों की पहलकदमी को प्रोत्साहन देने के लिए पार्टी की जनवादी केन्द्रीयता पर अमल करना चाहिए। प्रतिक्रियावाद और गृहयुद्ध के दौर में केन्द्रीयता ज्यादा प्रकट हुई थी। नए दौर में केन्द्रीयता को जनवाद के साथ घनिष्ठ रूप से जोड़ दिया जाना चाहिए। जनवाद को अमल में लाने से समूची पार्टी की पहलकदमी का विकास किया जा सकेगा। समूची पार्टी की पहलकदमी का विकास करने से बहुत से नए कार्यकर्ता तपकर निकलेंगे, संकीर्णतावाद के अवशेष दूर हो जाएंगे, और समूची पार्टी में ऐसी सुदृढ़ एकता कायम हो जाएगी मानो वह फौलाद से गढ़ी गई हो।

सम्मेलन की एकता और समूची पार्टी की एकता

इस सम्मेलन में राजनीतिक समस्याओं पर जो मतभेद प्रकट किया गया था, स्पष्टीकरण के बाद उसके बारे में मतैक्य कायम हो गया है ; पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की कार्यदिशा और चन्द साथियों के नेतृत्व में स्वीकार की गई पीछे हटने की कार्यदिशा के बीच मौजूद पुराना मतभेद भी हल हो गया है[११]। इससे यह जाहिर होता है कि हमारी पार्टी में अब अत्यन्त सुदृढ़ एकता कायम हो गई है। इस तरह की एकता वर्तमान राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार है, क्योंकि केवल कम्युनिस्ट पार्टी की एकता के जरिए ही समूचे वर्ग और समूचे राष्ट्र की एकता कायम की जा सकती है, तथा केवल समूचे वर्ग और समूचे राष्ट्र की एकता के जरिए ही दुश्मन को पराजित किया जा सकता है और राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति पूरी की जा सकती है।

कोटि-कोटि जनता को जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के पक्ष में करने का प्रयत्न करो

हमारी सही राजनीतिक नीति और सुदृढ़ एकता का उद्देश्य है कोटि-कोटि जनता को जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के पक्ष में करना। सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के व्यापक जन-समुदाय को हमारे प्रचार-कार्य, आन्दोलन-कार्य और संगठन-कार्य की आवश्यकता है। और पूंजीपति वर्ग के जापान-विरोधी हिस्से के साथ संश्रय कायम करने के लिए हमें

और भी कोशिश करनी चाहिए। पार्टी की नीति को जन-समुदाय की नीति बनाने के लिए हमें देर तक और लगातार, फौलादी इरादे के साथ, असाधारण परिश्रम के साथ, मुसीबतों से डरे बिना और धीरज के साथ कोशिश करनी चाहिए। इस तरह की कोशिश के बिना हम किसी भी काम में सफल नहीं हो सकते। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करना और उसे सुदृढ़ बनाना, उसके कार्य पूरे करना और चीन में जनवादी गणराज्य की स्थापना करना — ये सभी कार्य जनता को अपने पक्ष में करने के प्रयत्न से जरा भी अलग नहीं किए जा सकते। यदि इस तरह की कोशिशों से हम कोटि-कोटि जनता को अपने नेतृत्व के अन्तर्गत लाने में सफल हो जाएं, तो हमारा क्रान्तिकारी कार्य तेजी से पूरा किया जा सकता है। अपने प्रयत्नों से हम अवश्य ही जापानी साम्राज्यवाद को परास्त कर देंगे तथा पूर्ण राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति प्राप्त कर लेंगे।

नोट

१ शीआन घटना के बाद जापानी साम्राज्यवादियों ने अस्थाई रूप से और ऊपरी तौर पर समझौते का रुख अपनाया ताकि क्वोमिन्ताङ अधिकारियों को आन्तरिक शान्ति, जिसकी पुनर्स्थापना की जा रही थी, और जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा, जिसे कायम किया जा रहा था, भंग करने के लिए फुसलाया जा सके। दिसम्बर १९३६ में और फिर मार्च १९३७ में जापानी साम्राज्यवादियों ने भीतरी मंगोलिया की बोगस स्वायत्त सरकार को दो बार निर्देश दिया कि वह खुला तार भेजकर नानकिङ की क्वोमिन्ताङ सरकार का समर्थन करे। जापान के विदेश मंत्री सातो ने च्याङ काई-शेक को लालच देना शुरू किया और

बड़ी चालाकी से यह कहा कि जापान चीन से अपने सम्बन्ध अवश्य सुधारेगा तथा चीन के राजनीतिक एकीकरण और आर्थिक पुनरुद्धार में चीन की सहायता करेगा। इसके अतिरिक्त जापान के एक करोड़पति केंजी कोदामा के नेतृत्व में एक तथाकथित "आर्थिक अध्ययन दल" चीन आया जिसका उद्देश्य कहने को तो यह था कि वह "एक आधुनिक राज्य का गठन पूर्ण करने" में चीन की सहायता करेगा। लेकिन ये सब आक्रमण की साजिशें थीं। तथाकथित "सातो की कूट-नीति" तथा जापानी साम्राज्यवाद के भ्रमजाल में पड़े लोगों के शब्दों में "जापान के पीछे हटने" का मतलब आक्रमण की इन्हीं साजिशों से था।

२ नवम्बर १९३६ में क्वोमिन्ताङ सरकार ने शांघाई में जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के आन्दोलन के नेता शन च्युन-रू और अन्य छै व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। अप्रैल १९३७ में सूचओ के क्वोमिन्ताङ हाईकोर्ट में उन पर मुकदमा चलाया गया। क्वोमिन्ताङ अधिकारियों ने उन पर "गणराज्य को खतरे में डालने" का झूठा अभियोग लगाया ; तमाम देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों के खिलाफ वे अक्सर यही पुराना प्रतिक्रियावादी राग अलापा करते थे।

३ शीआन घटना के पहले उत्तर-पूर्वी सेना शेनशी और कानसू के सीमान्त पर पड़ाव डाले हुए थी और उसका उत्तरी शेनशी में स्थित लाल सेना से सीधा सम्पर्क था। इसलिए उस पर लाल सेना का गहरा असर था। फलतः उसके हाथों शीआन घटना घटित हुई। लाल सेना से उसका सम्पर्क तोड़ने और उसकी कतारों में फूट डालने के लिए क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों ने मार्च १९३७ में उसे पूर्व की ओर हनान और आनह्वेइ जाने का कड़ा आदेश दे दिया।

४ जनरल याङ हू-छङ चीन के उत्तर-पश्चिम में स्थित एक फौजी नेता थे, जिन्होंने चाङ श्वे-ल्याङ के साथ मिलकर शीआन घटना का सूत्रपात किया। इसलिए शीआन घटना के इन दो सूत्रधारों के नाम मिलकर साधारण बोलचाल में "चाङ-याङ" हो गए। जब च्याङ काई-शेक को रिहा किया गया, तो चाङ ने उसे नानकिङ पहुंचाया; लेकिन चाङ को तुरन्त नजरबन्द कर दिया गया। अप्रैल १९३७ में याङ को भी क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों द्वारा अपदस्थ कर दिया गया और उन्हें मजबूर होकर विदेश जाना पड़ा। जब प्रतिरोध-युद्ध आरम्भ हुआ, तो अपनी सेवाएं अर्पित करने के लिए याङ चीन लौट आए। लेकिन

च्याङ काई-शेक ने उन्हें शेष जीवन के लिए जेल में डाल दिया। सितम्बर १९४९ में जब जन-मुक्ति सेना छुङकिङ के पास पहुंच रही थी, तो च्याङ ने वहां उन्हें एक नजरबन्दी कैम्प में मरवा डाला।

५ थुङक्वान दर्रा शेनशी, हनान और शानशी के सीमान्त पर सामरिक महत्व का द्वार है। शीआन घटना के समय क्वोमिन्ताङ सेना मुख्यतः उसके पूर्व में पड़ाव डाले हुए थी। पार्टी के अन्दर "वामपंथी" कहलाने वाले लोग (चाङ क्वो-थाओ उनमें से एक था) इस बात के लिए आग्रह कर रहे थे कि लाल सेना को "लड़ते-लड़ते थुङक्वान दर्रे से निकल जाना चाहिए"। इससे उनका तात्पर्य यह था कि क्वोमिन्ताङ सेना पर आक्रमण कर देना चाहिए। यह प्रस्ताव पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की इस नीति के विरुद्ध था कि शीआन घटना को शान्तिपूर्ण ढंग से हल किया जाए।

६ रूस की अक्तूबर क्रान्ति के बाद बहुत दिनों तक फ्रांसीसी साम्राज्यवाद सोवियत संघ के प्रति दुश्मनी रखने की नीति पर अड़ा रहा। अक्तूबर क्रान्ति के कुछ ही समय बाद, १९१८ से १९२० तक सोवियत संघ के विरुद्ध चौदह राज्यों के सशस्त्र हस्तक्षेप में फ्रांस सरकार ने सक्रिय भाग लिया। हस्तक्षेप के असफल हो जाने के बाद भी वह सोवियत संघ को अलगाव में रखने की अपनी प्रतिक्रिया-वादी नीति पर चलती रही। मई १९३५ में जाकर ही फ्रांस ने फ्रांसीसी जनता में सोवियत संघ की शान्ति नीति का प्रभाव बढ़ जाने और फासिस्ट जर्मनी की धमकियों के कारण सोवियत संघ से आपसी सहायता सन्धि की। लेकिन फ्रांस की प्रतिक्रियावादी सरकार इस सन्धि पर ईमानदारी से कायम नहीं रही।

७ यहां जापानी साम्राज्यवाद द्वारा प्रस्तुत तथाकथित "चीन-जापान आर्थिक सहयोग" के धोखेभरे नारे का उल्लेख किया गया है। इस नारे का उद्देश्य था चीन के आर्थिक क्षेत्र में लूट-खसोट और हमला करना। – अनु०

८ देखिए : मार्क्स और एंगेल्स, "कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र", भाग ४; वी० आई० लेनिन, "जनवादी क्रान्ति में सामाजिक-जनवादी पार्टी की दो कार्य-नीतियां", भाग १२ और १३; "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ३, परिच्छेद ३।

९ देखिए : जे० वी० स्तालिन, "लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धान्त", भाग ३;

"अक्तूबर क्रान्ति और रूसी कम्युनिस्टों की कार्यनीति", भाग २; "लेनिनवाद की समस्याओं के बारे में", भाग ३।

१० देखिए: जे० वी० स्तालिन, "लाल सेना अकादमियों के स्नातकों के सामने क्रेमलिन महल में भाषण", मई १९३५। इस भाषण में उन्होंने कहा कि "...संसार की समस्त मूल्यवान पूंजी में सबसे मूल्यवान और निर्णायक है आदमी, कार्यकर्ता। यह बात समझ लेनी चाहिए कि हमारी वर्तमान परिस्थिति में 'सब कुछ कार्यकर्ताओं पर निर्भर है।'"

११ यहां उस मतभेद का उल्लेख है जो १९३५-३६ में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की कार्यदिशा और चाङ क्वो-थाओ की पीछे हटने की कार्यदिशा के बीच विद्यमान था (देखिए: "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में", नोट २२)। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ का यह कथन कि "पुराना मतभेद... हल हो गया है", इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि लाल सेना की चौथी मोर्चा-सेना केन्द्रीय लाल सेना के दस्तों से मिल गई थी। जहां तक बाद में चाङ क्वो-थाओ के खुलेआम पार्टी के प्रति गद्दारी करने और पतित होकर एक प्रतिक्रान्तिकारी बनने का सवाल है, यह उसका व्यक्तिगत गद्दारी का काम था और पार्टी की कार्यदिशा सम्बन्धी मतभेद से इसका कोई वास्ता नहीं था।

व्यवहार के बारे में*

ज्ञान और व्यवहार, जानने और कर्म करने के आपसी सम्बन्ध के बारे में

जुलाई १९३७

मार्क्स से पहले का भौतिकवाद, मनुष्य की सामाजिक प्रकृति से अलग रहकर, उसके ऐतिहासिक विकास से अलग रहकर ज्ञान की समस्या को परखता था, और इसलिए सामाजिक व्यवहार पर, यानी उत्पादन और वर्ग-संघर्ष पर ज्ञान की निर्भरता को वह नहीं समझ पाता था।

पहली बात तो यह कि मार्क्सवादी लोग मनुष्य की उत्पादक कार्यवाही को सबसे बुनियादी व्यावहारिक कार्यवाही मानते हैं, एक ऐसी कार्यवाही जो उसकी अन्य सभी कार्यवाहियों को निश्चित करती है। मनुष्य का ज्ञान मुख्यत: उसकी भौतिक उत्पादन की कार्यवाही पर निर्भर रहता है, जिसके जरिए वह कदम-ब-कदम

*हमारी पार्टी में कुछ साथी कठमुल्लावादी थे, जिन्होंने एक लम्बे समय तक चीनी क्रान्ति के अनुभव को अस्वीकार किया और इस सत्य को नहीं माना कि "मार्क्सवाद कोई कठमुल्ला-सूत्र नहीं बल्कि कर्म का मार्गदर्शक है"। वे लोग मार्क्सवादी रचनाओं के वाक्यों और वाक्यांशों को उनके प्रसंग से अलग करके

प्राकृतिक घटना-क्रम, प्रकृति के स्वरूप, प्रकृति के नियमों और अपने तथा प्रकृति के बीच के सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त करता है ; और अपनी उत्पादक कार्यवाही के जरिए वह कदम-ब-कदम मनुष्य और मनुष्य के बीच के निश्चित सम्बन्धों की जानकारी भी अलग-अलग मात्रा में प्राप्त करता जाता है। इस तरह का कोई भी ज्ञान उत्पादक कार्यवाही से अलग रहकर प्राप्त नहीं किया जा सकता। एक वर्गहीन समाज में हर व्यक्ति समाज के एक सदस्य के रूप में समाज के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर परिश्रम करता है, उनके साथ एक निश्चित प्रकार के उत्पादन-सम्बन्ध कायम करता है तथा मनुष्य की भौतिक आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उत्पादक कार्यवाही में जुट जाता है। विभिन्न प्रकार के वर्ग-समाजों में, समाज के सभी वर्गों के सदस्य भी, भिन्न रूपों में, एक निश्चित प्रकार के उत्पादन-सम्बन्ध कायम करते हैं तथा अपनी भौतिक आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उत्पादक कार्यवाही में जुट जाते हैं। यही वह मूल स्रोत है जहां से मनुष्य का ज्ञान विकसित होता है।

मनुष्य का सामाजिक व्यवहार महज उसकी उत्पादक कार्य-

उन्हें रट लेते थे और उनके जरिए लोगों पर रोब गालिब करते थे। कुछ साथी अनुभववादी थे, जो बहुत दिनों तक अपने आंशिक अनुभव से चिपके रहने के कारण न तो क्रान्तिकारी व्यवहार के लिए क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के महत्व को समझ पाए और न क्रान्ति की सम्पूर्ण स्थिति को ही देख पाए। ऐसे लोग अन्धे होकर काम करते रहे, हालांकि उन्होंने बड़े परिश्रम से काम किया। इन दोनों ही किस्म के साथियों, खास तौर से कठमुल्लावादियों, के गलत विचारों की वजह से १९३१-३४ में चीनी क्रान्ति को भारी नुकसान उठाना पड़ा। खास तौर से कठमुल्लावादियों ने मार्क्सवाद का चोंगा पहनकर बहुत से साथियों को

वाही तक ही सीमित नहीं रहता, बल्कि बहुत से अन्य रूप भी धारण करता है — जैसे वर्ग-संघर्ष, राजनीतिक जीवन, वैज्ञानिक और कलात्मक गतिविधि ; संक्षेप में यह कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी के रूप में समाज के व्यावहारिक जीवन के सभी क्षेत्रों में भाग लेता है। इस तरह मनुष्य न सिर्फ अपने भौतिक जीवन द्वारा बल्कि अपने राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन द्वारा भी (राजनीतिक जीवन और सांस्कृतिक जीवन, दोनों ही भौतिक जीवन से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं) मनुष्य और मनुष्य के बीच के विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों की जानकारी अलग-अलग मात्रा में प्राप्त करता रहता है। सामाजिक व्यवहार के इन अन्य रूपों में, खास तौर से विभिन्न प्रकार का वर्ग-संघर्ष, मानव-ज्ञान के विकास पर गहरा प्रभाव डालता है। वर्ग-समाज में प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी वर्ग के सदस्य के रूप में ही जीवन व्यतीत करता है, तथा प्रत्येक प्रकार की विचारधारा पर, बिना किसी अपवाद के, किसी न किसी वर्ग की छाप होती है।

मार्क्सवादियों का मत है कि मानव-समाज में उत्पादक कार्यवाही कदम-ब-कदम निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर बढ़ती जाती

गुमराह किया। "व्यवहार के बारे में" नामक यह लेख कामरेड माओ त्सेतुङ ने पार्टी के अन्दर कठमुल्लावाद और अनुभववाद, खास तौर से कठमुल्लावाद जैसी मनोगतवादी गलतियों का पर्दाफाश मार्क्सवादी ज्ञान-सिद्धान्त के दृष्टिकोण के अनुसार करने के लिए लिखा था। इसका नाम "व्यवहार के बारे में" इसलिए रखा गया क्योंकि इसमें कठमुल्लावादी किस्म के मनोगतवाद का, जो व्यवहार को कम महत्व देता है, पर्दाफाश करने पर जोर दिया गया है। इस लेख के विचार कामरेड माओ त्सेतुङ ने येनान में जापान-विरोधी सैनिक व राजनीतिक कालेज में भाषण के रूप में प्रस्तुत किए थे।

है, तथा फलतः मानव-ज्ञान भी, चाहे वह प्रकृति सम्बन्धी हो चाहे समाज सम्बन्धी, कदम-ब-कदम निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर बढ़ता जाता है, यानी उथलेपन से गहरेपन की ओर और एकांगीपन से बहुमुखीपन की ओर बढ़ता जाता है। इतिहास में बहुत समय तक समाज के इतिहास के बारे में मानव का ज्ञान एकांगी ही बना रहा, क्योंकि एक ओर तो शोषक वर्गों के पूर्वाग्रह समाज के इतिहास को सदा विकृत करते रहते थे, तथा दूसरी ओर छोटे पैमाने का उत्पादन मानव-दृष्टिकोण को सीमित कर देता था। उत्पादन की बड़ी शक्तियों (बड़े पैमाने के उद्योग-धन्धों) के साथ जब आधुनिक सर्वहारा वर्ग का आविर्भाव हुआ, तभी मनुष्य सामाजिक इतिहास के विकास की सर्वांगीण, ऐतिहासिक समझ प्राप्त कर सका और समाज सम्बन्धी अपने ज्ञान को विज्ञान का रूप, मार्क्सवाद के विज्ञान का रूप दे सका।

मार्क्सवादियों का मत है कि केवल मनुष्य का सामाजिक व्यवहार ही बाह्य जगत के बारे में मानव-ज्ञान की सच्चाई की कसौटी है। वास्तव में मानव-ज्ञान को सिर्फ तभी सिद्ध किया जाता है जब सामाजिक व्यवहार (भौतिक उत्पादन, वर्ग-संघर्ष या वैज्ञानिक प्रयोग) की प्रक्रिया के दौरान मनुष्य प्रत्याशित परिणाम प्राप्त कर लेता है। यदि मनुष्य अपने काम में सफल होना चाहता है, अर्थात प्रत्याशित परिणाम प्राप्त करना चाहता है, तो उसे चाहिए कि वह अपने विचारों को वस्तुगत बाह्य जगत के नियमों के अनुरूप बनाए; अगर उसके विचार इन नियमों के अनुरूप नहीं बनेंगे, तो वह अपने व्यवहार में असफल हो जाएगा। जब वह असफल हो जाता है, तो अपनी असफलता से सबक सीखता है, अपने विचारों को सुधारकर उन्हें बाह्य जगत के नियमों के अनुरूप बना लेता है तथा इस

प्रकार अपनी असफलता को सफलता में बदल सकता है; "असफलता सफलता की जननी है" और "ठोकर खाने से बुद्धि बढ़ती है" का यही अर्थ है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी ज्ञान-सिद्धान्त व्यवहार को प्रथम स्थान देता है। उसका कहना है कि मानव-ज्ञान को व्यवहार से हरगिज अलग नहीं किया जा सकता। वह उन तमाम गलत सिद्धान्तों को ठुकरा देता है जो व्यवहार के महत्व को अस्वीकार करते हैं या ज्ञान को व्यवहार से अलग करते हैं। जैसा कि लेनिन ने कहा है, "व्यवहार (सैद्धान्तिक) ज्ञान से बढ़कर है, क्योंकि उसमें न सिर्फ सार्वभौमिकता का गुण होता है बल्कि प्रत्यक्ष वास्तविकता का गुण भी होता है।"[१] मार्क्सवादी दर्शन — द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद — की दो प्रमुख विशेषताएं हैं। पहली विशेषता है इसका वर्ग-स्वरूप : यह खुलेआम ऐलान करता है कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद सर्वहारा वर्ग की सेवा करता है। दूसरी विशेषता है इसकी व्यावहारिकता : यह इस बात पर जोर देता है कि सिद्धान्त व्यवहार पर निर्भर है, इस बात पर जोर देता है कि सिद्धान्त का आधार व्यवहार है और वह बदले में व्यवहार की ही सेवा करता है। किसी ज्ञान या सिद्धान्त की सच्चाई का निर्णय हमारी मनोगत भावनाएं नहीं करतीं बल्कि सामाजिक व्यवहार के वस्तुगत परिणाम करते हैं। केवल सामाजिक व्यवहार ही सच्चाई की कसौटी हो सकता है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी ज्ञान-सिद्धान्त में व्यवहार का दृष्टिकोण प्रमुख और बुनियादी दृष्टिकोण है।[२]

लेकिन आखिर व्यवहार से मानव-ज्ञान निकलता कैसे है और वह बदले में व्यवहार की सेवा कैसे करता है? ज्ञान के विकास की प्रक्रिया पर दृष्टि डालते ही यह बात स्पष्ट हो जाती है।

व्यवहार की प्रक्रिया में, मनुष्य पहले विभिन्न वस्तुओं के रूप को ही देखता है, उनके अलग-अलग पहलुओं और उनके वाह्य सम्बन्धों को ही देखता है। उदाहरण के लिए बाहर से कुछ लोग देखने के विचार से येनान आते हैं। पहले एक-दो दिनों में वे यहां की भौगोलिक स्थिति, सड़कों और घरों को देखते हैं; वे अनेक लोगों से मिलते हैं, दावतों, रात्रि-समारोहों और सार्वजनिक सभाओं में शरीक होते हैं; वे तरह-तरह की बातचीत सुनते हैं और तरह-तरह के दस्तावेज पढ़ते हैं; ये सब वस्तुओं के रूप हैं, उनके अलग-अलग पहलू हैं और उनके वाह्य सम्बन्ध हैं। इसे ज्ञान की इन्द्रियग्राह्य मंजिल कहते हैं, यानी यह इन्द्रिय-संवेदनों और संस्कारों की मंजिल है। दूसरे शब्दों में येनान की ये विभिन्न वस्तुएं, देखने वाले दल के सदस्यों की इन्द्रियों को प्रभावित करती हैं, उनके संवेदनों को जन्म देती हैं और उनके दिमाग में बहुत से संस्कार छोड़ देती हैं, तथा साथ ही इन संस्कारों के बीच वाह्य सम्बन्धों की एक मोटी रूपरेखा भी छोड़ देती हैं: यह ज्ञानप्राप्ति की पहली मंजिल है। इस मंजिल में मनुष्य अभी गम्भीर धारणाएं नहीं बना सकता, न तर्कसंगत निष्कर्ष ही निकाल सकता है।

जैसे-जैसे सामाजिक व्यवहार की प्रक्रिया चलती रहती है, वैसे-वैसे उन वस्तुओं की अनेक बार पुनरावृत्ति होती है जो व्यवहार की प्रक्रिया में मनुष्य के इन्द्रिय-संवेदनों और संस्कारों को उत्पन्न करती हैं; इसके बाद मानव के मस्तिष्क के अन्दर ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया में एक आकस्मिक परिवर्तन (छलांग) होता है जिसके परिणाम-स्वरूप धारणाएं बनती हैं। धारणाएं वस्तुओं के रूप, उनके अलग-अलग पहलू या उनके बाह्य सम्बन्ध नहीं रह जातीं; वे वस्तुओं के

सारतत्व, उनकी समग्रता और उनके आन्तरिक सम्बन्धों को ग्रहण करती हैं। धारणाएं और इन्द्रिय-संवेदन परिमाण की दृष्टि से ही नहीं बल्कि गुण की दृष्टि से भी भिन्न होते हैं। इससे आगे बढ़ने पर, निर्णय और तर्क की पद्धति को काम में लाते हुए, हम तर्कसंगत निष्कर्ष निकाल सकते हैं। "तीन राज्यों की कहानी" का यह वाक्य कि "अपने दिमाग पर जोर डालो, तो तुम्हें जरूर कोई न कोई तरकीब सूझ जाएगी", अथवा रोजमर्रा की बातचीत में यह कहना कि "जरा सोच तो लेने दो", ठीक ऐसा ही सिलसिला है जब मनुष्य निर्णय करने और तर्क करने के लिए अपने दिमाग की धारणाओं का इस्तेमाल करता है। यह ज्ञानप्राप्ति की दूसरी मंजिल है। जब हमारे यहां की हालत को देखने के लिए बाहर से आने वाले दल के सदस्य विभिन्न प्रकार की सामग्री इकट्ठी कर लेते हैं और इसके अलावा "उस पर सोच-विचार भी कर लेते हैं", तब वे यह निर्णय कर सकते हैं कि "जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाने की कम्युनिस्ट पार्टी की नीति मुकम्मिल, ईमानदारीपूर्ण और सच्ची है।" यह निर्णय करने के बाद, यदि वे राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिए सच्चे दिल से एकता कायम करना चाहते हैं, तो वे एक कदम और आगे बढ़कर यह निष्कर्ष निकालेंगे कि "जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा सफल हो सकता है"। किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने की पूरी प्रक्रिया में धारणा, निर्णय और तर्क की मंजिल अधिक महत्वपूर्ण मंजिल है; यह बुद्धिसंगत ज्ञान की मंजिल है। ज्ञान का वास्तविक कार्य है इन्द्रिय-संवेदन द्वारा विचार तक पहुंचना, वस्तुगत चीजों के आन्तरिक अन्तरविरोधों, उनके नियमों तथा एक प्रक्रिया और दूसरी प्रक्रिया के आन्तरिक सम्बन्धों को कदम-ब-कदम समझ लेना,

यानी तर्कसंगत ज्ञान तक पहुंच जाना। दूसरे शब्दों में यह कि तर्कसंगत ज्ञान इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से भिन्न इसलिए है कि इन्द्रियग्राह्य ज्ञान वस्तुओं के अलग-अलग पहलुओं, रूपों और उनके वाह्य सम्बन्धों के दायरे में ही रहता है, जबकि तर्कसंगत ज्ञान एक भारी छलांग भरकर वस्तुओं की समग्रता, उनके सारतत्व और आन्तरिक सम्बन्धों तक पहुंच जाता है, तथा चारों ओर के जगत के आन्तरिक अन्तरविरोधों को प्रकट करता है। इसलिए तर्कसंगत ज्ञान में चारों ओर के जगत के विकास को समग्र रूप में, उसके सभी पहलुओं के आन्तरिक सम्बन्धों समेत, ग्रहण करने की सामर्थ्य होती है।

ज्ञान के विकास की प्रक्रिया का यह द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी सिद्धान्त, जो व्यवहार पर आधारित है और उथलेपन से गहरेपन की ओर चलता है, मार्क्सवाद के उदय से पहले किसी ने प्रस्तुत नहीं किया था। मार्क्सवादी भौतिकवाद ने पहली बार इस समस्या का सही समाधान प्रस्तुत किया। उसने भौतिकवादी और द्वन्द्वात्मक इन दोनों तरीकों से दिखला दिया कि ज्ञानप्राप्ति की क्रिया अधिकाधिक गम्भीर होती जाती है, एक ऐसी क्रिया जिसके जरिए सामाजिक मनुष्य उत्पादन-क्रिया और वर्ग-संघर्ष के पेचीदा और नियमित रूप से बार-बार होने वाले व्यवहार के दौरान इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से तर्कसंगत ज्ञान की ओर प्रगति करता है। लेनिन ने कहा था, "पदार्थ का अमूर्तीकरण, प्रकृति के नियम का अमूर्तीकरण, आर्थिक मूल्य का अमूर्तीकरण इत्यादि, संक्षेप में सभी वैज्ञानिक अमूर्तीकरण (जो सही और गम्भीर हों, बेहूदा नहीं), अधिक गहराई, सच्चाई और पूर्णता से प्रकृति को प्रतिबिम्बित करते रहते हैं।"[३] मार्क्सवाद-लेनिनवाद का मत है कि ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया की दोनों मंजिलों की अपनी अलग-अलग विशेषताएं होती हैं : निचली मंजिल में ज्ञान इन्द्रियग्राह्य रूप में प्रकट होता है, जबकि ऊंची मंजिल में वह अपने तर्कसंगत रूप में प्रकट होता है ; लेकिन ये दोनों ही मंजिलें ज्ञानप्राप्ति की एक सम्पूर्ण प्रक्रिया की ही मंजिलें हैं। इन्द्रियग्राह्य ज्ञान और बुद्धिसंगत ज्ञान के बीच गुणात्मक अन्तर होता है, लेकिन वे एक दूसरे से अलग नहीं होते ; व्यवहार के आधार पर उनके बीच एकता कायम होती है। हमारा व्यवहार यह साबित करता है कि जिन वस्तुओं का इन्द्रिय-संवेदन हमें होता है, उनकी समझ तुरन्त हासिल नहीं हो जाती, तथा जिन वस्तुओं की समझ हासिल हो जाती है, उनका इन्द्रिय-संवेदन तभी अधिक गहरा हो सकता है। इन्द्रिय-संवेदन केवल रूप की ही समस्या को हल करता है ; सारतत्व की समस्या को केवल सिद्धान्त ही हल कर सकता है। इन दोनों समस्याओं को व्यवहार से अलग कतई हल नहीं किया जा सकता। यदि कोई मनुष्य किसी चीज को जानना चाहता हो, तो उसके सामने सिवाय इसके और कोई रास्ता नहीं कि वह उस चीज के सम्पर्क में आए, यानी उसके वातावरण में रहे (अमल करे)। सामन्ती समाज में पूंजीवादी समाज के नियमों को पहले से ही जान लेना असम्भव था, क्योंकि पूंजीवाद का अभी उदय ही नहीं हुआ था और उससे सम्बन्धित व्यवहार का भी अभाव था। मार्क्सवाद केवल पूंजीवादी समाज की ही उपज हो सकता है। स्वच्छंदतावादी पूंजीवाद वाले युग में मार्क्स पहले से ही साम्राज्य-वादी युग के विशेष नियमों को ठोस रूप से नहीं जान सकते थे, क्योंकि साम्राज्यवाद – पूंजीवाद की आखिरी मंजिल – का अभी प्रादुर्भाव नहीं हुआ था और उससे सम्बन्धित व्यवहार का भी अभाव था। यह कार्य केवल लेनिन और स्तालिन ही कर सकते थे।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन क्यों कर सके, इसका कारण उनकी प्रतिभा के अलावा मुख्यत: यह है कि उन्होंने अपने समय के वर्ग-संघर्ष और वैज्ञानिक प्रयोगों के अमल में व्यक्तिगत रूप से भाग लिया था ; इस शर्त के बिना किसी प्रतिभाशाली व्यक्ति को भी सफलता न मिल पाती। यह कहावत कि "विद्वान लोग घर बैठे ही संसार की सारी बातें जान लेते हैं", तकनालाजी की दृष्टि से अविकसित अतीत काल में महज कोरी गप थी। हालांकि तकनालाजी की दृष्टि से विकसित वर्तमान युग में यह कहावत चरितार्थ हो सकती है, फिर भी दुनिया में हर जगह सच्चा व्यक्तिगत ज्ञान उन्हीं लोगों को प्राप्त होता है जो व्यवहार में लगे होते हैं। जब वे लोग अपने व्यवहार के जरिए "ज्ञान" प्राप्त कर लेते हैं और जब उनका ज्ञान लेखन और तकनीक के माध्यम से "विद्वान" तक पहुंचता है, सिर्फ तभी विद्वान अप्रत्यक्ष रूप से "संसार की सारी बातें जान लेता है"। अगर आप किसी चीज को या किसी तरह की चीजों को प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहते हैं तो आप वास्तविकता को बदलने, उस चीज को या उस तरह की चीजों को बदलने के व्यावहारिक संघर्ष में व्यक्तिगत रूप से भाग लेकर ही उस चीज के या उस तरह की चीजों के रूपों से सम्पर्क कायम कर सकते हैं ; वास्तविकता को बदलने के व्यावहारिक संघर्ष में व्यक्तिगत रूप से भाग लेकर ही आप उस चीज के या उस तरह की चीजों के सारतत्व का पता लगा सकते हैं और उन्हें समझ सकते हैं। वास्तव में हर आदमी ज्ञान के इसी मार्ग पर चलता है, हालांकि कुछ लोग जानबूझकर इस तथ्य को तोड़ते-मरोड़ते हैं और इसके विपरीत तर्क पेश करते हैं। संसार में सबसे हास्यास्पद वह "ज्ञानी" है जो इधर-उधर से

सुनकर कुछ अधकचरा ज्ञान प्राप्त कर लेता है और अपने को "विश्व का परमज्ञानी" घोषित कर देता है ; इससे केवल यह प्रकट होता है कि उसने अभी ठीक से अपनी थाह नहीं ली। ज्ञान एक वैज्ञानिक वस्तु है और इस मामले में जरा भी बेईमानी या घमण्ड की इजाजत नहीं दी जा सकती। इससे बिलकुल उल्टा रुख–ईमानदारी और नम्रता – निश्चित रूप से आवश्यक है। यदि आप ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको वास्तविकता को बदलने के व्यवहार में भाग लेना होगा। यदि आप नाशपाती का स्वाद जानना चाहते हैं तो आपको उसे स्वयं खाकर उसके वास्तविक रूप को बदलना होगा। यदि आप परमाणु के रचना-विधान और गुण-धर्म को समझना चाहते हैं तो आपको परमाणु की अवस्था बदलने के लिए भौतिक और रासायनिक प्रयोग करने होंगे। यदि आप क्रान्ति के सिद्धान्त और तरीके जानना चाहते हैं, तो आपको क्रान्ति में भाग लेना होगा। सभी प्रकार का सच्चा ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव से ही उत्पन्न होता है। लेकिन मनुष्य को हर बात का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं हो सकता ; वास्तव में हमारा अधिकांश ज्ञान अप्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त होता है, जैसे प्राचीन काल से और विदेशों से प्राप्त होने वाला सारा ज्ञान। हमारे पूर्वजों और विदेशियों को ऐसा ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त हुआ है। यदि उन लोगों के प्रत्यक्ष अनुभव के दौरान लेनिन द्वारा बताई गई "वैज्ञानिक अमूर्तीकरण" की शर्त पूरी हो गई हो और वस्तुगत यथार्थ को वैज्ञानिक ढंग से प्रतिबिम्बित किया गया हो, तभी यह ज्ञान विश्वसनीय होता है, अन्यथा नहीं। इसलिए मनुष्य के ज्ञान के केवल दो भाग होते हैं – प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त होने वाला ज्ञान और अप्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त होने वाला ज्ञान। साथ

ही जो कुछ मेरे लिए अप्रत्यक्ष अनुभव है, वह दूसरों के लिए प्रत्यक्ष अनुभव है। अतएव ज्ञान को यदि हम उसकी समग्रता में लें, तो हर तरह का ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। किसी भी ज्ञान का स्रोत वस्तुगत बाह्य जगत का मनुष्य की इन्द्रियों द्वारा होने वाला संवेदन है। यदि कोई इस तरह के इन्द्रिय-संवेदन को अस्वीकार करता है, प्रत्यक्ष अनुभव को अस्वीकार करता है अथवा वास्तविकता को बदलने के व्यवहार में व्यक्तिगत रूप से भाग लेने की बात को अस्वीकार करता है, तो वह भौतिकवादी नहीं है। इसीलिए "ज्ञानी" लोग हास्यास्पद ठहरते हैं। चीन में एक पुरानी कहावत है, "बाघ की मांद में घुसे बिना बाघ के बच्चे कैसे मिल सकते हैं?" यह कहावत मनुष्य के व्यवहार के लिए सच्ची साबित होती है और यह ज्ञान-सिद्धान्त के लिए भी सच्ची साबित होती है। व्यवहार से अलग ज्ञान का अस्तित्व नहीं हो सकता।

वास्तविकता को बदलने के व्यवहार के आधार पर उत्पन्न होने वाली ज्ञानप्राप्ति की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी क्रिया को – ज्ञानप्राप्ति की कदम-ब-कदम गम्भीर होने वाली क्रिया को – स्पष्ट करने के लिए कुछ अन्य ठोस मिसालें नीचे दी जाती हैं।

पूंजीवादी समाज के बारे में सर्वहारा वर्ग का ज्ञान। अपने व्यवहार के पहले दौर में – मशीनें तोड़ने और स्वतःस्फूर्त संघर्षों के दौर में – सर्वहारा वर्ग अभी केवल इन्द्रियग्राह्य ज्ञान की ही मंजिल में था; उसे अभी पूंजीवाद के विभिन्न रूपों के केवल कुछ ही पहलुओं और उनके बाह्य सम्बन्धों का ही ज्ञान था। उस समय सर्वहारा वर्ग केवल "अपने स्वाभाविक रूप में स्थित वर्ग" था। लेकिन यह वर्ग जब अपने व्यवहार के दूसरे दौर में – जागरूक व संगठित रूप से चलने वाले आर्थिक संघर्ष और राजनीतिक संघर्ष के दौर में – पहुंचा, तो उसने अपने व्यवहार से, लम्बे संघर्षों के अपने अनुभव से और मार्क्सवादी सिद्धान्तों की, जिनका जन्म मार्क्स और एंगेल्स द्वारा वैज्ञानिक पद्धति से इन अनुभवों का सार ग्रहण करके हुआ था, शिक्षा से पूंजीवादी समाज के सारतत्व को समझा, विभिन्न सामाजिक वर्गों के शोषण-सम्बन्धों और अपने ऐतिहासिक कर्तव्य को समझा, तथा इस प्रकार वह "अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील वर्ग" बना।

यही बात साम्राज्यवाद के बारे में चीनी जनता के ज्ञान पर भी लागू होती है। पहली मंजिल सतही इन्द्रियग्राह्य ज्ञान की थी, जैसा कि थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य आन्दोलन, ई हो थ्वान आन्दोलन आदि के अन्धाधुन्ध विदेश-विरोधी संघर्षों से प्रकट होता है। केवल दूसरी मंजिल में ही चीनी जनता बुद्धिसंगत ज्ञान की मंजिल में पहुंची, साम्राज्यवाद के आन्तरिक और बाह्य अन्तरविरोधों को देख सकी तथा इस असलियत को देख सकी कि चीन के दलाल-पूंजीपति वर्ग और सामन्ती वर्ग के सहयोग से साम्राज्यवाद ने चीन के व्यापक जन-समुदाय का शोषण व उत्पीड़न किया। इस तरह के ज्ञान का आरम्भ १९१९ के ४ मई आन्दोलन के आसपास ही हुआ।

इसके बाद हम जरा युद्ध पर विचार करें। यदि युद्ध का संचालन करने वालों के पास युद्ध के अनुभव का अभाव है, तो वे आरम्भिक मंजिल में एक विशेष युद्ध का (उदाहरण के लिए पिछले दस वर्षों का हमारा भूमि-क्रान्ति युद्ध) संचालन करने वाले गम्भीर नियमों को नहीं समझ पाएंगे। आरम्भिक मंजिल में उन्हें केवल लड़ाई के बहुत से अनुभव प्राप्त होते हैं और वे अनेक बार हारते हैं। लेकिन

इस तरह के अनुभव से (जीती हुई लड़ाइयों और खासकर हारी हुई लड़ाइयों के अनुभव से) वे समूचे युद्ध के आन्तरिक सूत्र को समझ जाते हैं, अर्थात उस विशेष युद्ध के नियमों को समझ जाते हैं, रणनीति और कार्यनीति को समझ जाते हैं और फलतः बड़े विश्वास के साथ युद्ध का संचालन करने लगते हैं। ऐसे समय में यदि किसी अनुभवहीन व्यक्ति को नायक बना दिया गया, तो वह भी तब तक युद्ध के सच्चे नियमों को नहीं समझ सकता जब तक कि कई बार हार न जाए (अनुभव न प्राप्त कर ले)।

किसी साथी को यदि कोई काम दिया जाता है और उसे स्वीकार करने का उसमें साहस नहीं होता, तो वह अक्सर यह कहता है, "मुझे भरोसा नहीं कि मैं यह काम कर सकूंगा"। उसे आखिर अपने पर भरोसा क्यों नहीं है? इसलिए कि उसे इस तरह के काम की अन्तर्वस्तु और परिस्थितियों की व्यवस्थित समझ नहीं है, अथवा इसलिए कि इस तरह के काम से उसका सम्पर्क बहुत थोड़ा रहा है, या रहा ही नहीं है, तथा इसलिए उसके नियम उसकी पहुंच के बाहर हैं। काम के स्वरूप और परिस्थितियों का विस्तृत विश्लेषण करने के बाद उसे अपने पर अधिक भरोसा हो जाएगा, और वह उसे करने के लिए राजी हो जाएगा। कुछ समय तक काम करने के बाद उस व्यक्ति को यदि उस काम का अनुभव हो जाए, इसके अलावा यदि वह चीजों को खुले दिमाग से देखने को तैयार हो और समस्याओं पर मनोगत, एकांगी और सतही तरीके से विचार न करता हो, तो वह इस बारे में खुद ही परिणाम निकाल सकेगा कि काम कैसे करना चाहिए, तथा उसका साहस भी बहुत ज्यादा बढ़ जाएगा। केवल ऐसे ही लोग, जो समस्याओं के प्रति मनोगत, एकांगी और सतही

रुख अपनाते हैं, कहीं जाने के बाद वहां की परिस्थिति पर विचार किए बिना, वस्तुओं को समग्र रूप से (उनके समूचे इतिहास और उनकी समूची वर्तमान स्थिति की दृष्टि से) परखे बिना, तथा वस्तुओं के सारतत्व (उनके स्वरूप तथा एक वस्तु और दूसरी वस्तु के बीच के आन्तरिक सम्बन्धों) तक पहुंचे बिना ही बड़े आत्मसंतोष के साथ आज्ञाएं और निर्देश जारी करते हैं। ऐसे लोगों का ठोकर खाना और गिरना अनिवार्य है।

इस प्रकार ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया में पहला कदम है वाह्य जगत की वस्तुओं से सम्पर्क ; यह कदम इन्द्रिय-संवेदन की मंजिल का कदम है। दूसरा कदम है इन्द्रिय-संवेदन द्वारा प्राप्त सामग्री को पुनर्व्यवस्थित करके और उसकी पुनर्रचना करके उसका समन्वय करना ; यह कदम धारणा, निर्णय और तर्क की मंजिल का कदम है। जब इन्द्रिय-संवेदन की सामग्री बहुत समृद्ध होती है (आंशिक या अपूर्ण नहीं होती) और वास्तविकता के अनुकूल होती है (भ्रामक नहीं होती), सिर्फ तभी हम ऐसी सामग्री के आधार पर सही धारणाएं बना सकते हैं और सही तर्क पेश कर सकते हैं।

यहां दो महत्वपूर्ण बातों पर जोर देना जरूरी है। पहली बात, जिसका पहले उल्लेख किया जा चुका है लेकिन जिसे यहां दोहराना आवश्यक है, यह है कि बुद्धिसंगत ज्ञान इन्द्रियग्राह्य ज्ञान पर निर्भर है। जो कोई यह समझता है कि बुद्धिसंगत ज्ञान को इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से प्राप्त करना आवश्यक नहीं, वह एक आदर्शवादी है। दर्शन के इतिहास में एक तथाकथित "बुद्धिवादी" विचार-शाखा है जो केवल बुद्धि का औचित्य स्वीकार करती है और अनुभव का औचित्य नहीं मानती और जो केवल बुद्धि को विश्वसनीय और इन्द्रियग्राह्य

अनुभव को अविश्वसनीय मानती है ; इस विचार-शाखा की गलती यह है कि वह चीजों को उल्टा करके देखती है। बुद्धिसंगत ज्ञान ठीक इसलिए विश्वसनीय होता है क्योंकि उसका स्रोत इन्द्रिय-संवेदन में होता है। अन्यथा वह बिना स्रोत के पानी, या बिना जड़ के वृक्ष जैसी मनोगत रूप से स्वतः उत्पन्न होने वाली अविश्वसनीय वस्तु बन जाएगा। ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया में जहां तक क्रम का सम्बन्ध है, इन्द्रियग्राह्य अनुभव पहले आता है ; ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया में सामाजिक व्यवहार के महत्व पर हम ठीक इसलिए जोर देते हैं क्योंकि केवल सामाजिक व्यवहार ही मानव-ज्ञान को जन्म दे सकता है और वस्तुगत वाह्य जगत से इन्द्रियग्राह्य अनुभव प्राप्त करने के पथ पर मानव को चला सकता है। यदि कोई अपनी आंखें मूंद ले, कान बन्द कर ले और वस्तुगत वाह्य जगत से बिलकुल अलग हो जाए, तो उसे कोई ज्ञान प्राप्त नहीं होगा। ज्ञान अनुभव से शुरू होता है—ज्ञान-सिद्धान्त का भौतिकवाद यही है।

दूसरी बात यह है कि ज्ञान की गहराई को बढ़ाने की जरूरत होती है, ज्ञान को इन्द्रियग्राह्य मंजिल से और आगे बढ़ाकर उसकी बुद्धिसंगत मंजिल तक पहुंचाने की जरूरत होती है—यही ज्ञान-सिद्धान्त का द्वन्द्ववाद है।[४] यह सोचना कि ज्ञान निचली मंजिल पर यानी इन्द्रियग्राह्य मंजिल पर रुक सकता है तथा इन्द्रियग्राह्य ज्ञान ही विश्वसनीय है बुद्धिसंगत ज्ञान नहीं, इतिहास में "अनुभव-वाद" की गलती को दोहराना होगा। इस सिद्धान्त की गलती यह है कि वह इस बात को नहीं देख पाता कि इन्द्रिय-संवेदन की सामग्री वस्तुगत वाह्य जगत की कुछ वास्तविकताओं को प्रतिबिम्बित तो करती है (मैं यहां आदर्शवादी अनुभववाद की बात नहीं कर रहा

जो अनुभव को तथाकथित आत्मनिरीक्षण तक सीमित कर देता है), फिर भी वह एकांगी और सतही होती है, वस्तुओं के अपूर्ण रूप को प्रतिबिम्बित करती है और उनके सारतत्व को प्रतिबिम्बित नहीं करती। किसी वस्तु के समूचे रूप को प्रतिबिम्बित करने के लिए, उसके सारतत्व और उसमें निहित नियमों को प्रतिबिम्बित करने के लिए, यह आवश्यक है कि चिन्तन के जरिए इन्द्रिय-संवेदन की समृद्ध सामग्री को पुनर्निर्मित किया जाए, स्थूल को छोड़कर सूक्ष्म को ग्रहण किया जाए, मिथ्या को हटाकर सत्य को कायम रखा जाए, एक बात से दूसरी बात तक और वाह्य रूप को पार करके अन्तर्वस्तु तक पहुंचा जाए, ताकि धारणाओं और सिद्धान्तों की व्यवस्था कायम की जा सके—यह आवश्यक है कि इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से बुद्धिसंगत ज्ञान तक छलांग भरी जाए। जो ज्ञान इस तरह से पुनर्निर्मित होता है, वह ज्यादा खोखला या ज्यादा अविश्वसनीय नहीं होता ; इसके विपरीत, ज्ञानप्राप्ति की प्रक्रिया में व्यवहार के आधार पर वैज्ञानिक पद्धति के ज़रिए जो कुछ भी पुनर्निर्मित होता है, वह, लेनिन के शब्दों में, वस्तुगत चीजों को अधिक गहराई, सच्चाई और पूर्णता से प्रतिबिम्बित करता है। निकृष्ट "व्यावहारिक लोग" ये बातें नहीं समझ पाते, वे अनुभव की इज्जत करते हैं और सिद्धान्त को नजरअन्दाज करते हैं, तथा इसलिए समूची वस्तुगत प्रक्रिया को व्यापक रूप से नहीं देख पाते, उनमें स्पष्ट दिशा और दूरदृष्टि का अभाव होता है, तथा कभी-कभार की सफलता से और सच्चाई की झलकमात्र से आत्मतुष्ट हो जाते हैं। ऐसे लोगों पर यदि क्रान्ति का संचालन करने का भार हो, तो वे उसे अन्धी गली में ले जाकर छोड़ देंगे।

बुद्धिसंगत ज्ञान इन्द्रियग्राह्य ज्ञान पर निर्भर होता है और इन्द्रियग्राह्य ज्ञान का बुद्धिसंगत ज्ञान के रूप में विकसित होना बाकी रहता है–यही द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी ज्ञान-सिद्धान्त है। दर्शन-शास्त्र में न तो "बुद्धिवाद" ज्ञान की ऐतिहासिक या द्वन्द्वात्मक प्रकृति को समझता है और न "अनुभववाद"। इनमें से हरेक के अन्दर यद्यपि सत्य का एक पहलू मौजूद रहता है (यहां मैं भौतिकवादी बुद्धिवाद और अनुभववाद की बात कर रहा हूं, आदर्शवादी बुद्धिवाद और अनुभववाद की नहीं), फिर भी ज्ञान-सिद्धान्त के पूरे सिलसिले में ये दोनों ही विचार-शाखाएं गलत हैं। इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से बुद्धिसंगत ज्ञान की ओर चलने की ज्ञानप्राप्ति की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी क्रिया ज्ञानप्राप्ति की एक छोटी प्रक्रिया (जैसे किसी एक वस्तु या काम को जानना) के साथ-साथ ज्ञानप्राप्ति की एक बड़ी प्रक्रिया (जैसे किसी पूरे समाज या किसी क्रान्ति को जानना) के बारे में भी सही साबित होती है।

लेकिन ज्ञानप्राप्ति की क्रिया यहीं समाप्त नहीं हो जाती। अगर ज्ञानप्राप्ति की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी क्रिया केवल बुद्धिसंगत ज्ञान पर ही रुक जाती है, तो समस्या का केवल आधा ही अंश निपटाया जा सकेगा। और जहां तक मार्क्सवादी दर्शन का सम्बन्ध है, उसके लिहाज से तो केवल वह आधा अंश ही निपटाया जाता है जो ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है। मार्क्सवादी दर्शन के मतानुसार सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या यह नहीं है कि हम वस्तुगत जगत के नियमों को समझ लें और इस प्रकार विश्व की व्याख्या कर सकें, बल्कि यह है कि इन नियमों के ज्ञान को विश्व का रूपान्तर करने के लिए गत्यात्मक रूप से लागू करें। मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनुसार सिद्धान्त महत्वपूर्ण

होता है, और उसके महत्व को लेनिन ने इस वाक्य में पूरी तरह बता दिया है, "बिना क्रान्तिकारी सिद्धान्त के कोई क्रान्तिकारी आन्दोलन नहीं हो सकता।"[४] लेकिन मार्क्सवाद ठीक इसी कारण और केवल इसीलिए सिद्धान्त पर जोर देता है क्योंकि वह कर्म का पथ-प्रदर्शन कर सकता है। भले ही हमारे पास सही सिद्धान्त मौजूद हो, लेकिन अगर हम महज उसका जाप करते रहेंगे, उसे उठाकर ताक पर रख देंगे और उसे अमल में नहीं लाएंगे, तो उस सिद्धान्त का, चाहे वह कितना ही अच्छा क्यों न हो, कोई मूल्य नहीं रह जाएगा। ज्ञान व्यवहार से शुरू होता है, और व्यवहार के जरिए प्राप्त होने वाले सैद्धान्तिक ज्ञान को फिर व्यवहार के पास लौट जाना होता है। ज्ञान का गत्यात्मक धर्म न सिर्फ इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से बुद्धिसंगत ज्ञान तक गत्यात्मक छलांग भरने में प्रकट होता है बल्कि–और यह अधिक महत्वपूर्ण है–बुद्धिसंगत ज्ञान से क्रान्तिकारी व्यवहार तक छलांग भरने में भी प्रकट होता है। जो ज्ञान संसार के नियमों को आत्मसात कर लेता है, उसे संसार को बदलने के व्यवहार की ओर फिर से निर्देशित करना चाहिए, उत्पादन के व्यवहार में, क्रान्तिकारी वर्ग-संघर्ष और क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संघर्ष के व्यवहार में, तथा वैज्ञानिक प्रयोगों के व्यवहार में फिर एक बार लागू करना चाहिए। यह सिद्धान्त को परखने और उसे विकसित करने की प्रक्रिया है, ज्ञानप्राप्ति की समूची प्रक्रिया का ही जारी रूप है। सिद्धान्त वस्तुगत यथार्थ के अनुरूप है अथवा नहीं, यह समस्या इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से बुद्धिसंगत ज्ञान तक पहुंचने की ऊपर बताई गई क्रिया में न तो पूरी तरह हल होती है और न पूरी तरह हल हो सकती है। उसे पूरी तरह हल करने का एकमात्र तरीका यह है

कि बुद्धिसंगत ज्ञान को सामाजिक व्यवहार की ओर फिर से निर्देशित किया जाए, सिद्धान्त को व्यवहार में लागू किया जाए और यह देखा जाए कि उससे प्रत्याशित फल मिलता है या नहीं। प्राकृतिक विज्ञान के बहुत से सिद्धान्त सत्य माने जाते हैं, केवल इसलिए नहीं कि प्रकृति-वैज्ञानिकों ने जब उन्हें निकाला था तब उन्हें सत्य समझा जाता था, बल्कि इसलिए भी कि बाद के वैज्ञानिक व्यवहार में उनकी सच्चाई परखी जा चुकी है। इसी तरह मार्क्सवाद-लेनिनवाद को भी सत्य समझा जाता है, केवल इसलिए नहीं कि मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन ने जब वैज्ञानिक पद्धति से उसका प्रतिपादन किया था तब उसे सत्य समझा जाता था, बल्कि इसलिए भी कि बाद के क्रान्तिकारी वर्ग-संघर्ष और क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संघर्ष के व्यवहार में उसकी सच्चाई परखी जा चुकी है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद इसलिए एक सर्वव्यापी सत्य है, क्योंकि व्यवहार में उससे बचकर निकलना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। मानव-ज्ञान का इतिहास हमें बतलाता है कि बहुत से सिद्धान्तों की सच्चाई अपूर्ण होती है और यह अपूर्णता व्यवहार की कसौटी से ही दूर की जाती है। बहुत से सिद्धान्त गलत होते हैं और व्यवहार की कसौटी से ही उन्हें दुरुस्त किया जाता है। यही कारण है कि व्यवहार ही सत्य की कसौटी है और "जीवन के दृष्टिकोण को, व्यवहार के दृष्टिकोण को, ज्ञान-सिद्धान्त में पहली और बुनियादी चीज होना चाहिए"[६]। स्तालिन ने ठीक ही कहा था, "सिद्धान्त यदि क्रान्तिकारी व्यवहार से सम्बद्ध न हो जाए, तो वह निरुद्देश्य हो जाता है — ठीक उसी तरह जैसे क्रान्तिकारी सिद्धान्त द्वारा पथ आलोकित न किए जाने पर व्यवहार अन्धेरे में भटकता रहता है।"[७]

जब हम इस मुद्दे पर पहुंच जाते हैं, तो क्या ज्ञानप्राप्ति की क्रिया पूरी हो जाती है? हमारा उत्तर है: हो जाती है और नहीं भी होती। जब सामाजिक मनुष्य किसी वस्तुगत प्रक्रिया को, जो विकास की किसी मंजिल पर हो, बदलने के व्यवहार में लगता है (चाहे किसी प्राकृतिक प्रक्रिया को बदलने का व्यवहार हो अथवा सामाजिक प्रक्रिया को), तब वह अपने चिन्तन में वस्तुगत प्रक्रिया के प्रतिबिम्ब द्वारा और अपनी मनोगत कार्यवाही के संचालन द्वारा अपने ज्ञान को इन्द्रियग्राह्य से बुद्धिसंगत मंजिल तक बढ़ा सकता है, तथा ऐसे विचारों, सिद्धान्तों, योजनाओं अथवा कार्यक्रमों का निर्माण कर सकता है जो मोटे तौर पर उस वस्तुगत प्रक्रिया के नियमों के अनुरूप हों। इसके बाद वह इन विचारों, सिद्धान्तों, योजनाओं अथवा कार्यक्रमों को उसी वस्तुगत प्रक्रिया के अमल में लाता है। यदि वह अपना पूर्वकल्पित उद्देश्य प्राप्त कर ले, अर्थात यदि वह उसी प्रक्रिया के व्यवहार में उन पूर्वनिर्मित विचारों, सिद्धान्तों, योजनाओं अथवा कार्यक्रमों को वास्तविकता का रूप दे डाले या मोटे तौर पर वास्तविकता का रूप दे डाले, तो यह माना जा सकता है कि इस ठोस प्रक्रिया के सम्बन्ध में ज्ञानप्राप्ति की क्रिया पूरी हो गई। उदाहरण के लिए प्रकृति को बदलने की प्रक्रिया में, किसी इंजीनियरी-योजना को अमली रूप देना, किसी वैज्ञानिक परिकल्पना की सच्चाई को सिद्ध करना, किसी औजार को बनाना अथवा किसी फसल की कटाई करना; और समाज को बदलने की प्रक्रिया में, किसी हड़ताल की जीत होना, किसी युद्ध में विजय प्राप्त होना अथवा किसी शिक्षा सम्बन्धी योजना को पूरा करना — इन सभी को पूर्वकल्पित उद्देश्यों का सिद्ध होना माना जा सकता

है। लेकिन साधारणतः, चाहे प्रकृति को बदलने के व्यवहार में हो चाहे समाज को, ऐसा बहुत कम होता है कि लोगों के मूल विचार, सिद्धान्त, योजनाएं अथवा कार्यक्रम किसी न किसी परिवर्तन के बिना कार्यान्वित हो जाएं। यह इसलिए कि जो लोग वास्तविकता को बदलने में लगे हुए हैं, उनकी बहुत सी सीमाएं होती हैं। उनकी सीमाएं वैज्ञानिक और तकनालाजीकल परिस्थितियों से ही निश्चित नहीं होतीं, बल्कि इस बात से भी निश्चित होती हैं कि वस्तुगत प्रक्रिया का खुद किस हद तक विकास हुआ है और उसने किस हद तक अपने को प्रकट किया है (वस्तुगत प्रक्रिया के विभिन्न पहलू और उसका सारतत्व अभी पूर्ण रूप से प्रकट नहीं हुए)। ऐसी स्थिति में, व्यवहार के दौरान अप्रत्याशित परिस्थितियों की जानकारी होने पर विचार, सिद्धान्त, योजनाएं अथवा कार्यक्रम अक्सर आंशिक रूप में और कभी-कभी पूरी तरह से भी बदल दिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, होता यह है कि मूल विचार, सिद्धान्त, योजनाएं अथवा कार्यक्रम अंशतः या पूर्णतः वास्तविकता से मेल नहीं खाते, अथवा अंशतः या पूर्णतः गलत होते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि गलत ज्ञान को ठीक करने से पहले गलत ज्ञान को बदलकर उसे वस्तुगत प्रक्रिया के नियमों के अनुकूल बनाने के पहले, और फलतः मनोगत चीजों को वस्तुगत चीजों में बदलने के पहले यानी व्यवहार में प्रत्याशित फल पाने के पहले, बार-बार असफलताओं का सामना करना ही पड़ता है। फिर भी इस मुद्दे पर पहुंचने के बाद, चाहे यह कैसे ही हुआ हो, यह समझा जाता है कि किसी वस्तुगत प्रक्रिया के बारे में, जो विकास की किसी एक मंजिल पर हो, मनुष्य की ज्ञानप्राप्ति की क्रिया पूरी हो गई है।

लेकिन जहां तक प्रक्रिया की प्रगति का ताल्लुक है, मनुष्य की ज्ञानप्राप्ति की क्रिया पूरी नहीं होती। कोई भी प्रक्रिया, चाहे वह प्राकृतिक जगत में हो अथवा सामाजिक जगत में, अपने अन्दरूनी अन्तरविरोधों और संघर्षों के कारण बढ़ती और विकसित होती है; उसी के अनुसार मनुष्य की ज्ञानप्राप्ति की क्रिया को भी बढ़ना और विकसित होना चाहिए। जहां तक सामाजिक आन्दोलन का सम्बन्ध है, सच्चे क्रान्तिकारी नेताओं को इस बात में माहिर हो जाना चाहिए कि जब भी उनके विचार, सिद्धान्त, योजनाएं अथवा कार्यक्रम गलत साबित हों, तो जैसा कि हम बता चुके हैं, वे लोग उन्हें सुधार लें; यही नहीं, उन्हें इस बात में भी माहिर हो जाना चाहिए कि जब कोई वस्तुगत प्रक्रिया विकास की एक मंजिल से दूसरी मंजिल में पहुंच चुकी हो और परिवर्तित हो चुकी हो, तो उसके अनुसार वे खुद के और अपने साथी क्रान्तिकारियों के मनोगत ज्ञान को आगे बढ़ाएं और परिवर्तित करें; दूसरे शब्दों में, उन्हें इस बात की गारन्टी कर देनी चाहिए कि उनके द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले नए क्रान्तिकारी काम और नए अमली कार्यक्रम नई परिस्थिति के परिवर्तनों के अनुकूल हों। क्रान्तिकारी काल में परिस्थिति बड़ी तेजी से बदलती है; यदि बदली हुई परिस्थिति के अनुकूल क्रान्तिकारियों का ज्ञान भी तेजी से न बदले, तो वे क्रान्ति को विजय तक नहीं ले जा सकते।

लेकिन अक्सर होता यह है कि विचार वास्तविक स्थिति से पीछे रह जाते हैं; इसका कारण यह है कि मानव-ज्ञान बहुत सी सामाजिक परिस्थितियों की सीमा में बंधा रहता है। क्रान्तिकारियों की पांतों में हम उन कट्टरतावादियों का विरोध करते हैं

जिनके विचार बदलती हुई वस्तुगत परिस्थितियों के अनुसार आगे नहीं बढ़ पाते तथा इतिहास में दक्षिणपंथी अवसरवाद के रूप में प्रकट होते हैं। वे लोग यह नहीं देख पाते कि अन्तरविरोधों का संघर्ष पहले ही वस्तुगत प्रक्रिया को आगे बढ़ा चुका है, जबकि उनका अपना ज्ञान पुरानी मंजिल पर ही रुक गया है। सभी कट्टरतावादियों के विचारों की यही विशेषता होती है। उनके विचार सामाजिक व्यवहार से अलग होते हैं, और वे समाज के रथचक्रों का पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकते ; वे केवल रथ के पीछे यह भुनभुनाते हुए घिसटते रहते हैं कि वह बहुत तेजी से बढ़ा जा रहा है, तथा उसे पीछे ढकेलने और उल्टी दिशा में ले जाने का प्रयत्न करते हैं।

हम लोग "वामपंथियों" की लफ्फाजी का भी विरोध करते हैं। उनके विचार वस्तुगत प्रक्रिया के विकास की एक निश्चित मंजिल से आगे होते हैं ; उनमें से कुछ लोग अपनी कल्पना की उड़ान को ही सत्य समझते हैं, और कुछ अन्य लोग तो एक ऐसे आदर्श को आज ही जबरदस्ती अमल में लाना चाहते हैं जिसे सिर्फ कल ही अमल में लाया जा सकता है। वे बहुसंख्यक लोगों के सामयिक व्यवहार से और तात्कालिक वास्तविकता से अपने को अलग कर लेते हैं तथा अपनी कार्यवाही में अपने आपको दुस्साहसवादी जाहिर कर देते हैं।

आदर्शवाद और यांत्रिक भौतिकवाद, अवसरवाद और दुस्साहसवाद, सभी की यह विशेषता होती है कि उनके यहां मनोगत और वस्तुगत के बीच खाई होती है, ज्ञान और व्यवहार में अलगाव होता है। मार्क्सवादी-लेनिनवादी ज्ञान-सिद्धान्त, जिसकी विशेषता वैज्ञानिक सामाजिक व्यवहार है, इन गलत विचारधाराओं का दृढ़ता से विरोध

किए बिना नहीं रह सकता। मार्क्सवादी यह मानते हैं कि विश्व के विकास की निरपेक्ष और आम प्रक्रिया में प्रत्येक ठोस प्रक्रिया का विकास सापेक्ष होता है, तथा इसलिए निरपेक्ष सत्य की अनन्त धारा में विकास की हर विशेष मंजिल पर ठोस प्रक्रिया का मानव-ज्ञान सापेक्ष रूप में ही सत्य होता है। अनगिनत सापेक्ष सत्यों का समुच्चय ही निरपेक्ष सत्य होता है।[८] वस्तुगत प्रक्रिया का विकास अन्तर-विरोधों और संघर्षों से भरा होता है, इसी तरह मनुष्य के ज्ञान की क्रिया का विकास भी अन्तरविरोधों और संघर्षों से भरा होता है। वस्तुगत संसार की समस्त द्वन्द्वात्मक क्रिया देर-सबेर मानव-ज्ञान में प्रतिबिम्बित होती है। सामाजिक व्यवहार में उद्भव, विकास और विलोप की प्रक्रिया अनन्त रूप से जारी रहती है, और इसी तरह मानव-ज्ञान में भी उद्भव, विकास और विलोप की प्रक्रिया अनन्त रूप से जारी रहती है। जैसे-जैसे निश्चित विचारों, सिद्धान्तों, योजनाओं अथवा कार्यक्रमों के आधार पर वस्तुगत यथार्थ को बदलने के उद्देश्य से मनुष्य का व्यवहार लगातार आगे बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे वस्तुगत यथार्थ के बारे में मनुष्य का ज्ञान भी लगातार गम्भीर बनता जाता है। वस्तुगत यथार्थ के संसार में परिवर्तन की क्रिया कभी समाप्त नहीं होती और न मनुष्य द्वारा व्यवहार के जरिए सत्य का ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया ही कभी समाप्त होती है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद ने सत्य का सम्पूर्ण ज्ञान कदापि संचित नहीं कर लिया है, बल्कि वह व्यवहार द्वारा अनवरत रूप से सत्य के ज्ञान का पथ प्रशस्त करता रहता है। हमारा निष्कर्ष यह है कि मनोगत और वस्तुगत, सिद्धान्त और व्यवहार, जानने और कर्म करने के बीच ठोस ऐतिहासिक एकता कायम की जाए, और यह कि हम ठोस इतिहास से

दूर जाने वाली सभी गलत विचारधाराओं के विरुद्ध हैं, चाहे वे "वामपंथी" हों या दक्षिणपंथी।

समाज के विकास की मौजूदा मंजिल में, इतिहास ने सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी को यह जिम्मेदारी सौंप दी है कि वह दुनिया को ठीक तरह समझे और उसे बदल डाले। यह प्रक्रिया, दुनिया को बदलने का यह व्यवहार-क्रम, जिसका निर्णय वैज्ञानिक ज्ञान के अनुरूप हुआ है, दुनिया में और चीन में एक ऐतिहासिक घड़ी में पहुंच गया है, एक ऐसी महत्वपूर्ण घड़ी में जैसी मानव-इतिहास में पहले कभी नहीं देखी गई। दूसरे शब्दों में यह एक ऐसी घड़ी है जिसमें दुनिया और चीन से अन्धकार को पूरी तरह भगाने और एक अभूतपूर्व आलोकमय दुनिया का निर्माण करने का प्रयत्न किया जा रहा है। दुनिया को बदलने के लिए सर्वहारा वर्ग और क्रान्तिकारी जनता के संघर्ष में निम्नलिखित कार्य शामिल हैं: वस्तुगत दुनिया में परिवर्तन लाना तथा साथ ही अपनी मनोगत दुनिया में भी परिवर्तन लाना – अपनी ज्ञानार्जन शक्ति में तथा मनोगत और वस्तुगत दुनिया के पारस्परिक सम्बन्धों में परिवर्तन लाना। इस तरह का परिवर्तन पृथ्वी के एक भाग, सोवियत संघ, में लाया जा चुका है। वहां के लोग परिवर्तन की इस प्रक्रिया में तेजी ला रहे हैं। चीन और बाकी संसार की जनता या तो परिवर्तन की इस प्रक्रिया से गुजर रही है या गुजरने वाली है। और जिस वस्तुगत दुनिया में परिवर्तन लाना है, उसमें परिवर्तन के विरोधी भी मौजूद हैं, जिन्हें स्वेच्छा से और जागरूक होकर अपने अन्दर परिवर्तन लाने की मंजिल में दाखिल होने से पहले मजबूर होकर अपने अन्दर परिवर्तन लाने की मंजिल से गुजरना पड़ेगा। जब समग्र मानव-जाति स्वेच्छा से और जागरूक होकर अपने अन्दर परिवर्तन लाएगी और दुनिया में परिवर्तन लाएगी, तभी विश्व-कम्युनिज्म के युग का उदय होगा।

व्यवहार से ही सत्य की खोज करना और व्यवहार से ही सत्य को परखना और विकसित करना। इन्द्रियग्राह्य ज्ञान से आरम्भ करना और उसे गत्यात्मक रूप से बुद्धिसंगत ज्ञान में विकसित करना; उसके बाद बुद्धिसंगत ज्ञान से आरम्भ करके गत्यात्मक रूप से क्रान्तिकारी व्यवहार का पथ-प्रदर्शन करना, जिससे कि मनोगत और वस्तुगत दुनिया में परिवर्तन लाया जा सके। व्यवहार, ज्ञान, फिर व्यवहार, फिर ज्ञान। इस क्रम की अनन्त काल तक आवृत्ति होती रहती है और हर आवृत्ति के साथ व्यवहार और ज्ञान की अन्तर्वस्तु और अधिक ऊंचे स्तर पर पहुंचती जाती है। यह है द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का समूचा ज्ञान-सिद्धान्त, यह है द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का जानने और कर्म करने की एकता का सिद्धान्त।

नोट

[१] वी० आई० लेनिन, "हेगेल की रचना 'तर्क-विज्ञान' की रूपरेखा"।

[२] देखिए: कार्ल मार्क्स, "फायरबाख सम्बन्धी स्थापनाएं"; वी० आई० लेनिन, "भौतिकवाद और अनुभवसिद्ध आलोचना", अध्याय २, परिच्छेद ६।

[३] वी० आई० लेनिन, "हेगेल की रचना 'तर्क-विज्ञान' की रूपरेखा"।

[४] "समझ प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि अनुभव के आधार पर समझ प्राप्त करना व अध्ययन करना आरम्भ किया जाए, अनुभवसिद्धि से ऊपर उठकर सार्वभौमिकता के स्तर पर पहुंचा जाए।" (वी० आई० लेनिन, "हेगेल की रचना 'तर्क-विज्ञान' की रूपरेखा")

[5] वी० आई० लेनिन, "क्या करें?", अध्याय १, परिच्छेद ४।

[6] वी० आई० लेनिन, "भौतिकवाद और अनुभवसिद्ध आलोचना", अध्याय २, परिच्छेद ६।

[7] जे० वी० स्तालिन, "लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धान्त", भाग ३।

[8] देखिए: वी० आई० लेनिन, "भौतिकवाद और अनुभवसिद्ध आलोचना", अध्याय २, परिच्छेद ५।

अन्तरविरोध के बारे में*

अगस्त १९३७

वस्तुओं में अन्तरविरोध का नियम, यानी विपरीत तत्वों की एकता का नियम, भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का सबसे बुनियादी नियम है। लेनिन ने कहा था: "वास्तविक अर्थ में, पदार्थों की मूलवस्तु में निहित अन्तरविरोध का अध्ययन ही द्वन्द्ववाद है।"[1] लेनिन प्रायः इस नियम को द्वन्द्ववाद की मूलवस्तु बतलाते थे; उन्होंने इसे द्वन्द्ववाद का केन्द्र-भाग भी कहा है।[2] इसलिए इस नियम का अध्ययन करते समय, यह लाजमी है कि हम अनेक विषयों की, दर्शन की बहुत सी समस्याओं की चर्चा करें। यदि हम इन सारी समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे, तो भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के बारे में हम एक बुनियादी समझ प्राप्त कर लेंगे। ये समस्याएं हैं: दो विश्व-दृष्टिकोण; अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता; अन्तर-

* यह दार्शनिक निबन्ध कामरेड माओ त्सेतुङ ने "व्यवहार के बारे में" शीर्षक अपने निबन्ध के बाद लिखा था, और उक्त निबन्ध के ही समान इस निबन्ध का उद्देश्य भी उन गम्भीर कठमुल्लावादी विचारों को दूर करना था जो उस समय पार्टी में मौजूद थे। यह सबसे पहले येनान में जापान-विरोधी सैनिक व राजनीतिक कालेज में भाषण के रूप में प्रस्तुत किया गया था। संकलित रचनाओं में शामिल करते समय लेखक ने इसमें कुछ जोड़ा, घटाया और संशोधन किया है।

विरोध की विशिष्टता ; प्रधान अन्तरविरोध और अन्तरविरोध का प्रधान पहलू ; अन्तरविरोध के पहलुओं की एकरूपता और उनका संघर्ष ; तथा अन्तरविरोध में शत्रुता का स्थान।

हाल के वर्षों में सोवियत संघ के दार्शनिक क्षेत्रों में देबोरिनपंथी आदर्शवाद की जो आलोचना हुई है, उसने हम लोगों में गहरी दिलचस्पी पैदा कर दी है। देबोरिन के आदर्शवाद ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी पर बहुत बुरा प्रभाव डाला है, और यह नहीं कहा जा सकता कि हमारी पार्टी में कठमुल्लावादी विचार का इस पंथ की विचार-पद्धति के साथ सम्बन्ध न रहा हो। इसलिए हमारे वर्तमान दार्शनिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य कठमुल्लावादी विचार को दूर करना ही होना चाहिए।

१. दो विश्व-दृष्टिकोण

मानव-ज्ञान के इतिहास में विश्व के विकास के नियमों के बारे में हमेशा दो धारणाएं रही हैं, आध्यात्मवादी धारणा और द्वन्द्ववादी धारणा, जिनसे दो परस्पर-विरोधी विश्व-दृष्टिकोण बन जाते हैं। लेनिन ने कहा था :

> विकास (क्रमिक विकास) की दो मूल (अथवा दो सम्भव ? या दो इतिहास में प्रदर्शित ?) धारणाएं हैं : घटती या बढ़ती के रूप में, पुनरावृत्ति के रूप में विकास को देखना, और विपरीत तत्वों की एकता के रूप में विकास को देखना (किसी इकाई का एक दूसरे को बहिष्कृत करने वाले विपरीत तत्वों में विभाजन और उनका पारस्परिक सम्बन्ध)।[३]

लेनिन यहां पर इन्हीं दो भिन्न विश्व-दृष्टिकोणों का उल्लेख कर रहे थे।

चीन में आध्यात्मवाद का एक अन्य नाम है "श्वेन-श्वे"। चाहे चीन में हो अथवा योरप में, इतिहास के एक काफी लम्बे काल तक, यह विचारधारा आदर्शवादी विश्व-दृष्टिकोण का ही एक अंग थी और मानव-चिन्तन में एक प्रभुत्वशाली स्थान पर आसीन रही। योरप में, पूंजीपति वर्ग के शैशव काल का भौतिकवाद भी आध्यात्मिक ही था। जब अनेक योरपीय देशों में सामाजिक अर्थव्यवस्था अत्यन्त विकसित पूंजीवाद की मंजिल पर पहुंच गई, जब उत्पादक शक्तियां, वर्ग-संघर्ष और विज्ञान इतिहास में एक अभूतपूर्व स्तर तक विकसित हो गए, और जब औद्योगिक सर्वहारा वर्ग ऐतिहासिक विकास में सबसे महान प्रेरक शक्ति बन गया, तब मार्क्सवाद के भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के विश्व-दृष्टिकोण का उदय हुआ। तब भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का विरोध करने के लिए, पूंजीपति वर्ग के बीच एक खुले रूप में प्रतिपादित, अत्यन्त नग्न प्रतिक्रियावादी आदर्शवाद के अलावा भोंड़े विकासवाद का भी उदय हुआ।

आध्यात्मवादी विश्व-दृष्टिकोण या भोंड़े विकासवाद का विश्व-दृष्टिकोण वस्तुओं को एक अलग-थलग, स्थिर और एकांगी दृष्टि से देखता है। यह दृष्टिकोण विश्व की तमाम वस्तुओं, उनके रूपों तथा उनकी किस्मों को हमेशा के लिए एक दूसरे से अलग तथा अपरिवर्तनीय मानता है। यदि कोई परिवर्तन हो, तो उसका अर्थ केवल परिमाण में घटती या बढ़ती, अथवा स्थानान्तरण है। इसके अलावा, ऐसी घटती या बढ़ती अथवा स्थानान्तरण का कारण वस्तुओं के अन्दर नहीं, वरन उनके बाहर रहता है, अर्थात वाह्य शक्तियां ही

उन्हें प्रेरित करती हैं। आध्यात्मवादियों का मत है कि विश्व में विभिन्न प्रकार की सभी वस्तुओं तथा उनकी विशिष्टताओं में, उनके अस्तित्व में आने के समय से कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। बाद में यदि कोई परिवर्तन हुआ है, तो वह केवल परिमाण में बढ़ती या घटती ही है। उनका यह दावा है कि कोई वस्तु हमेशा केवल खुद उसी वस्तु के रूप में बार-बार प्रजनित हो सकती है और किसी भिन्न वस्तु में नहीं बदल सकती। उनकी दृष्टि में पूंजीवादी शोषण, पूंजीवादी होड़, पूंजीवादी समाज की व्यक्तिवादी विचारधारा, आदि तमाम बातें प्राचीन काल के दास समाज में, यहां तक कि आदिम समाज में भी पाई जा सकती हैं, और बिना किसी परिवर्तन के हमेशा ही बनी रहेंगी। सामाजिक विकास के कारणों को वे समाज के बाहर की परिस्थितियों में, जैसे भूगोल और जलवायु में, ढूंढ़ते हैं। वे अत्यन्त सरल ढंग से वस्तुओं के विकास के कारणों को वस्तुओं के बाहर ढूंढ़ते हैं और भौतिकवादी द्वन्द्ववाद द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त को ठुकरा देते हैं कि वस्तुओं के भीतर विद्यमान अन्तरविरोध ही उनके विकास का कारण हैं। परिणामस्वरूप, वे न तो वस्तुओं की गुणात्मक विविधता की व्याख्या कर पाते हैं और न ही एक गुण के दूसरे गुण में परिवर्तन की घटना की। योरप में, चिन्तन की यह प्रणाली यांत्रिक भौतिकवाद के रूप में सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में और भोंड़े विकासवाद के रूप में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तथा बीसवीं शताब्दी के शुरू में मौजूद थी। चीन में, आध्यात्मवादी चिन्तनधारा की मिसाल इस उक्ति में देखने को मिलती है: "व्योम नहीं बदलता, इसी तरह ताओ भी नहीं बदलता"[४]। यह चिन्तनधारा लम्बे अरसे तक पतनोन्मुख सामन्ती शासक वर्ग का

प्रश्रय पाती रही। गत सौ वर्षों में योरप से चीन में लाए गए इस यांत्रिक भौतिकवाद तथा भोंड़े विकासवाद को चीनी पूंजीपति वर्ग का समर्थन प्राप्त हुआ है।

आध्यात्मवादी विश्व-दृष्टिकोण के विपरीत, भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के विश्व-दृष्टिकोण का कहना है कि किसी वस्तु के विकास को समझने के लिए उसका अध्ययन भीतर से, अन्य वस्तुओं के साथ उस वस्तु के सम्बन्ध से किया जाना चाहिए; दूसरे शब्दों में वस्तुओं के विकास को उनकी आन्तरिक और आवश्यक आत्म-गति के रूप में देखना चाहिए, और यह कि प्रत्येक गतिमान वस्तु को और उसके इर्द-गिर्द की वस्तुओं को परस्पर सम्बन्धित तथा एक दूसरे को प्रभावित करती हुई वस्तुओं के रूप में देखना चाहिए। किसी वस्तु के विकास का मूल कारण उसके बाहर नहीं बल्कि उसके भीतर होता है; उसके अन्दरूनी अन्तरविरोध में निहित होता है। यह अन्दरूनी अन्तरविरोध हर वस्तु में निहित होता है तथा इसीलिए हर वस्तु गतिमान और विकासशील होती है। किसी वस्तु के भीतर मौजूद अन्तरविरोध ही उसके विकास का मूल कारण होता है, जबकि उसके और अन्य वस्तुओं के बीच के अन्तर-सम्बन्ध और अन्तर-प्रभाव उसके विकास के गौण कारण होते हैं। इस प्रकार भौतिकवादी द्वन्द्ववाद, आध्यात्मवादी यांत्रिक भौतिकवाद और भोंड़े विकासवाद द्वारा प्रतिपादित वाह्य कारणों, या वाह्य प्रेरणा के सिद्धान्त का जोरदार विरोध करता है। जाहिर है कि मात्र वाह्य कारणों से वस्तुओं में केवल यांत्रिक गति ही पैदा हो सकती है, अर्थात उनके पैमाने अथवा मात्रा में ही परिवर्तन हो सकता है, लेकिन उनसे इस बात का खुलासा नहीं हो सकता कि वस्तुओं में हजारों किस्म

के गुणात्मक भेद क्यों होते हैं और क्यों एक वस्तु दूसरी वस्तु में बदल जाती है। वास्तव में किसी वाह्य शक्ति से प्रेरित वस्तुओं की यांत्रिक गति भी उनके आन्तरिक अन्तरविरोध के कारण ही उत्पन्न होती है। वनस्पतियों और जन्तुओं की सहज वृद्धि और उनका परिमाणात्मक विकास भी मुख्यतः उनके आन्तरिक अन्तर-विरोधों के कारण ही होता है। इसी प्रकार, सामाजिक विकास मुख्यतया वाह्य कारणों से नहीं बल्कि आन्तरिक कारणों से होता है। बहुत से देशों की भौगोलिक और वायुमंडलीय परिस्थितियां लगभग एक समान होते हुए भी उनका विकास अत्यन्त भिन्न और असमान रूप से होता है। यही नहीं, किसी देश की भौगोलिक और वायुमंड-लीय परिस्थितियों में कोई परिवर्तन न होने पर भी उसके अन्दर जबरदस्त सामाजिक परिवर्तन हो सकते हैं। साम्राज्यवादी रूस समाजवादी सोवियत संघ में बदल गया और सामन्ती जापान, जो द्वार बन्द करके संसार से अलग-थलग था, साम्राज्यवादी जापान में बदल गया, जबकि इन दोनों देशों की भौगोलिक और वायुमंडलीय परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। चीन में, जो कि एक लम्बे अरसे से सामन्ती व्यवस्था के चंगुल में रहा है, गत सौ वर्षों के दौरान बहुत भारी परिवर्तन हुए हैं और अब वह एक नए, मुक्त और स्वतंत्र चीन की दिशा में परिवर्तित हो रहा है; लेकिन चीन की भौगोलिक और वायुमंडलीय परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। समूची पृथ्वी तथा उसके प्रत्येक भाग की भौगोलिक और वायुमंडलीय परिस्थितियों में परिवर्तन अवश्य होते रहते हैं, किन्तु समाज में होने वाले परिवर्तनों की तुलना में वे बहुत ही नगण्य हैं; भौगोलिक और वायुमंडलीय परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन

जहां दसियों हजार सालों में व्यक्त होते हैं, वहां समाज में होने वाले परिवर्तन केवल हजारों, सैकड़ों, दसियों सालों में और यहां तक कि क्रान्ति के काल में कुछ ही सालों या महीनों में व्यक्त हो जाते हैं। भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के दृष्टिकोण के अनुसार प्रकृति में परिवर्तनों का मुख्य कारण प्रकृति में मौजूद आन्तरिक अन्तरविरोधों का विकास होता है। समाज में परिवर्तनों का मुख्य कारण होता है समाज में मौजूद आन्तरिक अन्तरविरोधों का, अर्थात उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धों के बीच के अन्तरविरोध, वर्गों के बीच के अन्तरविरोध तथा नए और पुराने के बीच के अन्तरविरोध का विकास होना; इन अन्तरविरोधों का विकास ही समाज को आगे बढ़ाता है, तथा पुराने समाज की जगह नए समाज की स्थापना की प्रक्रिया को गति प्रदान करता है। क्या भौतिकवादी द्वन्द्ववाद वाह्य कारणों की भूमिका को नहीं मानता? नहीं, ऐसा कदापि नहीं है। भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का मत है वाह्य कारण परिवर्तन के लिए महज परिस्थिति होते हैं, जबकि आन्तरिक कारण परिवर्तन का आधार होते हैं, तथा वाह्य कारण आन्तरिक कारणों के जरिए ही क्रियाशील होते हैं। अनुकूल तापमान में अंडा चूजे में बदल जाता है, लेकिन ऐसा कोई तापमान नहीं होता जो एक पत्थर को चूजे में बदल दे, कारण अंडे और पत्थर का आधार अलग-अलग होता है। विभिन्न देशों की जनता के बीच निरन्तर पारस्परिक प्रभाव पड़ता रहता है। पूंजीवाद के युग में, विशेषकर साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्ति के युग में, विभिन्न देशों के बीच राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में पारस्परिक प्रभाव तथा अन्तरक्रिया अत्यन्त भारी होते हैं। अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने न केवल रूस के इतिहास

में, बल्कि विश्व के इतिहास में भी एक नए युग का सूत्रपात किया। उसने विश्व के तमाम देशों के आन्तरिक परिवर्तनों पर प्रभाव डाला ; इसी तरह उसने चीन के आन्तरिक परिवर्तनों को और भी गहरे रूप में प्रभावित किया। लेकिन ये परिवर्तन उन देशों के तथा चीन के विकास के आन्तरिक नियमों से ही उत्पन्न हुए थे। युद्ध में एक सेना विजयी होती है और दूसरी पराजित ; विजय और पराजय दोनों ही आन्तरिक कारणों से निश्चित होती हैं। एक सेना विजयी इसलिए होती है कि या तो वह शक्तिशाली है या उसकी कमान सही है ; दूसरी सेना पराजित इसलिए होती है कि या तो वह कमजोर है या उसकी कमान अयोग्य है ; बाह्य कारण आन्तरिक कारणों के जरिए ही क्रियाशील होते हैं। १९२७ में चीन के बड़े पूंजीपतियों के वर्ग ने, स्वयं चीनी सर्वहारा वर्ग के भीतर (चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में) मौजूद अवसरवाद का फायदा उठाकर सर्वहारा वर्ग को पराजित किया। जब हमने इस अवसरवाद को खत्म कर दिया, तो चीनी क्रान्ति फिर आगे बढ़ने लगी। बाद में हमारी पार्टी में दुस्साहसवाद के उदय के कारण, चीनी क्रान्ति को दोबारा दुश्मन के कठोर प्रहारों का शिकार होना पड़ा। जब हमने इस दुस्साहसवाद को खत्म किया, तब हमारा कार्य फिर से एक बार आगे बढ़ चला। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि क्रान्ति को विजय की मंजिल तक पहुंचाने के लिए, किसी राजनीतिक पार्टी को खुद अपनी राजनीतिक कार्यदिशा के सही होने पर और अपने संगठन की मजबूती पर निर्भर होना चाहिए।

द्वन्द्ववादी विश्व-दृष्टिकोण का उदय चीन और योरप दोनों ही जगहों पर प्राचीन काल में ही हो चुका था। किन्तु प्राचीन

द्वन्द्ववाद का स्वरूप बहुत कुछ स्वयंस्फूर्त और सरल था ; उस समय की सामाजिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों में वह एक सैद्धान्तिक व्यवस्था का रूप नहीं ले सका और इसलिए विश्व की पूरी तरह व्याख्या नहीं कर सका और बाद में उसका स्थान आध्यात्मवाद ने ले लिया। प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक हेगेल ने, जिसका जीवन-काल अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों तक था, द्वन्द्ववाद के विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान किया ; पर उसका द्वन्द्ववाद आदर्शवादी द्वन्द्ववाद था। सर्वहारा आन्दोलन के महान कर्मवीर मार्क्स और एंगेल्स ने जब मानव-ज्ञान के इतिहास की सकारात्मक उपलब्धियों का संश्लेषण कर लिया, विशेषकर हेगेल के द्वन्द्ववाद के युक्तिसंगत तत्वों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर उन्हें ग्रहण कर लिया और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद व ऐतिहासिक भौतिकवाद के महान सिद्धान्त की रचना की, तभी मानव-ज्ञान के इतिहास में एक अभूतपूर्व महान क्रान्ति हुई। लेनिन और स्तालिन ने इस महान सिद्धान्त को और अधिक विकसित किया। जब यह सिद्धान्त चीन में पहुंचा, तो उसने चीनी विचार-जगत में जबरदस्त परिवर्तन ला दिया।

यह द्वन्द्वात्मक विश्व-दृष्टिकोण हमें मुख्य रूप में यह सिखाता है कि विभिन्न वस्तुओं में मौजूद अन्तरविरोधों की गति का निरीक्षण और विश्लेषण कुशलता से किया जाना चाहिए, और ऐसे विश्लेषण के आधार पर अन्तरविरोधों को हल करने के तरीकों का पता लगाया जाना चाहिए। इसलिए, यह हमारे लिए अत्यधिक महत्व की बात है कि हम वस्तुओं में अन्तरविरोध के नियम को ठोस रूप से समझ लें।

२. अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता

अपनी व्याख्या को सहज बनाने के लिए, मैं यहां पहले अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता की चर्चा करूंगा, और उसके बाद अन्तरविरोध की विशिष्टता पर विचार करूंगा। इसकी वजह यह है कि अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता की व्याख्या संक्षेप में की जा सकती है, क्योंकि मार्क्सवाद के महान निर्माताओं और उसको आगे बढ़ाने वालों – मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन – ने जब से भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के विश्व-दृष्टिकोण की खोज की और मानव-इतिहास तथा प्राकृतिक इतिहास के विश्लेषण के अनेक पहलुओं पर तथा समाज और प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों के अनेक पहलुओं पर भौतिकवादी द्वन्द्ववाद को बड़ी सफलता के साथ लागू किया (जैसे सोवियत संघ में), तभी से अनेक लोगों ने अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता को स्वीकार किया है; किन्तु अन्तरविरोध की विशिष्टता के बारे में बहुत से साथियों के विचार, विशेषकर कठमुल्लावादियों के विचार अब भी साफ नहीं हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि अन्तरविरोध की विशिष्टता में ही अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता निहित है। वे यह भी नहीं समझ पाते कि हमारे सामने उपस्थित ठोस वस्तुओं में निहित अन्तरविरोध की विशिष्टता का अध्ययन क्रान्तिकारी व्यवहार को आगे बढ़ाने में मार्गदर्शन करने के लिए कितना अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए, अन्तरविरोध की विशिष्टता के अध्ययन पर जोर देना तथा उसकी काफी विस्तार के साथ व्याख्या करना बहुत जरूरी है। इस कारण, वस्तुओं में निहित अन्तरविरोध के नियम का विश्लेषण करते समय हम पहले अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता का विश्लेषण करेंगे, फिर अन्तरविरोध की विशिष्टता के विश्लेषण पर विशेष जोर देंगे और अन्त में अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता पर फिर लौट आएंगे।

अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता या निरपेक्षता के दो अर्थ हैं। एक तो यह कि अन्तरविरोध सभी वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया में मौजूद रहता है और दूसरा यह कि प्रत्येक वस्तु के विकास की प्रक्रिया में अन्तरविरोधों की गति आरम्भ से अन्त तक कायम रहती है।

एंगेल्स ने कहा था: "गति स्वयं एक अन्तरविरोध है।"[१] लेनिन ने विपरीत तत्वों की एकता के नियम की परिभाषा इस प्रकार की थी कि वह "प्रकृति (जिसमें मस्तिष्क और समाज भी शामिल हैं) की सभी घटनाओं और प्रक्रियाओं में अन्तरविरोधपूर्ण, एक दूसरे को बहिष्कृत करने वाली, विपरीत प्रवृत्तियों को मानना (खोज निकालना)"[१] है। क्या ये विचार सही हैं? हां, सही हैं। तमाम वस्तुओं में निहित अन्तरविरोधपूर्ण पहलुओं की अन्तर-निर्भरता तथा उनके बीच का संघर्ष ही उन वस्तुओं के जीवन को निर्धारित करते हैं तथा उनके विकास को आगे बढ़ाते हैं। ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें अन्तरविरोध निहित न हो; अन्तरविरोध के बिना विश्व ही न रहेगा।

अन्तरविरोध गति के साधारण रूपों (मिसाल के लिए यांत्रिक गति) का आधार है और गति के संश्लिष्ट रूपों का आधार तो वह और भी अधिक है।

एंगेल्स ने अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता की इन शब्दों में व्याख्या की है:

यदि साधारण यांत्रिक स्थानान्तरण में अन्तरविरोध निहित है, तो यह बात पदार्थ की गति के उच्चतर रूपों के लिए, विशेषकर प्राणी-जीवन और उसके विकास के लिए और भी अधिक सच है।. . . जीवन प्रथमतः ठीक इसी बात में निहित है कि एक सजीव वस्तु प्रत्येक क्षण स्वयं वही वस्तु रहते हुए भी कुछ और वस्तु होती है। इसलिए जीवन भी एक अन्तरविरोध है जो खुद वस्तुओं और प्रक्रियाओं में मौजूद होता है, और जो लगातार अपने आप उत्पन्न और हल होता रहता है; और ज्यों ही यह अन्तरविरोध खत्म हो जाता है, त्यों ही जीवन का भी अन्त हो जाता है और मृत्यु का आगमन होता है। इसी तरह हमने यह भी देखा कि विचार के क्षेत्र में भी हम अन्तरविरोधों से बच नहीं सकते, और उदाहरण के लिए यह कि मानव जाति की ज्ञानप्राप्ति की स्वभावजन्य असीम क्षमता और मनुष्य द्वारा, जो अपनी बाह्य परिस्थितियों से सीमित होता है और जिसकी बौद्धिक क्षमता भी सीमित होती है, उसकी वास्तविक प्राप्ति के बीच के अन्तर-विरोध का समाधान – कम से कम व्यावहारिक रूप में, हमारे लिए – एक के बाद दूसरी पीढ़ी के अन्तहीन आवर्तन के रूप में, अन्तहीन प्रगति के रूप में होता है।

. . .उच्च गणित-शास्त्र का एक बुनियादी नियम . . . अन्तरविरोध ही है।. . .

पर निम्न गणित-शास्त्र में भी अन्तरविरोधों की भरमार है।*

लेनिन ने अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता की निम्नलिखित मिसालें दी थीं:

गणित-शास्त्र में: + और – ; अवकलन (डिफरेंशियल) और समाकलन (इन्टिगरल)।

यंत्र-विज्ञान में: क्रिया और प्रतिक्रिया।

भौतिक विज्ञान में: धनात्मक विद्युत और ऋणात्मक विद्युत।

रसायन विज्ञान में: परमाणुओं का संघटन और विघटन।

सामाजिक विज्ञान में: वर्ग-संघर्ष।*

युद्ध में, हमला और बचाव, आगे बढ़ना और पीछे हटना, जीत और हार सभी अन्तरविरोधपूर्ण घटनाएं हैं। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नहीं हो सकता। ये दोनों पहलू आपस में संघर्ष भी करते हैं तथा एक दूसरे पर निर्भर भी रहते हैं, यही युद्ध को सम्पूर्ण बनाते हैं, युद्ध के विकास को आगे बढ़ाते हैं तथा युद्ध की समस्याओं को हल करते हैं।

मानव की धारणाओं में पाए जाने वाले प्रत्येक भेद को वस्तुगत अन्तरविरोध के प्रतिबिम्ब के रूप में देखना चाहिए। वस्तुगत अन्तर-विरोध मनोगत चिन्तन में प्रतिबिम्बित होते हैं, यही प्रक्रिया धारणाओं के अन्तरविरोधों की गति की रचना करती है, और अन्तरविरोधों की यह गति चिन्तन के विकास को आगे बढ़ाती है तथा मानव के चिन्तन में उठने वाली समस्याओं को निरन्तर हल करती जाती है।

पार्टी के भीतर, विभिन्न विचारों के बीच विरोध और संघर्ष लगातार चलता रहता है; यह पार्टी के भीतर समाज के विभिन्न वर्गों के बीच के अन्तरविरोधों तथा नए और पुराने के बीच के अन्तरविरोधों को प्रतिबिम्बित करता है। अगर पार्टी के भीतर

अन्तरविरोध न हों और उन्हें हल करने के लिए विचारधारात्मक संघर्ष न चलाए जाएं, तो पार्टी की जिन्दगी खत्म हो जाएगी।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि चाहे गति का रूप साधारण हो या संश्लिष्ट, चाहे वस्तुगत घटना हो या विचारगत, अन्तर-विरोध सार्वभौमिक रूप से तथा सभी प्रक्रियाओं में मौजूद रहता है। किन्तु क्या अन्तरविरोध हर प्रक्रिया की प्रारम्भिक अवस्था में भी मौजूद रहता है? क्या प्रत्येक वस्तु के विकास की प्रक्रिया में आरम्भ से अन्त तक अन्तरविरोधों की गति बनी रहती है?

सोवियत दार्शनिकों द्वारा देबोरिन-पंथ की आलोचना में लिखे गए लेखों से ज्ञात होता है कि देबोरिन-पंथ का दृष्टिकोण यह था कि अन्तरविरोध किसी प्रक्रिया के एकदम आरम्भ में उत्पन्न नहीं होता, बल्कि उसके विकास की एक निश्चित अवस्था में ही प्रकट होता है। अगर बात ऐसी होती तो उस निश्चित अवस्था पर पहुंचने के पहले उस प्रक्रिया का विकास आन्तरिक कारणों से नहीं बल्कि बाह्य कारणों से होता। इस प्रकार देबोरिन बाह्य कारणों और यांत्रिकता के आध्यात्मवादी सिद्धान्त पर लौट जाते हैं। ठोस समस्याओं के विश्लेषण में इस दृष्टिकोण को लागू करके, देबोरिनपंथी इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि सोवियत संघ में वर्तमान परिस्थितियों में कुलकों और आम किसानों के बीच केवल भेद ही है, अन्तरविरोध नहीं, और इस प्रकार वे बुखारिन के मत से पूर्णतया सहमत हो जाते हैं। फ्रांसीसी क्रान्ति का विश्लेषण करते हुए वे यह कहते हैं कि क्रान्ति के पहले थर्ड एस्टेट में, जिसमें मजदूर, किसान और पूंजीपति वर्ग शामिल थे, केवल भेद मौजूद थे, अन्तरविरोध नहीं। देबोरिनपंथियों के ये विचार मार्क्सवाद-विरोधी विचार हैं। वे यह नहीं समझते

कि दुनिया में मौजूद प्रत्येक भेद में पहले से ही एक अन्तरविरोध मौजूद होता है, और यह कि भेद खुद ही अन्तरविरोध है। मजदूरों और पूंजीपतियों के बीच इन दोनों वर्गों के अस्तित्व में आने के समय से ही अन्तरविरोध रहा है, यद्यपि आरम्भ में इस अन्तरविरोध ने उग्र रूप धारण नहीं किया था। यहां तक कि सोवियत संघ की मौजूदा सामाजिक परिस्थितियों के अन्तर्गत भी मजदूरों और किसानों के बीच भेद मौजूद है और यह भेद अन्तरविरोध ही है, यद्यपि यह अन्तरविरोध मजदूरों और पूंजीपतियों के बीच मौजूद अन्तरविरोध से भिन्न है और यह उग्र रूप धारण कर शत्रुता या वर्ग-संघर्ष के रूप में परिवर्तित नहीं होगा; समाजवादी निर्माण के दौरान मजदूरों और किसानों ने सुदृढ़ संश्रय कायम कर लिया है और वे समाजवाद से कम्युनिज्म की दिशा में आगे बढ़ने की प्रक्रिया में इस अन्तरविरोध को कदम-ब-कदम हल कर रहे हैं। सवाल अलग-अलग किस्म के अन्तरविरोधों का है, न कि उनके होने या न होने का। अन्तरविरोध सार्वभौमिक और निरपेक्ष होता है, वह सभी वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया में मौजूद रहता है और सभी प्रक्रियाओं में शुरू से अन्त तक बना रहता है।

किसी नई प्रक्रिया के उदय होने का क्या तात्पर्य है? इसका तात्पर्य है कि जब कोई नई एकता तथा उसके संघटक विपरीत तत्व किसी पुरानी एकता और उसके संघटक विपरीत तत्वों का स्थान लेते हैं, तो पुरानी प्रक्रिया के स्थान पर एक नई प्रक्रिया का उदय होता है। पुरानी प्रक्रिया का अन्त हो जाता है और नई प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इस नई प्रक्रिया में नए अन्तरविरोध होते हैं, और उसके अपने अन्तरविरोधों के विकास का इतिहास शुरू हो जाता है।

जैसा कि लेनिन ने बताया था, मार्क्स ने अपनी पुस्तक "पूंजी" में अन्तरविरोधों की उस गति का आदर्श विश्लेषण किया है जो वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया में शुरू से अन्त तक बनी रहती है। यह एक ऐसा तरीका है जिसे सभी वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया के अध्ययन में लागू करना चाहिए। लेनिन ने खुद भी इस तरीके को सही ढंग से लागू किया था और अपनी सभी रचनाओं में इसे अपनाया था।

> "पूंजी" नामक अपनी रचना में मार्क्स पहले पूंजीवादी (तिजारती माल वाले) समाज के सबसे सरल, सबसे साधारण और बुनियादी, सबसे अधिक प्रचलित और रोजमर्रा के सम्बन्ध का विश्लेषण करते हैं, एक ऐसे सम्बन्ध का जो करोड़ों बार देखने में आता है, यानी माल का विनिमय। इस अति-साधारण घटना (पूंजीवादी समाज की इस "कोशिका") में यह विश्लेषण आधुनिक समाज के सभी अन्तरविरोधों को (या सभी अन्तर-विरोधों के बीजों को) व्यक्त कर देता है। बाद की व्याख्या हमें इन अन्तरविरोधों के और इस समाज के, जो अपने अलग-अलग अंशों की Σ[समष्टि] है, शुरू से अन्त तक के विकास (वृद्धि तथा गति दोनों ही) से अवगत कराती है।

लेनिन ने आगे कहा : "द्वन्द्ववाद की व्याख्या (या अध्ययन) का भी सामान्यतया यही तरीका होना चाहिए।"[६]

चीनी कम्युनिस्टों को यह तरीका सीख लेना चाहिए; केवल तभी वे चीनी क्रान्ति के इतिहास और उसकी वर्तमान स्थिति का सही विश्लेषण कर सकेंगे तथा उसके भविष्य के बारे में अनुमान लगा सकेंगे।

३. अन्तरविरोध की विशिष्टता

अन्तरविरोध सभी वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया में मौजूद है; यह प्रत्येक वस्तु के विकास की प्रक्रिया में शुरू से अन्त तक बना रहता है। यही अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और निरपेक्षता है, जिसकी हमने ऊपर चर्चा की है। अब हम अन्तरविरोध की विशिष्टता और सापेक्षता की चर्चा करेंगे।

इस समस्या को कई पहलुओं से देखना-परखना होगा।

पहली बात तो यह है कि पदार्थ की गति के प्रत्येक रूप में मौजूद अन्तरविरोध की अपनी विशिष्टता होती है। पदार्थ के बारे में मानव का ज्ञान पदार्थ की गति के रूपों का ज्ञान है, कारण यह कि विश्व में गतिमान पदार्थ के अलावा और कुछ नहीं है और पदार्थ की गति निश्चित रूप से कोई न कोई रूप धारण कर लेती है। पदार्थ की गति के प्रत्येक रूप पर विचार करते समय हमें उसके उन तत्वों को ध्यान में रखना होगा जो उसमें तथा गति के अन्य रूपों में समान रूप से मौजूद रहते हैं। लेकिन जो बात विशेष रूप से महत्वपूर्ण है तथा जो वस्तुओं के बारे में हमारे ज्ञान के आधार को नियोजित करती है, वह यह है कि हमें पदार्थ की गति की विशिष्टता को ध्यान में रखना होगा, अर्थात गति के एक रूप और अन्य रूपों के बीच के गुणात्मक भेद को ध्यान में रखना होगा। इस बात को ध्यान में रखकर ही हम वस्तुओं में भेद कर सकते हैं। गति के किसी भी रूप के भीतर उसका अपना विशिष्ट अन्तरविरोध निहित होता है। यह विशिष्ट अन्तरविरोध ही किसी वस्तु की विशिष्ट मूलवस्तु को निर्धारित करता है जिससे वह वस्तु अन्य सभी वस्तुओं से

भिन्न होती है। यही दुनिया की अनगिनत किस्म की वस्तुओं के एक दूसरे से भिन्न होने का आन्तरिक कारण या यों कहा जाए उसका आधार है। प्रकृति में गति के अनेक रूप विद्यमान हैं : यांत्रिक गति, ध्वनि, प्रकाश, ताप, विद्युत, विघटन, संघटन आदि। ये सभी रूप एक दूसरे पर निर्भर होते हैं, लेकिन मूलवस्तु की दृष्टि से ये एक दूसरे से भिन्न होते हैं। गति के प्रत्येक रूप में मौजूद विशिष्ट मूलवस्तु उसके अपने विशिष्ट अन्तरविरोध द्वारा निर्धारित होती है। यह बात केवल प्रकृति पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक और विचारगत घटनाओं पर भी लागू होती है। समाज के प्रत्येक रूप और चिन्तन के प्रत्येक रूप का अपना विशिष्ट अन्तरविरोध होता है और उसकी अपनी विशिष्ट मूलवस्तु होती है।

विज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं का वर्गीकरण ठीक उनके अध्ययन की वस्तुओं में निहित विशिष्ट अन्तरविरोधों पर ही आधारित होता है। इस प्रकार एक खास किस्म के अन्तरविरोध का, जो किसी खास घटना-क्रम के क्षेत्र में निहित होता है, अध्ययन करना विज्ञान की किसी विशेष शाखा की विषय-वस्तु बन जाता है। उदाहरणार्थ, गणित में धनात्मक और ऋणात्मक अंक ; यंत्र-विज्ञान में क्रिया और प्रतिक्रिया ; भौतिक विज्ञान में धनात्मक विद्युत और ऋणात्मक विद्युत ; रसायन विज्ञान में विघटन और संघटन ; सामाजिक विज्ञान में उत्पादक शक्तियां और उत्पादन-सम्बन्ध, वर्ग और वर्ग के बीच का आपसी संघर्ष ; सैन्य-विज्ञान में हमला और बचाव ; दर्शन-शास्त्र में आदर्शवाद और भौतिकवाद, आध्यात्मवादी दृष्टिकोण और द्वन्द्ववादी दृष्टिकोण ; वगैरह-वगैरह – इन सबका विज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं के रूप में

अध्ययन ठीक इसलिए किया जाता है कि इनमें से प्रत्येक शाखा में एक विशेष अन्तरविरोध मौजूद होता है तथा प्रत्येक शाखा में एक विशेष मूलवस्तु मौजूद रहती है। इसमें सन्देह नहीं कि अन्तर-विरोध की सार्वभौमिकता को समझे बिना हम वस्तुओं की गति, वस्तुओं के विकास के सार्वभौमिक कारण या सार्वभौमिक आधार का किसी तरह पता नहीं लगा सकते ; लेकिन अन्तरविरोध की विशिष्टता का अध्ययन किए बिना हम किसी वस्तु की उस विशिष्ट मूलवस्तु का किसी तरह पता नहीं लगा सकते जो उस वस्तु को अन्य वस्तुओं से भिन्न बना देती है, वस्तु की गति, वस्तु के विकास के विशिष्ट कारण या विशिष्ट आधार का पता नहीं लगा सकते, एक वस्तु और दूसरी वस्तु के बीच के अन्तर को नहीं पहचान सकते, और न ही विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के बीच भेद कर सकते हैं।

जहां तक मानव के ज्ञान की गति के क्रम का सम्बन्ध है, वह हमेशा अलग-अलग और विशिष्ट वस्तुओं के ज्ञान से आम वस्तुओं के ज्ञान की दिशा में कदम-ब-कदम विकसित होता है। मनुष्य सामान्यीकरण की ओर केवल तभी बढ़ सकता है और वस्तुओं में सामान्य रूप से मौजूद मूलवस्तु को सिर्फ तभी जान सकता है जब वह पहले अनेक भिन्न-भिन्न वस्तुओं में से प्रत्येक की विशिष्ट मूल-वस्तु को जान ले। जब मनुष्य इस सामान्य मूलवस्तु को जान लेता है, तब वह इस ज्ञान को एक मार्गदर्शक के रूप में प्रयोग करते हुए उन विभिन्न ठोस वस्तुओं का अध्ययन करने की तरफ, जिनका अभी तक अध्ययन नहीं हुआ है या गहन रूप से नहीं हुआ है, आगे बढ़ता है और उनमें से प्रत्येक की विशिष्ट मूलवस्तु का पता लगाता है ; केवल इसी तरह वह उनकी सामान्य मूलवस्तु के बारे में अपने ज्ञान

की पूर्ति कर सकता है, उसे समृद्ध और विकसित कर सकता है, और ऐसे ज्ञान को मुरझाने और पथराने से बचा सकता है। ज्ञानप्राप्ति की ये दो प्रक्रियाएं हैं : एक है विशिष्ट से सामान्य की ओर बढ़ना, और दूसरी है सामान्य से विशिष्ट की ओर बढ़ना। इस प्रकार, मानव का ज्ञान हमेशा, बार-बार चक्के की भांति घूमता हुआ आगे बढ़ता है, और प्रत्येक घुमाव के साथ (यदि वह वैज्ञानिक रीति से पूर्णतया मेल खाता हो) मनुष्य का ज्ञान एक कदम आगे बढ़ता जाता है और इस तरह अधिकाधिक गहन होता जाता है। हमारे कठमुल्लावादी लोग जहां गलती करते हैं वह यह है कि एक तरफ तो वे यह नहीं समझ पाते कि अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और विभिन्न वस्तुओं की सामान्य मूलवस्तु को पर्याप्त रूप से जानने के पहले हमें अन्तरविरोध की विशिष्टता का अध्ययन करना होगा और अलग-अलग वस्तुओं की विशिष्ट मूलवस्तु को जानना होगा ; दूसरी तरफ वे यह नहीं समझ पाते कि वस्तुओं की सामान्य मूलवस्तु को जानने के बाद हमें उन ठोस वस्तुओं के अध्ययन की तरफ कदम बढ़ाना चाहिए जिनका अभी तक गहन अध्ययन नहीं हुआ है, या जो अभी नई-नई पैदा हुई हैं। हमारे कठमुल्लावादी लोग कामचोर हैं। वे ठोस वस्तुओं का मेहनत के साथ अध्ययन करने से इनकार करते हैं, और सामान्य सत्यों को इस तरह देखते हैं मानो वे शून्य से टपक पड़े हों, और उनको ऐसे विशुद्ध अमूर्त फार्मूलों में बदल देते हैं जो लोगों की समझ में नहीं आते, और इस प्रकार वे उस सामान्य क्रम को, जिसके जरिए मानव सत्य तक पहुंचता है, न केवल पूर्णतया ठुकरा देते हैं, बल्कि एकदम उलट भी देते हैं। न ही वे मानव की ज्ञानप्राप्ति की दो प्रक्रियाओं – विशिष्ट से सामान्य और सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होने की प्रक्रियाओं – के अन्तर-सम्बन्धों को समझते हैं। वे मार्क्सवाद के ज्ञान-सिद्धान्त को बिलकुल नहीं समझ पाते।

पदार्थ की गति के रूपों की प्रत्येक वृहत् प्रणाली में निहित विशिष्ट अन्तरविरोधों और उन अन्तरविरोधों से निर्धारित मूलवस्तु का अध्ययन करना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि यह भी आवश्यक है कि पदार्थ की गति के प्रत्येक रूप के विकास के लम्बे दौर में उस की प्रत्येक प्रक्रिया के विशिष्ट अन्तरविरोध और मूलवस्तु का भी अध्ययन किया जाए। गति के प्रत्येक रूप में विकास की वह प्रत्येक प्रक्रिया जो वास्तविक होती है (और काल्पनिक नहीं), गुणात्मक रूप से भिन्न होती है। अपने अध्ययन में हमें इसी बात पर जोर देना और इसी से आरम्भ करना चाहिए।

गुणात्मक रूप से भिन्न अन्तरविरोधों को केवल गुणात्मक रूप से भिन्न तरीकों से ही हल किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर, सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच के अन्तरविरोध को समाजवादी क्रान्ति के तरीके से हल किया जाता है ; विशाल जन-समुदाय और सामन्ती व्यवस्था के बीच के अन्तरविरोध को जनवादी क्रान्ति के तरीके से हल किया जाता है ; उपनिवेशों और साम्राज्यवाद के बीच के अन्तरविरोध को राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध के तरीके से हल किया जाता है ; समाजवादी समाज में मजदूर वर्ग और किसान वर्ग के बीच के अन्तरविरोध को कृषि के समूहीकरण और मशीनीकरण के तरीके से हल किया जाता है ; कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर के अन्तरविरोध को आलोचना और आत्म-आलोचना के तरीके से हल किया जाता है ; समाज और प्रकृति के बीच के अन्तर-

विरोध को उत्पादक शक्तियों का विकास करने के तरीके से हल किया जाता है। प्रक्रियाएं बदलती हैं, पुरानी प्रक्रियाएं और पुराने अन्तरविरोध समाप्त हो जाते हैं, नई प्रक्रियाएं और नए अन्तरविरोध उत्पन्न होते हैं, और उन्हीं के अनुरूप अन्तरविरोधों को हल करने के तरीके भी भिन्न-भिन्न होते हैं। रूस में फरवरी क्रान्ति और अक्तूबर क्रान्ति ने जिन अन्तरविरोधों को हल किया, वे एक दूसरे से मूल रूप से भिन्न थे और उनको हल करने के तरीके भी मूल रूप से भिन्न थे। भिन्न-भिन्न अन्तरविरोधों को हल करने के लिए भिन्न-भिन्न तरीकों को इस्तेमाल करने का उसूल एक ऐसा उसूल है जिसका पालन मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को सख्ती से करना चाहिए। कठमुल्लावादी इस उसूल का पालन नहीं करते ; वे यह नहीं समझते कि विभिन्न क्रान्तियों की परिस्थितियां भी भिन्न होती हैं, परिणाम-स्वरूप वे यह नहीं समझ पाते कि भिन्न-भिन्न अन्तरविरोधों को हल करने के लिए भिन्न-भिन्न तरीकों को इस्तेमाल में लाना चाहिए ; इसके विपरीत वे हमेशा एक ऐसे नुस्खे को अपनाते हैं जिसे वे अपरिवर्तनीय समझते हैं और उसे बिना सोचे-समझे हर जगह लागू करते हैं, जिससे क्रान्ति को नुकसान पहुंचता है या जिस काम को पहले अच्छी तरह किया जा सकता था वह गड़बड़घोटाले में पड़ जाता है।

किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में अन्तरविरोधों की विशिष्टता को उनकी समग्रता, उनके अन्तर-सम्बन्धों की रोशनी में प्रदर्शित करने के लिए, अर्थात उस वस्तु के विकास की प्रक्रिया की मूलवस्तु को प्रदर्शित करने के लिए हमें उस प्रक्रिया के प्रत्येक अन्तर-विरोध के दोनों पहलुओं की विशिष्टता को प्रदर्शित करना होगा ; अन्यथा प्रक्रिया की मूलवस्तु को प्रदर्शित करना असम्भव है। यह भी एक ऐसी बात है जिस पर हमें अपने अध्ययन में अधिकाधिक ध्यान देना चाहिए।

किसी भी बड़ी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में अनेकों अन्तरविरोध होते हैं। उदाहरण के लिए, चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की प्रक्रिया में, जहां की परिस्थिति अत्यन्त जटिल है, चीनी समाज के तमाम उत्पीड़ित वर्गों और साम्राज्यवाद के बीच अन्तरविरोध है, विशाल जन-समुदाय और सामन्ती व्यवस्था के बीच अन्तरविरोध है, सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच अन्तरविरोध है, एक तरफ किसान तथा शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और दूसरी तरफ पूंजीपति वर्ग के बीच अन्तरविरोध है, विभिन्न प्रतिक्रियावादी शासक गुटों के बीच अन्तरविरोध है, वगैरह-वगैरह। इन तमाम अन्तरविरोधों की अपनी-अपनी विशिष्टताएं हैं और इसलिए उन्हें एक ही तराजू से नहीं तोला जा सकता ; यही नहीं, प्रत्येक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं की भी अपनी-अपनी विशिष्टताएं होती हैं और इसलिए उन्हें भी एक जैसा नहीं समझा जा सकता। हम लोगों को, जो चीनी क्रान्ति के लिए काम करते हैं, न केवल अन्तरविरोधों की विशिष्टताओं को उनकी समग्रता, अर्थात उनके अन्तर-सम्बन्धों की रोशनी में समझना चाहिए, बल्कि हम अन्तर-विरोधों की समग्रता को सिर्फ तभी समझ सकते हैं जबकि हम प्रत्येक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं का अध्ययन करें। किसी अन्तरविरोध के प्रत्येक पहलू को समझने का अर्थ है यह समझना कि प्रत्येक पहलू की विशिष्ट स्थिति क्या है, प्रत्येक पहलू कौन से ठोस रूप में अपने विपरीत पहलू के साथ अन्तर-निर्भरता व अन्तर-

विरोध का सम्बन्ध रखता है, और अन्तर-निर्भरता व अन्तरविरोध का सम्बन्ध रखने में तथा अन्तर-निर्भरता के खंडित हो जाने पर प्रत्येक पहलू अपने विपरीत पहलू के खिलाफ किन ठोस तरीकों द्वारा संघर्ष चलाता है। इन समस्याओं का अध्ययन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लेनिन ने जब यह कहा था कि ठोस परिस्थितियों का ठोस रूप में विश्लेषण करना ही मार्क्सवाद की सबसे मूलभूत वस्तु है, मार्क्सवाद की जीती-जागती आत्मा है,[१०] तो वे ठीक इसी विचार को व्यक्त कर रहे थे। हमारे कठमुल्लावादी लोग लेनिन की शिक्षाओं के विरुद्ध चलते हैं; वे किसी भी वस्तु का ठोस विश्लेषण करने में अपने दिमाग से काम नहीं लेते, अपने लेखों तथा भाषणों में वे हमेशा घिसीपिटी शैली का इस्तेमाल करते हैं, जिसमें विषय-वस्तु का बिलकुल अभाव होता है, और इस तरह वे हमारी पार्टी में एक अत्यन्त बुरी कार्यशैली को जन्म देते हैं।

किसी समस्या का अध्ययन करते समय हमें मनोगतवाद, एकांगीपन और उथलेपन से बचना चाहिए। मनोगतवाद का मतलब है समस्याओं को वस्तुगत ढंग से न देखना, अर्थात उन्हें देखते समय भौतिकवादी दृष्टिकोण का इस्तेमाल न करना। इस समस्या पर मैंने "व्यवहार के बारे में" शीर्षक अपने निबन्ध में विचार किया है। एकांगीपन का मतलब है समस्याओं को सर्वांगीण रूप से न देखना। उदाहरण के लिए, केवल चीन को समझना, किन्तु जापान को नहीं; केवल कम्युनिस्ट पार्टी को समझना, किन्तु क्वोमिन्ताङ को नहीं; केवल सर्वहारा वर्ग को समझना, किन्तु पूंजीपति वर्ग को नहीं; केवल किसानों को समझना, किन्तु जमींदारों को नहीं; केवल अनुकूल परिस्थितियों को समझना, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों

को नहीं; केवल अतीत को समझना, किन्तु भविष्य को नहीं; केवल अलग-अलग अंशों को समझना, किन्तु सम्पूर्ण को नहीं; केवल कमियों को समझना, किन्तु उपलब्धियों को नहीं; केवल अभियोक्ता को समझना, किन्तु अभियुक्त को नहीं; केवल भूमिगत क्रान्तिकारी कार्य को समझना, किन्तु खुले क्रान्तिकारी कार्य को नहीं; वगैरह-वगैरह। एक शब्द में, इसका मतलब है किसी अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं की विशिष्टताओं को न समझना। इसी को कहते हैं समस्याओं को एकांगी ढंग से देखना। या यों कहिए कि सम्पूर्ण वस्तु को न देखकर केवल उसके किसी एक अंग को ही देखना, जंगल को न देखकर केवल पेड़ों को ही देखना। यही वजह है कि अन्तरविरोधों को हल करने के तरीके का पता लगाना असम्भव हो जाता है, क्रान्ति के कामों को पूरा करना, जिम्मेदारियों को अच्छी तरह निभाना, अथवा पार्टी के भीतर विचारधारात्मक संघर्ष सही ढंग से चलाना असम्भव हो जाता है। युद्ध-विज्ञान की चर्चा करते हुए सुन ऊ चि ने कहा था: "दुश्मन को पहचानो और खुद अपने को पहचानो, तभी तुम हार का खतरा उठाए बिना सैंकड़ों लड़ाइयां लड़ सकते हो"।[११] वे युद्ध करने वाले दोनों पक्षों की चर्चा कर रहे थे। थाङ वंश के वेइ चङ[१२] भी एकांगीपन की गलती को समझते थे। उन्होंने कहा था: "दोनों पक्षों की बात सुनने से तुम्हारी समझ बढ़ती है, जबकि केवल एक ही पक्ष की बात पर विश्वास करने से तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है"। फिर भी हमारे साथी अक्सर समस्याओं को एकांगी ढंग से ही देखते हैं और इसलिए वे अक्सर ठोकर खाते हैं। "श्वेइ हू च्वान" नामक उपन्यास में सुङ च्याङ तीन बार चू गांव पर हमला करता है[१३] और दो बार पराजित

हो जाता है, क्योंकि उसे स्थानीय परिस्थितियों की कोई जानकारी नहीं थी तथा उसने गलत तरीकों को लागू किया था। बाद में उसने अपने तरीके को बदल डाला ; पहले उसने परिस्थितियों की जांच की, और भूल-भुलैया के रास्तों का पता लगाया, तत्पश्चात उसने ली, हू और चू गांवों के गठजोड़ को छिन्न-भिन्न कर दिया और एक विदेशी कथा में वर्णित ट्रोजन हार्स जैसी चाल के जरिए अपने सैनिकों को भेष बदलकर गुप्त रूप से शत्रु के शिविर में प्रवेश करा दिया। इसके बाद तीसरी मुठभेड़ में उसने विजय प्राप्त कर ली। "श्वेइ हू च्वान" में भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के अनेक उदाहरण हैं, जिनमें चू गांव पर तीन हमलों वाली घटना को एक बेहतरीन मिसाल माना जा सकता है। लेनिन ने कहा है :

> ...किसी पदार्थ को सही मायनों में जानने के लिए हमें उसके सभी पहलुओं, सभी सम्बन्धों और सभी "माध्यमों" को अंगीकार करना होगा, उनका अध्ययन करना होगा। हालांकि ऐसा हम पूर्ण रूप से कभी नहीं कर पाएंगे, फिर भी सर्वांगीणता की मांग हमें गलतियों और गैरलचीलेपन से बचाएगी।[१४]

हमें लेनिन के शब्दों को याद रखना चाहिए। उथलेपन का मतलब है न तो अन्तरविरोधों की समग्रता की विशिष्टताओं पर विचार करना और न प्रत्येक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं की विशिष्टताओं पर विचार करना ; इसका मतलब है किसी वस्तु की बड़ी गहराई से छानबीन करने और उसके अन्तरविरोधों की विशिष्टताओं का बड़ी बारीकी से अध्ययन करने की आवश्यकता से इनकार करना, तथा उन पर दूर से महज एक सरसरी नजर डालकर और महज

उनकी रूपरेखा पर नजर मारते ही उन्हें हल करने (किसी प्रश्न का उत्तर देने, किसी विवाद को निपटाने, किसी काम को पूरा करने, अथवा किसी फौजी कार्यवाही का निर्देशन करने) की कोशिश करने लग जाना। काम करने का यह तरीका हमें अनिवार्य रूप से झंझट में डाल देगा। चीनी कठमुल्लावादी और अनुभववादी साथियों ने ये गलतियां ठीक इसीलिए की हैं कि वे वस्तुओं को मनोगत, एकांगी और उथले ढंग से देखते हैं। एकांगीपन और उथलापन ये दोनों मनोगतवाद ही हैं। हालांकि सभी वस्तुगत पदार्थ वास्तव में एक दूसरे से सम्बन्धित और आन्तरिक नियमों से नियंत्रित होते हैं, फिर भी कुछ लोग वस्तुओं को सही रूप में प्रतिबिम्बित करने के बदले उन्हें केवल एकांगी या उथले ढंग से ही देखते हैं तथा न तो उनके अन्तर-सम्बन्धों को समझते हैं और न उनके आन्तरिक नियमों को, और इस प्रकार उनका तरीका मनोगतवादी हो जाता है।

हमें न केवल किसी वस्तु के विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान अन्तरविरोधों की गति में उनके अन्तर-सम्बन्धों और उनके प्रत्येक पहलू की विशिष्टताओं पर ध्यान देना चाहिए, बल्कि विकास की प्रक्रिया में प्रत्येक मंजिल की भी अपनी विशिष्टताएं होती हैं, जिन पर हमें ध्यान देना चाहिए।

किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में निहित मूल अन्तरविरोध और इस मूल अन्तरविरोध द्वारा निर्धारित उस प्रक्रिया की मूलवस्तु तब तक समाप्त नहीं होगी, जब तक कि वह प्रक्रिया पूरी नहीं हो जाती ; किन्तु किसी वस्तु के विकास की लम्बी प्रक्रिया में प्रत्येक मंजिल की परिस्थितियां अक्सर दूसरी मंजिल से भिन्न होती हैं। ऐसा इसलिए होता है कि किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में निहित

मूल अन्तरविरोध का स्वरूप और उस प्रक्रिया की मूलवस्तु यद्यपि नहीं बदलती, फिर भी विकास की लम्बी प्रक्रिया की विभिन्न मंजिलों में मूल अन्तरविरोध उत्तरोत्तर उग्र रूप धारण करता जाता है। इसके अलावा, मूल अन्तरविरोध द्वारा निर्धारित या प्रभावित अनेक बड़े और छोटे अन्तरविरोधों में से कुछ अन्तरविरोध उग्र रूप धारण करते हैं, कुछ तो अस्थाई अथवा आंशिक रूप से हल हो जाते हैं या मन्दे पड़ जाते हैं, और कुछ नए अन्तरविरोध सामने आ जाते हैं; इसलिए यह प्रक्रिया भिन्न-भिन्न मंजिलों से गुजरती हुई प्रकट होती है। यदि लोग किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में उसकी विभिन्न मंजिलों की तरफ ध्यान नहीं देते, तो वे उसके अन्तरविरोधों को उचित ढंग से हल नहीं कर सकते।

उदाहरण के लिए, जब स्वच्छंद होड़ के युग के पूंजीवाद ने विकसित होकर साम्राज्यवाद का रूप धारण किया, तो मूल अन्तर-विरोध वाले दो वर्गों, अर्थात सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के वर्ग-स्वरूप में, या ऐसे समाज की पूंजीवादी मूलवस्तु में कोई परिवर्तन नहीं आया; फिर भी, इन दोनों वर्गों के बीच के अन्तरविरोध ने उग्र रूप धारण कर लिया, इजारेदार पूंजी और गैर-इजारेदार पूंजी के बीच के अन्तरविरोध का उदय हुआ, उपनिवेशवादी देशों और उपनिवेशों के बीच के अन्तरविरोध और अधिक उग्र हो गए तथा पूंजीवादी देशों के बीच के अन्तरविरोध, अर्थात उनके असमान विकास के कारण पैदा हुए अन्तरविरोध, खास तौर से उग्र रूप में प्रकट हुए, और इस प्रकार पूंजीवाद की विशेष मंजिल, साम्राज्यवाद की मंजिल का प्रादुर्भाव हुआ। लेनिनवाद साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्ति के युग का मार्क्सवाद इसीलिए है, क्योंकि लेनिन

और स्तालिन ने इन अन्तरविरोधों की सही व्याख्या की है और उन्हें हल करने के लिए सर्वहारा क्रान्ति के सिद्धान्त और कार्यनीति का सही निरूपण किया है।

चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति, जिसका सूत्रपात १९११ की क्रान्ति से हुआ था, की प्रक्रिया को ही लीजिए; इसकी भी कई खास मंजिलें हैं। खास तौर से पूंजीपति वर्ग के नेतृत्व-काल में क्रान्ति की मंजिल और सर्वहारा नेतृत्व-काल में क्रान्ति की मंजिल क्रान्ति की दो अत्यन्त भिन्न ऐतिहासिक मंजिलों का प्रतिनिधित्व करती हैं। दूसरे शब्दों में, सर्वहारा नेतृत्व ने क्रान्ति के रूप को मूल रूप से बदल दिया है, वर्ग-सम्बन्धों की एक नई पांतबन्दी की है, किसान क्रान्ति में जबरदस्त उभार पैदा कर दिया है, साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरुद्ध मुकम्मिल क्रान्ति का सूत्रपात किया है, जनवादी क्रान्ति से समाजवादी क्रान्ति में संक्रमण की सम्भावना को जन्म दिया है, वगैरह-वगैरह। यह सब कुछ उस काल में सम्भव नहीं था जब क्रान्ति का नेतृत्व पूंजीपति वर्ग के हाथों में था। यद्यपि सम्पूर्ण प्रक्रिया के मूल अन्तरविरोध के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, अर्थात प्रक्रिया के साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी, जनवादी-क्रान्तिकारी स्वरूप में (जिसका विपरीत तत्व अर्ध-औपनिवेशिक, अर्ध-सामन्ती स्वरूप है) कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, फिर भी बीस वर्ष से ज्यादा समय में यह प्रक्रिया विकास की कई मंजिलों से गुजरी है; इस काल के दौरान अनेक बड़ी घटनाएं घटी हैं–जैसे १९११ की क्रान्ति की असफलता और उत्तरी युद्ध-सरदारों के शासन की स्थापना, प्रथम राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की स्थापना और १९२४-२७ की क्रान्ति, संयुक्त मोर्चे का विघटन

और पूंजीपति वर्ग का प्रतिक्रान्तिकारी शिविर में पलायन, नए युद्ध-सरदारों के बीच की लड़ाइयां, भूमि-क्रान्ति युद्ध, द्वितीय राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की स्थापना और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध। इन मंजिलों की ये विशेषताएं हैं : कुछ अन्तरविरोधों का अधिक उग्र रूप धारण करना (मिसाल के लिए, भूमि-क्रान्ति युद्ध और चार उत्तर-पूर्वी प्रान्तों पर जापानी अतिक्रमण), कुछ अन्तरविरोधों का आंशिक या अस्थाई रूप से हल हो जाना (मिसाल के लिए, उत्तरी युद्ध-सरदारों का खात्मा और हमारे द्वारा जमींदारों की जमीन का जब्त किया जाना), और कुछ अन्य अन्तरविरोधों का फिर प्रकट हो जाना (मिसाल के लिए, नए युद्ध-सरदारों के बीच संघर्ष, हमारे हाथों से दक्षिण के क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों के निकल जाने पर जमींदारों द्वारा जमीन पर फिर से कब्जा किया जाना)।

किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में प्रत्येक मंजिल पर अन्तर-विरोधों की विशिष्टताओं का अध्ययन करते समय, हमें न केवल उन्हें इन अन्तरविरोधों के अन्तर-सम्बन्धों अथवा इनकी समग्रता में देखना चाहिए, बल्कि प्रत्येक मंजिल में निहित प्रत्येक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं को भी देखना चाहिए।

मिसाल के लिए, क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी पर ही गौर कीजिए। उसके एक पहलू क्वोमिन्ताङ को लीजिए। प्रथम संयुक्त मोर्चे के काल में क्वोमिन्ताङ ने रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और मजदूर-किसानों की सहायता, सुन यात-सेन की इन तीन महान नीतियों पर अमल किया; इसलिए वह क्रान्तिकारी और शक्ति से ओतप्रोत हो गई थी, वह जनवादी

क्रान्ति के लिए विभिन्न वर्गों का संश्रय बन गई थी। किन्तु १९२७ से क्वोमिन्ताङ अपने विपरीत तत्व में बदलकर जमींदार वर्ग तथा बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का प्रतिक्रियावादी गुट बन गई। दिसम्बर १९३६ में शीआन घटना के बाद, उसके अन्दर गृहयुद्ध को बन्द करने तथा जापानी साम्राज्यवाद का संयुक्त रूप से विरोध करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करने की दिशा में परिवर्तन शुरू हुआ। यही हैं इन तीन मंजिलों में क्वोमिन्ताङ की विशिष्टताएं। इसमें शक नहीं कि ये विशिष्टताएं विभिन्न कारणों से पैदा हुईं। अब हम दूसरे पहलू, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को लेते हैं। प्रथम संयुक्त मोर्चे के काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपनी शैशवावस्था में थी; १९२४-२७ की क्रान्ति का उसने साहस के साथ नेतृत्व किया, किन्तु जहां तक क्रान्ति के स्वरूप, उसके कार्य और तरीकों के बारे में उसकी समझ का सवाल है, उसने अपनी अपरिपक्वता का परिचय दिया, और फलस्वरूप छन तु-श्यूवाद, जो इस क्रान्ति के उत्तरार्ध में प्रकट हुआ था, अपना असर डालने और इस क्रान्ति को असफल करने में कामयाब हुआ। १९२७ से, कम्युनिस्ट पार्टी ने फिर भूमि-क्रान्ति युद्ध का साहस के साथ नेतृत्व किया और क्रान्ति-कारी फौज तथा क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों की स्थापना की; किन्तु उसने दुस्साहसवाद की गलतियां भी कीं, जिनसे फौज और आधार-क्षेत्रों दोनों को ही भारी नुकसान उठाना पड़ा। १९३५ से पार्टी ने अपनी इन गलतियों को दुरुस्त कर लिया है और वह जापान-विरोधी नए संयुक्त मोर्चे का नेतृत्व कर रही है; इस महान संघर्ष का अब विकास हो रहा है। वर्तमान मंजिल में, कम्युनिस्ट पार्टी एक ऐसी पार्टी है जो दो क्रान्तियों की परीक्षा से गुजर चुकी है और

जिसने समृद्ध अनुभव प्राप्त कर लिए हैं। यही हैं इन तीन मंजिलों में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की विशिष्टताएं। ये विशिष्टताएं भी विभिन्न कारणों से पैदा हुई हैं। इन दोनों तरह की विशिष्टताओं का अध्ययन किए बिना हम विकास की विभिन्न मंजिलों में दोनों पार्टियों के विशिष्ट सम्बन्धों को – अर्थात संयुक्त मोर्चे की स्थापना, संयुक्त मोर्चे का विघटन, और एक अन्य संयुक्त मोर्चे की स्थापना को – नहीं समझ सकते। यही नहीं, दोनों पार्टियों की विशिष्टताओं का अध्ययन करने के लिए और भी ज्यादा बुनियादी बात यह है कि हमें दोनों पार्टियों के वर्ग-आधार का तथा इसके फलस्वरूप उन दोनों में से प्रत्येक पार्टी तथा अन्य शक्तियों के बीच विभिन्न कालों में पैदा हुए अन्तरविरोधों का अध्ययन करना चाहिए। उदाहरण के लिए, कम्युनिस्ट पार्टी के साथ अपने पहले सहयोग के काल में क्वोमिन्ताङ का एक ओर तो विदेशी साम्राज्यवाद के साथ अन्तर-विरोध था और इसलिए वह साम्राज्यवाद-विरोधी थी; दूसरी ओर उसका खुद अपने देश में विशाल जन-समुदाय के साथ अन्तर-विरोध था, और हालांकि मेहनतकश जनता को वह अनेक सुविधाएं देने के हवाई वायदे करती रहती थी, किन्तु वास्तव में या तो बहुत कम सुविधाएं देती थी, या बिलकुल भी नहीं देती थी। उस काल में जबकि क्वोमिन्ताङ कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध चला रही थी, उसने विशाल जन-समुदाय के विरुद्ध साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के साथ गठजोड़ कायम किया और क्रान्ति में विशाल जन-समुदाय ने जो उपलब्धियां हासिल की थीं, उन सबको खत्म कर दिया और इस प्रकार उसने विशाल जन-समुदाय के साथ अपने अन्तरविरोध को उग्र बना दिया। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के वर्तमान काल

में क्वोमिन्ताङ, जिसका जापानी साम्राज्यवाद के साथ अन्तरविरोध है, एक ओर तो कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करना चाहती है, लेकिन दूसरी ओर कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता के विरुद्ध अपने संघर्ष में तथा उनके दमन में कोई भी कमी नहीं आने देती। जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी का ताल्लुक है, उसने हमेशा, हर दौर में, साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरुद्ध विशाल जन-समुदाय का ही साथ दिया है, लेकिन जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के वर्तमान काल में चूंकि क्वोमिन्ताङ ने यह जाहिर किया है कि वह जापान का प्रतिरोध करने के हक में है, इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी ने उसकी ओर तथा घरेलू सामन्ती शक्तियों की ओर एक नरम नीति अपनाई है। इन परिस्थितियों ने दोनों पार्टियों के बीच कभी संश्रय तो कभी संघर्ष को जन्म दिया, और संश्रय कायम होने के दौरान भी परिस्थिति बड़ी जटिल रही जिसमें संश्रय तथा संघर्ष एक साथ चलते रहे। यदि हम अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं की विशिष्टताओं का अध्ययन नहीं करते, तो हम न केवल दोनों पार्टियों में से प्रत्येक पक्ष और अन्य शक्तियों के बीच के सम्बन्धों को नहीं समझ सकेंगे, बल्कि दोनों पार्टियों के बीच के सम्बन्धों को भी समझने में असमर्थ रहेंगे।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी तरह के अन्तर-विरोध – पदार्थ की गति के प्रत्येक रूप में निहित अन्तरविरोध, गति के प्रत्येक रूप के विकास की हरेक प्रक्रिया में निहित अन्तर-विरोध, विकास की प्रत्येक प्रक्रिया में निहित हरेक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं, विकास की प्रत्येक प्रक्रिया की हरेक मंजिल में निहित अन्तरविरोध, और विकास की प्रत्येक मंजिल में निहित हरेक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं – की विशिष्टता का अध्ययन

करते समय, यानी इन तमाम अन्तरविरोधों की विशिष्टताओं का अध्ययन करते समय, हमें मनोगतवादी स्वेच्छाचारिता से सर्वथा मुक्त रहना चाहिए और उनका ठोस विश्लेषण करना चाहिए। ठोस विश्लेषण किए बिना किसी भी अन्तरविरोध की विशिष्टता के बारे में कोई जानकारी हासिल नहीं की जा सकती। हमें लेनिन के इन शब्दों को हमेशा याद रखना चाहिए : ठोस वस्तुओं का ठोस विश्लेषण।

सबसे पहले मार्क्स और एंगेल्स ने ही हमें ऐसे ठोस विश्लेषण के उत्कृष्ट नमूने प्रदान किए।

जब मार्क्स और एंगेल्स ने वस्तुओं में निहित अन्तरविरोध के नियम को सामाजिक-ऐतिहासिक प्रक्रिया के अध्ययन पर लागू किया, तो उन्होंने उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धों के बीच के अन्तरविरोध का पता लगा लिया, उन्होंने शोषक वर्ग और शोषित वर्ग के बीच के अन्तरविरोध का पता लगा लिया, तथा इन अन्तरविरोधों से पैदा हुए आर्थिक आधार और ऊपरी ढांचे (राजनीति, विचारधारा इत्यादि) के बीच के अन्तरविरोध का पता लगा लिया, और उन्होंने यह पता लगा लिया कि ये अन्तरविरोध भिन्न-भिन्न वर्ग-समाजों में किस तरह अनिवार्य रूप से भिन्न-भिन्न सामाजिक क्रान्तियों को जन्म देते हैं।

जब मार्क्स ने इस नियम को पूंजीवादी समाज के आर्थिक रचना-विधान के अध्ययन पर लागू किया, तो उन्होंने देखा कि इस समाज का मूल अन्तरविरोध उत्पादन के सामाजिक स्वरूप और मिलकियत के निजी स्वरूप के बीच का अन्तरविरोध है। इस अन्तरविरोध की अभिव्यक्ति अलग-अलग कारोबारों में उत्पादन के संगठित स्वरूप

और समूचे समाज में उत्पादन के असंगठित स्वरूप के बीच के अन्तरविरोध में होती है। वर्ग-सम्बन्धों की दृष्टि से, इसकी अभिव्यक्ति पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच के अन्तरविरोध में होती है।

चूंकि वस्तुओं का दायरा अत्यन्त विस्तृत होता है और उनके विकास की कोई सीमा नहीं होती, इसलिए एक विशेष स्थिति में जो बात सार्वभौमिकता की द्योतक होती है, वही दूसरी विशेष स्थिति में विशिष्टता में बदल जाती है। इसके विपरीत, एक विशेष स्थिति में जो बात विशिष्टता की द्योतक होती है, वही दूसरी विशेष स्थिति में सार्वभौमिक बन जाती है। पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन के सामाजिक स्वरूप और उत्पादन के साधनों पर निजी मिलकियत के बीच जो अन्तरविरोध निहित है, वह उन सभी देशों में समान रूप से मौजूद है जहां पूंजीवाद का अस्तित्व है तथा उसका विकास हो रहा है ; पूंजीवाद के लिए अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता इसी में निहित है। किन्तु, पूंजीवाद का यह अन्तरविरोध वर्ग-समाज के आम विकास की एक विशेष ऐतिहासिक मंजिल की चीज है ; जहां तक समूचे वर्ग-समाज में उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धों के बीच के अन्तरविरोध का सवाल है, वह अन्तरविरोध की विशिष्टता है। किन्तु पूंजीवादी समाज में इन तमाम अन्तरविरोधों का विश्लेषण करके उनकी विशिष्टता को स्पष्ट करते हुए, मार्क्स ने और भी गहराई से, और भी विशद रूप से तथा और भी पूर्णता के साथ आम वर्ग-समाज में मौजूद उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धों के बीच के अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता पर रोशनी डाली है।

चूंकि विशिष्ट सामान्य के साथ सम्बद्ध होता है, और चूंकि अन्तरविरोध की विशिष्टता के साथ-साथ उसकी सार्वभौमिकता भी प्रत्येक वस्तु में निहित होती है, तथा सार्वभौमिकता विशिष्टता में निहित होती है, इसलिए किसी वस्तु का अध्ययन करते समय हमें उस वस्तु के अन्दर ही विशिष्ट और सामान्य का तथा उनके अन्तर-सम्बन्धों का पता लगाने का प्रयत्न करना चाहिए, विशिष्टता और सार्वभौमिकता का तथा उनके अन्तर-सम्बन्धों का पता लगाने का प्रयत्न करना चाहिए, तथा उस वस्तु के और उसके बाहर की अनेक वस्तुओं के अन्तर-सम्बन्धों का पता लगाने का भी प्रयत्न करना चाहिए। जब स्तालिन ने अपनी प्रसिद्ध रचना "लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धान्त" में लेनिनवाद के ऐतिहासिक उद्‌गम की व्याख्या की, तो उन्होंने उस अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति का विश्लेषण किया जिसमें लेनिनवाद का जन्म हुआ था, साथ ही उन्होंने पूंजीवाद के उन विभिन्न अन्तरविरोधों का भी विश्लेषण किया जो साम्राज्यवाद की परिस्थितियों में अपनी चरम अवस्था पर पहुंच चुके थे, और यह स्पष्ट किया कि किस प्रकार इन अन्तरविरोधों ने सर्वहारा क्रान्ति के सवाल को एक फौरी कार्यवाही का सवाल बना दिया है, और पूंजीवाद पर सीधा हमला बोल देने के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा कर दी हैं। यही नहीं, उन्होंने अपने विश्लेषण द्वारा उन कारणों को भी स्पष्ट किया जिनसे रूस लेनिनवाद का हिंडोला बन गया, जारशाही रूस साम्राज्यवाद के तमाम अन्तरविरोधों का केन्द्र-बिन्दु बन गया, तथा रूसी सर्वहारा वर्ग अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग का हिरावल दस्ता बन गया। इस तरह, स्तालिन ने साम्राज्यवाद में निहित अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता का विश्लेषण

करते हुए यह दिखाया कि किस तरह लेनिनवाद साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्ति के युग का मार्क्सवाद है, और इसके साथ-साथ उन्होंने साम्राज्यवाद के इस आम अन्तरविरोध में जारशाही रूसी साम्राज्यवाद की विशिष्टता का विश्लेषण करते हुए यह दिखाया कि किस तरह रूस सर्वहारा क्रान्ति के सिद्धान्त और कार्यनीति की जन्मभूमि बना और किस तरह ऐसी विशिष्टता में अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता निहित है। स्तालिन द्वारा किया गया यह विश्लेषण अन्तरविरोध की विशिष्टता और सार्वभौमिकता तथा उनके अन्तर-सम्बन्धों को समझने में हमारे लिए एक आदर्श उपस्थित करता है।

वस्तुगत घटनाओं के अध्ययन में द्वन्द्ववाद को लागू करने के सवाल पर मार्क्स और एंगेल्स ने, और उसी तरह लेनिन और स्तालिन ने भी, लोगों को हमेशा यह सिखाया कि उन्हें किसी भी तरह की मनोगतवादी स्वेच्छाचारिता को काम में नहीं लाना चाहिए, बल्कि वास्तविक वस्तुगत गति की ठोस परिस्थितियों के बीच से इन घटनाओं में निहित ठोस अन्तरविरोधों को, प्रत्येक अन्तरविरोध के हरेक पहलू की ठोस भूमिका को, तथा अन्तरविरोधों के ठोस अन्तर-सम्बन्धों को ढूंढ़ निकालना चाहिए। हमारे कठमुल्लावादी लोग अपने अध्ययन में यह रवैया नहीं अपनाते और इसलिए उनकी कोई बात कभी ठीक नहीं हो सकती। हमें उनकी असफलता से सबक लेना चाहिए और उपरोक्त रवैया अपनाना सीख लेना चाहिए, जो अध्ययन का एकमात्र सही तरीका है।

अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और अन्तरविरोध की विशिष्टता के बीच का सम्बन्ध अन्तरविरोध के सामान्य स्वरूप और व्यक्तिगत स्वरूप के बीच का सम्बन्ध है। अन्तरविरोध के सामान्य स्वरूप से

हमारा तात्पर्य यह है कि अन्तरविरोध सभी प्रक्रियाओं में मौजूद है और सभी प्रक्रियाओं में शुरू से अन्त तक बना रहता है ; गति, वस्तुएं, प्रक्रियाएं, विचार – ये सभी अन्तरविरोध हैं। अन्तरविरोध से इनकार करना हर बात से इनकार करना है। यह एक ऐसा सार्वभौमिक सत्य है जो सभी कालों और सभी देशों के लिए मान्य है, जिसका कोई अपवाद नहीं है। यही वजह है कि अन्तरविरोध का सामान्य स्वरूप होता है, उसमें निरपेक्षता होती है। किन्तु यह सामान्य स्वरूप प्रत्येक व्यक्तिगत स्वरूप में पाया जाता है ; बिना व्यक्तिगत स्वरूप के सामान्य स्वरूप का अस्तित्व सम्भव नहीं। यदि तमाम व्यक्तिगत स्वरूपों को हटा दिया जाए, तो भला कैसा सामान्य स्वरूप बचा रह जाएगा? व्यक्तिगत स्वरूपों की रचना इसीलिए होती है कि प्रत्येक अन्तरविरोध विशिष्ट होता है। सभी व्यक्तिगत स्वरूपों का अस्तित्व परिस्थितिबद्ध और अस्थाई होता है, इसलिए वे सापेक्ष होते हैं।

सामान्य स्वरूप और व्यक्तिगत स्वरूप, निरपेक्षता और सापेक्षता, के बारे में यह सच्चाई वस्तुओं में मौजूद अन्तरविरोध की समस्या का सार है ; इसे न समझने का अर्थ है द्वन्द्ववाद को तिलांजलि दे देना।

४. प्रधान अन्तरविरोध और अन्तरविरोध का प्रधान पहलू

अन्तरविरोध की विशिष्टता की समस्या में और दो बातें ऐसी हैं जिनका एक-एक करके विशेष रूप से विश्लेषण किया जाना

चाहिए। ये दोनों हैं : प्रधान अन्तरविरोध और अन्तरविरोध का प्रधान पहलू।

किसी वस्तु के विकास की जटिल प्रक्रिया में अनेक अन्तरविरोध होते हैं ; इनमें अनिवार्य रूप से एक प्रधान अन्तरविरोध होता है जिसका अस्तित्व और विकास अन्य अन्तरविरोधों के अस्तित्व और विकास को निर्धारित या प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए, पूंजीवादी समाज में दो अन्तरविरोधपूर्ण शक्तियों, सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग, के बीच का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध होता है ; अन्य अन्तरविरोध – उदाहरण के लिए, बचे-खुचे सामन्ती वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच का अन्तरविरोध, निम्न-पूंजीपति वर्ग के किसानों और पूंजीपति वर्ग के बीच का अन्तरविरोध, सर्वहारा वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के किसानों के बीच का अन्तरविरोध, गैर-इजारेदार पूंजीपति वर्ग और इजारेदार पूंजीपति वर्ग के बीच का अन्तरविरोध, पूंजीवादी जनवाद और पूंजीवादी फासिस्टवाद के बीच का अन्तरविरोध, खुद पूंजीवादी देशों के बीच का अन्तरविरोध, साम्राज्यवाद और उपनिवेशों के बीच का अन्तरविरोध, आदि इसी प्रधान अन्तरविरोध से निर्धारित या प्रभावित होते हैं।

चीन जैसे अर्ध-औपनिवेशिक देशों में प्रधान अन्तरविरोध और अप्रधान अन्तरविरोधों के बीच के सम्बन्ध एक जटिल परिस्थिति उपस्थित करते हैं।

साम्राज्यवाद जब ऐसे देश के खिलाफ हमलावर युद्ध छेड़ देता है, तो उस देश के विभिन्न वर्ग, कुछ देशद्रोहियों को छोड़कर, साम्राज्यवाद के विरुद्ध राष्ट्रीय युद्ध चलाने के लिए अस्थाई रूप से

एकताबद्ध हो सकते हैं। ऐसे समय में साम्राज्यवाद और उस देश के बीच का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध बन जाता है, जबकि देश के अन्दर के विभिन्न वर्गों के बीच के सभी अन्तरविरोधों (जिनमें यह प्रधान अन्तरविरोध – सामन्ती व्यवस्था और विशाल जन-समुदाय के बीच का अन्तरविरोध – भी शामिल है) की स्थिति अस्थाई रूप से गौण अथवा अधीनता की हो जाती है। १८४० के अफीम युद्ध में, १८९४ के चीन-जापान युद्ध में और १९०० के ई हो थ्वान युद्ध में चीन में यही हुआ था, और वर्तमान चीन-जापान युद्ध में भी यही हो रहा है।

किन्तु एक भिन्न अवस्था में अन्तरविरोधों की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है। जब साम्राज्यवाद अपने उत्पीड़न को जारी रखने के लिए युद्ध को नहीं, बल्कि अपेक्षाकृत नरम तरीकों – राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तरीकों – को इस्तेमाल में लाता है, तब अर्ध-औपनिवेशिक देशों के शासक वर्ग साम्राज्यवाद के सामने घुटने टेक देते हैं; वे दोनों ही विशाल जन-समुदाय का संयुक्त रूप से उत्पीड़न करने के लिए गठजोड़ कायम कर लेते हैं। ऐसी स्थिति में साम्राज्यवाद और सामन्ती वर्ग के इस गठजोड़ का विरोध करने के लिए विशाल जन-समुदाय अक्सर गृहयुद्ध का रास्ता अपनाता है, और साम्राज्यवाद अक्सर अर्ध-औपनिवेशिक देशों में प्रत्यक्ष कार्यवाही करने के बजाय जनता का उत्पीड़न करने के लिए प्रतिक्रियावादियों को परोक्ष रूप में सहायता देता है; और इस प्रकार आन्तरिक अन्तरविरोध विशेष रूप से तीव्र हो जाते हैं। १९११ के क्रान्तिकारी युद्ध में, १९२४-२७ के क्रान्तिकारी युद्ध में, और १९२७ से चल रहे दस वर्षों के भूमि-क्रान्ति युद्ध में चीन में ऐसा

ही हुआ। अर्ध-औपनिवेशिक देशों में विभिन्न प्रतिक्रियावादी शासक गुटों के बीच होने वाले गृहयुद्ध भी, जैसे चीन में युद्ध-सरदारों के आपसी युद्ध, इसी श्रेणी में आते हैं।

जब कोई क्रान्तिकारी गृहयुद्ध उस समय तक विकसित हो जाता है जिस समय साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों – घरेलू प्रतिक्रियावादियों – का अस्तित्व बुनियादी तौर पर खतरे में पड़ गया हो, तब साम्राज्यवाद अपनी हुकूमत को कायम रखने की कोशिश में, अक्सर ऊपर बताए गए तरीकों से भिन्न तरीके अपनाता है; वह या तो क्रान्तिकारी मोर्चे में भीतर से फूट डालने की कोशिश करता है, या घरेलू प्रतिक्रियावादियों को प्रत्यक्ष रूप से मदद पहुंचाने के लिए फौजें भेजता है। ऐसे समय में विदेशी साम्राज्यवादी और घरेलू प्रतिक्रियावादी खुलेआम एक छोर पर खड़े हो जाते हैं, और विशाल जन-समुदाय दूसरे छोर पर; इस तरह यह एक प्रधान अन्तरविरोध बन जाता है, जो अन्य अन्तरविरोधों के विकास को निर्धारित या प्रभावित करता है। अक्तूबर क्रान्ति के बाद विभिन्न पूंजीवादी देशों ने रूसी प्रतिक्रियावादियों को जो मदद दी, वह फौजी हस्तक्षेप की एक मिसाल है। १९२७ में च्याङ काई-शेक की गद्दारी क्रान्तिकारी मोर्चे में फूट डालने की एक मिसाल है।

कुछ भी हो, इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं कि किसी प्रक्रिया के विकास की हर मंजिल में केवल एक ही अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध होता है, जो प्रमुख भूमिका अदा करता है।

इस प्रकार यदि किसी प्रक्रिया में अनेक अन्तरविरोध मौजूद हों, तो उनमें अवश्य ही एक प्रधान अन्तरविरोध होता है, जो एक प्रमुख और निर्णयात्मक भूमिका अदा करता है, जबकि बाकी तमाम

अन्तरविरोध गौण और अधीनस्थ होते हैं। इसलिए किसी ऐसी जटिल प्रक्रिया का अध्ययन करते समय जिसमें दो या दो से ज्यादा अन्तरविरोध मौजूद हों, हमें उसके प्रधान अन्तरविरोध को खोज निकालने की भरसक कोशिश करनी चाहिए। जहां एक बार हमने उसके प्रधान अन्तरविरोध को पकड़ लिया, तो तमाम समस्याओं को आसानी से हल किया जा सकेगा। पूंजीवादी समाज के अपने अध्ययन में मार्क्स ने हमें यही तरीका सिखाया था। जब लेनिन और स्तालिन ने साम्राज्यवाद और पूंजीवाद के आम संकट का अध्ययन किया, और जब उन्होंने सोवियत अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया, तब उन्होंने भी हमें यही सीख दी। हजारों विद्वान और व्यावहारिक कार्यकर्ता इस तरीके को नहीं समझते, और इसका नतीजा यह होता है कि वे घने कुहरे में रास्ते से भटक जाते हैं, समस्या के मर्म को नहीं पकड़ पाते और इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि वे अन्तरविरोधों को हल करने का तरीका नहीं निकाल पाते।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, हमें किसी प्रक्रिया के सभी अन्तरविरोधों को एक जैसा नहीं मानना चाहिए, बल्कि प्रधान और गौण अन्तरविरोधों के बीच भेद करना चाहिए, और प्रधान अन्तरविरोध को पकड़ने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। लेकिन किसी अन्तरविरोध में, चाहे वह प्रधान हो या गौण, क्या हम अन्तरविरोध के दोनों परस्पर विरोधी पहलुओं को एक समान समझ सकते हैं? नहीं, हम ऐसा भी नहीं कर सकते। किसी भी अन्तरविरोध में परस्पर विरोधी पहलुओं का विकास असमान होता है। कभी-कभी ऐसा अवश्य लगता है कि वे सन्तुलित होते हैं, लेकिन यह केवल एक अस्थाई और सापेक्ष स्थिति होती है; मूल स्थिति असमानता की स्थिति ही है। दो परस्पर विरोधी पहलुओं में से एक अवश्य प्रधान होता है और दूसरा गौण। प्रधान पहलू वह होता है जो किसी अन्तरविरोध में प्रमुख भूमिका अदा करता है। किसी वस्तु के स्वरूप का निर्णय मुख्यतया अन्तरविरोध का प्रधान पहलू ही करता है, वह पहलू जो अपना प्रभुत्व कायम कर चुका है।

लेकिन यह स्थिति स्थिर नहीं होती; अन्तरविरोध के प्रधान और अप्रधान पहलू एक दूसरे में बदल जाते हैं तथा उसी के अनुसार वस्तु का स्वरूप भी बदल जाता है। अन्तरविरोध के विकास की किसी एक प्रक्रिया में अथवा किसी एक मंजिल में, प्रधान पहलू "क" है और अप्रधान पहलू "ख" है; विकास की दूसरी मंजिल में अथवा अन्य प्रक्रिया में "क" और "ख" की भूमिकाएं आपस में बदल जाती हैं – यह परिवर्तन इस बात से निर्धारित होता है कि किसी वस्तु के विकास में एक दूसरे से संघर्ष करने वाले दोनों पहलुओं की शक्ति में कितनी बढ़ती या घटती हुई है।

हम अक्सर "नूतन द्वारा पुरातन का स्थान लेने" की चर्चा करते हैं। नूतन द्वारा पुरातन का स्थान लेना विश्व का सार्वभौमिक और सदा के लिए अनुल्लंघनीय नियम है। कोई वस्तु अपने स्वरूप तथा अपनी परिस्थितियों के अनुसार अनेक प्रकार की छलांगों के जरिए एक दूसरी वस्तु में बदल जाती है; नूतन द्वारा पुरातन का स्थान लेने की प्रक्रिया यही है। प्रत्येक वस्तु में उसके नए पहलू और पुराने पहलू के बीच अन्तरविरोध निहित होता है, और यह अन्तरविरोध सिलसिलेवार अनेक पेचीदा संघर्षों को जन्म देता है। इन संघर्षों के परिणामस्वरूप, नया पहलू छोटे से बड़ा बन जाता है और आगे बढ़कर अपना प्रभुत्व कायम कर लेता है, जबकि पुराना पहलू

बड़े से छोटे में बदल जाता है और कदम-ब-कदम विनाश की ओर अग्रसर होता है। पुराने पहलू पर नए पहलू का प्रभुत्व कायम होते ही पुरानी वस्तु गुणात्मक रूप से एक नई वस्तु में बदल जाती है। इस प्रकार किसी वस्तु का स्वरूप मुख्यत: अन्तरविरोध के प्रधान पहलू द्वारा ही निर्धारित होता है, उस पहलू द्वारा जो अपना प्रभुत्व कायम कर चुका है। जब अन्तरविरोध के प्रधान पहलू में, जिसने अपना प्रभुत्व कायम कर लिया है, परिवर्तन होता है, तो उसी के अनुकूल वस्तु का स्वरूप भी बदल जाता है।

पूंजीवादी समाज में, पूंजीवाद ने पुराने सामन्ती युग की अपनी अधीनस्थ स्थिति को प्रभुत्व की स्थिति में बदल लिया है और तदनुसार समाज का स्वरूप भी सामन्ती से पूंजीवादी हो गया है। नए पूंजीवादी युग में, सामन्ती शक्तियां, जो पहले प्रभुत्व की स्थिति में थीं, अब अधीनस्थ बन गई हैं, और कदम-ब-कदम विनाश की ओर अग्रसर हो रही हैं। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन और फ्रांस में ऐसा ही हुआ। उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ-साथ पूंजीपति वर्ग, प्रगतिशील भूमिका अदा करने वाले एक नए वर्ग की स्थिति से हटकर प्रतिक्रियावादी भूमिका अदा करने वाले एक पुराने वर्ग में बदल जाता है और अन्त में सर्वहारा वर्ग द्वारा उसका तख्ता उलट दिया जाता है, और वह एक ऐसा वर्ग बन जाता है जो उत्पादन के साधनों पर निजी मिलकियत और सत्ता से वंचित हो जाता है और तब वह भी कदम-ब-कदम विनाश की ओर अग्रसर होता है। सर्वहारा वर्ग, जो पूंजीपति वर्ग से संख्या में कहीं अधिक ज्यादा है और जिसका विकास पूंजीपति वर्ग के साथ-साथ, लेकिन पूंजीपति वर्ग के ही शासन में होता है, एक नई शक्ति है; पूंजीपति वर्ग की अधीनता की अपनी

आरम्भिक स्थिति से वह कदम-ब-कदम शक्तिशाली बनकर एक ऐसा वर्ग बन जाता है जो स्वतंत्र है और इतिहास में एक प्रमुख भूमिका अदा करता है, और अन्त में राजनीतिक सत्ता छीनकर शासक वर्ग बन जाता है। इसके परिणामस्वरूप समाज का स्वरूप बदल जाता है और पुराना पूंजीवादी समाज नए समाजवादी समाज में बदल जाता है। यही वह रास्ता है जिसे सोवियत संघ ने अपनाया है और बाकी तमाम देशों को अनिवार्य रूप से अपनाना है।

उदाहरण के लिए, चीन को ही लीजिए। जिस अन्तरविरोध में चीन एक अर्ध-उपनिवेश बना हुआ है, उसमें साम्राज्यवाद का प्रधान स्थान है, वह चीनी जनता का उत्पीड़न करता है, और चीन एक स्वतंत्र देश से बदलकर एक अर्ध-उपनिवेश बन गया है। किन्तु इस स्थिति का बदलना अनिवार्य है; दोनों पक्षों के बीच संघर्ष में चीनी जनता की शक्ति, जो सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में बढ़ती ही जा रही है, अनिवार्य रूप से चीन को एक अर्ध-उपनिवेश से एक स्वतंत्र देश में बदल देगी, जबकि साम्राज्यवाद का तख्ता उलट दिया जाएगा और पुराना चीन अनिवार्य रूप से नए चीन में बदल जाएगा।

पुराने चीन के नए चीन में बदलने में वह परिवर्तन भी शामिल है जो चीन की पुरानी सामन्ती शक्तियों और नई जन-शक्तियों के बीच के सम्बन्धों में होता है। पुराने सामन्ती जमींदार वर्ग का तख्ता उलट दिया जाएगा और वह शासक की स्थिति से हटकर शासित बन जाएगा; और यह वर्ग भी कदम-ब-कदम विनाश की ओर अग्रसर होगा। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में जनता शासितों की अवस्था से शासकों की अवस्था में पहुंच जाएगी। तब चीनी समाज के स्वरूप में

भी परिवर्तन होगा और पुराना, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती समाज एक नए जनवादी समाज में बदल जाएगा।

इस तरह के पारस्परिक रूपान्तर के उदाहरण हमारे अतीत-कालीन अनुभव में भी मिलते हैं। छिङ वंश, जो लगभग तीन सौ साल तक चीन पर शासन करता रहा, १९११ की क्रान्ति में उखाड़ फेंका गया, और सुन यात-सेन के नेतृत्व में क्रान्तिकारी थुङ मङ ह्वेइ ने कुछ समय के लिए विजय प्राप्त की। १९२४-२७ के क्रान्तिकारी युद्ध में कम्युनिस्ट-क्वोमिन्ताङ संश्रय की क्रान्तिकारी शक्तियां दक्षिण में कमजोर से शक्तिशाली बनती गईं और उत्तरी अभियान में विजयी हुईं, जबकि उत्तरी युद्ध-सरदारों का, जिनका किसी समय बड़ा रोब था, तख्ता उलट दिया गया। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली जन-शक्तियां १९२७ में क्वोमिन्ताङ की प्रतिक्रियावादी शक्तियों के प्रहारों के कारण बहुत कमजोर हो गईं, किन्तु अपनी पांतों से अवसरवाद को नेस्तनाबूद कर लेने पर वे एक बार फिर कदम-ब-कदम विकास करने लगीं। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों के किसान, जो पहले शासित थे, अब शासक बन गए हैं, जबकि जमींदारों का इससे उल्टी दिशा में रूपान्तर हो गया है। दुनिया में इसी तरह नूतन हमेशा पुरातन की जगह स्थापित होता जाता है, और पुरातन का स्थान लेता जाता है, पुरातन का अन्त और नूतन का उदय होता जाता है या पुरातन के अन्दर से नूतन का उदय होता जाता है।

क्रान्तिकारी संघर्ष के दौरान कभी-कभी कठिनाइयों का पलड़ा अनुकूल स्थितियों के मुकाबले ज्यादा भारी हो जाता है और इसलिए वे अन्तरविरोध का प्रधान पहलू बन जाती हैं और अनुकूल स्थितियां

अन्तरविरोध का गौण पहलू बन जाती हैं। लेकिन क्रान्तिकारी लोग अपनी कोशिशों के जरिए कठिनाइयों पर कदम-ब-कदम काबू पा सकते हैं और एक नई अनुकूल स्थिति पैदा कर सकते हैं; इस प्रकार कठिन स्थिति की जगह अनुकूल स्थिति पैदा हो जाती है। १९२७ में चीन में क्रान्ति की असफलता के बाद और चीनी लाल सेना के लम्बे अभियान के दौरान ऐसा ही हुआ था। वर्तमान चीन-जापान युद्ध में चीन फिर एक कठिन स्थिति में आ पड़ा है; लेकिन हम इस स्थिति को बदल सकते हैं तथा चीन और जापान दोनों के बीच की स्थिति में आमूल परिवर्तन ला सकते हैं। इसके विपरीत यदि क्रान्तिकारी लोग गलतियां करेंगे, तो अनुकूल स्थितियां भी कठिनाइयों में बदल सकती हैं। १९२४-२७ की क्रान्ति की जीत हार में बदल गई थी। १९२७ के बाद दक्षिणी प्रान्तों में जिन क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का विकास हुआ था, वे सबके सब १९३४ में पराजित हो गए।

जब हम अध्ययन करते हैं, तो अज्ञान की अवस्था से ज्ञान की अवस्था में पदार्पण करने का अन्तरविरोध भी ऐसा ही होता है। मार्क्सवाद का अध्ययन करते समय एकदम आरम्भ में मार्क्सवाद के बारे में हमारी अनभिज्ञता या उसके बारे में हमारा अल्प ज्ञान मार्क्सवाद सम्बन्धी ज्ञान के साथ अन्तरविरोध की स्थिति में होता है। किन्तु लगन के साथ अध्ययन करने के परिणामस्वरूप अनभिज्ञता को ज्ञान में, अल्प ज्ञान को यथेष्ट ज्ञान में और मार्क्सवाद को आंखें मूंद कर लागू करने की स्थिति को उसे दक्षता के साथ लागू करने की स्थिति में बदला जा सकता है।

कुछ लोगों का विचार है कि कुछ खास अन्तरविरोध इस तरह के

नहीं होते। मिसाल के लिए, उत्पादक शक्तियों और उत्पादन-सम्बन्धों के बीच के अन्तरविरोध में उत्पादक शक्तियां प्रधान पहलू हैं ; सिद्धान्त और व्यवहार के बीच के अन्तरविरोध में व्यवहार प्रधान पहलू है ; आर्थिक आधार और ऊपरी ढांचे के बीच के अन्तरविरोध में आर्थिक आधार प्रधान पहलू है ; और इनकी अपनी स्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं होता। यह धारणा एक यांत्रिक भौतिकवादी धारणा है, द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी नहीं। यह सच है कि उत्पादक शक्तियां, व्यवहार और आर्थिक आधार आम तौर पर प्रधान और निर्णयात्मक भूमिका अदा करते हैं ; जो कोई इस बात से इनकार करता है वह भौतिकवादी नहीं है। लेकिन इस बात को भी स्वीकार करना होगा कि एक विशेष परिस्थिति में उत्पादन-सम्बन्ध, सिद्धान्त और ऊपरी ढांचे जैसे पहलू भी प्रधान और निर्णयात्मक भूमिका अदा करते हैं। जब उत्पादन-सम्बन्धों को बदले बिना उत्पादक शक्तियों का विकास नहीं हो सकता, तब उत्पादन-सम्बन्धों में परिवर्तन ही प्रधान और निर्णयात्मक भूमिका अदा करता है। जैसा कि लेनिन ने कहा था, "बिना क्रान्तिकारी सिद्धान्त के कोई क्रान्तिकारी आन्दोलन नहीं हो सकता"[१५]; ऐसी स्थिति में क्रान्तिकारी सिद्धान्त की रचना और उसके प्रतिपादन की ही प्रधान और निर्णयात्मक भूमिका होती है। जब किसी काम को (चाहे कैसा ही काम क्यों न हो) करना हो, पर उसे कैसे किया जाए इस बारे में अभी तक कोई दिशा-निर्देश, विधि, योजना या नीति निर्धारित न हुई हो, तो ऐसी स्थिति में दिशा-निर्देश, विधि, योजना या नीति को निर्धारित करना ही प्रधान और निर्णायक तत्व बन जाता है। जब ऊपरी ढांचा (राजनीति, संस्कृति, आदि) आर्थिक आधार

के विकास को अवरुद्ध करता है, तब राजनीतिक और सांस्कृतिक सुधार प्रधान और निर्णयात्मक तत्व बन जाते हैं। जब हम ऐसा कहते हैं, तो क्या हम भौतिकवाद से दूर भाग रहे हैं ? नहीं। कारण कि जहां हम यह मानते हैं कि इतिहास के आम विकास के दौरान भौतिक स्थिति ही मानसिक स्थिति का निर्णय करती है तथा सामाजिक अस्तित्व ही सामाजिक चेतना का निर्णय करता है, वहां हम यह भी मानते हैं और हमें ऐसा अवश्य मान लेना चाहिए कि मानसिक स्थिति की भौतिक स्थिति पर, सामाजिक चेतना की सामाजिक अस्तित्व पर तथा ऊपरी ढांचे की आर्थिक आधार पर भी प्रतिक्रिया होती है। यह मान्यता भौतिकवाद के खिलाफ नहीं है ; इसके विपरीत यह यांत्रिक भौतिकवाद से बच जाती है और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद पर दृढ़ता से कायम रहती है।

यदि अन्तरविरोध की विशिष्टता का अध्ययन करते समय हम इन दो स्थितियों का – किसी प्रक्रिया में निहित प्रधान अन्तरविरोध और अप्रधान अन्तरविरोध का, तथा अन्तरविरोध के प्रधान पहलू और अप्रधान पहलू का – अध्ययन नहीं करते, अर्थात यदि हम अन्तरविरोध की इन दो स्थितियों की भिन्नता का अध्ययन नहीं करते, तो हम अमूर्त अध्ययन की दलदल में फंस जाएंगे और अन्तरविरोध को ठोस रूप में समझ नहीं पाएंगे, और फलस्वरूप उसे हल करने के लिए सही उपाय नहीं खोज पाएंगे। अन्तरविरोध की इन दो स्थितियों की भिन्नता या उनकी विशिष्टता, अन्तरविरोध में शक्तियों की असमानता ही है। विश्व में निरपेक्ष समानता के साथ किसी वस्तु का विकास नहीं होता ; और हमें समान विकास के सिद्धान्त या सन्तुलित विकास के सिद्धान्त का विरोध करना चाहिए। साथ ही

वह ठोस अन्तरविरोधपूर्ण स्थिति तथा अन्तरविरोध के विकास की प्रक्रिया में उसके प्रधान और अप्रधान पहलुओं में होने वाला परिवर्तन ही नूतन के पुरातन का स्थान लेने की शक्ति को दर्शाते हैं। अन्तर-विरोधों में असमानता की विभिन्न अवस्थाओं का, प्रधान अन्तर-विरोध तथा अप्रधान अन्तरविरोधों का, अन्तरविरोध के प्रधान पहलू और अप्रधान पहलू का अध्ययन ही वह महत्वपूर्ण तरीका है जिसके द्वारा कोई क्रान्तिकारी राजनीतिक पार्टी राजनीतिक और फौजी क्षेत्रों में अपनी रणनीतिक और कार्यनीतिक नीतियों को सही ढंग से निर्धारित करती है। सभी कम्युनिस्टों को इस बात पर ध्यान देना चाहिए।

५. अन्तरविरोध के पहलुओं की एकरूपता और उनका संघर्ष

अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और विशिष्टता की समस्या को समझ लेने के बाद हमें आगे बढ़कर अन्तरविरोध के पहलुओं की एकरूपता और उनके संघर्ष की समस्या का अध्ययन करना चाहिए।

एकरूपता, एकता, संयोग, अन्तर-व्याप्ति, अन्तर-प्रवेश, अन्तर-निर्भरता (या अस्तित्व के लिए अन्तर-निर्भरता), अन्तर-सम्बन्ध या आपसी सहयोग – इन सभी भिन्न शब्दों का एक ही अर्थ है और ये इन दो बातों के सूचक हैं : पहले, किसी वस्तु के विकास की प्रक्रिया में प्रत्येक अन्तरविरोध के दोनों पहलुओं में से हर पहलू के अस्तित्व के लिए दूसरे पहलू का अस्तित्व अनिवार्य होता है, और दोनों पहलुओं का एक ही इकाई में सह-अस्तित्व होता है ; दूसरे, ये दोनों

परस्पर विरोधी पहलू किसी विशेष परिस्थिति में एक दूसरे में बदल जाते हैं। एकरूपता का यही मतलब है।

लेनिन ने कहा था :

> द्वन्द्ववाद एक ऐसा सिद्धान्त है जो इस बात को बताता है कि किस प्रकार विपरीत तत्व एकरूप हो सकते हैं और किस प्रकार वे एकरूप बनते हैं (किस प्रकार वे परिवर्तित होकर एकरूप बनते हैं) – किन परिस्थितियों में वे एक दूसरे में बदलते हुए एकरूप बन जाते हैं, – क्यों मानव-मस्तिष्क को इन विपरीत तत्वों को मृत और जड़ वस्तुओं के रूप में नहीं, बल्कि सजीव, परिस्थितिबद्ध, परिवर्तनशील, एक दूसरे में बदल जाने वाली वस्तुओं के रूप में देखना चाहिए।[१६]

लेनिन के इस कथन का क्या अर्थ है ?

प्रत्येक प्रक्रिया में परस्पर विरोधी पहलू एक दूसरे को बहिष्कृत करते हैं, आपस में संघर्ष करते हैं, और एक दूसरे के विरोधी होते हैं। ऐसे परस्पर विरोधी पहलू बिना किसी अपवाद के सभी वस्तुओं की प्रक्रियाओं में तथा समस्त मानव-चिन्तन में निहित होते हैं। किसी साधारण प्रक्रिया में विपरीत तत्वों की केवल एक ही जोड़ी होती है, किन्तु किसी संश्लिष्ट प्रक्रिया में उनकी एक से अधिक जोड़ियां होती हैं। इसके अलावा, विपरीत तत्वों की विभिन्न जोड़ियां आपस में अन्तरविरोधपूर्ण बन जाती हैं। इस तरह वस्तुगत जगत में सभी वस्तुओं और समस्त मानव-चिन्तन की रचना होती है और उन्हें गति प्राप्त होती है।

यदि यह सच है, तो इसमें एकरूपता का, अथवा एकता का सर्वथा

परिस्थिति में विपरीत तत्वों के बीच अन्तर-सम्बन्ध तथा एकरूपता न होती, तो ऐसा परिवर्तन कैसे हो सकता था ?

क्वोमिन्ताङ, जिसने चीन के आधुनिक इतिहास की एक निश्चित मंजिल में किसी हद तक सकारात्मक भूमिका अदा की थी, अपने स्वाभाविक वर्ग-चरित्र तथा साम्राज्यवाद के लोभ के कारण (ये परिस्थितियां ही थीं) १९२७ से एक प्रतिक्रान्तिकारी पार्टी बन गई है ; लेकिन चीन और जापान के बीच के अन्तरविरोध के तेज हो जाने और कम्युनिस्ट पार्टी की संयुक्त मोर्चे की नीति के कारण (ये परिस्थितियां ही थीं) उसे जापानी आक्रमण का प्रतिरोध स्वीकार करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। परस्पर विरोधी वस्तुएं एक दूसरे में बदल जाती हैं, और उनमें एक प्रकार की एकरूपता विद्यमान रहती है।

हमने जिस भूमि-क्रान्ति को सम्पन्न किया है, वह एक ऐसी प्रक्रिया बन चुकी है और फिर से बन जाएगी, जिसमें जमीन का मालिक जमींदार वर्ग एक ऐसा वर्ग बन जाता है जिसके हाथों से जमीन छिन चुकी है, जबकि किसान, जो कभी अपनी जमीन से वंचित थे, थोड़ी जमीन के मालिक बन जाते हैं। एक विशेष परिस्थिति में साधन-सम्पन्नता और साधन-हीनता, नफा और नुकसान, अन्तर-सम्बन्धित होते हैं ; दोनों पक्षों में एकरूपता होती है। समाजवाद की परिस्थिति में किसानों की निजी मिलकियत की व्यवस्था समाजवादी कृषि की सार्वजनिक मिलकियत में बदल जाती है ; सोवियत संघ में ऐसा हो चुका है और बाकी सारी दुनिया में भी ऐसा ही होगा। निजी सम्पत्ति और सार्वजनिक सम्पत्ति के बीच की खाई के दो किनारों को मिलाने वाला एक सेतु होता है, जिसे दर्शन-शास्त्र में एकरूपता, या एक दूसरे में रूपान्तर, अथवा अन्तर-व्याप्ति कहते हैं।

सर्वहारा अधिनायकत्व को अथवा जनता के अधिनायकत्व को मजबूत बनाना वास्तव में ऐसे अधिनायकत्व को खत्म करने और सभी राज्य-व्यवस्थाओं का अन्त करने की उच्चतर मंजिल की ओर बढ़ने के लिए परिस्थितियां तैयार करना है। कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना करना और उसका विकास करना वास्तव में कम्युनिस्ट पार्टी और अन्य सभी राजनीतिक पार्टियों को खत्म करने के लिए परिस्थितियां तैयार करना है। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में क्रान्तिकारी सेना बनाना और क्रान्तिकारी युद्ध चलाना वास्तव में युद्ध को सदा के लिए मिटा देने की परिस्थितियां तैयार करना है। ये सभी विपरीत तत्व साथ ही साथ एक दूसरे के पूरक भी हैं।

जैसा कि हर कोई जानता है, युद्ध और शान्ति अपने को एक दूसरे में रूपान्तरित कर लेते हैं। युद्ध शान्ति में बदल जाता है ; उदाहरण के लिए, प्रथम विश्वयुद्ध युद्धोत्तरकालीन शान्ति में बदल गया था ; चीन का गृहयुद्ध भी अब बन्द हो गया है और उसकी जगह आन्तरिक शान्ति कायम हो गई है। शान्ति युद्ध में रूपान्तरित हो जाती है ; उदाहरण के लिए, १९२७ का क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग युद्ध में बदल गया था, और आज की शान्तिपूर्ण विश्व-परिस्थिति भी द्वितीय विश्वयुद्ध में बदल सकती है। ऐसा क्यों होता है ? इसलिए कि वर्ग-समाज में युद्ध और शान्ति जैसी परस्पर विरोधी वस्तुएं एक विशेष परिस्थिति में एकरूपता लिए हुए होती हैं।

सभी परस्पर विरोधी वस्तुएं अन्तर-सम्बन्धित होती हैं, और वे न

केवल एक विशेष परिस्थिति में एक ही इकाई में सह-अस्तित्व की स्थिति में रहती हैं, बल्कि एक अन्य विशेष परिस्थिति में एक दूसरे में बदल भी जाती हैं – विपरीत तत्वों की एकरूपता का पूर्ण अर्थ यही होता है। लेनिन का ठीक यही मतलब था जब उन्होंने लिखा था, "किस प्रकार वे एकरूप बनते हैं (किस प्रकार वे परिवर्तित होकर एकरूप बनते हैं) – किन परिस्थितियों में वे एक दूसरे में बदलते हुए एकरूप बन जाते हैं।"

क्या कारण है कि "मानव-मस्तिष्क को इन विपरीत तत्वों को मृत और जड़ वस्तुओं के रूप में नहीं, बल्कि सजीव, परिस्थितिबद्ध, परिवर्तनशील, एक दूसरे में बदल जाने वाली वस्तुओं के रूप में देखना चाहिए"? कारण यह है कि वस्तुगत पदार्थ असल में ठीक ऐसे ही होते हैं। सच बात यह है कि वस्तुगत पदार्थों में परस्पर विरोधी पहलुओं की एकता या एकरूपता कभी भी मृत और जड़ चीज नहीं होती, बल्कि सजीव, परिस्थितिबद्ध, परिवर्तनशील, अस्थाई और सापेक्ष चीज होती है; सभी परस्पर विरोधी पहलू, एक विशेष परिस्थिति में, अपने विपरीत पहलुओं में बदल जाते हैं। यही बात जब मानव-मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित होती है, तो वह मार्क्सवाद के भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का विश्व-दृष्टिकोण बन जाती है। केवल प्रतिक्रियावादी शासक वर्ग, चाहे वे वर्तमान के हों या अतीत के, और उनकी चाकरी करने वाले आध्यात्मवादी ही, विपरीत तत्वों को सजीव, परिस्थितिबद्ध, परिवर्तनशील और एक दूसरे में बदल जाने वाली वस्तुओं के रूप में नहीं देखते, बल्कि मृत और जड़ मानते हैं, तथा आम जनता को धोखा देने के लिए इस गलत दृष्टिकोण का प्रचार करते हैं, और इस तरह अपने शासन को कायम रखने की कोशिश करते हैं। कम्युनिस्टों का कर्तव्य है कि वे प्रतिक्रियावादियों और आध्यात्मवादियों के गलत विचारों का भण्डाफोड़ कर दें, वस्तुओं में निहित द्वन्द्वात्मकता का प्रचार करें, और इस प्रकार वस्तुओं के रूपान्तर की रफ्तार बढ़ाएं तथा क्रान्ति के उद्देश्य को प्राप्त करें।

जब हम एक विशेष परिस्थिति में विपरीत तत्वों की एकरूपता की बात करते हैं, तो हम वास्तविक और ठोस विपरीत तत्वों की तथा विपरीत तत्वों के एक दूसरे में वास्तविक और ठोस रूप से परिवर्तित होने की ही बात करते हैं। पौराणिक कथाओं में अनगिनत रूपान्तर देखने को मिलते हैं; उदाहरण के लिए, "शान हाए चिङ" में ख्वा फ़ू द्वारा सूर्य का पीछा करना,[१७] "ह्वाए नान चि" में ई का नौ सूरजों को मार गिराना,[१८] "शी यओ ची" में वानरराज का बहत्तर बार रूप बदलना,[१९] "ल्याओ चाए की विचित्र कहानियां"[२०] में भूतों और लोमड़ियों के इन्सानों के रूप में बदल जाने के अनेक किस्से, आदि। लेकिन इन कथाओं में वर्णित विपरीत तत्वों के परस्पर रूपान्तर ठोस अन्तरविरोधों को प्रतिबिम्बित करने वाले ठोस रूपान्तर नहीं हैं। ये रूपान्तर एक प्रकार के बचकाने, काल्पनिक, मनोगत रूप से सोचे हुए ऐसे रूपान्तर हैं जो मानव-मस्तिष्क में वास्तविक विपरीत तत्वों के एक दूसरे में अनगिनत जटिल रूपान्तरों के कारण होते हैं। मार्क्स ने कहा था: "तमाम पौराणिक कथाएं कल्पना में तथा कल्पना के सहारे प्रकृति की शक्तियों पर काबू पाती हैं, उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करती हैं और उन्हें साकार बनाती हैं; इसलिए मानव जैसे ही प्रकृति की शक्तियों पर काबू पाता है, वैसे ही पौराणिक कथाओं का लोप हो जाता है।"[२१] ऐसी पौराणिक

कथाओं के (और बाल-कथाओं के भी) अनन्त रूपान्तर लोगों का मनोरंजन इसीलिए करते हैं, क्योंकि उनमें प्रकृति की शक्तियों पर मानव की विजय का कल्पनापूर्ण वर्णन होता है, तथा उत्तम पौराणिक कथाओं में, जैसा कि मार्क्स ने कहा है, "चिरन्तन रोचकता" होती है ; लेकिन पौराणिक कथाएं एक विशेष परिस्थिति में मौजूद ठोस अन्तरविरोधों पर आधारित नहीं होतीं और इसलिए वे यथार्थ को वैज्ञानिक ढंग से प्रतिबिम्बित नहीं करतीं। तात्पर्य यह है कि पौराणिक कथाओं या बाल-कथाओं में अन्तरविरोध के पहलुओं में केवल काल्पनिक एकरूपता होती है, न कि वास्तविक एकरूपता। जो चीज वास्तविक परिवर्तनों में निहित एकरूपता को वैज्ञानिक ढंग से प्रतिबिम्बित करती है, वही मार्क्सवादी द्वन्द्ववाद है।

क्या कारण है कि अंडे को चूजे में रूपान्तरित किया जा सकता है लेकिन पत्थर को नहीं ? क्या कारण है कि केवल युद्ध और शान्ति में ही एकरूपता है, तथा युद्ध और पत्थर में नहीं ? क्या कारण है कि इन्सान केवल इन्सान को ही जन्म दे सकता है, अन्य किसी चीज को नहीं ? इसका एकमात्र कारण यह है कि विपरीत तत्वों की एकरूपता केवल एक आवश्यक विशेष परिस्थिति में ही होती है। बिना इस आवश्यक विशेष परिस्थिति के किसी भी प्रकार की एकरूपता नहीं हो सकती।

क्या कारण है कि रूस में १९१७ की पूंजीवादी-जनवादी फरवरी क्रान्ति उसी वर्ष की सर्वहारा समाजवादी अक्तूबर क्रान्ति के साथ प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी थी, जबकि फ्रांस में पूंजीवादी क्रान्ति प्रत्यक्ष रूप में किसी समाजवादी क्रान्ति से जुड़ी नहीं थी, और १८७१ का पेरिस कम्यून अन्त में असफल हो गया ? दूसरी ओर, इसका

क्या कारण है कि मंगोलिया और मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन-प्रणाली प्रत्यक्ष रूप से समाजवाद के साथ जुड़ गई है ? क्या कारण है कि चीनी क्रान्ति पश्चिमी देशों के पुराने ऐतिहासिक पथ पर चले बिना ही, पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व के काल से गुजरे बिना ही, प्रत्यक्ष रूप से समाजवाद से जुड़ सकती है और पूंजीवादी भविष्य से अपने को बचा सकती है ? इसका एकमात्र कारण है समय-समय की ठोस परिस्थितियां। जब कुछ आवश्यक विशेष परिस्थितियां मौजूद होती हैं, तभी वस्तुओं के विकास की प्रक्रिया में कुछ निश्चित विपरीत तत्व उत्पन्न होते हैं ; इतना ही नहीं, ये विपरीत तत्व (दो या दो से अधिक) एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं और एक दूसरे में बदल जाते हैं ; अन्यथा इनमें से एक भी बात सम्भव नहीं।

यही एकरूपता की समस्या है। तब फिर संघर्ष क्या है ? और एकरूपता तथा संघर्ष के बीच क्या सम्बन्ध है ?

लेनिन ने कहा था :

> विपरीत तत्वों की एकता (संयोग, एकरूपता, समान कार्यवाही) परिस्थितिबद्ध, क्षणिक, अस्थाई और सापेक्ष होती है। एक दूसरे को बहिष्कृत करने वाले विपरीत तत्वों का संघर्ष, विकास और गति के समान ही, निरपेक्ष होता है।[२१]

इस कथन का क्या अर्थ है ?

सभी प्रक्रियाओं का आदि और अन्त होता है ; सभी प्रक्रियाएं अपने विपरीत तत्वों में रूपान्तरित होती हैं। सभी प्रक्रियाओं की स्थिरता सापेक्ष होती है, किन्तु एक प्रक्रिया के दूसरी प्रक्रिया में

रूपान्तरित होने में दिखाई देने वाली परिवर्तनशीलता निरपेक्ष होती है।

सभी वस्तुओं की गति की दो अवस्थाएं होती हैं : सापेक्ष स्थिरता की अवस्था और प्रत्यक्ष परिवर्तन की अवस्था। ये दोनों अवस्थाएं किसी वस्तु में निहित दो परस्पर विरोधी तत्वों के संघर्ष से उत्पन्न होती हैं। जब किसी वस्तु की गति पहली अवस्था में होती है, तब उसमें केवल परिमाणात्मक परिवर्तन होता है, न कि गुणात्मक परिवर्तन, और इसलिए वह ऊपर से स्थिरता की अवस्था में प्रतीत होती है। जब वस्तु की गति दूसरी अवस्था में होती है, तो उस समय तक पहली अवस्था का परिमाणात्मक परिवर्तन एक चरमबिन्दु पर पहुंच चुका होता है, और वह एक इकाई वाली उस वस्तु का विघटन कर देता है, तथा उसमें गुणात्मक परिवर्तन हो जाता है, जिसके फलस्वरूप उसमें प्रत्यक्ष परिवर्तन प्रकट हो जाता है। ऐसी एकता, एकजुटता, सम्मिलन, सामंजस्य, साम्य, ठहराव, गतिरोध, स्थिरता, स्थायित्व, सन्तुलन, सघनता, आकर्षण, आदि, जिन्हें हम दैनिक जीवन में देखते हैं, सभी परिमाणात्मक परिवर्तन की अवस्था से गुजरती हुई वस्तुओं के रूप हैं। दूसरी ओर, एकता का विघटन, अर्थात इस एकजुटता, सम्मिलन, सामंजस्य, साम्य, ठहराव, गतिरोध, स्थिरता, स्थायित्व, सन्तुलन, सघनता व आकर्षण का विनाश, और उनका अपनी विपरीत अवस्थाओं में परिवर्तन, ये सभी गुणात्मक परिवर्तन की अवस्था से गुजरती हुई वस्तुओं के, एक प्रक्रिया के दूसरी प्रक्रिया में रूपान्तर के रूप हैं। गति की पहली अवस्था से दूसरी अवस्था में वस्तुओं का लगातार रूपान्तर होता रहता है ; विपरीत तत्वों का संघर्ष दोनों ही अवस्थाओं में चलता

रहता है, लेकिन अन्तरविरोध का हल दूसरी अवस्था में ही होता है। इसीलिए हम कहते हैं कि विपरीत तत्वों की एकता परिस्थिति-बद्ध, अस्थाई और सापेक्ष है, जबकि एक दूसरे को बहिष्कृत करने वाले विपरीत तत्वों का संघर्ष निरपेक्ष है।

जब हमने ऊपर यह कहा कि दो विपरीत वस्तुएं एक ही इकाई में सह-अस्तित्व की स्थिति में रह सकती हैं और एक दूसरे में रूपान्तरित भी हो सकती हैं, क्योंकि उनमें एकरूपता होती है, तब हम परिस्थितिबद्धता का उल्लेख कर रहे थे, अर्थात यह कि एक विशेष परिस्थिति में दो अन्तरविरोधपूर्ण वस्तुएं एकताबद्ध हो सकती हैं और एक दूसरे में रूपान्तरित भी हो सकती हैं, किन्तु ऐसी परिस्थिति के न होने पर वे एक अन्तरविरोध का रूप धारण नहीं कर सकतीं, एक ही इकाई में सह-अस्तित्व की स्थिति में नहीं रह सकतीं और एक दूसरे में रूपान्तरित नहीं हो सकतीं। चूंकि अन्तरविरोध की एकरूपता केवल एक विशेष परिस्थिति में ही उत्पन्न होती है, इसलिए हम एकरूपता को परिस्थितिबद्ध और सापेक्ष कहते हैं। यहां हम इतनी बात और कहना चाहते हैं कि विपरीत तत्वों के बीच संघर्ष किसी प्रक्रिया के आरम्भ से अन्त तक चलता है और एक प्रक्रिया के दूसरी में बदल जाने का कारण होता है, और यह संघर्ष हर जगह मौजूद रहता है, तथा इसलिए संघर्ष परिस्थितियों से परे और निरपेक्ष होता है।

परिस्थितिबद्ध, सापेक्ष एकरूपता और परिस्थितियों से परे, निरपेक्ष संघर्ष का सम्मिलन सभी वस्तुओं में अन्तरविरोधों की गति को जन्म देते हैं।

हम चीनी अक्सर कहा करते हैं : "वस्तुएं जहां एक दूसरे के

विपरीत होती हैं, वहां एक दूसरे की पूरक भी होती हैं।"[२३] अर्थात, विपरीत वस्तुओं में एकरूपता होती है। यह कथन द्वन्द्वात्मक है, और आध्यात्मवाद के विपरीत है। "एक दूसरे के विपरीत होने" का अर्थ है दोनों परस्पर विरोधी पहलुओं का एक दूसरे को बहिष्कृत करना या एक दूसरे से संघर्ष करना। "एक दूसरे के पूरक होने" का अर्थ है एक विशेष परिस्थिति में दोनों परस्पर विरोधी पहलुओं का एकताबद्ध होना और एकरूपता प्राप्त करना। फिर भी संघर्ष एकरूपता में निहित होता है ; और बिना संघर्ष के कोई एकरूपता सम्भव नहीं।

एकरूपता में संघर्ष मौजूद रहता है, विशिष्टता में सार्वभौमिकता मौजूद रहती है, व्यक्तिगत स्वरूप में सामान्य स्वरूप मौजूद रहता है। लेनिन के शब्दों में, ". . . सापेक्ष में निरपेक्ष मौजूद रहता है।"[२४]

६. अन्तरविरोध में शत्रुता का स्थान

शत्रुता क्या है? – यह एक ऐसा प्रश्न है जो विपरीत तत्वों के बीच के संघर्ष के प्रश्न में शामिल है। हमारा उत्तर है : शत्रुता विपरीत तत्वों के बीच के संघर्ष का एक रूप तो है, लेकिन उसका एकमात्र रूप नहीं है।

मानव-इतिहास में वर्गों के बीच की शत्रुता विपरीत तत्वों के बीच के संघर्ष की एक विशिष्ट अभिव्यक्ति के रूप में मौजूद रहती है। जरा शोषक वर्ग और शोषित वर्ग के बीच के अन्तरविरोध पर तो गौर कीजिए। ऐसे परस्पर विरोधी वर्ग लम्बे अरसे तक एक ही समाज में, चाहे वह दास समाज हो अथवा सामन्ती या पूंजीवादी

समाज, सह-अस्तित्व की स्थिति में रहते हैं, और आपस में संघर्ष करते रहते हैं ; लेकिन जब तक इन दोनों वर्गों के बीच का अन्तर-विरोध विकसित होकर एक खास मंजिल पर नहीं पहुंच जाता, तब तक यह अन्तरविरोध एक खुली शत्रुता का रूप धारण नहीं करता और क्रान्ति में विकसित नहीं होता। वर्ग-समाज के अन्दर शान्ति का युद्ध में रूपान्तर भी ऐसे ही होता है।

विस्फोट के पहले बम एक ऐसी इकाई होता है जिसमें विपरीत तत्व एक विशेष परिस्थिति में सह-अस्तित्व की स्थिति में रहते हैं। विस्फोट तभी होता है जब एक नई परिस्थिति, प्रज्वलन, पैदा हो जाती है। ऐसी ही स्थिति उन तमाम प्राकृतिक घटनाओं में पैदा होती है जो पुराने अन्तरविरोधों को हल करने और नई वस्तुओं को उत्पन्न करने के लिए अन्त में खुले विरोध का रूप धारण करती हैं।

इस बात को समझना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इससे हम यह समझ जाते हैं कि वर्ग-समाज में क्रान्तियों और क्रान्तिकारी युद्धों का होना अनिवार्य है, और उनकी अनुपस्थिति में सामाजिक विकास के क्षेत्र में छलांग लगाना असम्भव है, प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों को उखाड़ फेंकना असम्भव है और इसलिए जनता द्वारा राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करना असम्भव है। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे प्रतिक्रियावादियों के इस तमाम झूठे प्रचार का भण्डाफोड़ कर दें कि सामाजिक क्रान्ति अनावश्यक और असम्भव है। उन्हें चाहिए कि वे सामाजिक क्रान्ति के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त को मजबूती के साथ बुलन्द रखें, और लोगों को यह समझाएं कि सामाजिक क्रान्ति न केवल पूर्णतः आवश्यक है, बल्कि पूर्णतः व्यावहारिक

भी है, और यह कि मानव जाति का सम्पूर्ण इतिहास और सोवियत संघ की विजय इस वैज्ञानिक सच्चाई की पुष्टि करती है।

बहरहाल, हमें विपरीत तत्वों के बीच चलने वाले विभिन्न संघर्षों की परिस्थितियों का ठोस रूप से अध्ययन करना चाहिए और ऊपर बताए गए फार्मूले को हर वस्तु पर अनुचित ढंग से लागू नहीं करना चाहिए। अन्तरविरोध और संघर्ष सार्वभौमिक और निरपेक्ष होते हैं, लेकिन अन्तरविरोधों को हल करने के तरीके, अर्थात संघर्ष के रूप अन्तरविरोधों के भिन्न-भिन्न स्वरूपों के अनुसार अलग-अलग होते हैं। कुछ अन्तरविरोधों में खुली शत्रुता मौजूद रहती है और कुछ में नहीं। वस्तुओं के ठोस विकास के अनुसार, कुछ अन्तरविरोध जो शुरू में अशत्रुतापूर्ण होते हैं, विकसित होकर शत्रुतापूर्ण बन जाते हैं, जबकि अन्य अन्तरविरोध जो शुरू में शत्रुतापूर्ण होते हैं, विकसित होकर अशत्रुतापूर्ण बन जाते हैं।

जैसा कि हमने ऊपर बताया है, जब तक समाज में वर्ग मौजूद हैं, तब तक कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर सही विचारों और गलत विचारों के बीच के अन्तरविरोध, पार्टी के अन्दर वर्ग-अन्तरविरोध को ही प्रतिबिम्बित करते रहेंगे। आरम्भ में, कुछ मामलों में, यह जरूरी नहीं कि ऐसे अन्तरविरोध तत्काल ही शत्रुतापूर्ण बन जाएं। लेकिन वर्ग-संघर्ष के विकास के साथ-साथ विकसित होकर वे शत्रुतापूर्ण बन सकते हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास यह बताता है कि लेनिन और स्तालिन के सही विचारों तथा त्रात्सकी, बुखारिन व अन्य लोगों के गलत विचारों के बीच के अन्तरविरोध शुरू में शत्रुतापूर्ण रूप में प्रकट नहीं हुए थे, लेकिन बाद में वे विकसित होकर शत्रुतापूर्ण बन गए। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास में

भी ऐसी मिसालें मौजूद हैं। पार्टी में हमारे अनेक साथियों के सही विचारों और छन तू-श्यू, चाङ क्वो-थाओ तथा अन्य लोगों के गलत विचारों के बीच के अन्तरविरोध भी पहले शत्रुतापूर्ण रूप में प्रकट नहीं हुए थे, किन्तु बाद में वे विकसित होकर शत्रुतापूर्ण बन गए। इस समय हमारी पार्टी में सही विचारों और गलत विचारों के बीच के अन्तरविरोध का रूप शत्रुतापूर्ण नहीं है, और यदि वे साथी, जिन्होंने गलतियां की हैं, अपनी गलतियों को सुधार लें, तो वह विकसित होकर शत्रुतापूर्ण रूप नहीं धारण करेगा। इसलिए, पार्टी को एक तरफ गलत विचारों के विरुद्ध गम्भीर संघर्ष चलाना चाहिए, और दूसरी तरफ, उन साथियों को जिन्होंने गलतियां की हैं, चेतने का पर्याप्त अवसर देना चाहिए। जाहिर है कि ऐसी परिस्थितियों में, सीमा से बाहर संघर्ष चलाना उचित नहीं है। किन्तु गलतियां करने वाले लोग यदि अपनी गलतियों पर अड़े रहते हैं तथा और गम्भीर गलतियां करते हैं, तो हो सकता है कि यह अन्तरविरोध विकसित होकर शत्रुतापूर्ण अन्तरविरोध बन जाए।

आर्थिक दृष्टि से, पूंजीवादी समाज में, जहां पूंजीपति वर्ग के शासन के अन्तर्गत शहर द्वारा देहात की निर्मम लूट-खसोट होती है और चीन के क्वोमिन्ताङ शासित इलाकों में, जहां विदेशी साम्राज्यवाद और चीन के बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग के शासन के अन्तर्गत शहर द्वारा देहात की अत्यन्त अमानुषिक लूट-खसोट होती है, शहर और देहात के बीच का अन्तरविरोध अत्यन्त शत्रुतापूर्ण अन्तरविरोध बन जाता है। किन्तु किसी समाजवादी देश में और हमारे क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में, यह शत्रुतापूर्ण अन्तरविरोध एक अशत्रुतापूर्ण

अन्तरविरोध में बदल चुका है ; और कम्युनिस्ट समाज बन जाने पर यह समाप्त हो जाएगा ।

लेनिन ने कहा था : "शत्रुता और अन्तरविरोध एक ही और समान वस्तुएं कदापि नहीं हैं। समाजवाद में पहले का लोप हो जाएगा, किन्तु दूसरे का अस्तित्व बना रहेगा।"[१९] तात्पर्य यह कि शत्रुता विपरीत तत्वों के बीच के संघर्ष का महज एक रूप है, उसका एकमात्र रूप नहीं ; शत्रुता के फार्मूले को हम हर जगह बिना सोचे-समझे लागू नहीं कर सकते ।

७. निष्कर्ष

अब हम निष्कर्ष के तौर पर कुछ बातें कहेंगे । वस्तुओं में अन्तर-विरोध का नियम, अर्थात विपरीत तत्वों की एकता का नियम, प्रकृति और समाज का मूल नियम है और इसलिए चिन्तन का भी मूल नियम है । वह आध्यात्मवादी विश्व-दृष्टिकोण के विपरीत है । वह मानव-ज्ञान के इतिहास में एक महान क्रान्ति का प्रतिनिधित्व करता है । द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के दृष्टिकोण के अनुसार, अन्तरविरोध वस्तुगत पदार्थों की और मनोगत चिन्तन की सभी प्रक्रियाओं में मौजूद होता है और इन सभी प्रक्रियाओं में शुरू से अन्त तक बना रहता है ; यही अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और निरपेक्षता है । प्रत्येक अन्तरविरोध और उसके प्रत्येक पहलू की अपनी-अपनी विशिष्टताएं होती हैं ; यही अन्तरविरोध की विशिष्टता और सापेक्षता है । एक विशेष परिस्थिति में, विपरीत तत्वों में एकरूपता

होती है और इसलिए वे एक ही इकाई में सह-अस्तित्व की स्थिति में रह सकते हैं तथा एक दूसरे में बदल सकते हैं ; यह भी अन्तरविरोध की विशिष्टता और सापेक्षता है । किन्तु विपरीत तत्वों के बीच संघर्ष लगातार चलता रहता है ; यह संघर्ष तब भी चलता रहता है जबकि विपरीत तत्व सह-अस्तित्व की स्थिति में रहते हैं, और तब भी जबकि वे एक दूसरे में रूपान्तरित होते हैं, और खासकर जब उनका एक दूसरे में रूपान्तर हो रहा होता है, उस समय यह संघर्ष और ज्यादा स्पष्ट रूप से व्यक्त होता है ; यह भी अन्तरविरोध की सार्वभौमिकता और निरपेक्षता ही है। अन्तरविरोध की विशिष्टता और सापेक्षता का अध्ययन करते समय, हमें प्रधान अन्तरविरोध तथा अप्रधान अन्तरविरोधों के फर्क को, तथा अन्तरविरोध के प्रधान पहलू और अप्रधान पहलू के फर्क को ध्यान में रखना चाहिए ; अन्तर-विरोध की सार्वभौमिकता और अन्तरविरोध में निहित विपरीत तत्वों के संघर्ष का अध्ययन करते समय, हमें संघर्ष के विभिन्न रूपों के भेद को ध्यान में रखना चाहिए । अन्यथा हम गलतियां कर बैठेंगे । यदि अध्ययन के जरिए हमने ऊपर बताई गई आवश्यक बातों को सही तौर पर समझ लिया, तो हम उन कठमुल्लावादी विचारों को चकनाचूर कर सकेंगे, जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बुनियादी उसूलों के विरुद्ध हैं तथा हमारे क्रान्तिकारी कार्य के लिए हानिकारक हैं ; और साथ ही व्यावहारिक अनुभव प्राप्त हमारे साथी अपने अनुभव को उसूलों के रूप में व्यवस्थित कर सकेंगे तथा अनुभववादी गलतियों को दोहराने से बच सकेंगे । अन्तरविरोध के नियम के अपने अध्ययन में हम इन्हीं चन्द साधारण निष्कर्षों पर पहुंचे हैं ।

नोट

१ वी० आई० लेनिन, "दार्शनिक नोटबुक": "हेगेल की रचना 'दर्शन-शास्त्र का इतिहास' के पहले ग्रन्थ में 'एलियावादी विचार-शाखा' " के बारे में।

२ वी० आई० लेनिन ने "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में" नामक अपने निबन्ध में कहा है: "एक इकाई का दो में विभाजन और उसके परस्पर विरोधी अंशों का बोध ही द्वन्द्ववाद का सारतत्व है।" "हेगेल की रचना 'तर्क-विज्ञान' की रूपरेखा" नामक अपनी रचना में उन्होंने कहा है: "संक्षेप में, द्वन्द्ववाद को विपरीत तत्वों की एकता का सिद्धान्त कहा जा सकता है। ऐसा कहने से उसका निचोड़ तो पकड़ में आ जाता है, लेकिन स्पष्टीकरण करने और उसे भरा-पूरा बनाने की आवश्यकता बनी रहती है।"

३ वी० आई० लेनिन, "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में"।

४ हान वंश में कनफ्यूशियसवाद के एक प्रसिद्ध व्याख्याकार तुङ चुङ-शू (१७६-१०४ ई० पू०) ने सम्राट हान ऊ ती से कहा था: "ताओ व्योम से उत्पन्न होता है; व्योम नहीं बदलता, इसी तरह ताओ भी नहीं बदलता"। "ताओ" प्राचीन चीन में दर्शन-शास्त्र के विद्वानों द्वारा इस्तेमाल किया जाने वाला एक पारिभाषिक शब्द है। इसका अर्थ है "सिद्धान्त" या "नियम"।

५ फ्रेडरिक एंगेल्स, "द्वन्द्ववाद। परिमाण और गुण"—"ड्यूरिंग का मत-खण्डन", प्रथम भाग का १२वां अध्याय।

६ वी० आई० लेनिन, "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में"।

७ फ्रेडरिक एंगेल्स, "द्वन्द्ववाद। परिमाण और गुण"—"ड्यूरिंग का मत-खण्डन", प्रथम भाग का १२वां अध्याय।

८ वी० आई० लेनिन, "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में"।

९ वही।

१० देखिए: वी० आई० लेनिन, "कम्युनिज्म" (१२ जून १९२०)। और देखिए: "चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं", नोट १०।

११ देखिए: "सुन चि" नामक पुस्तक का तीसरा अध्याय, "आक्रमण की रणनीति"।

१२ वेइ चङ (५८०-६४३ ई०) थाङ वंश का एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और इतिहासकार था। इस लेख में यह वाक्य "चि च थुङ च्येन" नामक किताब के १९२वें खण्ड से उद्धृत किया गया है।

१३ "श्वेइ हू च्वान" (कछार के वीर) एक प्रसिद्ध चीनी उपन्यास है जिसमें उत्तरी सुङ वंश के अन्तिम काल के एक किसान युद्ध का वर्णन किया गया है। ल्याङशानपो में किसान विद्रोह के नेता और उपन्यास के नायक सुङ च्याङ ने अपना अड्डा बनाया था और चू गांव ल्याङशानपो के निकट था। इस गांव का मुखिया चू छाओ-फङ एक निरंकुश जमींदार था।

१४ वी० आई० लेनिन, "ट्रेड यूनियनों, वर्तमान परिस्थिति और त्रात्सकी व बुखारिन की गलतियों पर फिर एक बार विचार"।

१५ वी० आई० लेनिन, "क्या करें?", अध्याय १, परिच्छेद ४।

१६ वी० आई० लेनिन, "हेगेल की रचना 'तर्क-विज्ञान' की रूपरेखा"।

१७ "शान हाए चिङ" (पर्वतों और सागरों की पुस्तक) युद्धरत राज्यों (४०३-२२१ ई० पू०) के काल में लिखी गई थी। ख्वा फू "शान हाए चिङ" में वर्णित एक ऋषि का नाम था। "शान हाए चिङ" के "हाए वाए पेइ चिङ" खण्ड में लिखा है: "ख्वा फू सूरज का पीछा कर रहा था। जब सूर्यास्त हुआ, तो उसे बहुत प्यास लग गई, और वह पीली नदी व वेइश्वेइ नदी में पानी पीने लगा। पीली नदी व वेइश्वेइ नदी का पानी उसकी प्यास बुझाने के लिए काफी नहीं था, तो वह 'महासरोवर' में पानी पीने के लिए उत्तर की ओर चल दिया। लेकिन 'महासरोवर' के पास पहुंचने से पहले ही वह रास्ते में मर गया। उसने अपनी लाठी नीचे फेंक दी, जिससे 'तङ' नामक एक जंगल बन गया।"

१८ ई प्राचीन चीन की पौराणिक कथा में वर्णित एक विख्यात वीर था। "सूरजों को मार गिराना" उसकी धनुर्विद्या के बारे में एक मशहूर कहानी है। "ह्वाए नान चि" नामक किताब में, जिसका सम्पादक हान वंश का ल्यू आन (ईसापूर्व दूसरी शताब्दी का एक अभिजात वर्गीय व्यक्ति) था, यह लिखा गया है: "सम्राट याओ के शासन-काल में आकाश में दस सूरज उगा करते थे। उनके कारण फसलों और पेड़-पौधों को बहुत क्षति पहुंचती थी और जनता को खाना नहीं मिलता था। इसके अलावा, तरह-तरह के हिंस्र पशु भी जनता को नुकसान पहुंचाते थे। इसलिए सम्राट

याओ ने ई को आदेश दिया . . . और ई ने आकाश से सूरजों को मार गिराया और जमीन पर तरह-तरह के हिंस्र पशुओं को मार डाला। . . . इससे जनता को बड़ी राहत मिली है और खुशी हुई।" पूर्वी हान वंश के वाङ यी (ईसा की दूसरी शताब्दी के एक लेखक) द्वारा छ्वी य्वान रचित "आकाश से पूछना" नामक काव्य के लिए लिखी गई टिप्पणियों में बताया गया है : "'ह्वाए नान चि' के अनुसार सम्राट याओ के शासन-काल में आकाश में दस सूरज एक साथ उगा करते थे। उनके कारण फसलों और पेड़-पौधों को बहुत क्षति पहुंचती थी। सम्राट याओ ने ई को आदेश दिया कि वह उन्हें मार गिराए। ई ने दस सूरजों में से नौ को मार गिराया. . .सिर्फ एक को छोड़ दिया।"

१९ "शी यओ ची" (पच्छिम की तीर्थयात्रा) सोलहवीं शताब्दी में लिखा गया एक पौराणिक उपन्यास है, जिसका नायक सुन ऊ-खुङ नामक एक वानरराज है। उसके अन्दर बहत्तर रूप, जैसे चिड़िया, पेड़-पौधे और पत्थर इत्यादि, धारण करने की अद्‌भुत शक्ति है।

२० "ल्याओ चाए की विचित्र कहानियां" सत्रहवीं शताब्दी में छिङ वंश के फू सुङ-लिङ द्वारा लोक-कथाओं के आधार पर लिखी गई कहानियों का संग्रह है। इसमें छोटी-छोटी ४३१ कहानियां हैं, जो ज्यादातर भूत-प्रेतों और लोमड़ियों के बारे में हैं।

२१ कार्ल मार्क्स, "राजनीतिक अर्थशास्त्र की समालोचना की भूमिका"।

२२ वी० आई० लेनिन, "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में"।

२३ इस वाक्य का प्रयोग पहली बार ईसा की पहली शताब्दी के प्रसिद्ध इतिहासकार पान कू द्वारा लिखित "हान वंश के पूर्वार्ध का इतिहास" में हुआ था। उसके बाद से यह चीन की एक लोकप्रिय उक्ति बन गई है।

२४ वी० आई० लेनिन, "द्वन्द्ववाद के सवाल के बारे में"।

२५ वी० आई० लेनिन, "एन० आई० बुखारिन की रचना 'संक्रमणकालीन अर्थशास्त्र' पर टिप्पणी"।

毛泽东选集

第一卷

外文出版社出版（北京）
1969年（50开）第一版
1971年第二次印刷
编号：（印地）1050—1428
00150
1—H—606Pc